बुन्देलखण्ड की छन्दबद्ध

# काव्य परम्परा

डॉ. बहादुर सिंह परमार
डॉ. हरिसिंह घोष

# बुन्देलखण्ड की छन्दबद्ध
# काव्य परम्परा


**डॉ. बहादुर सिंह परमार**
**डॉ. हरिसिंह घोष**


**सम्पादक**
डॉ. कपिल तिवारी

**सहायक सम्पादक**
अशोक मिश्र


**आदिवासी लोक कला अकादमी**
**मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्**
**भोपाल का प्रकाशन**

**प्रकाशक** – निदेशक
आदिवासी लोक कला अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्
मुल्ला रमूज़ी संस्कृति भवन,
आधार तल, बाणगंगा, भोपाल
मध्यप्रदेश–462003 फोन–2551878, 2760668

**प्रकाशन** – वर्ष 2005

**मूल्य** – 50/– (रूपये पचास केवल)



**स्वत्वाधिकार** – आदिवासी लोक कला अकादमी,
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, भोपाल



**आवरण** – मिनियेचर चित्र, साभार
**मुद्रण** – मल्टी ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल



- पुस्तिका से संबंधित समस्त विवादों का न्यायालयीन कार्यक्षेत्र भोपाल होगा।
- पुस्तक में छपी सामग्री के किसी भी माध्यम द्वारा उपयोग के पूर्व अकादमी से अनुमति लेना आवश्यक होगी।
- पुस्तिका में प्रकाशित समस्त सामग्री संकलनकर्त्ता, लेखक की अपनी है, आवश्यक नहीं है कि अकादमी इससे सहमत हो।

## अनुक्रम-

मुंशी ईश्वरी प्रसाद श्रीवास्तव (खरे) / **9**, पं. गंगाधर व्यास / **15**, मुकुन्द स्वामी / **35**, पं. घासीराम व्यास / **50**, ख्यालीराम / **62**, डॉ. भवानी सिंह 'भगवन्त' / **72**, वृषभान कुँवरि / **79**, टट्टू दास / **85**, रामप्रसाद सक्सेना / **93**, माधौ सिंह बुन्देला / **100**, रामदास दर्जी / **113**, ठाकुर भुजबल सिंह / **122**, कविराज बिहारी लाल / **128**, कंचन कुँवरि / **137**, रामसहाँय कारीगर / **141**, कवि जुझार सिंह / **150**, मोती कवि / **157**, पंचम सिंह श्रीवास्तव (खरे) / **174**, राजाराम शुक्ल 'रत्नेश' / **182**, श्रीपत सहाय रावत / **193**, लालजी सहाय वर्मा 'विशद' / **203**, महादेव चौबे 'अनन्त' / **215**, सिद्ध गोपाल सक्सेना 'सत्यकृष्ण' / **225**, पं. कृष्णदास / **232**, डॉ. मदन गोपाल शुक्ला 'मदनअली' / **249**, रामनाथ गुप्त 'हरिदेव' / **262**, लला पुजारी / **268**, कालिका प्रसाद भट्ट 'कमलेश' / **279**, लक्ष्मी प्रसाद शुक्ल 'वत्स' / **284**, ठाकुर हरनारायण सिंह 'यार' / **296**, पं. प्रमोद कवि / **306**, पं. मोतीलाल पाण्डे 'दिनेश' / **311**, महाराजा भवानी सिंह 'प्रेमी' / **319**, पं. रामकृपालु मिश्र / **326**, रामनारायण श्रीवास्तव 'श्याम' / **338**, गोपाल दास रूसिया / **344**, किशोरी लाल जैन 'किशोर' / **349**, पं. जैतराम धमैनियाँ 'जैत' / **352**, गुलजारी लाल गुप्त 'लाल' / **360**, डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त 'प्रसाद' / **365**, शिव सहाय दीक्षित / **377**, हरप्रसाद गुप्त 'हरिहर' / **385**, डॉ. नारायण दास गुप्त 'कमलेश' / **392**, हरिविष्णु अवस्थी / **398**, शंकर लाल वर्मा 'ललितेश' / **404**, हरगोविन्द त्रिपाठी 'पुष्प' / **412**, गोविन्द सिंह यदुवंशी / **415**, पं. गुणसागर शर्मा 'सत्यार्थी' / **423**, डॉ. दुर्गेश दीक्षित / **434**, नारायण दास सोनी 'विवेक' / **444**, नवल किशोर सोनी 'मायूस' / **450**, लल्लूमल चौरसिया / **458**, डॉ. अवध किशोर जड़िया / **462**, जगदीश सिंह परमार / **477**, जगदीश प्रसाद रावत 'जगदीश्वर' / **482**, डॉ. कुन्जीलाल पटेल 'मनोहर' / **486**

# प्राक्कथन

बुन्देलखण्ड अँचल में साहित्य के अखाड़ों की एक लम्बी परम्परा रही है। जिसके माध्यम से न केवल साहित्यिक परिवेश बना। फड़ों के द्वारा आशु कवियों को अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने का अवसर मिलता था किन्तु अब न वे फड़ रहे और न वे कवि। इनकी कविताएँ अभी भी लोककंठों में हैं, जिन्हें संजोने की आवश्यकता है। इसके बाद हमने उन व्यक्तियों से सम्पर्क करना प्रारंभ किया, जिनको यह काव्य याद था उनसे सुनकर लिखा, अर्थ किया, तो लगा कि इनमें रीतिकालीन छांदिक परम्परा के साथ काव्य शास्त्रीय परम्परा भी विद्यमान है। समाज में प्रत्येक परम्परा जीवित रहती हैं। बुन्देलखण्ड के साहित्यिक जगत् में भी यह काव्य परम्परा आधुनिक काल के कवियों में भी जीवित है। वैसे रीतिकाल का प्रारम्भ महाकवि केशव से ही माना जाता है, जो बुन्देलखण्ड के साहित्यिक केन्द्र ओरछा के ही थे। इस कालखण्ड में बुन्देलखण्ड में समृद्ध काव्य परम्परा रही। कालान्तर में फड़ों के माध्यम से परम्परा लोक में जीवित रही। यह परम्परा आज भी जीवित है, अनेक रचनाकार दूरस्थ गांवों में रहकर इसी परम्परा में काव्य सृजन कर रहे हैं। हमने इस संकलन में उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से ही कवियों को लिया है। बुन्देली त्रयी के कवि ईसुरी, गंगाधर तथा ख्यालीराम में से ईसुरी को इसलिए छोड़ा गया क्योंकि अकादमी ने ईसुरी की काव्य साधना पर पृथक से ग्रंथ प्रकाशित कर दिया है।

इस संकलन के कवियों की रचनाओं में छन्दबद्ध काव्य परम्परा तो दृष्टव्य है किन्तु भाव के स्तर पर समकालीन समय ने भी अपना प्रभाव छोड़ा है। जीवन के दुख दर्द, काल का प्रभाव, सामाजिक परिस्थितियों के प्रभाव तथा समकालीन मानवीय रिश्तों को कवियों ने अपनी–अपनी दृष्टि से अंकित किया है। इस संकलन हेतु प्रयास करते समय अनेक कवियों की जीर्ण–शीर्ण पांडुलिपियाँ भी मिली हैं जिनमें से कुछ छन्दों का चयन किया गया है, इन ग्रंथों के समग्र प्रकाशन होने से शोधकर्ताओं के साथ ही हिन्दी साहित्य को भी लाभ होगा। कवियों का क्रम निर्धारित करते समय उनके जन्म समय को ही दृष्टिगत रखा गया है।

इस संकलन के माध्यम से हमने एक प्रयास किया है जिसे सम्पूर्ण तो नहीं कहा जा सकता फिर भी अपनी पहुँच और सीमित साधनों से एक परम्परा को तलाशने की कोशिश की है। इसमें हम कहाँ तक सफल रहे हैं यह तो विद्वज्जन् ही तय करेंगे। संकलन हेतु रचनाओं के संग्रह करने में जिन महानुभावों ने सहयोग किया है उनके प्रति हम कृतज्ञ हैं। यदि इस प्रयास से बुन्देलखण्ड के साहित्य को समझने में शोधार्थियों व विद्वानों को मदद मिलती है तो हमारा प्रयास सार्थक होगा।

**– संकलक द्वय**

# मुंशी ईश्वरी प्रसाद श्रीवास्तव (खरे)

मुंशी ईश्वरी प्रसाद श्रीवास्तव (खरे) बुन्देलखण्ड के जिला महोबा के रहने वाले थे। इनका जन्म विक्रम संवत् 1886 (सन् 1829) में कन्नौज में हुआ। इनके पिता केदार सहाय अवध नवाब के यहाँ जमींदार थे। 1835 ई. में केदार सहाय की मृत्यु हो गई। ईश्वरी प्रसाद की माँ अपने 6 वर्षीय पुत्र को लेकर अपने मायके महोबा आ गई। माता ने अपनी जमा पूँजी और मायके की सहायता से अपने पुत्र को पाला। ईश्वरी प्रसाद ने गुरुओं से उर्दू, हिन्दी, संस्कृत, फारसी छंद व्याकरण का ज्ञान प्राप्त कर मदरसे में नौकरी कर ली। 1870 में वे मेरठ मदर्से में गणित के अध्यापक हुये। 1872 के अंत में वे कुलपहाड़ मिशन स्कूल के हेडमास्टर बन गये वहीं से सन् 1884 में वे रिटायर्ड होकर महोबा आ गये। वे अध्ययनशील व्यक्ति थे। तंत्र शास्त्र में दखल रखते थे। उन्होंने कविता, नाटक एवं इतिहास भी लिखा। मिश्र बंधु विनोद 3–4 खंड चतुर्थ संस्करण पेज 99 में उनके बारे में कहा है– 'वे कन्नौज के निवासी हैं' उनके छंद 1. बिहारी सतसई पर कुण्डलियां, 2. जीवन रक्षावली, 3. व्याकरण



मूलावली, 4. नाटक रामायण, 'राम विजय तंरग नाटक', 5. तवारीख महोबा (आल्हा समर सारावली) गद्य में लिखी। उनके दो नाटक नल दमयन्ती और ऊषा अनुरुद्ध भी थे। कविवर श्री जगन्नाथ प्रसाद रत्नाकर ने भी कविवर 'बिहारी' पुस्तक में इनका उल्लेख किया है। आल्हा समर सारावली की प्रकाशन तिथि सन् 1909 है। ''सन् ईसा प्रमान 1909 जानिये तीन जून शुभ आन ग्रीष्म अविदात तिथि'' (ग्रंथ की भूमिका से)।

वर्तमान में इनके दो प्रकाशित ग्रंथ उपलब्ध हैं एक 'आल्हा समर सारावली' दूसरा नाटक 'राम विजय तरंग'। राम विजय तरंग नाटक बालकाण्ड ही प्रकाशित है। इसकी प्रकाशन तिथि सन् 1914 द्वितीय संस्करण है। इसमें दोहा, चौपाई, सोरठा, कवित्त एवं देशी लोक रागों एवं कव्वाली, गजल के द्वारा रामायण का नाटकीकरण किया गया है। इस पर पारसी थियेटर इन्द्र सभा और प्रचलित रामलीलाओं का प्रभाव है। पुस्तक पठनीय सरस लोकरंजन से भरी है।

मुंशी ईश्वरी प्रसाद ने दीर्घ जीवन जिया वे सन् 1927 में स्वर्गवासी हुए।

### सवैया

*चन्द्र अनेकन की दुति जोर रचो चतुरानन आनन जोई।*
*कुंद कली से भली नवली धवली अवली रद जाति सँगोई।।*
*खंजन के मद गंजन नैन सुवैन अमी मृदु मंजुल सोई।*
*केशर गंध फली इशुरी सिय के तन के सम एक न कोई।।*

(सौजन्य – वीरेन्द्र बहादुर खरे)

अनेक चन्द्रमाओं की आभा को एकत्र करके ब्रह्मा ने इनके मुख की रचना की। मकरंद के पुष्प की कली से भी उज्जवल दंत पंक्ति सुशोभित है। खंजन पक्षी के मद को चूर करने वाले उनके नयन हैं अर्थात् खंजन नयन से भी सुन्दर नयन हैं। अमृत के समान कोमल और मनोहर वाणी है। ईश्वरी कवि कहते हैं कि केशर एवं अन्य सुगंधित द्रव्य कुछ भी सीताजी के शरीर के समान नहीं है।

**सवैया**

*चारु बिचार निहार रहे छवि दार मनी मुकताहल साने।*
*शारद नारद शेष महेश, बिरंचहु से नहिं जात बखाने।।*
*ईश्वरी राज कुमार लखौ छीनत है छट लौ हठ ठाने।*
*आसन हेत नरेशन के बहु हाटक मंच बिमान समाने।।*

(सौजन्य – वीरेन्द्र बहादुर खरे)

श्री राम और लक्ष्मण बालकों के साथ मणि और मुक्ताओं से सजी शोभा युक्त रंगभूमि की रचना सुन्दर मनोभावों में देख रहे हैं। जिनका वर्णन माँ शारदा, नारद मुनि, भगवान शंकर और ब्रह्मा जी भी नहीं कर सकते। वही शोभा धाम मनोहर राजकुमार सुन्दर विमान के समान विविध कौशल से बने उस देश–देश से आये राजाओं के बैठने के स्थान को आश्चर्य से देख रहे हैं।

**सवैया**

*लाल प्रबाल के जाल बिचित्र सुचित्त चुराबन हार पुरंदर।*
*ईश्वरी ऐसे उतंग लसै मनु आय बसे गिर मेरु के कंदर।।*
*थाकि रहे दश आठहु नैन लखे रचना पचना धाबि सुन्दर।*
*पेखनि हेतु भुआलन के पुर बालन के हित ये रुचि मंदिर।।*

(सौजन्य – वीरेन्द्र बहादुर खरे)



लाल प्रवाल के बने हुए सुन्दर जाल देवराज इन्द्र के मन को चुराने वाले हैं। ईश्वरी कहते हैं कि ऊंचे मंच पर बने हुए बैठने के स्थान ऐसे लगते हैं कि मानो सुमेर पर्वत की गुफायें हों। पंचानन (भगवान शंकर) ने अपनी दसों आँखों से और चतुरानन (ब्रह्मा जी) ने अपनी आठों आंखों से मंच की उस सुन्दर रचना की शोभा देखी और चकित रह गये। उन्हीं विविध देशों के राजाओं के बैठने के लिये बने सुन्दर स्थलों को बालकों का मन रखने के लिये रामचन्द्र जी बड़ी प्रसन्नता से देख रहे हैं।

**कवित्त**

*बाढ़ै अंग अंगन में तरंग रंग यौवन की,*
*तासु पै सलोनौ शील सोहैं शुचि प्यारी को।*
*रूप की निकाई दई दई ने सम्हार भूरि,*
*पूरि रही शोभा भौन औन जहां नारी को।।*
*ईश्वरी कमान भौंह शानदार बान दीठ,*
*मीठे मृदुबैन ऐन ऐन उँजियारी को।*
*साँचे कैसी ढारी कनिक पूतरी सम्हारी,*
*ज्यौं सुमना सौं नरमगत सुमना कुमारी कों।।*

(सौजन्य – वीरेन्द्र बहादुर खरे)

यौवन की भावनात्मक हिलोर के साथ प्रत्येक अंग में तरुणाई की परम छवि इन्दुकला की भांति सवाई बढ़ने लगी, साथ ही उसके स्वभाव में पावन सुशीलता भी निखार ले रही है। कवि ईश्वरी कहते हैं कि परमात्मा ने नारी के उत्तम रूप में रुच–रुच कर दीप्तमय शोभाधाम तो बनाया ही है साथ ही उस सुन्दरी को भौहों रूपी कमान पर नजर के बाण प्रहार के लिये और आकर्षण के लिये मधुर, प्रिय तथा मीठी वाणी भी दी है।

सुमनों से भी कोमल वह सुमना कुमारी (नेपाल नरेश की बेटी) ऐसी लगती है मानो बड़ी चतुराई से स्वर्ण की पुतली सांचे में ढाल कर बनाई गई हो।

**दोहा**

*रंग रूप सुकुमारता सब, विधि रही समाय।*
*पखुरी लगी गुलाब की, गात न जानी जाय।।*

(सौजन्य – वीरेन्द्र बहादुर खरे)

नायिका की देह में दैदीप्यमान वर्ण सौन्दर्य और कोमलता को एक साथ समाहित कर दिया है। उसके शरीर पर गुलाब के पुष्प की एक पंखुड़ी लगी हुई है तो उसमें इतनी एकरूपता है कि शरीर और पंखुड़ी को अलग करना संभव नहीं।

**कवित्त**

*कनक लतासी शुचि आनन प्रकाशी चन्द्र हाँसी,*
*चन्द्रका सी खासी अति छबि भारी है।*
*सुन्दर गुणवारी है अपारी बहु प्यारी,*
*वर रूप अधिकारी चारी सोहें सुकुमारी है।*
*शील सुघराई चतुराई सुन्दराई भरी अंग की,*
*निकाई स्वच्छ अमित करारी है।*
*बानी है सुधा सी सुखराशी हर भांति भांति,*
*ऐसी जगमोहन जगमोहन कुमारी है।*

(सौजन्य – वीरेन्द्र बहादुर खरे)

सोने की लता की तरह सुन्दर छरहरे बदन वाली नायिका के चेहरे की आभा चन्द्रमा की चाँदनी से भी अधिक शोभा वाली है। वह उत्तम गुणों से युक्त, नेह से भरपूर और कोमल अंगों



वाली है। उसमें सुशीलता के साथ ही निपुणता, सुडौलता, चातुर्य कुशलता और सुन्दरता उसके उत्तम अंगों में असीमता के साथ अच्छी तरह समाई हुई है। उसकी वाणी में अमृत तुल्य मिठास है और सब प्रकार से सुख की धाम है ऐसे उपरोक्त गुणों से युक्त वह जगमोहन कुमारी है।

**कवित्त**

*आनन प्रकाश स्वच्छ–चन्द्रिका उदास होत,*
*देख नैन कंज मीन खंजन लखि हारी है।*
*मन्द नन्द हाँस चारु बोले मृदु बैन ऐन,*
*शीलता सुभाय यहाँ चातुरी सम्हारी है।।*
*गुण में निपुनाई सुधराई हर भाँति भाँति,*
*प्रीत रीत जाने सों बुद्धि की तरारी है।*
*तात मातु प्यारी भौन शोभा विस्तारी,*
*भूरि इशुरी सुलक्षण विज्जक्षण कुमारी है।।*

(सौजन्य – वीरेन्द्र बहादुर खरे)

जिसके निर्मल चेहरे को देखकर चांदिनी उदास हो जाती है नयन कमलों को देखकर सज्जन पक्षी भी सकुचा जाता है। वह धीमे–धीमे हंसते हुए उत्तम कोमल वचनों को बोलती है और उसके स्वभाव में शीलता और चातुर्य समाहित है। सभी गुणों में निपुणता और कुशलता है, वह प्रीत की गति तथा प्रकृति को समझती है और बुद्धिमत्ता में आगे है। माता–पिता की अत्यन्त प्रिय है और उससे घर की शोभा का विस्तार है। ईश्वरी कवि कहते हैं कि इस प्रकार वियक्षिण कुमारी उपरोक्त सभी गुणों से परिपूर्ण है।

# पं. गंगाधर व्यास

बुन्देली साहित्य में अनुपम स्थान रखने वाले पं. गंगाधर व्यास का जन्म छतरपुर नगर के एक साधारण ब्राह्मण परिवार में विक्रम संवत् 1899 में हुआ। इनकी शिक्षा दीक्षा साधारण थी किन्तु वे असाधारण प्रतिभा के धनी थे। पं. गंगाधर शुद्ध देशी मिजाज के व्यवहार कुशल व्यक्ति थे, वे दो चार बोल में ही अपरिचितों को आत्मीय बना लेने में निपुण थे। वे सदा प्रसन्नचित्त व विनोदी स्वभाव का जीवन जीते थे। इनकी वेशभूषा में सिर पर साफा, देह पर प्राचीनता की परिचायक साधारण लट्ठे की तनीदार मिरजई बुन्देलखंडी ढंग से घुटनों तक पहनी हुई पाटली रंग में डूबी मोटे सूत की धोती और पैरों में बुन्देली पनहियाँ थीं। सोलह वर्ष की आयु में ही वे मंच पर कविता प्रस्तुत करने लगे थे। मऊरानीपुर के बालमुकुन्द दर्जी इनके काव्य गुरु थे, इनके सान्निध्य में काव्य सर्जना कर वे उन्हें सुनाते फिर उसको अन्यत्र पढ़ते थे।

व्यास जी को तत्कालीन छतरपुर महाराज श्री विश्वनाथ सिंह का विशेष स्नेह और सम्मान प्राप्त था। महाराजा श्री विश्वनाथ सिंह उनकी कविता का सम्मान तो करते ही थे साथ ही उनके मसखरापन



से अपना मनोरंजन भी खूब करते थे। इनके एक साथी गुलई तिवारी एक आँख के थे। इसी पर व्यास जी ने हास्य प्रधान अनेक रचनायें लिख डाली थीं जिन्हें सुनकर छतरपुर महाराज मनोविनोद कर लिया करते थे। गंगाधर व्यास तथा ईसुरी दोनों समकालीन एवं गहरे मित्र थे।

व्यास जी ने हजारों फागें, सैर, कविता, सवैया, ख्याल, लावनी आदि लिखीं हैं। उनका साहित्य बुन्देलखण्ड में लोगों को कंठस्थ है। श्री गंगाधर व्यास रीतिकालीन परम्परा के कवि हैं उन्होंने श्रृंगार तथा नायिका भेद का अनूठा साहित्य दिया है किन्तु उनकी विशेषता एक नई परम्परा, एक नई प्रणाली को जन्म देने जा रही है। सैर साहित्य को जन्म देना एक तरह से उनका ही काम है यद्यपि इनके पूर्व भी सैर लिखी गई थी किन्तु सैर का झुमका बनाना और सैर की गम्मत तथा अखाड़ेबाजी की परम्परा इन्हीं की देन है। बुन्देली काव्य जगत में फड़बाजी के माध्यम से अनेक दलों में प्रतिद्वंदिता चलती थी। जिसमें गंगाधर व्यास का दल प्रमुख था। इनकी प्रतिद्वंद्विता परमानंद पाण्डे, छतरपुर तथा श्री दुर्गा प्रसाद पुरोहित मऊरानीपुर से प्रमुखतः रही। इनका देहान्त विक्रम संवत् 1972 में हुआ।

## सैर

दोहा – *पिय तन औरहिं नारि के रति के चिन्ह निहार।*
*दुखित होय सो खण्डिता वर्णत सुकवि विचार।।*

दोहा – *पलन पीक अंजन अधर धरे महावर भाल।*
*आजु मिले जू भली करी भले बने हौ लाल।।*

सोरठा – *चतुराई की चाल कत बेकाज चलाइयत।*
*सब गुन बिन गुन माल कहें देत गुन रावरे।।*

सैर – *गुन कहत माल गुन बिन निश काम तरंगा।*
*गोविन्द चाल चतुरई कस करत बेढंगा।*
*गृह गए कहो कीके तन भरे उमंगा।*
*गल बांह डाल सोए किन सौतिन संगा।।टेक।।*

*गोरी रमाय जागे निश कीन्हों जंगा।*
*गुरुता दिखाय दृग भये बर अरुण उतंगा।*
*गुह्य स्थल अलपाये शुभ चिन्ह अनंगा।*
*गल बांह डाल सोये.....।।2।।*

*गोचरी रेख नख की उर शोभित अंगा।*
*गालन मझार जावक की अनुपम रंगा।*
*गति गते चलत मग में पग परत उछंगा।*
*गल बांह डाल सोये.....।।3।।*

*गुरुजन की लाज त्यागी हित वाम प्रसंगा।*
*गिरधर विसार निशि श्रम तन कीजे चंगा।*
*गुरु ध्यान धार सैर कथत द्विजवर गंगा।*
*गल बांह डाल सोये.....।।4।।*

प्रियतम के शरीर पर दूसरी यौवना के संग कामक्रीड़ा चिन्ह देखकर नायिका दुखित होती है। कवि यहाँ खंडिता नायिका का वर्णन कर रहा है।

पलकों पर पान की पीक, अधरों पर काजल और माथे पर महावर के चिन्ह स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। नायिका कहती है कि लालन आज इस हालत में तुम अच्छे मिल गये।

अपना युक्ति चातुर्य आज व्यर्थ में चला रहे हो तुम्हारे गुणों को तो टूटी हुई माला ही बता रही है।



रात्रि की कामक्रीड़ा की बात तो टूटी माला ही कह रही है। हे गोविन्द! चतुराई की चाल क्यों गलत तरीके से करते हो ? सत्य बताओ कि तुम तन में चाह लिये किसके घर गये थे। गले में बांह डाल कर किस सौत के साथ सोये थे।

सुन्दरी को अनुरक्त करके तुम रात्रि में रति समर करते हुए जागते रहे इसीलिये आँखें भारी, लाल और ऊँची उठी सीं है, गोपनीय स्थानों पर कामदेव ने शुभ चिन्हों को अंकित किया है।

छाती पर गौखुर के समान नखों के चिन्ह शोभा पा रहे हैं, गालों के बीच महावर अनोखा रंग लगा हुआ है और चलने पर कदम उठते हुए से पड़ते हैं।

तुमने एक स्त्री प्रसंग के लिये गुरुजनों की मर्यादा तोड़ दी। हे कृष्ण! अब रात्रि की बात भुला दो, श्रमित तन को विश्राम देकर ठीक करो। कवि गंगाधर कहते हैं कि मैं गुरु का ध्यान कर सैर कहता हूँ।

**फाग**

*बिगरू बिगरैलन में जातीं जे धन ऐसी ना तीं*
*सबके जान घुंघटिया घालें नैनन में मुस्क्यातीं*
*जब देखौ तब ठाड़ीं दोरें कौरन लगीं बतातीं*
*बिगरी चाल कहत गंगाधर सुधरत नई दिखातीं।*

(गायक–भगवान दास कुशवाहा)

कवि गंगाधर व्यास कहते हैं कि सामाजिक वर्जनाओं को तोड़ने वाली नायिका छैलों के साथ ही लगातार जा रही है। यह नायिका ऐसी तो नहीं थी किन्तु कुसंगति में बिगड़ गई है। सभी की समझ में यह घूँघट डालकर जा रही है लेकिन वह घूँघट में ही नेत्रों

से मुस्कुराती है। इतना ही नहीं जब देखो तभी दरवाजे के कोनों पर खड़ी छैलों से बात करते दिखाई देती है। कवि के अनुसार अब ये (नायिका) सुधरती नहीं दिखाई पड़ती है।

*सांकर करन फूल की झूमें गोरी कौ मुख चूमें।*
*झुक झुक परत गिरत आनन पै लेत चलत में लूमें।*
*थिर ना रहत करत चंचलता दमकत घूँघट हू में।*
*देखी नहीं आज लौ ऐसी जा छवि और किसू में।*
*गंगाधर मनमोहन कौ मन रहत नहीं काबू में।*

कर्णफूल की सांकर (जंजीर) झूम–झूम कर सुन्दरी के मुख का चुम्बन ले रही है वह बार–बार चेहरे पर लटक जाती है और नायिका के चलने में लहराती है। वह एक स्थान पर स्थिर नहीं रहती, चपलता करती है और घूंघट के भीतर से ही अच्छी तरह चमकती है। ऐसी शोभा आज तक किसी वस्तु में नहीं देखी। गंगाधर कहते हैं कि मनमोहन श्रीकृष्ण का मन उनके बस में नहीं रहता।

*बिन कंत बसंत लगत सूने, विरहा कें बान लगें दूनैं।*
*मौरे आम अचार घनेरे जिमी लता लागी छूनैं।*
*इक तौ सोच हतो प्रीतम कौ कोयल कूक दई तूनैं।*
*कर गये टिया सुदी तेरस कौ, बीत गई सबरी पूनैं।*
*गंगाधर निर्दयी श्याम सो फेर खबर न लई ऊनैं।।*

प्रियतम के बिना बसंत का आगमन भी उस अभाव को पूरा नहीं करता बल्कि विरह से व्यथित नायिका को बसंत के सहयोगी दुगना दुख देते हैं। आम के वृक्षों में फूल आ गया है, आचार फूलकर घना हो गया है, लतायें झूमकर जमीन छूने लगी हैं। इधर मेरे मन में प्रियतम के न आने की चिन्ता सता रही है उधर हे कोयल! तूने अपनी टेर से उसे और बढ़ा दिया है। प्रियतम अमावस के दो दिन पूर्व तेरस को आने का समय निश्चित कर गये थे किन्तु सभी



पूर्णमासी बीत चुकीं हैं। गंगाधर कहते हैं कि कृष्ण बहुत कठोर हृदय के हैं उन्होंने लौटकर सुध नहीं ली।

*पिया प्यारे अब लौ न आये रितुराज बगीचन में छाये।*
*कोयल रमन लगी बागन में, कंठ कोकलन के भाये।*
*फूले फूल अनेक तरन के भौंरा बागन कों धाये।*
*सुख के समय पिया प्यारे कों कौन सौत ने बिलमाये।*
*गंगाधर भई विकल राधिका आंखन असुआ भर आये।।*

नायिका कहती है कि प्रियतम अभी तक घर नहीं आये जबकि बागों में बसंत ऋतु का आगमन हो चुका है। कोयल अब बाग में विहार करने लगी है उसका स्वर मीठा हो गया है। विविध प्रकार फूल खिलने लगे हैं, और भ्रमर भी बगीचों की ओर दौड़ने लगे हैं। आनंद लेने के समय में किस सौत ने प्रियतम को अपने पास रोक लिया है। गंगाधर कहते हैं कि राधिका जी सोचते–सोचते व्याकुल हो गईं और उनकी आँखों में आँसू आ गये।

*ब्रज में भई बसंत की आवन दसों दिसा दरसावन।*
*लूम उठी है लौनी लतिका लागी फूल खिलावन।*
*आमन बौरन बोलन लागी कोकिल राग सुहावन।*
*गैंदा फूल हूल–सी खेंलें रस पराग बरसावन।*
*गंगाधर कामन के मन में लागो काम जगावन।।*

ब्रज में बसंत का आगमन हो गया है और दसों दिशाओं में उसकी छटा छा गई है। सुन्दर लतायें झूमने लगी हैं और उनमें पुष्प खिल गये हैं। आमों की पुष्पित डाल से कोयल अपना सुहावना राग अलापने लगी है। गैंदा के फूलों का पराग उड़ता हुआ ऐसा लगता है जैसे बालक हूल खेल रहे हों। गंगाधर कहते हैं कि बसंत सुन्दर युवतियों के हृदय में काम की भावना को उत्तेजित करने लगा है।

*पिया आये न भान थमन लागे रजनी के वेग कमन लागे।*
*जो जां गये पथिक सब आये आनंद देन भवन लागे।*
*फूलन फलन वनन बेलन में भूप बसंत रमन लागे।*
*पल पल सोच परो प्रीतम कौ नैनन नीर बहन लागे।*
*कह गंगाधर विरहिन अंग में कामदेव दहकन लागे।।*

विरहिन नायिका कहती है कि दिन कुछ बड़े होने लगे और (उसी अनुपात में) रात कुछ छोटी होने लगी अर्थात् बसंत का आगमन हो गया किन्तु प्रियतम लौटकर अभी तक नहीं आये। बाहर जहाँ भी जो यात्री गये थे वे वापिस अपने घर आ गये हैं और अपनी–अपनी प्रियाओं को आनंद देने लगे हैं। ऋतुराज बसंत वनों–बगीचों के फल–फूल और लताओं में रमण करने लगे हैं। नायिका को प्रतिक्षण प्रियतम की याद आती है, आँखों से आँसू बह रहे हैं। कवि गंगाधर कहते हैं कि विरह व्यथित नायिका के शरीर में कामाग्नि धधकने लगी।

*ताने ऐसौ फूल कमनवां मदन भयो बेइमनवां*
*वौर वौर वौरन के लाने कोयल कूक अमनवां।*
*उड़त पराग पवन की डोलन थर थर कपत बदनवां*
*मन भावन बिन विवस राधिका तरसै खड़ी अगनवां।*
*गंगाधर निरमोही निकरो आली नंद नदनवां।।*

कामदेव अपना फूलों का धनुष इस तरह चढ़ा कर बेईमान हो गया है, आम की डालियों में पुष्पित मौरों पर (आम के पुष्प गुच्छों पर) कोयल बैठ–बैठ कर काम से पागल युवतियों का दर्द बढ़ाने के लिये कूक रही है। हवा के चलने से पुष्पों का पराग उड़ रहा है और नायिका का शरीर थर–थर काँप रहा है। मन भावन श्रीकृष्ण के न आने पर राधिका आंगन में खड़ी है और विरह का दुख सहने को लाचार है कवि गंगाधर कहते हैं कि नन्द का पुत्र कृष्ण निश्चय ही कठोर हृदय का है।



*ताके कमल वरन पद ताके श्री वृषभान सुता के।*
*ताके पाप दूर हो जैहैं उड़हैं पुन्न पताके।।*
*ताके सुफल मनोरथ हूहैं हृदय बसत हैं जाके।*
*जाके जस दुनियां में जाहिर कयें कवीश्वर गाके।*
*गाके फाग कहत गंगाधर ज्ञान देत रस ताके।।*

श्री राधिका जी के उन चरण कमलों की मैंने शरण ले ली है जिनको हृदय में ये धारण करने से पाप नष्ट हो जाते हैं, यश सब जगह फैलेगा और मनोकामनायें पूरी होंगी। कविगण कहते हैं कि उनका यश पूरे संसार में फैला हुआ है। कवि गंगाधर फाग गाकर कहते हैं वे भक्तों को ज्ञान रस प्रदान करतीं है।

*तें का देत महाउर नाउन, कमल पत्र से पाउन।*
*ऊसई लगत मृदुल तरुअन की, लाली अधिक सुहावन।।*
*मानिकलाल तामड़ा तामें, दूनी ओप बड़ाउन।*
*फीकौ रंग परो जावक को कर कर थके उपावन।*
*गंगाधर राधे के पग लख लागे नैन जुड़ावन।।*

कमल के पुष्पदल के समान इन चरणों में, हे नाउन ! तू व्यर्थ में महावर लगा रही है, ये बिना कुछ लगाये कोमल पावों के नीचे के भाग की लालिमा बहुत सुन्दर लगती है। माणिक्य की लालिमा और तामड़ा (ऊदे रंग का एक पत्थर) के रंग की सम्मिलित आभा उसमें मानों दो गुनी हो जाती है। अनेक उपाय करने पर भी महावर का रंग मलिन हो जाता है। कवि गंगाधर कहते हैं कि राधिका जी के इन्हीं चरणों के दर्शन कर नयनों में शीतलता आ गयी है।

*जौ तिल लगत गाल कौ नीकौ मन मोहन सबही कौ।*
*कै पूरन पूनो के शशि में कुरा जमो रजनी कौ।*
*कै निरमल दर्पन के ऊपर सुमन धरो अरसी कौ।*
*गरल कंठ लै आय बिराजौ कै पति पारवती कौ*

*गंगाधर मुख लखत सांवरो राधा चन्द्रमुखी को।।*

नायिका के गाल पर तिल बहुत ही अच्छा लग रहा है वह सबके मन को मोहित करने वाला है। वह ऐसा प्रतीत होता है मानो पूर्णमासी के चन्द्रमा पर रात्रि का अंकुरण हो गया हो अथवा ऐसा लगता है मानो स्वच्छ दर्पण के ऊपर अलसी का फूल रखा हुआ हो अथवा विष प्रभाव से नीले कंठ वाले पार्वती पति शंकर जी विराजमान हों। गंगाधर कहते हैं कि चन्द्रमा के समान मुख वाली राधि के मुख के को श्रीकृष्ण एकटक देख रहे हैं।

*छुटकारे केस खड़ी द्वारें दोई भुजन पै लट डारें*
*राही नेह कतल करवे को लटक रहीं दो तरवारे*
*मानो सिखर सुमेर के ऊपर दो नागिन कुंडी मारे।*
*गंगाधर कये इन केशन पै मोहन प्रान फिरे वारें।*

नायिका द्वार पर अपने बालों को खोल कर दोनों भुजाओं के ऊपर केश पाश डाले खड़ी है। ऐसा लगता है मानो राहगीरों का कत्ल करने के लिए दो तलवारें लटक रही हों अथवा सुमेर पर्वत के शिखर के ऊपर दो नागिन कुंडी मारें बैठी हों। कवि गंगाधर कहते हैं कि इन बालों पर नायक (मोहने वाले) प्राण न्यौछावर किये फिरते हैं।

*चंदा पै व्याल उरम आये सिर बाल बाल ने सुरझाये।*
*ऊसई लहरत पवन की झौकन भुजा भुजंगी फैलाये।।*
*अतर सुगंध डार सुहागन लेकर ककई गुबवाये।*
*गंगाधर कये इन केशन पर मोहन के जी ललचाये।*

किशोरी नायिका ने सिर के बाल सुलझा लिये हैं जिससे बालों की लटें चेहरे पर लटक आई है जिन्हें देखकर लगता है मानों चन्द्रमा पर काले साँप लटक रहे हों। हवा के चलने से लहराते केश ऐसे प्रतीत होते हैं मानो सांपिनी अपने हाथ फैला रही हो। सुगंधित



इत्र डालकर ककई (कंघा का रूप) से सुहागिन नायिका अपने बालों को गुंथवा रही है। कवि गंगाधर कहते हैं कि इन बालों को देखकर नायक (मोहन) का मन उसे पाने को अधीर हो गया है।

*पिया किन संग रैन गुजारी है हंस पूछे वृषभान दुलारी है।*
*लपटे पेंच पड़े पगड़ी के जामा की खुली विवाड़ी है।।*
*काजर रेख लगी अधरन पै किनने अलक विथारी है।*
*गंगाधर हंस पूंछे राधिका को भई सौत हमारी है।।*

राधिका मुस्कुरा कर कृष्ण से पूछती है कि हे प्रिय ! आपने किसके साथ रात्रि बिताई है। पगड़ी की लपेटन अस्त–व्यस्त है। जामा (चूनरदार घेरे की एक पोशाक) के सामने का भाग खुला हुआ है, अधरों पर काजल की रेखायें लगी हैं और बताओ यह केश सज्जा किसने बिखरा दी है। कवि गंगाधर कहते हैं कि राधिका हँस कर पूछ रही है कि बताइये कि मेरी सौत कौन हो गई है ?

*विलमा लये सौत बलम मोरे दिखा–दिखा के तन गोरे।*
*कड़ कड़ जाती दोरे हो पैर–पैर के नये जोरे।।*
*तै जानत कोउ जानत नइयाँ मैं जानत सब गुन तोरे।*
*गंगाधर कयें असल कुजातन सुगर सौत जोड़ा फोरे।।*

एक विरहिन नायिका कह रही है कि सौत ने अपने गौरवर्णी शरीर का प्रदर्शन कर–करके मेरे प्रिय को बहका दिया है। वह नित्य मेरे दरवाजे से नए–नए वस्त्रों के जोड़े (जोरा– एक वस्त्र का प्रकार) पहन कर प्रदर्शित करती हुई निकलती है। फिर उसी को संबोधित करते हुए कहती है कि तू समझती है कि तेरे इन गुणों को कोई जानता नहीं है, मैं तेरे सभी दुर्गुणों से परिचित हूँ। कवि गंगाधर कहते हैं कि तू कुलीन नहीं है तूने मेरा जोड़ा फोड़ दिया है।

*धन भईं दूबरी काये सें को जाने बिना बताये से।*
*पलका पांव धरो न धरती फूलन तुलीं चलाये सें।।*

*ताती हवा लगन न पाई चापे पान खबाये सें।*
*गंगाधर मालूम होत है सुगर सौत घर आये सें।।*

नायिका कमजोर और श्रीहीन क्यों होती जा रही है? इसका कारण बिना बताये कौन जान सकता है? पलंग से नीचे कभी धरती पर पैर नहीं रखा। द्विरागमन से अब तक फूलों से तुलती रही, गर्म हवा कभी लग नहीं पाई तथा पान के बीड़ा तक दूसरे के हाथों से चबाये हैं अर्थात् समस्त सुख के संसाधनों में पल रही है फिर भी कमजोर क्यों हो रही है? कवि गंगाधर कह रहे हैं कि मालूम होता है कि घर में सुघड़ सौत के आने के दुख से ही यह दुबली हो गई है।

*का होत बलम दई मारे को छैल खुसी रये द्वारे कौ।*
*ढिग आ जात सैन के करतन, चरचत चित्त इशारे कौ।*
*जब चाओ तब बोल बता लेओ डर नईयां घरबारे कौ।*
*दिन में सौ–सौ बार देखियत आवो जैबो वारे कौ।*
*गंगाधर कंय भोर चलो गओ गजर सुनै भुनसारे कौ।।*

असंतुष्ट नायिका (परकीया) कह रही है कि दईमार (गाली) का क्या होता है वह किसी काम का नहीं है। मेरे घर के सामने रहने वाले छैल खुशी रहना चाहिए। मन की बात को वह समझता है और आँख के इशारे को देखकर वह तुरंत पास में आ जाता है। जब जी में आता है तब उससे बातचीत कर लेते हैं पति का भी कोई भय नहीं है। दिन में उसको सैकड़ों बार निहारते हैं क्योंकि दिन भर दरवाजे से आना–जाना सहज ही बना रहता है। कवि गंगाधर कहते हैं कि वह बड़े प्रातः भुन्सारे का घंटा सुनकर चला गया है। अर्थात् वह प्रातःकाल के पूर्व ही यहाँ रात बिताकर रौब से चला गया है।

*मोहन ने मुरलिया झनकारी चौक पड़ी ब्रज की नारी*
*पग में पैर पटेला ककना हातन में घुंघरू धारी*
*सिंर सें ओड़ घोघरों लीनों कटि में पैर लई सारी*



*बूंदा दयो कपोलन ऊपर कानन में नथनी डारी*
*गंगाधर नर नारि मोह गये संभू की खुल गई तारी*

(गायक– श्री भगवानदास कुशवाहा)

मोहन अर्थात् मन को मोहने वाले कृष्ण ने जैसे ही बाँसुरी की स्वर रागिनी छेड़ी तो उसके आकर्षण में ब्रज की नारियाँ अपनी सुधबुध खो चौंक पड़ती हैं और पांवों में पटेला, ककना, हाथों में घुँघरू, सिर में घाघरे को ओढ़कर तथा कमर में साड़ी बांध कर चल देती हैं। इतना ही नहीं गालों में बिंदी तथा कानों में नथुनी धारण करती हैं। कवि गंगाधर कहते हैं कि नर–नारी तो मोहित हो ही गये, शंकर जी की समाधि डोल गयी।

*मधुवन में बीन बजी हरि की कुंवरि राधिका के वर की।*
*पशु पक्षी सुवना सब मोहे कौन चलावै अब हर की।*
*जब से सुन श्रवनन ब्रज बाला मिलवे को बंइयां फरकी।*
*उलट पुलट सिंगार धाई सब सुध भूली अपने घर की।*
*देव दरस जन जान आपनो विनय सुनो गंगाधर की।।*

मधुवन में राधिका के वर श्रीकृष्ण की बाँसुरी जैसे ही बजती है उसके प्रभाव में पशु–पक्षी सभी मोहित हो जाते हैं, एक–एक की क्या चर्चा की जाये, सभी सुध–बुध (चेतना) खो देते हैं। जैसे ही इसे ब्रज बालाओं ने सुना तत्काल मिलने को उनकी बांह फड़कने लगी। ब्रज बालायें घर की सुधबुध खोकर असंगत श्रृँगार करके मधुवन की ओर दौड़ पड़ती हैं। कवि गंगाधर कहते हैं कि मेरी विनय सुनिये और अपना सेवक जानकर दर्शन दीजिये।

*चोरी गई बीन बिहारी की जसुदा के लाल अनारी की।*
*अति सुकमार सेज फूलन की लग गई नींद मुरारी की।*
*कर सें खेंच लई ललिता ने लपकन राधा प्यारी की।*

*छिन भीतर छिन बाहर आवें छिड़िया चढ़त अटारी की।*
*लीला ललित रचत गंगाधर कृष्ण राधिका प्यारी की।।*

यशोदा के उत्पाती पुत्र कृष्ण जी की बाँसुरी चोरी चली गई है। सुकोमल फूलों की शैया पर जैसे ही मुरारी की नींद लगी वैसे ही तत्काल ललिता ने हाथ से बाँसुरी खींचकर राधा को लपका दी। बाँसुरी को खोजने हेतु कृष्ण क्षण भर में भीतर आते हैं क्षण भर में बाहर जाते हैं और क्षण में अटारी का जीना चढ़कर बाँसुरी खोजते हैं। कवि गंगाधर श्री कृष्ण और राधिका जी की मनमोहक लीला का वर्णन करते हैं।

*जब उठा बीन लीनी बाला जान गये श्री नंदलाला।*
*बो है अंतरध्यानी स्वामी माया कौ डारो जाला।*
*भूली गैल सोच रईं मन में कछू दाल में है काला।*
*मन मुस्काय देख रये माधव राधे भईं जब बेहाला।*
*गंगाधर नटखट उन हरि ने प्रेम के भर दीने प्याला।।*

जैसे ही राधिका जी ने कृष्ण की बाँसुरी उठायी नन्दलाल इसको समझ गये। वे अन्तर्यामी हैं उन्होंने माया का जाल फैला दिया है। राधिका जी मार्ग भूल गयीं तब सोचने लगीं कि कोई संदेह की बात अवश्य है। श्रीकृष्ण मन में हँसते हुए राधिका जी की स्थिति को देख रहे हैं। जब राधिका जी का हाल बहुत बुरा हो गया, तब उत्पाती कृष्ण ने अपने अनुराग से राधिका जी के हृदय को तृप्त कर दिया।

*सुध भूली राधा प्यारी की लीला कठिन मुरारी की*
*लैके बीन चलीं जब बाला मिलै न गैल अटारी की*
*भई बेहोश श्याम छवि देखें खबर न तन की सारी की*
*गाफिल भई उसी के रंग में टोरें तार किनारी की*
*गंगाधर छाती से लिपटीं दै दई बीन बिहारी की।*



श्रीकृष्ण की क्रीड़ा को समझना सरल नहीं है। राधा व उनकी सखियाँ जैसे ही बाँसुरी चुराकर चलती हैं तो उन्हें अटारी की सीढ़ियाँ नहीं मिलती हैं। श्याम की छवि दर्शन करके सब अपना होश खो बैठीं, उन्हें अपने तन पर पड़ी साड़ी की सुध भी नहीं रहती है। प्रेम के रंग में रंगी ये बालायें सारी मर्यादायें भंग करती हैं। गंगाधर कहते हैं कि राधिका ने कृष्ण की छाती से लिपटकर बाँसुरी लौटा दी।

## कवित्त

*हरि जात हौ औरन भौन सदा,*
*कबहूँ मम भौन तें ऐवो करे।*
*दुज व्यास न कोऊ चबाई इतै,*
*शंका उर नेक न खैवो करे।*
*कबहूँ गऊ दोहन के मिस सों,*
*हमसों हंस बोल बतैवो करे।*
*कबहूँ पर अंक पै आन लला,*
*भर अंक हिये सें लगैवो करे।।*

श्रीकृष्ण से एक गोपी (प्रेयसी) कह रही है कि हे हरि! आप सदा दूसरों के घर जाते हो, कभी तो मेरे भवन पर आइये। विप्र व्यास कहते हैं कि इधर कोई चुगली करने वाला नहीं है। आप अपने मन में कोई शंका मत किया करो। कभी गायों के दोहन के बहाने से हमसे भी हँस–बोल लिया करो। कभी–कभी इन बाहों में आकर हिये से लग जाया करो और कभी बाहों में भरकर मुझे हिये से लगा लिया करो।

*चित्त में जमैं न हमैं नीको उपदेश लगै,*
*श्याम कौ संदेश सुनैं किलपत अति गात है।*
*विहरत रये ब्रज में वे डाल जी गले में बांह,*

*सोई गरै सेली नहि धारवो सुहात है।*
*मलमल कैं इत्र जौन जुल्फैं जंजीर करी,*
*तिनमें अब व्यास भसम मलवे खां कात है।*
*सुनी नहीं ऊधौ जू तुमनें वह मसल कहूं,*
*चुनत हंस मोतीं कै लंघन कर जात है।*

ऊधौ से गोपियाँ कहती हैं कि हे उद्धव ! हमें मन में श्रीकृष्ण के संदेश के अतिरिक्त कोई उपदेश अच्छा नहीं लगता है। सदा उन्हीं (कृष्ण) का संदेश सुनने की जी किलपता (व्याकुल) रहता है। इस ब्रज में जिस गले में वे बाँह डालकर विहार करते रहे उनमें सेली धारण करना ठीक नहीं होता है। जिस केशराशि को सुगंधित तेल डालकर सँवारते रहे हैं उनमें आप भस्म लगाने (मलने) को कहते हैं। क्या आपने ऊधौ वह कहावत कहीं सुनी कि हंस या तो मोती खाता है या भूखों मर जाता है अर्थात् श्याम रंग के स्थान पर अन्य रंग नहीं चढ़ा सकते हैं।

*गमनौं न आगें आराम करौ भवन मांह,*
*कोसन न छांह मिलै वर्षत तऊ बारी है।*
*झुक रई अंधयारी अगम आव नदी नारे बहें,*
*जहां तहां वीथन विच विचरत विषधारी हैं।*
*भनत दुज व्यास तैसई मारुत प्रचंड वहै,*
*हिंसक पशु बोल सुनें मानत मन–हारी है।*
*हारी मन तुम पै बलिहारी जाऊँ बार बार,*
*जैबे को विचार जिन करो रात कारी है।*

काम पीड़ित नायिका एक पथिक से विभिन्न उपालम्बों के माध्यम से रात्रि विश्राम करने का अनुरोध करते हुए कहती है कि अब आगे मत जाओ, कोसों तक विश्राम करने का कोई स्थल नहीं है, साथ में पानी भी बरस रहा है। इसी भवन में आराम कीजिए। अंधियारी छा गई है रास्ता सुगम नहीं है, आगे अनेक नदी–नाले



प्रवाहित हैं, अथाह जल भरा है। इसके अतिरिक्त रास्तों में विषधारी (सांप) आदि विचरते हैं। तेज हवा चल रही है जिसकी ध्वनियाँ हृदय को भयाक्रांत कर रही हैं। जंगली हिंसक पशुओं की आवाजें अनेक आशंकाओं को जन्म दे रही हैं। मैं अपना दिल हारकर तुम पर बलिहारी हूँ। रात्रि में जाने की जिद मत करो। जाने का विचार त्यागकर यहीं विश्राम करो।

*रये रात भवन किस भावनी के,*
*मन भाई को सौत बताव हमें।*
*झुकती अलकें पलकें झपतीं,*
*दुज व्यास न बात दुराव हमें।।*
*कुच खूब चुभे छतियान दुऊ,*
*बतियान नहीं भरमाव हमें।*
*हम जान लई तुम जैसी करी,*
*नहीं और जरे पै जराव हमें।।*

नायिका नायक से कहती है कि विगत रात्रि तुमने किस प्रिया के यहाँ बिताई, वह सौत कौन जो तुम्हारे मन को अच्छी लगने लगी। मुझे बताइये। कवि व्यास कहते हैं कि नीचे लटकती लटें और नींद से भरी पलकें सब भेद खोल रही हैं। मुझसे सत्य मत छिपाइये। वक्ष स्थल के दोनों ओर स्तनों के बार–बार गड़ने के निशान दिख रहे हैं। मुझे बातों में न बहलाओ। तुमने जो किया है वह मैं खूब समझ रही हूँ, जले पर नमक मत छिड़को, अर्थात् मेरे दुख को और न बढ़ाओ।

*विसरैं न ऊधौ वे गैंया और गवाल सखा,*
*विसरै न कैसऊ ब्रज भूमि हरन बाधा की।*
*विसरै न माखन की चोरी और गोरी की,*
*गहन बांह विसरै न प्रेम उर अगाधा की।*
*विसरै न व्यास जौंन रहस करे गोपन संग,*

*बिसरै न कबहूँ वा सुरत प्रन साधा की।।*
*विसरै न विसाखा की टेरन ना कबहूँ हमैं,*
ललता की हेरन मुसक्यान और राधा की।।

कृष्ण ऊधौ से कह रहे हैं कि मुझे ब्रज के वे ग्वाल बाल सखा तथा गायें भुलाने पर भी नहीं भूल रही हैं। इसी तरह बाधाहरण वह ब्रज भूमि मुझे बार–बार स्मरण आ रही है। मुझे वह माखन चोरी और हृदय में असीम प्रेम सहित मुझे रोकने का उपक्रम करते हुए सुन्दरी गोपिका द्वारा हाथ पकड़ना नहीं भूल रहा है। वह रहसलीला जो गोपियों के साथ रची, भुलाने पर भी नहीं भूल रही है। मुझे किसी प्रकार भी उस प्रन साधिका की स्मृति का विस्मरण नहीं होता। विसाखा का बुलाना, ललिता का देखना तथा राधा का मुस्कुराना मैं नहीं भूल पा रहा हूँ।

*सूनै भौंन मौन ह्वै वेवस विचारी वाम,*
*द्वार निकट ठाड़ी अति वियोग की विथा में है।*
*तौलौ आय प्रीतम परदेश गमन करबे कों,*
*माग विदा कहो हमें जाने आतुरता में है।।*
*कहत द्विज व्यास बाल मूंद रही दोनों दृग,*
*थाम रही वर कौ कर सोक की दसा में है।*
*बोलत न आनन सें पूछ रही प्रानन सें,*
*चलनें संग पीके कै जलनें विरहा में है।।*

एकान्त घर में नायिका मौन और लाचार स्थिति में दरवाजे के पास वियोग की पीड़ा से व्यथित खड़ी है। इसी समय प्रियतम विदेश जाने हेतु विदाई मांगते हुए कहता है मुझे शीघ्र ही जाना है। व्यास कवि कहते हैं कि वह बाल यौवना एक हाथ से अपनी दोनों आँखें बंद किये और एक से नायक का हाथ थामें हुए शोक से व्याकुल है। वह मुँह से नहीं बोल रही है, किन्तु अपने प्राणों से पूछती है कि



प्रियतम के साथ चलना है या विरह की अग्नि में जलते रहना है।

*बिनती घनश्याम सुनों वहियां गहौ न मोरी,*
*देर भई मोखां अति मात हूँ खिजायेगी।*
*जियरा डरात है सकुचात हों सखीन हूँ कों,*
*कोऊ जो विलोकै हंसी मोरी उड़ायेगी।*
*आई हों ववा के जान जानै दो अबै कान,*
*ललता निहार हार बेसर छुड़ायेगी।*
*हुहै, जब सूनी गली बंद हूहै चला चली,*
*आऊँगी कनाई जब जुन्हैया छिप जायेगी।।*

राधा कृष्ण से कहती है कि हे घनश्याम ! मेरी विनय है कि इस समय मेरा हाथ मत पकड़ो। मुझे बहुत विलम्ब हो चुका है। माता बहुत क्रोधित होगी। मेरा हृदय डर रहा है और सखियों का संकोच भी है कि यदि किसी सखी ने देख लिया तो वह मेरी हँसी उड़ायेगी। मेरे आने की जानकारी बाबा को है। कन्हैया अभी मुझे जाने दो। ललता देख लेगी तो हार और नथ छुड़ा लेगी। राधा कहती है कि जब गलियाँ सूनी हो जाएँगी तथा चन्द्रमा छिप जाएगा तब मैं तुमसे मिलने आऊँगी।

*हूकैं सी उठतीं सुन कोयल की कूकें वीर,*
*त्रिविध समीर धीर जिया कौ छुड़ाये री।*
*मोरन के सोर सुने मदन की मरोर होत,*
*जोवन कौ जोर जुलम विरहा ने जनाये री।।*
*भावत न व्यास बोल पातकी पपीहा के,*
*पिया के संदेश नहीं अबलौ सुन पाये री।*
*आये घनश्याम घनैं आसमान छाय रहे,*
*मोरे घनश्याम जाय सौतन ढिग छाये री।।*

कवि विरहनी की व्यथा को व्यक्त करता हुआ कहता है कि

कोयल की मधुर ध्वनि को सुनकर हृदय में हूक उठती है। तीनों प्रकार की हवायें हृदय का धैर्य तोड़ रही हैं। मयूरों की आवाजें काम भाव को बढ़ा रही हैं यौवन की बढ़ती उमंग और इस पर यह विरह का भारी अत्याचार मैं झेल रही हूँ। मुझे पापी पपीहा के बोल तब तक बिल्कुल नहीं सुहा रहे हैं जब तक प्रिय संदेश नहीं मिल जाता है। काले मेघ आसमान में छा गए हैं किन्तु मेरे घनश्याम अर्थात् प्रियतम सौत के पास रुक गए हैं।

*जल लेन मैं जात हती जमुना, उत वीन बजावत आये कन्हाई।*
*भेंट भई सकुची जिय में, उन कान ने आन करी चतुराई।*
*घूंघट खोल कपोल को चूम कें, लीन्हों सखी हँस कंठ लगाई।*
*गाज परै येसी लाज पै कै भर, आंखन श्याम कों देख न पाई।।*

एक नायिका अपनी सखी से कहती है कि मैं पानी भरने यमुना जा रही थी कि राह में बाँसुरी बजाते हुए कृष्ण मिल गए। मिलन हुआ और मैं हृदय में संकोच के कारण हिचक गई । इतने में कृष्ण ने चतुराई करके घूँघट खोल कर गाल का चुम्बन ले लिया और गले से लगा लिया। ऐसी लाज पर बज्रपात हो जिसके कारण मैं मन भर के श्याम के दर्शन भी न कर सकी।

*कंचन की पिचकारी भरैं, रंग केसर इत्र अबीर सैं झोरी।*
*धावत गावत व्यास कहें, बच पावत सावत एक न गोरी।*
*मानत नांह री वांह गहै, झट मेलत आन कपोल पै रोरी।*
*जाव न कौन हूँ आज कहूँ, ब्रज खोरन खेलत सांवरो होरी।।*

(उपर्युक्त सभी छन्द सौजन्य से :
गायक श्री घनश्याम श्रीवास एवं श्री मनमोहन श्रीवास)

कृष्ण के होली खेलने का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि सोने की पिचकारी में केसर और इत्र युक्त रंग तथा झोली में अबीर



लिए हुए हैं। गाते हुए दौड़–दौड़ कर कृष्ण होली खेल रहे हैं। इनसे एक भी गोपी कोरी नहीं बच पा रही है, वे रोकने पर मानते नहीं बल्कि बाँह पकड़ कर प्रत्येक के कपोलों पर गुलाल मल देते हैं। एक गोपिका दूसरे से कहती है कि कोई भी आज ब्रज की गलियों में मत जाना वहाँ आज कन्हैया होली खेल रहे हैं।

# मुकुन्द स्वामी

मुकुन्द स्वामी कुछ समय तक अपने समर्थ गुरु स्वामी प्राणनाथ के पास पन्ना (म.प्र.) में रहे। यहाँ रहते हुए उन्होंने कई पदों की रचना की। इस प्रकार बुन्देलखण्ड के एक बड़े भू–भाग में भक्तिपद लोक जीवन में गहरे तक रचे–बसे हैं। आपकी जन्म व मृत्यु तिथि का कोई प्रामाणिक उल्लेख नहीं मिलता परन्तु कहते हैं कि आपने मलीहाबाद में उसी स्थान पर जहाँ बैठकर वे भजन गाते थे, जीवित समाधि ली थी। इसका उल्लेख उनके इस दोहे में है –

*'श्रावण वदी शुभ दिन घड़ी, चतुरदशी गुरुवार।*
*आर्द्रा नक्षत्र दिन दुपहर, तजौ हेम कुंवरी संसार।।'*

मुकुन्द स्वामी गाँव के अपढ़, सीधे–साधे व सरल हृदय इंसान थे। इनका असली नाम मनोहर मुकुन्द था। वे अवध में किसी एक छोटे से गाँव में अपने बड़े भाई के साथ रहते थे। साथ में बूढ़ी माँ और एक विधवा बहन भी थी। मनोहर मुकुन्द बचपन से सहज, सरल और अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के थे। जीव, जगत और परमात्मा से संबंधित कई प्रश्न उनके मन को बेचैन किये रहते थे। बहुत साधु, संतों और



महात्माओं के पास गये परंतु कहीं मन को शांति न मिली। वे अपनी खोज में लगे हुए थे। भाई ने कहा – विवाह कर लो। उन्होंने साफ मना कर दिया। और भाभी ने समझाया – संसार में रहकर इससे भागना क्यों? सब कुछ सहज स्वीकार करो। भाभी के कहने पर उन्होंने घर–गृहस्थी बसाई परंतु मन तो किसी और'घर' की तलाश में भटक रहा था। असमय भाई की मृत्यु हो गई तब पूरे परिवार का बोझ मनोहर मुकुन्द के सिर आ पड़ा। भाभी को उन्होंने मातृवत आदर दिया। वे उनकी पहली गुरु हुई, जिन्होंने उन्हें संसार से पलायन नहीं, संसार में रहकर परमात्मा की सतत् खोज के लिए प्रेरित किया।

कहते हैं, जहाँ चाह होती है वहाँ राह निकल ही आती है। एक दिन कोई अपरिचित व्यक्ति उनसे मिलने घर आया। वे कहीं बाहर गये हुए थे। घर पर अकेली मनोहर मुकुन्द की माता जी थीं। जिन्होंने आगन्तुक की आवभगत की। उन्हें जलपान कराया। पूछने पर उस व्यक्ति ने अपना नाम प्राणनाथ बताया। मनोहर मुकुन्द के आते ही मिलने के लिए भेजने को कहकर वे वहाँ से चले गये।

जब मनोहर मुकुन्द घर आये तब उनकी माँ ने स्वामी प्राणनाथ के आगमन का समाचार बताया और यह भी कहा कि मिलने के लिए भेज देना, ऐसा उन्होंने आग्रह किया है। स्वामी प्राणनाथ, यह नाम सुनते ही मनोहर मुकुन्द के भीतर कुछ घट गया। जैसे वीणा के तार झंकृत हो गये। जन्मों–जन्मों से बिछुड़ा हुआ कोई प्रिय द्वारपर मिलने आया और दुर्भाग्य से वे घर पर न थे। अब कहाँ ढूढ़ें उसे कोई रास्ता, ठिकाना, गांव का नाम कुछ भी तो बताकर वे नहीं गये। परन्तु उनसे मिलना जरूरी है। मनोहर मुकुन्द को लगा कि सिर्फ उन्हीं के पास उनके सारे प्रश्नों के जवाब हैं। उन्हीं के चरणों में बैठकर मन को शांति मिलेगी। इतने बड़े जगत में कहाँ ढूंढ़ें उन्हें ?

भले ही पता न मालूम हो नाम तो मालूम है – स्वामी प्राणनाथ! पहले तो इतना भी ज्ञात न था। नाम से पूछते–पूछते ही वे खोज लेंगे अपने सत्गुरु को, इस विश्वास के साथ वे अपनी यात्रा पर निकल पड़े।

बहुत खोजते, बहुत भटकते वे एक दिन पन्ना पहुँच गये। वहाँ स्वामी प्राणनाथ से उनकी पहली मुलाकात हुई। मानो बहुत दिनों बाद दो बिछुड़े प्रेमी मिले हों। स्वामी प्राणनाथ के सान्निध्य में रहते हुए उन्हें अपने आत्मस्वरूप की पहचान हुई। मन की सब शंकाएँ समाप्त हुई। स्वामी प्राणनाथ ने उन्हें आत्मबोध कराया। यहाँ से मनोहर मुकुन्द, मुकुन्द स्वामी हुए। फिर वे हेमकुंवर सखि के रूप में श्रीकृष्ण की पराप्रेम लक्षणा भक्ति में लीन होते चले गये। वे जीवन पर्यन्त अपने गुरु स्वामी प्राणनाथ की सेवा में रहना चाहते थे। परन्तु स्वामी प्राणनाथ की शिक्षा; जीवन की जिम्मेदारियों से मुँह मोड़ने की नहीं, उन्हें साहसपूर्वक निभाने की है। इसलिए स्वामी प्राणनाथ ने उन्हें आदेश दिया कि अपने घर जाकर परिवार के प्रति अपने दायित्व को पूरा करते हुए उत्तर भारत में प्रेम लक्षणा भक्ति की रसाार बहाओ।

यहाँ से मुकुन्द स्वामी 'अह्दी मुकुन्द' कहलाये। अहदी का मतलब है, आज्ञानुवर्ती। गुरु ने आज्ञा दी और उन्होंने बिना कोई तर्क–वितर्क किये उनकी आज्ञा को तुरंत मान लिया इसलिए लोग उन्हें 'अहदी मुकुन्द' कहने लगे। वे स्वामी प्राणनाथ के आज्ञानुवर्ती होकर अपने गाँव आ गये।

मुकुन्द स्वामी के सौ पदों को पन्ना निवासी स्वर्गीय श्री ब्रजवासीलाल दुबे ने विभिन्न स्रोतों से संकलित कर उनका सरल अनुवाद कर पांडुलिपि तैयार की तथा इसे उनके पुत्र डॉ. अश्विनी कुमार दुबे पन्ना ने 'हमारो तीरथ है ब्रह्मज्ञान' नाम से श्री प्रकाशन,



दुर्ग से प्रकाशित कराया है। इसमें से कुछ उन छंदों को उद्घृत किया जा रहा है। जो पन्ना के इर्द–गिर्द लोक कंठों में अभी भी पैठ बनाये हैं।

## पद

*ऊधो! कौन बात को कीजै गारा।। टेक।।*
*ना प्रभु जाति न पांति हमारी, न हरि हितु हमारा।। 1।।*
*हम अहीर वह यादव नन्दन, जानत जग–संसारा।*
*दिन दश प्रीति करि स्वारथ हित, सो हम बूझि विचारा।। 2।।*
*मात यशोदा पिता नन्दजी, तिन्हहुँ को निठुर बिसारा।*
*कहिये कहा तुम्हैं अब ऊधौ, देखा मता तुम्हारा।। 3।।*
*कुविजा कुटिल कंस की दासी, जिन टोना पढ़ि डारा।*
*सुख लूटै लौड़ी डौड़ी दे, कहा हमारो चारा।। 4।।*
*योग युक्ति लाये तुम ऊधौ, ब्रज में आनि सँचारा।*
*सुनि बात अनसुनी भली थी, आनि जरे पर जारा।। 5।।*
*एक डाह उर शालै हमरा, दूजै लोन घाव में डारा।*
*दीन्हों घोरि गरल गोपिनको, आय मरे पर मारा।। 6।।*
*देखि दशा गोपिन की ऊधौ, नैनन नीर भरि डारा।*
*ऊधौ कहें धन्य ब्रज–गोपी, पिया परम अनुरागा।। 7।।*
*ऊधौ जानि करी गुरुगोपी, लै उपदेश सिधारा।*
*साँची प्रीति 'मुकुन्द' जहाँ है, तहँ छल बल सब हारा।। 8।।*

ऊधौ! अब किस बात के लिए शिकायत करें? कृष्ण न तो हमारी जाति के हैं और न ही हमारे हितैषी हैं। कहाँ हम अहीर जाति के और कहाँ वे यदुवंश के नंदन, यह बात सारा संसार भली–भाँति जानता है। उन्होंने अपने स्वार्थ के लिए दस दिनों की प्रीति हमसे

लगाई थी, जिसे हमने अच्छी तरह बूझ लिया है। जान लिया है। यशोदा मैया और नन्द जी जैसे माता–पिता को निष्ठुर होकर उन्होंने भुला दिया है। ऊधौ, अब कहाँ तक कहें उनकी बातें ? तुम्हारे विचार भी आज हमने जान लिए। कुब्जा नाम की कंस की दासी, जो अत्यंत कुटिल स्वभाव की है। उसने कृष्ण पर अपना जादू कर रखा है। वे उसी के वश में है। इस प्रकार वे सब प्रकार से सुख लूटते फिरते हैं, उनके सामने हमारा बस कहाँ चलेगा? ऊधौ, सुना है तुम ब्रज से योग–युक्ति लेकर आये हो, ब्रज वनिताओं को समझाने के लिए। न सुनी होती तो यह बात तो भली थी। तुम तो जले हुए स्थान को और जलाने आ गये। एक तो पहले से ही हमारा हृदय जला जा रहा था दूसरे तुमने ऊपर से नमक और डाल दिया। गोपियों के हृदय में उमड़ता दुख रूपी गरल (जहर) जो अब शांत हो रहा था, उसे तुमने फिर से घोर दिया। इस प्रकार तुमने यहाँ आकर मरे हुए को पुनः मारने का कार्य किया है। गोपियों की यह दशा देखकर आँखों में आँसू भर आते हैं। ऊधौ कहते हैं, हे ब्रज की गोपियों ! तुम धन्य हो। तुम्हारा अपने प्रीतम के प्रति अनन्य प्रेम है। इस प्रकार सोच समझकर ऊधौ ने गोपियों को अपना गुरु बनाया और उनसे ज्ञान प्राप्त कर लौटे। 'मुकुन्द स्वामी' कहते हैं कि जहाँ सच्ची प्रीत है, वहाँ छल, बल और प्रपंच सब पराजित हो जाते हैं।

*आली! हम न भये वृन्दावन के द्रुम।। टेक।।*
*हरसित विधि हरि हर ओसर, बहु कल्पित बहु कलप रही मन।। 1।।*
*जहँ श्रीकृष्ण सखिन साधन बलिता, विहरत वृन्दावन।*
*पुहुप पत्र द्रम डार लतन पर, उड़ि उड़ि पद रज परत सकल वन।। 2।।*
*ब्रज की रीति प्रीति लखि तीनहु पुर, इच्छत सुर नर देव सकल गन।*



*हम न भये ब्रज के जड़ जीवन, काहे को सुर पुर आनि धरे तन।। 3।।*
*धन्य गोकुल धन्य वृन्दावन, धन्य सों थिर–चर जीव सकल जन।*
*लखि 'मुकुन्द' लीला निज न्यारी, बारत तन मन प्रान सकल धन।। 4।।*

हे सखि! अफसोस है कि हम वृन्दावन के पेड़–पौधे न हुए। जहाँ प्रसन्नता पूर्वक हरि अपनी गउओं के साथ विचरते हैं, ऐसी बहुत सी कल्पनाएँ करते हुए मन दुखी हो रहा है। जहाँ श्री कृष्ण सखियों के संग बलखाते हुए वृन्दावन में विचरते रहते हैं। वहाँ के फूलों, पत्तों, लताओं और वृक्षों पर नटखट कन्हैया के चरणों की रज उड़–उड़ कर पड़ती है। ब्रज की यह प्रेम पूर्ण रीति तीनों लोकों के वासी, सुर, नर और देव अपने समस्त गुणों के साथ देखने की प्रबल इच्छा रखते हैं। अफसोस है कि हम ब्रज के जड़ पदार्थ तक न हुए। व्यर्थ ही यहाँ आकर नर तन धारण किया। गोकुल तथा वृन्दावन के सभी जड़, चेतन और सकल जन अत्यंत धन्यभागी हैं। 'स्वामी मुकुन्द दास' कहते हैं, जिन्होंने भी श्री कृष्ण की अद्‌भुत लीला देखी है, उन पर मेरा तन, मन, धन और प्राण सब कुछ न्यौछावर है।

*आऊँगी मैं दही लैके भोर।। टेक।।*
*दीजै आज जान घर मोहन, नागर नन्दकिशोर।। 1।।*
*हम तौ आज सखिन संग आई, जिन कीजै झकझोर।*
*हौं उठि भोर सवारे अइहौं, प्रात समय इहि ठौर।। 2।।*
*हम गोकुल की ग्वालिनी, तु कपटी कठिन कठोर।*
*चरचि जायँगी चतुर ब्रजनारी, हुइ है नगरिया में शोर।। 3।।*
*बाढ़ो प्रेम प्रवाह अपार बल, चितवत नन्दकिशोर।*
*'मुकुंद' सखि रस–बस भइ ग्वालिन, छूटि दैके प्रान अकोर।। 4।।*

कोई ग्वालिन, नटखट नंद किशोर से कहती है, मैं कल सुबह ही दही लेकर यहाँ आऊँगी। मुझे आज घर जाने दो। हम तो आज यों ही सखी–सहेलियों के संग यहाँ आ गई थीं। हमारे साथ कोई छीना–झपटी मत करना। मैं प्रातः उठकर सबेरे ही इस ओर आऊँगी। हम गोकुल की ग्वालिन हैं, हमारी बात का विश्वास करो। तुम तो कठोर और कपटी हो। यहाँ रुकने से तमाम होशियारी के बाद भी ब्रजनारी चर्चित हो जायेगी और पूरे नगर में शोर हो जायेगा। परंतु उधर प्रेम प्रवाह बहुत बढ़ गया और नंद किशोर लगातार उस सखि को निहारते रहे। स्वामी मुकुन्द दास कहते हैं कि इस प्रकार वह सखि प्रेम रस के वशीभूत होकर प्राण अर्थात् सर्वस्व देकर ही छूट पाई।

*हमारो दान दैबे, तुम खड़ी रहहु ब्रजनारी।। टेक।।*
*नित प्रति आनि दही तुम बेचौ, जा ब्रज–गाँव मझारी।*
*को जाने कित जावो चली तुम, दान नित को मारो।। 1।।*
*ऐसी बात कहहु जिन मोहन, आवत जात सदाई।*
*कबहुं न दीन्हो दान दही को, तुम नई रीत संचारी।। 2।।*
*यौवन की रस माती ग्वालिन, कहै न बात सम्हारी।*
*सब दिन लिन्हों दान दही को, तुम नई बेचनहारी।। 3।।*
*हम जानी है तुम्हरे दिलकी, अब जो चाहत गिरिधारी।*
*तिन बातन से भेंट नहीं है, मैं बरसाने की नारी।। 4।।*
*जो तुम बसो गाँव बरसाने, तो तुम निपट गँवारी।*
*लैहों छीन सबै रस गोरस, लूटि लेऊँ यह सारी।। 5।।*
*लूटनहारे आज अनोखे, छैल भये गिरिधारी।*
*जाय कहौं मैं कंसराज सें, तुमहि बात बिगारी।। 6।।*
*कंस कौ करौं विनाश क्षण में, यह कछु बात न भारी।*
*यह इतनो परताप लला को, चोरी करत चपारी।। 7।।*
*सब ग्वालिन मिलि हमहिं छुड़ायें, जब बाँधे महतारी।*



*लीला हेत उलूखल बाँधे, भक्ति हेत पग धारी।। 8।।*
*मसलि–मसलि भव–सागर तारों, दंत कथा विस्तारी।*
*इतनी सुनि नागरि हँसि के, लै गोरस कर–धारी।। 9।।*
*नागर नवल प्रेमसों लीन्हों, दोऊ कर–कमल पसारी।*
*जो यह शब्द सुनैं और गावैं, तात न तापन जारी।। 10।।*
*दास 'मुकुन्द' बिना जप योगे, मिले सो कुंज बिहारी।*
*हमारो दान दैबे, तुम खड़ी रहहु ब्रजनारी।। 11।।*

नटखट कृष्ण गोपिकाओं से कहते हैं कि हमारा दान देने तक तुम यहीं खड़ी रहो। तुम सब प्रतिदिन ब्रज–गाँव के (मझारी–बीच में) बीच में आकर दहि बेचती हो। तुम हमारा हमेशा का दान मारकर जाने कहां चली जाती हो? तुम्हारा क्या भरोसा। गोपिकाएँ नाराज होकर कहती हैं – 'हमने कभी भी किसी को दही का दान नहीं दिया। तुम ये नई रीति चला रहे हो।' नटखट कृष्ण प्रतिउत्तर में कहते हैं – 'अरी ग्वालिनों, तुम अपने यौवन के मद में बात सम्हाल कर नहीं कर रही हो। हमने सब दिन यहाँ दही का दान लिया है। तुम कोई नई बेचनहारी हो?' गोपिकाएँ कहती हैं – 'हमने तुम्हारे हृदय की बात जान ली है। हे गिरधारी! अब जो तुम चाहते हो हम जान गये हैं। हमसे अभी तक तुम्हारी मुलाकात न हुई थी। मैं (राधा) बरसाने गाँव की रहने वाली हूँ। समझे।' कृष्ण कहते हैं – 'बरसाने गाँव की हो! तो सचमुच तुम निपट गंवार हो। मैं तुम्हारा सारा रस, दूध एवं दही आदि लूट लूँगा।' राधा कहती है – 'आज अनोखे लूटनहार मिले हैं। इस लूट–पाट के लिए गिरधारी ही छैला हो गये। मैं कंसराज से तुम्हारी शिकायत करूँगी कि पहले तुमने ही बात बिगाड़ी है।'' कृष्ण कहते हैं – 'यह तो कोई बड़ी बात नहीं है। मैं तो क्षण भर में कंस का विनाश कर दूँगा।' गोपिकाएँ कहती हैं– 'यदि इतना ही तुम्हारा प्रभाव है तो चोरी–चकारी क्यों करते फिरते हो? वो दिन भूल गये जब यशोदा मैया ने रस्सी से बांध दिया था,

तब हम ग्वालिनों ने ही तुम्हें छुड़ाया था।' कृष्ण कहते हैं– 'वो तो लीला के लिए, खेल के लिए मुझे मैया ने उलूख से बांध दिया था और भक्ति के लिए मैं पग–पग चलकर उसे घसीटता रहा। इस तरह मैंने कई लोगों को भवसागर से पार किया। इन कथाओं का बहुत विस्तार है। इतना सुनकर गोपिकाओं ने हँसते हुए मोहन को दान देने की बात कही। श्याम सुन्दर ने बड़े ही प्रेम से अंजुरी भर कर दूध पिया। जो कोई भी इन शब्दों को सुनेगा उसे किसी भी प्रकार का ताप न तपायेगा और न जलायेगा। स्वामी मुकुन्द दास जी कहते हैं कि मुझे तो बिना किसी योग और तप के श्री कुंजबिहारी मिल गये हैं।

*वंशी ध्वनि प्राण हरे।। टेक।।*
*गोप बधू श्रवनन सुनि धाई, टोना सहज परे।। 1।।*
*बिसरी सुधि शरीर सजन पति, पिता पुत्र बिसरे।*
*लोक–लाज, कुल–कान बिसरि गई, रही श्याम रट रे।। 2।।*
*बस्तर त्यागि नगिन उठि धाईं, उलटे सिनगार करे।*
*चलि चलि गई जहां श्याम मनोहर, मुरली अधर–धरे।। 3।।*
*लियो है लगाय श्याम उर अपने, विविध विलास करे।*
*दास मुकुन्द पियै मिलीं प्यारी, बहुरि न आई घरे।। 4।।*

मुकुन्द स्वामी कहते हैं, श्री कृष्ण की वंशी की ध्वनि, प्राण को हरने वाली है इस वंशी की ध्वनि को सुनकर ही गोप वधुएँ वैसे ही भागकर चली आई, जैसे उनपर कोई जादू छा गया हो। वंशी की ध्वनि सुनकर उन्हें अपने पिता, पुत्र, साजन और शरीर तक की सुधबुध न रही। लोक–लाज और कुल की मर्यादा को भूलकर वे श्याम–श्याम ही रटने लगीं। कोई उलटे साज–सिंगार करके और कोई अपने वस्त्रों को ही त्याग करके जहाँ श्याम सुन्दर अधरों पर मुरली धरे हुए हैं, वहाँ आ गई। सबने अपने श्याम सुन्दर को हृदय से लगाया और कई प्रकार से आनंद प्राप्त किया। स्वामी मुकुन्द दास



कहते हैं कि इस प्रकार सबको अपने प्रिय पति मिल गये अतः वे पुनः लौटकर अपने घर नहीं आई।

*वन से आवत धेनु चराये।। टेक।।*
*लीन्हें लाल ललित कर लकुटी, गौवन को गोहनाये।। 1।।*
*उड़ि उड़ि गोधुर परत बदन पर, सुन्दर परम सुहाये।*
*सुन्दर मुख पर रज लपटानी, कनक धूर छवि छाये।। 2।।*
*मोर मुकुट सिर कानन कुंडल, केशर खौर खेंचाये।*
*बैजंती उर माल विराजे, चन्दन अगर चढ़ाये।। 3।।*
*पीताम्बर फहरात बदन पर, सुन्दर परम सुहाये।*
*कटि पर लाल काछनी काछे, नटवर भेष बनाये।। 4।।*
*नाचत गावत मुरली बजावत, आनन्द उमंग बढ़ाये।*
*हलधर सहित ग्वाल सब संग लिये, हँसत खेल घर आये।। 5।।*
*कनक आरति साजि यशोमति, मोतिन थाल भराये।*
*दास 'मुकुन्द' जी को राज मिले हैं, ज्यों निर्धन धन पाये।। 6।।*

श्रीकृष्ण वन से गायें चराकर लौट रहे हैं। हाथ में लाल रंग की सुन्दर, मनोहारी छड़ी लिए हुए हैं, जिससे गायों को हांकते हुए वे आ रहे हैं। गायों के चलने से धूल उड़ रही है। यह गौधूर श्याम सुन्दर के बदन पर पड़ रही है, जिससे वे और सुन्दर लग रहे हैं। श्री कृष्ण के सुन्दर मुखारबिंद पर लगी धूल, स्वर्ण रज के समान लग रही है। उनके सिर पर मोर पंख वाला मुकुट, कानों में कुण्डल और माथे पर केशर का तिलक (खौह तिलक) शोभायमान है। बदन पर सुगन्धित चन्दनों का लेप किए हुए वे हृदय पर वैजन्ती की माला धारे हुए हैं। बदन पर लहराता हुआ पीले रंग का वस्त्र अत्यन्त शोभायमान है, वे कमर में सुन्दर लाल रंग का वस्त्र पहने हुए नृत्य मुद्रा बनाये हैं। इस प्रकार नाचते, गाते और मुरली बजाते हुए श्री कृष्ण आनंद एवं उमंग को नित्य बढ़ा रहे हैं। बड़े भाई हलधर और सब ग्वाल बालों को साथ लिए श्यामसुन्दर हँसते खेलते हुए घर आ गये हैं।

सोने के थाल में आरती सजाकर उसे मोतियों से भरकर यशोदा मैया द्वार पर खड़ी हैं। स्वामी मुकुन्द दास कहते हैं कि इस छवि की चरण रस पाकर उन्हें, निर्धन को धन के समान सब कुछ मिल गया है।

*भयो मैं बाजीगर को बँदरा।। टेक।।*
*भवसागर में भूलि परौ मैं, विषय बड़ो अगरा।। 1।।*
*मैं नाचत प्रभु मोहिं नचावत, हुकुम धनी का जबरा।*
*आशा डोरि गुदी में बांधि, भरमि फिरौं सिगरा।। 2।।*
*मोह की ढाल क्रोध डुगडुगी, बाजत दोऊ तरा।*
*नाचत लोभी नचावत माया, मदन मन्द अँधरा।। 3।।*
*नाच्यौ जन्म जन्म मैं बहुविध, केहु न मुहिं अदरा।*
*सुख संगी मेरे बली संगाती, सबहुन मोहिं अदरा।। 4।।*
*नाच्यौ नाच मैं युग युग, भमि भमि बिगरा।*
*अब नहिं नाचि सकौं क्षण एकौ, दुखित मोर पगरा।। 5।।*
*अब हिय हारि शरन तेरी आयो, नाचि कूदि उबरा।*
*दास 'मुकुन्द' दीन होय भाषे, लेहु मोर मुजरा।। 6।।*

मुकुन्द स्वामी कहते हैं कि मैं तो बाजीगर का बंदर हो गया हूँ। भवसागर में आकर मैं अपने मूल स्वरूप को भूल गया हूँ, यहाँ की विषय बाधा बड़ी गंभीर है। मैं नाच रहा हूँ और मेरे प्रभु मुझे नचा रहे हैं। धनी का हुकुम जबरदस्त है। आशा की डोर मेरी गुदी में बंधी है और भ्रमित–सा मैं चारों ओर घूम रहा हूँ। मोह की ढोल और क्रोध की डुगडुगी दोनों निर्मुक्त हो बज रहे हैं। लोभ नाच रहा है और माया उसे नचा रही है। कुबुद्धि के कारण काम अंधा हो गया है। इस प्रकार मैं जन्म जन्मान्तर से कई प्रकार से नाच रहा हूँ। कोई भी आदर नहीं देता। जबकि इस माया में मेरे संगी साथी जो सुख–दुख महसूस करते हैं, वे सब लोग जरूर मुझे आदर प्रदान करते हैं। युगों–युगों से मैं नाच रहा हूँ। बार–बार घूमकर भ्रमित होकर मैं बिगड़ गया हूँ। लेकिन अब मैं एक क्षण के लिए भी नहीं नाच



सकता। अब मेरे पैर दुखने लगे हैं। हे प्रभु! अपना हृदय हारकर अब मैं आपकी शरण में आ गया हूँ। सारी कूद–फांद से मैं ऊब गया हूँ। मैं आपका दास 'मुकुन्द' दीन हीन हो यह प्रार्थना कर रहा हूँ कि हे प्रभु ! मेरा प्रणाम स्वीकार करो।

*अपने श्याम के गुन गाऊँ।। टेक।।*
*गुन गाऊँ चरन चित लाऊँ, बहुरि न भव–जल आऊँ।। 1।।*
*चुन चुन कलियाँ मैं सेज बिछाऊँ, बगलन फूल भराऊँ।।*
*सेज सुरंगी पर पिया को पौढ़ाऊँ, करसे बीड़ा आर गाऊँ।। 3।।*
*हेत करके तरवा सोहराऊँ, करसों बिजना डुलाऊँ।। 4।।*
*मीठी मीठी बात करत पिया हमसों, सुनि सुनि के सुख पाऊँ।। 5।।*
*कहत 'मुकुन्द' पिया मिलें हमसों, हँसि हँसि कण्ठ लगाऊँ।। 6।।*

मुकुन्द स्वामी कहते हैं कि मैं अपने श्याम (श्रीकृष्ण) के गुण गा रहा हूँ। प्रभु के गुण गाने के साथ ही उनके श्री चरणों को अपने चित्त में इस भाव के साथ धारण कर रहा हूँ कि हे धनी! पुनः इस भाव–सागर में न आना पड़े ऐसी कृपा करना। कलियों को चुनचुन कर मैंने अपने पिया के लिए सेज बिछाई और बगलों में तरह–तरह के फूल भरे। इस प्रकार की सुरंगी सेज पर पिया को बिठाया, तद्–उपरान्त पान–बीड़ा प्रभु को अरोगाया (खिलाया) बड़े प्रेम से प्रीतम के तरवा (पैरों) को सहलाया (दबाया) तथा हाथों से विजना (पंखा) डुलाया। बीच–बीच में पिया जी मीठी–मीठी बातें हमसे करते हैं, जिनको सुनकर मुझे अपार आनन्द की अनुभूति हो रही है। मुकुन्द स्वामी कहते हैं कि मुझ अंगना को मेरे प्रीतम मिले मैं बार–बार हँस–हँस के उनको कंठ लगा रही हूँ।

*प्रीतम! प्रीत न करिये, प्रीत किये दुःख होये।*
*सुन मन कंथ सुजान सुमन होय, प्रेम के फंद न परिये।। 1।।*
*लोक वेद की राह कठिन है, कुल कलंक तें डरिये।*

*अरपै शीश प्रेम तब उपजै, जब कुल देह विसरिये।। 2।।*
*गुरु जन लाज कानि दुर्जन की, कहु कैसे निस्तरिये।*
*पिया मिलन को प्यारी तलफै, कैसे मित्र जुहरिये।। 3।।*
*पिया मिले तो जग रूठत है, जग मिले निदरिये।*
*ए दोनों दुःख आनि परे हैं, कहु कवनि भांति निरवरिये।। 4।।*
*जा तन लागे सोई तन जानै, दिल बीच बात विचरिये।*
*पीर पराई कोइ का जानै, कासो टेरि पुकरिये।। 5।।*
*प्रीत करो तो पूरि निबाहो, निमेष नेह ना टरिये।*
*जुग जुग होत दोऊ कुल निर्मल, प्रेम पंथ यों वरिये।। 6।।*
*प्रान जाय प्रन जान न दीजै, जो पिय मन न बिसरिये।*
*विघन अनेक परे झिर ऊपर, तो प्रिय मन उर धरिये।। 7।।*
*प्रेम पंथ बारीक बहुत हैं, समुझि बूझि पग धरिये।*
*ऊँची विकट सिलसिली घाटी, पगु धरते गिर परिये।। 8।।*
*देख सखि मन सूर सूरकी, सो गहि सुरति सम्हरिये।*
*सूरति सीढ़ी पाँव दिये जिन, संतन नेह निवरिये।। 9।।*
*होय सनेह नेह कर्म भ्रम तजिकै, मन वचनकर्म पिय बरिये।*
*रहस 'मुकुन्द' मिले पिय अपने, जग लज्या परिहरिये।। 10।।*

प्रीतम, प्रीत मत कीजिए प्रीति का मार्ग बड़ा दुखदायी है। प्रेम करने में अपार दुख है। हे मन! तू तो इन्द्रियों का स्वामी सयाना और समझदार है। प्रेम के फंदे में मत पड़ जाना। सांसारिक एवं वैदिक मर्यादाओं का मार्ग बड़ा कठिन है। कुल कलंक से भी डरना पड़ता है किन्तु जो प्राणों का मोह त्यागकर शीश अर्पण को तैयार रहता है, जिसने अपने कुल की मर्यादा को छोड़कर अपने शरीर की सुधि भी बिसरा दी हो तब उसमें कहीं प्रेम प्रफुल्लित होता है। प्रिया अपने प्रीतम से मिलने के लिए तड़फ (व्याकुल) रही है किन्तु बड़ों की मर्यादा तथा दुर्जनों की निगाह से कैसे बचकर प्रिय से मिले। प्रेम की स्थिति बड़ी विकट है यदि प्रिय से मिलते हैं तो संसार (जग) रूठता



(नाराज) है और मिले बिना चैन नहीं है। ये दोनों प्रकार से दुख आड़े हैं इनसे कैसे पार पायें ? जिसके शरीर में यह रोग (प्रेम) लगा है वही इसके दर्द को समझता है। थोड़ा आप दिल से विचार कीजिये कि दूसरे के दर्द को अन्य व्यक्ति क्या जानें? तथा दर्दी अपनी पीड़ा को किससे कहे? कौन सुनने वाला है ? यदि आपने प्रीत की है, तो उसे पूर्णतः पालन कीजिए एक क्षण के लिए भी प्रेम रंग में विलग न होइये। प्रेम–मार्ग को इस दृढ़ता से वरण कीजिए कि युग–युगान्तर तक दोनों कुल का निर्मल यश कायम रहे। प्रीतम की छवि, उसकी याद बड़ी दृढ़ता एवं प्रण से हृदय में धारण कीजिए। भले ही अनेक विघ्न–बाधाएँ सिर पर पड़ें और अन्त में प्राण भी त्यागना पड़े, किन्तु प्रीतम की छवि न बिसरे। प्रेम–मार्ग बड़ा कठिन है। बहुत सोच विचारकर इस पथ पर पग रखना चाहिए। प्रेम पंथ की घाटी ऊँची, चिकनी और ढलानवाली है। इस पर पैर रखने से पहिले ही गिरने का अंदेशा (डर) रहता है। हे सखि! मेरे मन को आठों याम प्रीतम की छवि की याद के अतिरिक्त कुछ नहीं सूझता। संतों की कृपा एवं प्रीतम की सुरति (याद) की सीढ़ी पर चढ़कर ही हम प्रीतम के पास पहुँचेंगे। मन, वचन, कर्म से जो अपने प्रीतम का निछावर है जिस प्रेमी को ऐसा अनन्य माधुर्य प्रेम का रंग चढ़ गया है उसके सभी कर्म और सांसारिक भ्रम दूर हो जाते हैं। मुकुन्द स्वामी कहते हैं कि वह प्रेम दीवानी जग की सभी मर्यादाओं को तजकर अपने पिया से मिलती है।

*ब्रज की रीत प्रीत गति न्यारी।। टेक।।*
*कहि न सकत महिमा गुन सेसहु, शारद सकुचि समझि पचिहारी।। 1।।*
*अगम निगम पढ़ि थके अगोचर, गावत ग्रन्थन विविध विचारी।*
*पावत नहि परमारथ की गति, स्वारथ लागि सकल संसारी।।2।।*
*यह तो कथा पुनित पुरातन, प्रगट कही शुक व्यास पुकारी।*

*प्रेम भक्ति गोपिन की महिमा, लिखी भागवतिहिं अधिकारी।।3।।*
*राम अखंड सदा वृन्दावन, होत न भंग अभंग सुखकारी।*
*सो सुख विधि हरिहर नहिं जाने, सो 'मकुन्द' बिलसे ब्रज–नारी।। 4।।*

(सभी छन्द डॉ. अश्विनी कुमार दुबे, पन्ना के सौजन्य से)

मकुन्द स्वामी कहते हैं कि मैं ब्रज का कैसे वर्णन करूँ ? ब्रज की रीति–रिवाज, रहन–सहन और प्रीति भी अनन्य अनुपम अलौकिक है वह त्रिलोक से भिन्न है। उसकी महिमा का वर्णन शेष शायी नारायण और शारदे भी करने में सकुचाती हैं। वेद और पुराणों ने उस परम तत्व (पूर्ण ब्रह्म) की बहुत खोज की, अंत में हार कर उसे अगम, निगम, अगोचर संज्ञा से अभिभूत कर दिया। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मायावी स्वार्थ से आच्छादित है, उस पूर्ण ब्रह्म की गति को किसी ने भी नहीं जाना। यह कथा (ब्रज में गोपि कृष्ण का अवतरण) बड़ी पवित्र पुनीत और पुरातन है। शुक और व्यास जैसे ऋषियों ने गोपियों की माधुर्यमयी अनन्य प्रेम भक्ति की महिमा का एक कण–मात्र ही भागवत में वर्णन किया है। गोपी कृष्ण प्रेम की महिमा तो अवर्णनीय है। सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म श्री कृष्ण रास बिहारी की रास क्रीड़ा इस क्षय संसार में भिन्न चौदह लोकों से परे अखंड (जो महाप्रलय में नष्ट न हो) वृन्दावन में सदा सर्वदा अविरल गति से आज भी हो रही है वह अखंड शाश्वत है उसका क्रम कभी नहीं टूटता। मुकुन्द स्वामी कहते हैं कि उस अखंड वृन्दावन की रास क्रीड़ा का रसानन्द ब्रज वनिताओं ने प्राप्त किया है, जिसे त्रिदेव; ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी नहीं जानते।



## पं. घासीराम व्यास

पं. घासीराम व्यास का जन्म झांसी जिले के मऊरानीपुर कस्बे के सम्वत् 1903 की अनन्त चतुर्दशी को हुआ था। इनके पिताजी का नाम पं. मदन मोहन व्यास तथा माताजी का नाम श्रीमती राधारानी था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा मऊरानीपुर में ही हुई। हिन्दी मिडिल उत्तीर्ण करने के पश्चात् संस्कृत का अध्ययन उन्होंनें गुरुवर श्री गणपति प्रसाद चतुर्वेदी की पाठशाला में किया। इन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ संघर्ष करने में बढ़ चढ़कर हिस्सेदारी की। इनकी माँ भी देशभक्त स्वतंत्रता सेनानी थीं, उनका सीधा प्रभाव घासीराम जी के जीवन पर पड़ा। इन्होंनें कई बार जेल यात्रायें की। 1921 से उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेना प्रारंभ किया और आजीवन राष्ट्र की सेवा हेतु प्रस्तुत रहे। आपने जिला नमक सत्याग्रह 1930 में, किसान कांफ्रेंस 1932 में, अग्रवाल महासभा अधिवेशन 1933 में तथा विदेशी वस्त्र बहिष्कार आन्दोलन 1935 में सक्रिय भागीदारी की। सन् 1941 में जेलयात्रा की। जेल में ही उन्होंने 'रुक्मणी मंगल' तथा 'श्याम संदेश' पुस्तकें लिखीं। जेल से निकलने पर बीमार हो गए और फिर स्वस्थ नहीं हुए।

इन्होंने प्रत्येक विषय पर रचनायें लिखीं हैं जिनमें प्रकृतिपरक, श्रृंगारिक तथा राष्ट्रीय विचारधारा से युक्त महत्वपूर्ण हैं।

## विह्वलता

*एक समय काहू सुजान सौं, ब्रज कौ सुन्यो सँदेसौ।*
*भई दशा विह्वल मोहन की, देखत लगै अँदेशौ।।*
*नंद से दीन, दुखी यशुदा से,*
*जके बलबीर से धावत दौरैं।*
*श्याम सखान से ठाँड़े ठगे,*
*गिरमान कबौं बछरान से तौरैं।।*
*'व्यास' कहैं रहैं भीगी सनेह सौं,*
*गोपिन सी अखियाँन की कोरैं।*
*होत कदंब से अंग छनै छन,*
*हीय उठें यमुना सी हिलोरैं।।*
*राधिका, राधिका टेरैं हँसैं,*
*कबौं मौन रहें कबौं आँसू बहाबैं।*
*'व्यास' कहैं इमि दीन दयालु की,*
*ऊधव देखि दशा दुख पावैं।।*
*बात कह्यो चित चाहै कछू,*
*पर बैन नहीं मुखतें कहि आवैं।*
*बुद्धि विवेक बढ़ावैं अयान से,*
*सोचैं सुनें सकुचैं रहिजावैं।।*

श्रीकृष्ण जी ने किसी समय किसी सज्जन से ब्रज का संदेश सुना और ऐसे व्याकुल हो गये कि अनिष्ट की आशंका होने लगी।

कभी वे नन्द बाबा की तरह दीनता प्रदर्शित करते तो कभी



माता यशोदा के समान दुखी हो जाते, कभी बलवीर की तरह हठ करते हैं कभी दौड़ने लगते हैं, कभी सखाओं की तरह कुछ आश्चर्य से मानो स्तब्ध से खड़े हो जाते हैं और कभी लगता जैसे कोई गाय का बछड़ा गले की बंधी रस्सी तोड़ने का प्रयास कर रहा हो। व्यास कवि कहते हैं कि उनकी आँखों की कोरें गोपियों की तरह प्रेम के जल से भीगी रहती हैं, प्रति क्षण उनके शरीर अंग कदंब की तरह हो जाते हैं और हृदय में यमुना की तरह तरंगें उठती हैं।

कभी–कभी राधिका–राधिका कह कर बुलाने लगते हैं, कभी हँसने लगते हैं, कभी मौन हो जाते हैं और कभी आँसू बहाने लगते हैं । व्यास कवि कहते हैं कि दीनों पर दया करने वाले श्री कृष्ण की यह हालत देखकर उद्धव जी दुखी हो जाते हैं। कभी–कभी श्री कृष्ण जी मन से कुछ बात कहना चाहते हैं किन्तु मुख से शब्द नहीं निकलते। कभी–कभी कुछ ऐसे विचारों को अभिव्यक्त करते हैं मानो इन्हें इसका ज्ञान ही न हो, फिर कुछ सोचने लगते हैं और कुछ संकोच करते हुए चुप रह जाते हैं।

## विश्रब्धय नवोढ़ा

*सहज श्रृंगार शुचि घार अंग अंगन में,*
*चारु नव छब की छटान छिति छोड़ै है।*
*केलि कृत कलित कलान चरचान सुन,*
*मुर मुसकाय मोद मान मुख मौड़े हैं।*
*'व्यास' कहैं प्रीतम के संग परयंक पर,*
*पौंढ़ी प्रेम पूरन प्रतीत जिय जोड़ै है।*
*नींद त्याग सुभग सुजान कौन कारन तें,*
*निज पट तात तान गाढ़े कर ओढ़ै है।।*

नायिका साधारण श्रृँगार अपने पावन अंगों में धारण करके मनोहर नवल सौन्दर्य की प्रभा धरा पर बिखेर रही है। क्रीड़ा के कृत्य

प्राप्त होने वाली तुष्टि चर्चा सुनने पर वह मुड़कर मुस्करा लेती है और मन में आनंद का अनुभव करते हुए मुख दूसरी ओर मोड़े रहती है। व्यास कवि कहते हैं कि नेह में परिपूर्ण और विश्वास हृदय में रखे हुए प्रियतम के साथ पलंग पर लेटी हुई है किन्तु किस कारण से अपनी नींद को त्याग कर वह भाग्यवान चतुर नायिका अपना वस्त्र अच्छे से खींचकर ओढ़े हुए है।

### प्रेम गर्विता

*मेरी शुचि मान सीख धारत हिये में लखि,*
*कबहुं न दीख परदार परदावैंरी।*
*मेरौ गुन गायके अघाय सुखपाय नाहिं,*
*कहत सुनाय नाहि नेह हू लजाबैंरी।*
*'व्यास' कहैं आली प्रीत पाली वनमाली रीत,*
*निपट निराली यों निकाली न छिपावैरी।*
*आली तू बताय कौन कारन अमान मान,*
*मेरे बिन कान काहे पान हू न खाबैंरी।।*

नायिका कहती है कि मेरा मन परामर्श मानकर वे उसे हृदय से धारण करते हैं उन्हें कभी भी परस्त्री के पास जाते नहीं देखा।

मेरी प्रशंसा वे सभी को सुनाने में कभी लजाते नहीं है और न कभी छकते हैं। व्यास कवि कहते हैं कि हे सखि! वनमाली श्रीकृष्ण ने नेह की परम्परा को बड़े अनोखे ढंग से पालन करते हुए उजागर किया, कभी गुप्त नहीं रखा। हे सखि! तू बता किस कारण से वनमाली अभिमान रहित होकर मेरे बिना पान भी नहीं खाते।

### रूप गर्विता

*उमँग उछाय छाय पूजन प्रतीत रीत,*
*मंदिर पुनीत आई शुभ अवसर में।*



*दूर तें विलोक बहु विकसित भांत भांत,*
*धाई गौर हरवर हेत हरवर में।*
*'व्यास' कहैं सुमति सुजान हौ सखीरी सुनौ –*
*हारी हीय अमित उपाय कर कर में।*
*मिलत न ढूढ़े कौन कारन सु ऐकौ आज,*
*प्रफुलित सुमन सरोज सरवर में।*

*उतर अटातें अति तृषित मंगायौ शुभ,*
*सलिल समोद अनुराग रस वोरे कौ।*
*तुरत सुजान गुणवान सखि दीनो आन –*
*लाय कर मधुर महान घट कोरे को।*
*'व्यास' कहैं ज्योंही चाह अधर लगायो ताहि –*
*पान हेतु सहज सुभाव भल भोरे कौ।*
*कारन सुकौन अनुमान ढुरकायौ बाल,*
*निर्मल पुनीत जल कंचन कटोरे कौ।*

*प्रात उठ अमित अनंद की उमंग संग,*
*अतन तरंग अंग अंग दरसावै है।*
*सुभग सखीन संग लैकें परवीन आन,*
*पनघट की न कल कौतुक सुहावै है।*
*'व्यास' कहैं विशद विचार चारु नीके उर,*
*विविध विनोद सों प्रमोद सरसावै है।*
*सुमति सुजान कौन कारन सुजान घट –*
*भर भर वारि वार वार ढुरकावै है।*

अधिक उत्साह भरी नायिका परम्परागत आस्था सहित किसी शुभ समय पर मंदिर में पूजन के लिये आई। उस सुन्दरी ने दूर से खिले हुए विविध प्रकार के पुष्प देखे तो जल्दी में वह शीघ्रता से उस ओर भागी। व्यास कवि बताते हैं कि वह कहती है कि– हे अत्यन्त

बुद्धिमान और चतुर सखी ! सुनो, मैं अनेक प्रयत्न कर कर के थक चुकी किन्तु क्या कारण है कि आज एक भी खिला हुआ कमल का पुष्प सरोवर खोजने पर भी नहीं मिल रहा।

अत्यन्त प्यास से व्याकुल नायिका ने छत से नीचे उतर कर आनन्द प्रेम रसयुक्त वाणी से आनंद सहित उत्तम जल मंगाया। तुरंत चतुर गुणवान नायक ने उत्तम कोरे घड़े का मीठा जल लाकर दिया। व्यास कवि कहते हैं कि अनुमान कर बताओ कि क्या कारण है कि उसने जैसे ही स्वाभाविक रूप में भोलेपन से पीने की इच्छा से होठों से लगाया कि तुरंत सोने के कटोरे के पावन निर्मल जल को लुढ़का दिया।

नायिका प्रातःकाल असीमित आनंद की पूर्णता के साथ उठती है, उसके प्रत्येक अंग से कामदेव की हिलोरें उठतीं दिखाई देती है। मनोहर और चतुर सखियों को साथ लेकर पनघट पर सभी क्रियायें करने का परिहास उसे अच्छा लग रहा है। व्यास कवि कहते हैं कि उसके हृदय में स्वच्छ, सुन्दर और उत्तम विचार है । वह अनेक क्रीड़ायें करके आनंद बिखेर रही है किन्तु क्या कारण है कि वह बुद्धिमान और चतुर नायिका जानबूझकर बार–बार घर में पानी भरती और लुढ़काती है।

## आगत पतिका

*आली दिन रैन है न चैन चित प्यारे दिन,*
*डूबी रहौं शोक सिन्धु विरह अथाहने।*
*मन बहलायवे कौं आज हौं कलिन्दी तीर,*
*गई जो कछूक दूर सुमति सराहने।*
*'व्यास' कहैं भली भांत हृदय विचार चारु,*
*भेद तौ बतावो कौन कारन अचाहने।*
*सुमति प्रसंग भरे आनँद उमंग भरे,*



*पंथ काट गयेरी कुरंग कर दाहिने।*

*प्रीतम कौ आगमन समुझ सुभागमन,*
*अति अनुरागमन मांग कौ मंगावैरी।*
*सौतिन के साल हीय मोतिन के माल जाल –*
*जोतिन जगावै काम जोतन जगावैरी।*
*सुरँग दुकूल 'व्यास' बैंदी छवि मूल झूल,*
*शीशफूल राशिफूल प्रेम सौं पगाबैरी।*
*सखिन दुरावै भेद नाहिनै बतावैं आजु,*
*क्यों न दृग कंजन में अंजन लगावैरी।*

*विरह दुखाती नैन नीर झरलाती रहै,*
*अति अकुलाती देख अवध बिताती है।*
*सोचन सकाती कबौं नींद हू न आती नेक,*
*रोज बहु भांति भले शकुन मानती है।*
*'व्यास' कहैं पाई प्रेम पाती प्राण प्रीतम की,*
*सुभग सुहाती बाम भुज फरकाती है।*
*मोद मद माती है विनोद बरसाती है, सु –*
*बाल अधराती माहिं गाती क्यों प्रभाती है।*

हे सखि ! प्रियतम के बिना मन में रात–दिन शान्ति नहीं रहती । मैं विरह के अथाह समुद्र में डूबी रहती हूँ। दुःख की बात को भुलाकर मन को दूसरी ओर ले जाने के प्रयास में मैं आज यमुना नदी के किनारे कुछ दूर तक गई जिसकी सुबुद्धि ने प्रशंसा की। व्यास कवि कहते हैं कि अच्छी तरह से हृदय में विचार कर इस भेद को उजागर करें कि किस कारण से वह निस्पृह हो गई। तभी, हे सखी ! काला हिरण दाहिनी ओर को छोड़ते हुए रास्ता काट गया जिससे उस बुद्धिमान नायिका के मन में नवीन प्रसंग का भाव आते ही आनंद की हिलौरें उठने लगी।

प्रियतम के आने की बात मन में जानकर नायिका अपने मन में अत्यधिक प्रेम को बढ़ा रही है। सौत हृदय को कष्ट देने वाली मोतियों की माला पहिने हुए है और कामदेव को जागृत करने की अनेक क्रियायें करती है। लाल रंग का दुकूल, माथे पर झूलना सहित बेंदी और ऊपर शीश फूल एवं राशि फूल आदि सम्भाल कर सजाती है। किन्तु सखियों से एक बात छिपाये हुए है, इस भेद को आज नहीं खोल रही कि नयन कमलों में अंजन क्यों नहीं लगा रही है ?

विरह की वेदना से दुखी नायिका की आँखों से लगातार जल बह रहा है। अत्यन्त व्याकुलता के साथ अवधि व्यतीत करती है। चिंता में कभी अधिक दुखी रहती है, कभी–कभी नींद भी नहीं आती है। प्रति दिन अनेक प्रकार से शुभाशुभ लक्षणों पर विचार करती है। व्यास कवि कहते हैं कि प्रियतम का प्रेम पत्र पाकर सुखद अनुभव कर रही है और उसकी बायीं बांह स्पंदित हो रही है (शुभ सकुन–बायां भाग फरकना)। आनंद में उन्मादित होना उसे अच्छा लगता है और वह परिहार भी खूब कर रही है किन्तु वह बाल यौवना आधी रात में प्रभाती क्यों गाती है?

**माननी**

*साज कर सकल श्रृगार चारु अंग अंग,*
*वसन सुरंग रंग धार के नवीनो है।*
*बैठी है प्रवीन शीश महल सखीन मध्य,*
*चित हित चीन प्रेम पूरन सुकीनो है।*
*'व्यास' सुख मान आयो वाही समै कान तहँ,*
*सुखमा निधान गुणवान रस भीनो है।*
*कारण सुकौन बाल परम प्रमोद पाय,*
*सामुने सु पीठ कर फेर मुख लीनो है।*

सभी प्रकार श्रृंगार अपने सभी सुन्दर अंगों में सजाकर अच्छे



रंग के नये वस्त्रों को उसने धारण किया है। वह चतुर नायिका शीश महल में सखियों के बीच बैठी है और उसका मन हित चिन्तन करते हुए प्रेम की पूर्णता को प्राप्त है। व्यास कवि कहते हैं कि उसी समय आनंदित मन से सुख–सौन्दर्य, गुणवान और नेह रसासिक्त कन्हैया (श्रीकृष्ण) वहाँ आ गया फिर क्या कारण है कि उस बाल यौवना ने परम आनंद पाकर भी उसके (नायक के) सामने पीठ कर ली और मुख भी दूसरी ओर कर लिया।

**धीरा–धीरा**

*सेज पर सुभग सुजान प्राण प्यारे संग,*
*पौंड़ी रस रंग भरी अंग छबि छाती है।*
*सुनत विदेश कौं पयानो परभात ही तें,*
*जुगति जनाती सोच सोच सकुचाती है।*
*'व्यास' कहैं लाती नैन नीर सरसाती कछू –*
*दुख दरसाती मुख मोर मुसकाती है।*
*मोद मद माती है विनोद बरसाती फेर –*
*बाल अधराती मांहि गाती क्यों प्रभाती है।*

नायिका अपने सुखद और प्रवीण प्रियतम के साथ नेह रस से पूर्ण और अंगों की कान्तिमय आभा के साथ शैय्या (पलंग) पर लेटी हुई है। प्रातः प्रियतम को विदेश जाने की बात को सुनते ही युक्तियाँ सोचती और कुछ कहने में संकोच भी करती है। व्यास कवि कहते हैं कि कभी वह आँखों में पानी बहाती है। कुछ दुख भी प्रकट करती है और कभी मुख मोड़ कर मुस्करा लेती है। आनंद में उन्मादित होना उसे अच्छा लगता है और वह परिहास भी खूब कर रही है किन्तु वह बाल यौवना आधी रात में प्रभाती क्यों गाती है ?

**रति–प्रीता**

*नवल वधू कौ नित नवल सुजान संग,*

*नवल सनेह पुंज सरसत जावै है।*
*गोद भर परम प्रमोद सों विनोद कर,*
*कोक की कलान में प्रवीन सुख पावै है।*
*'व्यास' कहैं मदन सुसास साज नीकी भांत,*
*कारन सु आज कछु समुझ न आवै है।*
*आधीरात ही तें कौन बात कौं विचारैं सारे –*
*गीत उपचारैं क्यों मलार गीत गावै है।*

*कलित कलान केलि कीन्ही केलि मंदिर में,*
*काम की अलेल झेल सुख सरसानी त्यों।*
*सहज स्वभाव वर विविध विभाव भाव,*
*हाव भाव ठानै सारी रैन रुचि मानी ज्यों,*
*'व्यास' कहैं कौन हेत भूल भूल भ्रम भ्रम –*
*वाही भाँत फेर धार निपट नदानी यों।*
*शारद की शेष की सुरेश की विहाय बाल –*
*प्रात काल नारद की कहत कहानीं क्यों।*

नई वधू का नये नायक के साथ ढेर सा नूतन प्रेम पनपता जा रहा है। रतिविद्या में निपुण नायक नायिका को गोद में लेकर अत्यन्त आनंद की उमंग में क्रीड़ायें करते हुए सुख प्राप्त करता है। व्यास कवि कहते हैं कि अच्छी तरह से कामदेव की सज्जा सजाती है किन्तु यह बात समझ में नहीं आती कि आधी रात के समय किस बात का विचार करके सभी गीतों को छोड़कर मलार गीत गाती है।

नायिका ने सुन्दर कलाओं से क्रीड़ा मंदिर में विविध काम–क्रीड़ाओं का आनंद लिया और काम के आवेग को सरस और सुखमय बनाते हुए स्वभाव की सहजता के साथ भाव–विभावों की विविधता और प्रेमातुर अवस्था में आकर्षक चेष्टाओं से पूरी रात्रि को अनुरागमयी और रुचिपूर्ण कर लिया। व्यास कवि कहते हैं कि वह पुनरावृत्ति करती है पूरी तरह नादान की तरह भ्रमात्मक स्थिति में



एक ही भूल की पुनरावृत्ति न जाने किस लिये करती है। शारदा, शेष और सुरेश को छोड़कर वह बालयौवना नारद की कहानी क्यों कहती है?

## क्रिया विदग्धा

दोहा – *कौतुक करत विचित्र यह बार बार किहि हेत।*
*भरे देत ढुरकाय घट, रीते शिर धर लेत।।*

छंद – *परम प्रसन्न मन आई प्रात काल जल –*
*भरत कलिन्दी तीर सहज प्रतीतेरी।*
*खेलत सुजान श्याम सहित सखान तहाँ,*
*आयगे कहूं ते सुख मान अनचीतेरी।*
*'व्यास' कहैं रीते कहा करत कुरीतें जान,*
*सुभग सुरीते जान मान मन मीते री।*
*कारन सुकौन भरे देत ढुर काय बाल,*
*बार बार सिर धर लेत घट रीते री।*

*देख द्युति दिव्य जाती लागै अति थोर थोर,*
*काम कामनी की कमनीय कांति कोर कोर।*
*ठाड़ी प्रातकाल बाल परिजन पास आय,*
*आति सकुचात हीय माहिं तृन तोर तोर।*
*'व्यास' वर बैंन सुन चारु चतुराई कर,*
*वेग निज श्रवण विभूषण सों छोर छोर।*
*शुक मुख देत कौन कारण तें चोर चोर,*
*नीके पद्मराग मणि मंजु मुख मोर मोर।*

नायिका अपने किस हित पूर्ति के लिये यह अनोखा कौतुक करती है कि जल से भरे हुए घटों को बार–बार खाली करके इन खाली घटों को अपने सिर पर रखती है।

अत्यन्त आनंदित मन से नायिका प्रातःकाल के समय सहज ही यमुना नदी के किनारे पानी भरने के लिये जाती है। उसे विश्वास है कि चतुर श्याम सुन्दर (श्रीकृष्ण) अपने बाल सखाओं सहित अनचाहे ही मुदित मन से इस ओर आयेंगे। व्यास कवि कहते हैं कि खाली करने की अनरीत जानते हुए क्यों करती हो? अपने मन भावन के लिये सुखद सुरीति ही अपनाइये। (प्रश्न पुनः) वह कारण कौन सा है जिससे बाल यौवना बार–बार भरे घट खाली करके सिर पर बिना पानी के घट सिर पर रख लेती है।

नायिका की अलौकिक शोभा देखकर रति (कामदेव की पत्नी) के अंग–अंग मनोहर लावण्य भी अत्यन्त कम लगता है। बाल नायिका (नव यौवना) प्रातःकाल परिजनों के पास आकर खड़ी है वह हृदय में अत्यन्त संकोच कर रही है और खड़ी–खड़ी तिनका तोड़ती है। व्यास कवि कहते हैं कि श्रेष्ठ वचनों को सुनने के लिये वह अपने कानों को सुन्दर चातुर्य के साथ आभूषणों से अलग कर लेती है। क्या कारण है कि उत्तम लाल माणिक्य रत्न के समान रक्तिम आभा युक्त मंजुल मुख को मोड़–मोड़ कर वह नायिका छिपते–छिपाते सी धोती के अंचल को मुख में देती है।



## ख्यालीराम

लोक कवि ख्यालीराम, ईसुरी, गंगाधर व्यास के साथ बुन्देली काव्य परम्परा की वृहत्त्रयी में सम्मिलित है। ख्यालीराम का जन्म चरखारी में श्री रामसहाय लोधी के घर विक्रम संवत् 1906 को हुआ। इनके पिता एक सम्पन्न कृषक थे, इनकी ससुराल वाले भी सम्पन्न थे। इनके दो पुत्र महिपाल सिंह तथा छत्रपाल सिंह थे।

ख्यालीराम अपनी मौलिक काव्य प्रतिभा के कारण काफी ख्याति प्राप्त कर चुके थे। ये लोककवि ईसुरी के समकालीन थे। इन्होंने कवित्त, घनाक्षरी तथा चौकड़िया फागें लिखी हैं। इनके साहित्य का विधिवत् संग्रह कहीं नहीं मिलता है। लोकमुख में ही इनकी रचनाएँ उपलब्ध हैं। ग्रामीण इलाकों में लोक विभिन्न उत्सवों और मेलों में इनकी रचनाओं को गाते हैं। कहा जाता है कि ख्यालीराम की जमींदारी चरखारी नरेश के पास गिरवी रखी थी। इसके बारे में जब उन्होंने कवित्त में ही नरेश से प्रार्थना की तो चरखारी नरेश ने काव्य प्रतिभा से प्रभावित होकर उनकी जमींदारी लौटा दी थी। ख्यालीराम बिजावर स्टेट में थानेदार के रूप में पदस्थ रहे। ख्यालीराम क्षत्रिय थे। इन्हें शिकार खेलने का बहुत शौक था।

स्वभाव से वे आत्मलोचक भी थे। ख्यालीराम ईसुरी की शैली से अलग ढंग की फागें लिखते थे। उनकी काव्य–उपमा चित्ताकर्षक होती है। नायिका भेद, अंग–प्रत्यंग चेष्टाओं आदि में रीतिकालीन प्रभाव है। इनका निधन संवत् 1961 में हुआ।

दोहा – *कहा दोस करतार कौ, करम कुटिल गहि बाँह।*
*करमहीन किलपत फिरैं, कलपवृक्ष की छाँह।।*

फाग – *किलपैं कल्प लता के नीचैं, दोसी दोई दृग मींचैं।*
*मैले चीर–नीर में लैकैं, उज्ज्वल होउ न फींचें।।*
*करै उपाव दाव कोऊ कितनऊँ, फरतीं करम रंगीचैं।*
*ऊँच नीच करतव कर काया, रै गई दोई दुबीचें।।*
*इमली आम होय न ख्याली, चाये दूद सें सींचें।*

कर्मगति ही प्रधान होती है। इसमें ईश्वर का कोई दोष नहीं है कि कोई कुमार्ग की बाँह पकड़ कर चले और दोष ईश्वर को दे। कल्पवृक्ष की छाया में भी कर्महीन व्यक्ति कष्ट से पीड़ित रहता है। कल्पलताओं के नीचे बैठकर दोनों आँखें बंद करके कोई भी कर्महीन व्यक्ति दुखी हो सकता है। गंदे वस्त्र को गंदे पानी में धोने से वह साफ नहीं होता। कोई भी व्यक्ति कितने ही उपाय कर ले किन्तु कर्मगति का परिणाम उसे भुगतना ही पड़ता है। ऊँच–नीच की गति भी करम से ही निर्धारित होती है। ख्यालीराम कहते हैं कि इमली के वृक्ष को चाहे दूध से ही क्यों न सींचो उसमें आम नहीं फल सकते या आम जैसे मीठे फल नहीं हो सकते।

दोहा – *नहिं वियोग नहिं सौत घर, नहिं ग्रहा बलवन्त।*
*बहू होत कस दूबरी, लागे ललित बसन्त।।*



फाग – *अली नहिं वियोग के पिय कैरौ, मलिन भओ तन तेरौ।*
*भोरौ भाव सुभाव साथ लयै नहिं सौत दुख मेरौ।।*
*सुख सम्पत सब ग्रहा बली है नहिं विधाता डेरौ।*
*ऐसी ललित बसन्त अबाई, स्रवत समीर छरैरौ।।*
*ख्यालीराम नायिका कौ दुख, कवि जन करौ नबेरौ।।*

वियोग भी नहीं और न ही सौंत घर में हैं न ही कोई दुष्ट ग्रह बलवान है फिर भी सुहावने बसन्त के लगते ही वधू क्यों दुबली हो रही है? सखी प्रिय का विरह भी तुझे नहीं है फिर तेरा शरीर क्यों मलिन (कांतिहीन) पड़ रहा है। सभी सुख सुविधाएँ, धन दौलत तेरे पास होते हुए सभी ग्रह तेरे बलवान हैं। यहाँ तक की विधाता (सृष्टिकर्ता) भी तुमसे रूठा नहीं है। ऐसे सुन्दर बसन्त के आगमन पर मन्द–मन्द पवन चल रही है। ख्यालीराम कहते हैं कि कविजन ही निवारण करें कि इस नायिका को कौन सा दुख है ?

फाग – *कीनै दया धरम के पाखे, सील सपीलन राखे।*
*अतरारी प्यारी ममता की, करम करे दौ पाखे।।*
*मन मजबूत माया की म्याँरी, माल मौज के साखे।*
*छाये सील छमा के छप्पर, खप्पर खैर नबाके।।*
*कवि ख्याली ऐसे– घर काजें, सुर मुनि नर अभिलाखे।।*

कवि ख्यालीराम कच्चे मकान निर्माण की प्रक्रिया के माध्यम से एक सुन्दर मकान की कल्पना करते हुए कहते हैं कि दया और धर्म मकान की दो पाखे (विपरीत दीवालें) हैं जिनपर शील की सपील (लकड़ी का लट्ठा) रखी गई है। ममता की अतरारी (छोटी लकड़ियाँ) लगाकर कर्म के दो पक्षों पर उसे रखा गया है। मन के दृढ़ संकल्प की म्यारी (बीच में वक्राकार मोटी लकड़ी जो मुख्यतः छप्पर का भार वहन करती है) तथा मस्ती के माल (म्याँरी पर सीधी मोटी लकड़ियाँ) रखे गये हैं। ऐसे मकान में क्षमा तथा शील के छप्पर छाकर उस पर

नम्रता की खपरैल डाली गई है। ख्यालीराम कहते हैं कि ऐसे मानवोचित सद्‌गुणों से युक्त निर्मित आवास में रहने के लिए देव, मुनि तथा मनुष्य सभी अभिलाषा रखते हैं।

*बालम सोच लेव बेदरदी, बागन छाई जरदी।*
*कोंप कली विधि हमखाँ दीनीं, उनै दई नामरदी।*
*अब रस परो कलिन के ऊपर, भौंर करत है गरदी।*
*ख्यालीराम कोंप पै बगिया, हर दम चाहत सरदी।।*

हे निष्ठुर प्रिय ! तू विचार कर कि बागों में मनहूसियत क्यों छाई है? विधाता ने हमें जवानी रूपी कली की कोंपल दी है और उनको (पति) नपुंसक बना दिया है। अब मेरे युवावस्था रूपी कलिका रसवंत हुई है जिससे मेरी ओर भ्रमर बन लोग चक्कर काटते हैं। ख्यालीराम कहते हैं कि युवावस्था रूपी वाटिका की कलिकायें सदा नमी (प्रेम) चाहती हैं।

फाग – *रजनी बीत गई सुन सइयाँ, भोर भये निस नइयाँ।*
*दीपक जोत मलीन भई है, बिरलई लखत तरइयाँ।*
*उतरी ननद सास महलन सें, आहट भई अंगनइयाँ।*
*मोतिन माल गरैं सीरी सी, पीरी मुख विकसइयाँ।*
*ख्याली राम सबेरौ हो गयो, बैठौ जाव अथइयाँ।*

नायिका नायक को रात समाप्त होने तथा भोर होने पर संबोधित करती हुई कहती है कि हे प्रिय ! रात्रि बीतकर प्रातः हो गया है। दीपक की लौ, पूरब की पौ फटने से मलीन (धीमी) हो गई है तथा नभ में कम तारे ही दिखाई दे रहे हैं। सास व ननद भवन के ऊपरी हिस्से से उतरकर आँगन में आ गई है। गले में पड़ी मोतियों की माला आभाहीन हो मुख मलिन हो रहा है। ख्यालीराम कहते हैं कि नायिका कहती है कि हे प्रिय ! अब सबेरा हो गया है,



उठकर बाहर अथाई (चबूतरा) पर बैठिए।

फाग– *तिल की परन तिलन सें हलकी बाँये गाल पर झलकी।*
*कै गोविन्द गुराई ऊपर, निकर गए कर छल की।*
*मानों चुइँ चंद के ऊपर, बुंदिया जमुना जल की।*
*लैन पराग गुलाब फूल पै, उड़ बैठन भइ अलकी।*
*दोऊ नैन रहे हेरत से, झरप उरी नहिं पल की।*
*ख्याली राम हो गई पूरन, दिल पै दाव कतल की।।*

नायिका के बाँयें गाल पर जो तिल है वह तिल (तिली का दाना) से भी छोटा है किन्तु शोभायमान है। इसको देखकर ऐसा लगता है कि या तो गोपाल गोरे रंग से छलपूर्वक निकल गए हैं जिसका अवशेष बच गया है। या चन्द्रमा के ऊपर यमुना के जल की बिंदु चूँ गई है या भ्रमर गुलाब फूल पर पराग लेने आकर बैठ गया हो। इस तिल की शोभा को दोनों नेत्र विस्मित होकर ही देखते रह गए। ख्यालीराम कहते हैं कि ऐसा सुन्दरमुख देखकर (जिस पर तिल है) हृदय का कत्ल ही हो गया।

फाग – *जग में बारा रासें जानौ, जोतिस मत खाँ मानौ।*
*कर्क मीन वृश्चिक रास में, विप्र बरन पहचानौ।*
*कन्या मकर और वृष इनमें वैश्य बरन कर छानौ।*
*मेष सिंह धनु रास वास में सो क्षत्रिय सन मानौ।*
*कुंभ तुला अरुँ मिथुन जौ ख्याली सोई सूद्र बखानौ।*

ख्यालीराम कहते हैं कि ज्योतिष मत को मानते हुए संसार में बारह राशियों को जानना चाहिए। कर्क, मीन, वृश्चिक राशियों वाले विप्रवर्ण, कन्या, मकर और वृष राशि वाले वैश्य वर्ण, मेष, सिंह एवं धनु राशि वाले क्षत्रिय वर्ण तथा कुंभ, तुला और मिथुन राशि वाले शूद्र वर्ण वाले होते हैं।

फाग – *नाहक छेड़त मग श्यामलिया, साख विसाखा ललिया।*
*श्री वृषभान सुता महरानी, राज त्रिलोकी अलिया।*
*कट गओ सम्मन तुरत पकर कें, मँगा लओ छल बलिया।*
*दफा तीन सौ सैंतालिस में, राय हुकुम फैसलिया।*
*ख्याली राम राधिका जी की, झारौ जाए महलिया।।*

(उपर्युक्त रचनायें डॉ. के.एल. पटेल के सौजन्य से)

श्याम तुम व्यर्थ में ही रास्ता में छेड़खानी करते हो साथ में विसाखा व ललिता सखियाँ हैं। राधा वृषभान की पुत्री तथा महारानी हैं, उनका तीनों लोकों में राज्य है। छेड़खानी के आरोप में तुम्हारा सम्मन जारी होकर छल बल से आपको पकड़ लिया गया है और अपराध की धारा 347 में यह निर्णय दिया गया है कि श्याम राधा के महल में झाड़ू लगाएंगे।

*राधा तै बड़भागनी, कौन तपस्या कीन।*
*तीन लोक त्रिभुवनधनी, तैने बस कर लीन।।*
*है बड़भाग राधका तेरौ, पुन्न पुरातन केरौ।*
*सिव सनकादि और ब्रम्हादिक, जिनकौ चहत छहेरौ।*
*सो माधव राधा के उरमें, बैठो खेत बसेरौ।।*
*सुंदर श्याम रँगीले कौ मन, राधा चितकौ चेरौ।*
*कवि ख्याली उनकें का कमती, जिनके श्याम कमेरौ।।*

हे राधिका जी! तुम बहुत ही भाग्यवान हो। तुमने ऐसी कौन सी तपस्या की है कि तीनों लोकों के स्वामी श्री कृष्ण को तुमने अपने बस में कर लिया है।

हे राधिका जी! तुम्हारा भाग्य बहुत ही अच्छा है जो तुम्हारे पूर्व जन्म के पुण्य–कर्मों का प्रभाव है। सनकादि ऋषिगण और शिव–ब्रह्मा आदि देवता जिनकी कृपा चाहते हैं वे श्रीकृष्ण जी राधिका जी के हृदय में निवास करते हैं। सांवले सुन्दर श्रीकृष्ण का मन राधिका जी



के चित्त का सेवक है। कवि ख्याली कहते हैं कि जिसके लिये अर्जन करने वाले स्वयं भगवान श्रीकृष्ण हो उसको संसार में क्या कमी हो सकती है?

*काउ ने बरनी नासिका, काउ ने वरनी दीठ।*
*कवि ख्याली वरनन करी, कदलि पत्र सम पीठ।।*
*कवि ने कदलि पत्र सम वरनी, पीठ सुरन मन हरनी।*
*जोड़ी जुग कुंदन की पटरी, वहीं बीच वैतरनी।।*
*अमी अगाह थिये के लाने, चढ़ी नागिनी तरुनी।*
*कवि ख्याली की जीवन दाता, नन्दनन्दन की घरनी।।*

नायिका के नख–शिख वर्णन में किसी कवि ने नायिका की नासिका का वर्णन किया और किसी ने नायिका की नजर का वर्णन किया हैं किन्तु ख्याली कवि ने नायिका की पीठ को केले के पत्ते के समान वर्णन किया है।

ख्याली कवि ने नायिका की पीठ को केले के समान बताते हुए कहा हैं कि यह पीठ देवताओं के मन को भी मोहित करने वाली है। पीठ के दोनों भाग मानों सोने की पटरी बनी हो और बीच का भाग मानो वैतरनी नदी हो। पीछे लटक रही चोटी लगती है मानो तरुण नागिन अमृत से तृप्त होने के लिये चढ़ी हो। कवि ख्याली कहता है कि श्रीकृष्ण की प्रियतमा राधा जी मेरी जीवनदायिनी हैं।

*अब लसगर रितुराज के, दृग–दृग छाये दौर।*
*बिगुल बजावै कोकिला, कलमी अंबन मौर।।*
*लसगर ऋतुराजा के छाये, मदन महीपत आये।*
*दीरघ दृगन वीरवर बाँगे, ऊधम अधिक मचाये।*
*सुमन कली पै कली लहर दै, अलिगन भाव बताये।*
*कवि ख्याली प्रीतम प्यारे ने, अंत बसंत मनाये।।*

ऋतुराज बसंत की सेना ने स्थान–स्थान पर अपना मोहरा बना लिया है। नायिका की आँखों में भ्रम हो रहा है। कोयल सुन्दर आमों की मौर पर बैठकर युद्ध का बिगुल बजा रही है। ऋतुराज बसंत की सेना सब जगह फैल गई है और कामदेव रूपी राजा का आगमन हो चुका है। गंभीर नेत्रों का वीरत्व भरा बांकपन सभी को परेशान कर दिया है। पुष्प की कलिका पर विहरते हुए भ्रमर ने मिलन हेतु नेह युक्त भाव को अभिव्यक्त किया। कवि ख्याली वर्णन करते हैं कि नायिका विचार करती है कि प्रियतम ने किसी अन्य स्थान पर रुककर बसंत का आनंद लिया है।

*पटियाँ गोला मुख पै पारें, सेंदुर माग सँवारें।*
*मानो चंद्र ग्रहा के ऊपर, कागा पंख पसारे।।*
*तिरवेनी वेनी खाँ देखें रह गई सिमट किनारें।*
*ख्यालीराम दरस के होतन, कलिमल सब धौ डारें।।*

नायिका का मुख सुन्दर गोलाकार है। सिर पर उन्होंने अपने बालों को कंधे से बीच की सीधी मांग छोड़कर दोनों ओर सम्हाल लिया है और बीच के भाग में सिंदूर भर दिया है। जो ऐसा लगता है मानो चन्द्रमा के ऊपर कौये ने अपने पंख फैला दिये हों। बालों की सुन्दर गुथी हुई वेणी (चोटी) को देखकर त्रिवेणी भी लजा गई है। ख्याली कवि कहते हैं कि उनके दर्शन ही कलिकाल के सभी मालिन्य समाप्त हो जाते हैं।

*फूली फुलबाग फुलबाई, लखे लखन रघुराई।*
*टेसू पान तड़ाग तीर के, शोभा बरन ना जाई।*
*क्यारिन में कुंजन की करनी, क्यों विधि होत बनाई।*
*बेली बेल बितानन ऊपर ऋतु बंसत की छाई।*
*ख्याली जनकसुता जगजननी, गिरजा पूजन आई।।*

जनकपुर के बगीचों में विविध प्रकार के सुन्दर फूल फूले हुए



हैं जिन्हें देखकर श्रीराम और लक्ष्मण आनन्दित हो रहे हैं। सरोवर के किनारे पलाश के वृक्ष की छवि अनुपम है। क्यारियों में पौधों और लताओं को माली ने अपने कुशल चातुर्य से उन्हें कुंजों का सुन्दर रूप दे दिया है। उपवन की लताओं के विस्तार में बसंत ऋतु छाई हुई है। ख्याली कवि कहते हैं कि इसी समय जनकपुत्री सीता जी जगतमाता पार्वती जी की पूजा करने के लिये बगीचे में आईं।

*तुमसों मिलबो चाहत नैना, आठ पहर बिसरै ना।*
*मिस लै लै आ कहिये तुमसौं, तुमें कछु कहवै ना।।*
*इ अटपटी कपट की बातें, हो गई अब सट है ना।*
*कवि ख्याली से मिलौ ललकभर, क्या लेना क्या देना।।*

नयनों में तुमसे मिलने की चाहत है जिसे वे दिन–रात याद रखते हैं कुछ न कुछ बहाना करके तुमसे कुछ कहना चाहते हैं किन्तु तुम्हारे लिये कुछ नहीं कहते। इस तरह छल की अनोखी (विचित्र) अभी तक चलती नहीं किन्तु अब ऐसा नहीं चल सकेगा। कवि ख्याली कहते हैं कि अन्य बातों से कोई मतलब नहीं केवल मन भर कर मिल लो।

*ऊधौ मनमोहन ना आबे, निठुर भये सरसावें।*
*हमखाँ जोग भोग कुब्जाखाँ, जा नई राय चलाबें।।*
*जबसे गये खबर ना भेजी, नहीं सँदेश पठावें।*
*आपुन जाय द्वारका छाये, कुब्जा कंठ लगावें।*
*कवि ख्याली इतनी ब्रजवाला, मृगछाला काँ पावें।।*

हे उद्धव जी ! मनमोहन (श्रीकृष्ण) यहाँ वापिस नहीं लौटै, वह निष्ठुर (कठोर हृदय के) होकर रस से सिंचित कर रहे हैं अर्थात् योग के उपदेश का संदेश रूपी रस का पान हितचिन्तन के भाव से नहीं बल्कि निष्ठुरता से कर रहे हैं। हमारे लिये योग का उपदेश भेज रहे हैं और उधर कुब्जा को भोग का पाठ पढ़ा रहे हैं– यह नवीन

व्यावहारिकता बनाई है। जब से यहाँ से गये हैं न तो कभी कुशल–क्षेम की जानकारी भेजी और न ही कोई समाचार दिया। उन्होंने कुब्जा को अपना लिया और द्वारिका में रहने लगे। ख्याली कवि कहते हैं कि ब्रजबालायें इतनी अधिक है कि उनके लिये मृगचर्म की व्यवस्था कैसे हो?

*अंग नग नग नीकौ बनो, रँगनी कौ गोपाल।*
*कवि ख्याली देखौ सुचल, बलिहारी ब्रजबाल।।*
*नीकौ अंग नग नग रँगनी कौ रूप रमा रमनी कौ।*
*मृगी मीन मधुकर मद मोचन, लोचन लोच अमी कौ।*
*नासा कीर कपोल कंठ सुर कोकिल कल कमनी कौ।*
*कटिमृगपति लख रहत परायन, सुंदरि गज गमनी कौं।*
*कवि ख्याली निसदिन गुन गावें स्यामलिया सँगनी कौ।।*

हे कृष्ण! नेहासिक्त ब्रजबाला आपके नेह में आप पर निछावर है आप चल कर देखो उसके शरीर की पोर–पोर सुन्दर है। वह नव यौवना लक्ष्मी के समान सुन्दर है। हरिण, मछली और भ्रमर के मद को चूर करने वाले नयनों की अमृत सी उत्तमता है। उस नायिका की नासिका तोते के समान, कंठ कबूतर के समान और स्वर कोयल के समान मधुर है। उसकी कमर को देखकर सिंह पलायन कर जाते हैं अर्थात् कटि सिंह की कमर से भी सुन्दर है। उस नायिका की चाल हाथी के समान है। ख्याली कवि रात–दिन राधा–कृष्ण का गुणगान करता है।



## डॉ. भवानी सिंह 'भगवन्त'

डॉ. भवानीसिंह 'भगवंत' का जन्म टीकमगढ़ में कार्तिक कृष्ण 5 संवत् 1911 वि. में हुआ था। आपके पिता श्री मिरधा मिठू जू (नकीब) थे। आप खाँगर क्षत्रिय थे। आपका उपनाम 'भगवंत' कवि था। सं. 1946 वि. से आपने कविता लिखना प्रारंभ कर दिया था और सं. 1988 वि. तक आप बराबर कविता करते रहे।

आपने 1. भगवन्त–प्रेमावली, 2. गंगा मनोहरी, 3. स्फुट काव्य संग्रह नामक पुस्तकों की रचना की। भगवन्त प्रेमावली मई 1922 ई. में प्रताप प्रभाकर प्रेस टीकमगढ़ से मुद्रित हुई थी।

'भगवन्त' कवि महाराजा ओरछा (प्रताप सिंह जू देव 1874–1930 ई.) के कृपापात्र और टीकमगढ़ के सिविल अस्पताल में लगभग 63 वर्ष तक डॉक्टर रहे। आपने बुन्देलखण्डी कहावतों पर भी दोहे और छंदादि लिखे हैं। आप समस्या पूर्ति बड़ी ही शीघ्रता से करते थे। आपकी कविता में अलंकारों की भरमार है। आप भाव पूर्ण और सरल कविता लिखते थे।

बुन्देलखण्डी कहावतों पर आपने सुन्दर दोहे लिखे हैं–यथा –

1. मन तुम छोटे अति बड़ी माया लागी रुच। हाथ भरे लड़ई लला नौगज की है पूंछ।
2. कै कर लै हरि भजन कौ कै घर लै भव भार। दादू दो–दो ना बने, जालें वा दै डार।।
3. माया ही में ब्रह्म है, ताहि न चीने कोय। माते दुके पियार में, को कह बैरी होय।।
4. हिय के हर लघु लगत है, मंदिर के बहु वृद्ध। जैसे जोगी गांव को आनगॉव को सिद्ध।

## सवैया

*लषि पातिक पुंज अनेकनहू लघु दासन वेग बिसारहुगे।*
*भगवंत जू पूरन प्रेम भरे परसे पनवारन फारहुगे।।*
*अपनैं जन दीनन के जग मैं अपराधन कौं उर धारहुगे।*
*तव हे हरी दीन दयाल प्रभु तुम कैसे अनाथ उघारहुगे।।*

क्या तुम पापियों के अनेक समूहों को देखकर छोटे दासों को भूल जाओगे? भगवंत कवि कहते हैं कि क्या प्रेम से परोसे गए पतवारे (पत्तल पर परोसा गया भोजन) को फाड़कर फेंकोगे? क्या अपने दीन जनों के जग में किए गए अपराधों को हृदय में धारण करके रखोगे ? तो हे हरि ! दीनों पर दया करने वाले प्रभु आप अनाथों का उद्धार कैसे कर पाओगे?

*कोटन दैत्य हनै क्षणमैं नहि पाप प्रचंड पछारत कैसे।*
*चक्र गदा गहकै भगवंत महां बल बांहि विसारत कैसे।।*
*दीनन कौ दल देष दुनी विच तारवे कौ मन डारत कैसे।*
*भारत गीत अनेकन हू अब आरतसौ हरि हारत कैसे।।*



आपने हजारों राक्षसों का वध क्षण में कर दिया, तो अब प्रचण्ड पापियों को कैसे नहीं पछाड़ोगे? भगवन्त कवि कहते हैं कि हे भगवन ! आपके हाथों में सुदर्शन चक्र तथा गदा है, तो इनके बल को आप कैसे भुला पाओगे? दीनों का द्वेष दालन करके दुनिया से तारने का मन कैसे बदल सकोगे? भारत में अनेक परेशान लोग आपको पुकार रहे हैं, आप उनसे कैसे हारोगे?

*है भव भार अपार अहो प्रभु सेवक कौ दुष वेग नसावो।*
*नाथ अनाथन के भगवंत सहाय करो मुहना बिसरावो।।*
*देषौ दया निधि देव बड़े तिहु लोक चतुर्भुज आप कहावो।*
*मै भुज द्वै सिर पाप धरौ तुम चार भुजा तै उतार न पावो।।*

हे प्रभु ! इस सेवक पर संसार का अपरिमित बोझ लदा है जिसको उतारकर आप शीघ्र दुख समाप्त कीजिए। भगवन्त कवि कहते हैं कि आप अनाथों के नाथ हैं, मेरी सहायता कीजिए, मुझे विस्मृत मत करो। देखो, दया के आगार आप बड़े देव, तीनों लोक के मालिक तथा चार भुजाओं के स्वामी चतुर्भुज कहलाते हैं। मैंने अपनी दोनों भुजाओं से अपने सिर पर पाप रूपी गठरी रखी है, उसे आप चार भुजायें होते हुए नहीं उतार पा रहे हैं।

*वीर बड़े औ दया निधि हौ रिपु दानव दासन के हितु मानै।*
*मारन पालन सक्ति सवै सब लायक हो भगवंत वषांनै।*
*एहो हरी करुना निधिजू हम आपनी अंतर की गति जानै।*
*स्याम तमोगुन हौतन मैं मनमैं तुम सुभृ सतोगुन सानै।।*

आप बड़े वीर, दयानिधि और सेवकों के शुभचिन्तक तथा राक्षसों के शत्रु माने जाते हो। कवि भगवन्त कहते हैं कि मारने तथा पालने की शक्तियां आपके पास हैं। हे हरि जू ! करुणानिधान ! मैं अपने अंतर की गति जानता हूँ। मेरे शरीर में कालिमा युक्त तमोगुण

है जबकि आपने मेरे मन में धवल सतोगुण समाहित किया है।

*सुंदर संष लसै इक मै, अरु दूजी सुदर्सन चक्र गहौगे।*
*तीजी तहां भगवंत भलै, गरुऔ सौ गदा धर भार सहौगे।*
*दीन दयाल सुनौ विनती तुम, चौथी प्रमोदक पद्म लहौगे।*
*चारौ भुजा भरहौ अपनी तव कैसे गुपाल गरीब गहौगे।।*

आप एक हाथ में सुन्दर शंख तथा दूसरे हाथ में सुदर्शन चक्र धारण किए हैं। भगवन्त कवि कहते हैं कि तीसरे हाथ में भारी वजनी गदा लिए हैं और दीनदयालु मेरी विनय सुनिये। चौथे हाथ में सुहावना कमल धारण किए हैं। जब आप अपनी चारों भुजाओं को इस तरह से भरी (व्यस्त) रखोगे, तो दीनों का हाथ कैसे पकड़ पाओगे ?

*भूर भुजां बलवांन बड़ी धनुधान लै सत्रन सैन सिघारी।*
*बाल बली दसकंधर से भगवंत हने अरु लंक बिदारी।।*
*तोर दियौ धनु संकर कौ सुन सोर भलेई भयौ भुय भारी।*
*वीरता श्री रघुवीर कहा जब मो मन माया मरै नहि मारी।।*

आपने अपनी बलशाली भुजाओं में धनुष बाण लेकर असंख्य सेनाओं का संहार किया है। बलवान बलि का वध किया। भगवंत कवि कहते हैं कि दस भुजाधारी रावण को मारकर लंका को तहस नहस किया। शिव का धनुष तोड़ दिया जिसका शोर सारे संसार में सुनाई दिया। हे रघुवीर राम जी ! मैं आपकी वीरता क्या मानूँ ? मेरे मन की माया तो आप मार नहीं पा रहे हैं।

## कवित्त

*हम ढूंड फिरे सिगरे जग में न मिले कहुं कांधै धरे कमरी।*
*जब हारौ हिय भगवंत सदा अरु सूख गई तनकी चमरी।*



*जन दीनन की न सुनौ विनती कहिए अब कौन तरां समरी।*
*भजबे की परी हम कौ प्रभु जूबे तजवे की परी तुमकों हमरी।।*

मैं सारे संसार में तूझे ढूँढ़ता रहा आप कहीं भी काली कमरी धारण किए मुझे नहीं मिले। भगवंत कवि कहते हैं कि मैं हार गया और मेरे शरीर की चमड़ी भी सूख गई। इन गरीबों की विनय जब आप नहीं सुनेंगे, तो किस विधि बात संभाली जाएगी। हे प्रभु ! मुझे आपको भजने की शीघ्रता पड़ी है और आपको मुझे त्यागने की शीघ्रता पड़ी है।

*रोय रही माता भई कैसी जा विधाता,*
*अब भ्राता भर अंक कहै मोह मुड़ौ जात है।*
*कहै भगवंत पित व्याकुल वीलाप करै,*
*प्रेम भरी छातिहु कौ प्रेम छुड़ौ जात है।।*
*नारी निज नीर भरै नैनन निहार रही,*
*अवतौ न स्वामी सौ सनेह जुड़ौ जात है।*
*सुन्दर सुषेन सन सारके सरोवर तैं,*
*वंसके विसूरै हाय हंस उड़ौ जात है।।*

माता रो रही है कि हे विधाता ! आपने ये क्या किया? भाई गोद में लेकर विलाप करते हुए कहते हैं कि मेरा भाई समाप्त हुआ जा रहा है। कवि भगवन्त कहते हैं कि पिता विलाप करते हुए कहते हैं कि मेरे हृदय का प्यारा हमसे छूटा जा रहा है। पत्नी अपनी आँखों में आँसुओं से सराबोर हो रुदन कर कहती है कि मेरे प्रियतम का प्रेम हमसे छूटा जा रहा है। इस भवसागर से पार सुन्दर स्वर्ग सरोवर हेतु यह जीव रूपी हंस उड़ा जा रहा है।

## सवैया

*खेलत ही लरकाई कटी उर आई न एक हू भाई सुकीन्हौ।*
*ज्यौं भगवंत जू जागी जुवा मन लागी मया ममता भ्रम भीन्हौं।।*

*ब्रद्ध भये जग जाल हीमै तब काल के सोच सबै तन छीन्हौं।*
*जे पन तीन हू अैसै गए हिय हाय मैं राम कौ नाम न लीन्हौं।।*

खेलते–खेलते ही बचपन कट गया और एक भी सुकर्म नहीं किया। कवि भगवंत कहते हैं कि जैसे ही युवावस्था आयी तो मोह–ममता के भ्रम में भ्रमित हो गया। संसार के जाल में ही उलझे हुए वृद्ध होकर मृत्यु के बार में सोचते हुए शरीर क्षरित हो गया। इस तरह से जीवन की तीनों अवस्थायें बिना ईश्वर का नाम लिए गुजर गई।

## कवित्त

*मुदित मनोज मोह माया मैं मड़ोई रहै,*
*लागी लोभ लहिर सरीर सुख सानो है।*
*कहै भगवंत धन संपत कौं धाय फिरै,*
*जीवन कौ जक्तमाल ठौर न ठिकानौ है।।*
*गहत न गैल गुन ग्यान की गुमान भरौ,*
*लहत न सीख बनौ सुन्दर सयानौ है।*
*ढूवत गंग हरी भक्त के जुड़ायवे कौं,*
*अधम अरे क्यौं भवसिंध मैं समानौ है।।*

काम, मोह तथा माया में संलग्न रहते हुए शरीर को लोभ में लगाये रहा। कवि भगवंत कहते हैं कि धन दौलत के चक्कर में पूरा जीवन दौड़ते हुए गुजारा और जीवन में भक्ति को कोई स्थान नहीं दिया है। घमण्ड में चूर होकर ज्ञान व गुण का मार्ग न गहकर बुजुर्गों से कोई सीख नहीं ग्रहण की है। गंगा में हरि के भक्त कहलाने हेतु डुबकी लगाते रहे हो किन्तु रे नीच ! क्यों इस भवसागर में डूबा हुआ है ?

*झुक झूलत झोकन चंदमुखी, छवि छूट छटा छहरान लगी।*



*भगवन्त लफै लचकै अचकै, मचकै मिचकी थहरान लगी।।*
*हरुयै हरि बेवलन की चुनरी, उड़ अंगन ते फहरान लगी।*
*रसरंग भरी लख लालन के, मन लोनी लता लहरान लगी।।*

(उपर्युक्त सभी छन्द श्री हरिविष्णु अवस्थी के सौजन्य से)

चन्द्रमुखी नायिका झूला झुककर झूल रही है। जिससे उसकी सौन्दर्य छटा छहराकर फैल रही है। भगवन्त कवि कहते हैं कि झूलने से पेड़ की शाख लफते (झुकते) हुए रुक–रुककर लचक रही है। इस तरह झूला के झुकने से नायिका की आँखें मिचकने लगती है। हरे रंग की चूनरी हवा में उड़कर अंगों को उघाड़कर फहराने लगी है। रसिकों के मानस में यह दृश्य देखकर लावण्य सौन्दर्य से युक्त वह लता सी नायिका लहराने लगी।

# वृषभान कुँवरि

श्री सवाई महेन्द्र महारानी श्री वृषभानु कुँवरि का जन्म सं. 1912 वि. में ज्येष्ठ शुक्ल 2, शुक्रवार को तिदारी ग्राम में हुआ था। पिताजी वेरछा के पमार श्रीमान् कुंवर विजय सिंह जी थे। आप बड़े ही मधुर भाषी, धर्मनिष्ठ और वीर पुरुष थे। आपकी माता भी धर्म परायण और गृह प्रबन्ध में कुशल थीं। माता–पिता के इन सद्‌गुणों का आपके ऊपर यथेष्ट प्रभाव पड़ा। बाल्यावस्था से रामचरितमानस पर अनुराग हो गया और नियमबद्ध आप उसका नित्य पाठ किया करती थीं। फलस्वरूप राम–भक्ति–रस में आपका कोमल हृदय इतना सरावोर हो गया था कि आजीवन आप उनकी ही अनन्य उपासक बनीं रही। आपका शुभ पाणिग्रहण संस्कार सं. 1926 वि. में श्री सवाई महेन्द्र महाराजा श्री प्रताप सिंह जू देव बहादुर ओरछा नरेश के साथ हुआ था, इन दिनों ओरछा राज सिंहासन पर श्रीमान् सवाई महेन्द्र महाराजा श्री हमीरसिंह जू देव विद्यमान थे।

महारानी की कर्मठता की प्रकृति के अनुकूल ही उन्हें वर मिल गया था इससे उनकी प्रतिभा और भी अधिक प्रस्फुटित हो गई। जो



अनुराग हृदय मंदिर के एक भाग में छिपा था। वह द्रुत वेग से प्रवाहित हो उठा और उसे स्वर्गवासी महाराजा श्री प्रताप सिंह जू देव का आश्रय व प्रोत्साहन मिला। अयोध्या जी में कनक भवन नामक विशाल मंदिर आपके ही आग्रह से बनाया गया।

जनकपुरी नेपाल में जानकी जी का मंदिर निर्माण कराया। टीकमगढ़ के जानकी बाग का मंदिर भी इनका ही बनवाया है। इनका रामप्रिया सहचरी भी उपनाम था।

वि.सं. 1963 कार्तिक शुक्ल – 11 को इनका स्वर्गवास हुआ। इन्होंने 'श्रीमद्रामचन्द्र माधुर्य लीलामृत सार' तथा 'सीता गुन मंजरी', 'होली रहस्य' रचीं हैं।

*होरी को चाव चड़ो मन में – प्रातैं सें चित ऊधम में*
*बाजत ताल मृदंग झांझ ढफ–देखो छैल खिलारिन में*
*छैकत गैल कड़न नहि पावत–हँस बतरावत चोलन में*
*राम प्रिया मन मोहन प्यारो–चोरत चितरस बोलन में।*

होली खेलने की इच्छा आज मन में होने से, प्रातः से ही मन विचलित है। मृदंग, झाँझ तथा ढफ बज रहे हैं। देखो छैल (राम) खिलाड़ियों के बीच में है। वे रास्ता रोक रहे हैं, निकल नहीं पाते हैं। मजाक में वे हँसकर वार्तालाप कर रहे हैं। राम प्रिया कहती है कि उनका (राम) यह रूप मन को मोह रहा है। उनके बोल हृदय को चुरा रहे हैं।

*आली हो रही चोव नगारन की देखो राज कुमर के आवत की।*
*ओड़ छोड़ कतहूँ नहि दीखत चलत ध्वजा पीरे पटकी।*

*जो प्यारी आयसु हम पावें भीर भगावैं छैलन की।*
*रामप्रिया प्रीतम गति ल्याऊं राखों शान किशोरी की।*

(सौजन्य : श्री हरिविष्णु अवस्थी)

सखी, देखो नगाड़े बज रहे हैं। राजकुमार पधार रहे हैं। पीली ध्वजा वाले के साथ चलने वालों का कोई ओर–छोर दिखाई नहीं देता। हे सखी ! यदि तुम्हारी आज्ञा हो तो हम इस छैलों (नायकों) की भीड़ को भगा दें। रामप्रिया कहतीं है कि मैं प्रियतम (राम) को पकड़कर जानकी जी की शान में उपस्थित कर दूँ।

*खेलें कामिनि अनुराग भरी कर कमलन लिये फूल छरी।*
*देखो खेल खिलारिन के ढिंग गावत गारी प्रेम झरी*
*नख सिख सुभग सिंगार किये सब देखत रतिमदमान हरी*
*भीजे वसन लगे अंग लपटन कबरी पीठ भुजंग परी*
*रामप्रिया अद्‌भुत रस देखत विहस कही मरजाद डरी।*

(सौजन्य : श्री हरिविष्णु अवस्थी)

हाथों में कमल के फूल व फूलों की छड़ी लिए कामनियाँ प्रेमयुक्त हो होली खेल रही है। देखो, वे होली खेलने वालों के पास आकर प्रेमयुक्त गारियाँ (लोकगीत) गा रही हैं। सम्पूर्ण श्रृँगार इस तरह सुरुचिपूर्ण तरीके से किया गया है कि जिन्हें देखकर रति का गर्व भी खत्म हो जाय। रंग पड़ने से वस्त्र भींगे अंगों में लिपट गये हैं। पीठ पर रंग पड़ने से वह चितकबरी दिखाई देती है। राम प्रिया कहती हैं कि यह अद्‌भुत ढंग की होली देखकर मर्यादा डरकर दूर खड़ी है।

*अति पावन पर्म प्रकास मयौ दिन रैन उजास दसौ दिसि हेरौ।*
*अभिअंकित जोन कहूं नित पूरन प्रेम सुधा सुचि मूर निवेरौ।*



*अलि श्री वृषभानु कुमारी कहै मति कौरव कौं सुख दानि सवेरौ।।*
*ससि भौ मिथिलेस सुता जस तो बस चारु चकोर भयौ चित मेरौ।।*

(सौजन्य : श्री हरिविष्णु अवस्थी)

अत्यधिक श्रेष्ठ प्रकाश होने से दसों दिशायें दिन–रात आलोकित हैं। मन में उत्पन्न होने वाली विभिन्न शंकाओं का निवारण प्रेम रूपी अकृत वर्षा से हो जाता है। कवयित्री वृषभानु कुँवर कहती है कि मूढ़ मति के लिए जब जागो तभी सबेरा है। मिथिला के राजा की पुत्री सीता का मुख चंद्रमा है, और मेरा मन चकोर के समान उस चन्द्रमा को देख रहा है।

*श्रीपति संभु स्वयंभुसुराधिप सेस महेसन के रखवारे।*
*पावन प्रेम सु राग रये बड़े भाग भये जन जे चित धारे।।*
*श्री वृषभानु कुमारि भनै मुनि मानस मंजु प्रकास न भारे*
*जीवन मूर अधार सदां सुख सद्य सिया पद पद्‌म निहारे।।*

(सौजन्य : श्री हरिविष्णु अवस्थी)

लक्ष्मीपति विष्णु, शिव तथा देवताओं के राजा इन्द्र तथा शेषनाग स्वयं जिनके रक्षक हैं। पवित्र प्रेम के राग में रंगे इन लोगों के चित्त में उनका ध्यान है। कवयित्री वृषभान कुँवरि कहती है कि उन्हें मुनियों के मानस में सुन्दर प्रकाश का भान होता है। सीताजी के चरण कमल ही उनके जीवन के सुख का मूल आधार है।

*छवि धाम सदां प्रभु राम प्रिया अति पूजित तूं सब लोकन तैं।*
*जग मात तुहीं मुद रूप मयी भरि ये गुन व्रात विसोकन तैं।*
*वृषभानु कुमारि करै विनती न जरै पुनि ज्यों अघ थोकन तैं।*
*कर फेरि हरौ अब सेरि सबै मुहि हेरि कृपा अवलोकन तैं।।*

(सौजन्य : डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी)

सौन्दर्य की मूर्ति प्रभु राम की प्रिया सीता जी को सभी लोकों में पूजा जाता है। संसार की माता तुम्हीं हो और तुम्हीं संसार के सभी शोकों का हरण करने वाली हो। वृषभानु कुंवर विनती करते हुए कहती है कि मेरे बहुत सारे पाप हो गए हैं जो विनष्ट नहीं होते हैं। मेरे ऊपर हाथ फेर कर, कृपा दृष्टि कीजिए।

*देखो छैल छबीलो चलो आवै बड़ी बड़ी अखियां मटकावें।*
*दूसर गैल चलौ अब सजनी राजकुंवर नहि लख पावें।।*
*नहिं तो छेड़ लेह आगे से रस बतियां कह अटकावें।*
*रामप्रिया होरी अवसर मानत नहि रंग ले धावें।*

(सौजन्य : डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी)

देखो, सौन्दर्ययुक्त छैल (नायक) चला आ रहा है जिसे देखकर बड़ी–बड़ी आंखों को भ्रम हो जाता है। हे सखी ! किसी दूसरे मार्ग से निकल चलो जिससे राजकुमार देख न सकें। अन्यथा वे रस भरी बातों में अटकाकर हम सभी को मार्ग में ही रोक लेंगे। रामप्रिया कहती हैं कि होली का अवसर है जिससे वे रंग लेकर दौड़ आते हैं।

*पिचकारन रंग भर लावै जो मन आवै सोई गावै।*
*उड़त गुलाल अबीर अरगजा ढप मोचंग बजावै।*
*बड़े भाग होरी दिन आये लेले हृदय लगावै।*
*राम प्रिया सहचरी प्रमुदित मन चरन कमल चितलावै।।*

(सौजन्य : डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी)

पिचकारियों में रंग भरकर ला रहे हैं और जो मन में आ रहा है, वही गा रहे हैं। गुलाल, अबीर उड़ रही है और ढप तथा चंग बज रहे हैं। बड़े भाग्य से आज होली का दिन आया है इसलिए सभी को हृदय से लगाइये। रामप्रिया सखी के प्रफुल्लित मन में आराध्य के चरणों की स्मृति बसी है।



*देखो नवल खिलारी होरी कौ प्रीतम राजकिशोरी कौ।*
*वलहारी यह रूप माधुरी अलगन चंद्र चकोरी कौ।।*
*हाथ गुलाल कनक पिचकारी हँस चित चोरत गोरी कौ।*
*कामकरोर कोट लख बारों किहिं पट तरये जोरी को।।*
*रामप्रिया ऐसौ रसनागर खेल करै बरजोरी कौ।।*

(सौजन्य : डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी)

इस नए होली के खिलाड़ी को देखो, यह सीताजी के प्रियतम राम है। इस रूप को देखकर मैं न्यौछावर उसी तरह हूँ जिस तरह चन्द्रमा को देखकर चकोरी होती है। हाथ में गुलाल तथा स्वर्ण पिचकारी लेकर मुस्कुराकर सीता जी का हृदय चुरा रहे हैं। इस सुन्दर जोड़ी पर करोड़ों–कामदेव का सौन्दर्य न्यौछावर है। रामप्रिया कहती हैं कि ऐसे रस के भण्डार खेल करते हुए होली की जबरदस्ती कर रहे हैं।

# टट्टू दास

कवि टट्टूदास का जन्म ललितपुर जिले के ग्राम भोंड़ी में हुआ। इनका जन्म सन् व तिथि ज्ञात नहीं हो सकी है। ये जन्मांध किन्तु प्रतिभाशाली थे। महादेव प्रसाद इनके चाचा थे जिन्होंने इनका लालन पालन किया। इनके एक चाचा ग्या प्रसाद कायस्थ लम्बरदार के मुख्तयार थे। इनकी रचनायें 'भक्ति विनोद' तथा 'विरह व विनय के पद' अप्रकाशित हैं। इनका निधन विक्रम संवत् 1932 में हुआ।

## रागश्री

*इन मोह लिया नर नारी प्यारी चितवन में सुख भारी।*
*कोमल हँसन दसन शशि की कृण कोट काम छवि हारी।।*
*बिच बिच पुष्प अड़े जुलफन में देख रहे फुलवारी।*
*रूप अनूप देख सुध बिसरी मोही जनक दुलारी।।*
*टट्टू दास गिरजै सिया बिन वन जे अभिलाष हमारी।।*

कवि श्री राम के पुष्प वाटिका भ्रमण के समय का सौन्दर्य



वर्णन करते हुए कहते हैं कि इन्होंने अपनी मनोहर चितवन से समस्त स्त्री पुरुषों का मन मोहित कर लिया है। इनकी मधुर मुस्कान के सामने चन्द्रमा की करोड़ों किरणों की छवि पराजित हैं। ये वाटिका का निरीक्षण कर रहे हैं इनके बालों में पुष्प फँसे हुए हैं। ऐसा अनुपम सौन्दर्य देखकर जनकसुता सीता अपनी सुध–बुध खोकर मोहित हो जाती है। कवि टट्टूदास कहते हैं कि माँ गिरजा से सीता वर के रूप में इन्हें पाने की प्रार्थना करती हैं।

## दादरा

*रघुवर हेती बनी नहि मोसैं।*
*कोटन जन्म नाथ बिन कड़ गऐ विनती करत बनत नहिं तोसैं।*
*अब तेरे सरना गत आयौ कर देव छार अनेकन दोसैं।*
*सुख दुख नहिं चाहत मन मेरौ केवल चित्त लगै चरनों सैं।।*
*प्रभु पद रस अमृत सागर बिन बुझत न प्यास बूंद की ओसैं।*
*टट्टूदास अपराध क्षमाकर गहिये बाँह बने हरि पोसैं।।*

कवि निवेदन करता हुआ कहता है कि हे राघव! मुझसे आपकी भक्ति करते नहीं बनी। मेरे हजारों जन्म निकल गए किन्तु मुझे विनती करना नहीं आ पाया। अब मैं आपकी शरण में आ गया हूँ अतः मेरे समस्त दोषों का क्षरण कर दीजिए। मैं सुख–दुख न मांगते हुए केवल यह चाहता हूँ कि मेरा मन आपके चरणों में लगा रहे। प्रभु के चरण कमलों से निसृत अमृत के सागर बिना प्यास बूंदों से नहीं बुझती है। कवि टट्टूदास कहते हैं कि मेरे समस्त अपराधों को क्षमा करके मेरा हाथ पकड़कर पोषित कीजिए।

*हरी मेरौ मन समझा दियौ शांत करौ जिया मोर।*
*राम बरन दोउ सावन भादों वेद घटा घन घोर।।*
*बरषा भक्ति दास के ऊपर सुख उपजै चहुँ ओर।*
*काम क्रोध अरु लोभ मोह दुख जे बड़ कर रए सोर।।*

*अर्क जबास समान तकौ प्रभु इनकौं डारौ टोर।*
*चरन कमल सों प्रीत लगा देव जैसें चन्द चकोर।।*
*इतनी अरज सुनौ करुणा निध भव नहिं आऊं बहोर।*
*मैं अनाथ तुम नाथ जगत के चाहत तुमसे डोर।*
*टट्टू दास सरनागत आयौ सुनियौ श्रवन किरोर।।*

कवि कहता है कि भगवन् ने मेरे मन को समझा दिया है जिससे मेरा अशांत हृदय शांत हो गया है। राम जैसे श्यामल ये श्रावण–भाद्रपद हैं जिसमें वेदों की घनघोर घटायें हैं। इस सेवक पर भक्ति की वर्षा कर दी है। जिससे चारों ओर सुख ही सुख उत्पन्न हो गया है। काम, क्रोध, लोभ और मोह ये दुख भी शोरगुल कर रहे हैं। हे प्रभु ! आक व जवासा के पौधे के समान हे प्रभु! इनको भक्ति वर्षा से नष्ट कर दीजिए। जिस प्रकार चकोर चन्द्रमा को निहारता रहता है वैसे ही आपके चरणों में मेरी प्रीति लगी रहे, ऐसी कृपा करिये। हे करुणानिधान ! मेरी इतनी विनती सुनिये कि मैं अनाथ हूँ और आप संसार के स्वामी हैं, इसलिए इस भवसागर में न पड़ा रहूँ। टट्टू दास कहते हैं कि मैं आपके शरणागत आ गया हूँ, मेरी विनती सुनिये।

*हरी तुय रीत कहां गइ दीनन पक्ष करी।*
*जब तौ घनै घनै जन तारे अब का भूल परी।।*
*जब तौ वेद मृजाद बड़ाई अब काये सुध बिसरी।।*
*जब तौ दासन मान बड़ायौ अब मत कौनै हरी।*
*टट्टूदास चाहत अन पायन भगत सप्रेम भरी।।*

हे प्रभु! दीनों के पक्ष करने वाली आपकी रीति कहाँ गायब हो गई है? पहले तो आपने जल्दी–जल्दी भक्तों को मुक्ति प्रदान की अब कहाँ भूल पड़ गई है? पहले तो आपने वेदों की मर्यादा में वृद्धि की अब उसको क्यों विस्मृत कर दिया है? पहले तो आपने अपने



सेवकों को सम्मान दिया अब किसने आपकी मति का हरण कर लिया है। टट्टू दास कहते हैं कि मैं पैरों में भक्तिपूर्ण भाव से पड़े रहने की इच्छा माँगता हूँ।

## होली

*आज सखी नंद जू के द्वारैं होरी रूप धरेरी।*
*सुभग चाँदनी प्रीत बसन की मुतियन कोर भरे री।।*
*रेशम सरद खंभ कंचन के चहु दिस बाग लगेरी।*
*फूल बहु रंग रँगेरी।। आज सखी..... ।।*
*नर अरु नारि हरष उठ धाये देव सुरग उतरे री।*
*कृष्ण सिंहासन सुख की आसन कोटन भान लजेरी।*
*कौन सुख जात कहेरी।। आज सखी..... ।।*
*बजत मृदंग मुचंग सताउर और मंजीरन जोरी।*
*किंनर गान करत सातई सुर गंधर्व नाच नचेरी।।*
*सुमन बहु बरष रहेरी।। आज सखी..... ।।*
*घलत अबीर कुमकुमा छूटत लाल गुलालन झोरी।*
*कनक पिचक श्री कृष्ण लियें कर मारत सखिन नबेरी।।*
*काम जन बान घलेरी।। आज सखी..... ।।*
*ललता बिरजा आदि राधिका प्रेम अंग उमगेरी।*
*टट्टूदास जन बहत जात मग शंभु बिरंच ठगेरी।*
*श्याम के चरन गहेरी।। आज सखी.....*

हे सखी! आज नन्दबाबा के दरवाजे में होली हो रही है। सौन्दर्ययुक्त ज्योत्सना में पीताम्बर धारण कर मोतियों की माला धारण किए हैं। सोने के खंभे लगे हैं और चारों ओर उद्यान है, जिसमें विभिन्न रंगों के फूल है। नर–नारी इसे देखने के लिए एकत्र हो गए हैं, उन्हें लगता है कि साक्षात् स्वर्ग यहाँ अवतरित हो गया है। कृष्ण सिंहासन पर सुख पूर्ण बैठे हैं उनके सौन्दर्य को देख हजारों सूर्य

लज्जित हो रहे हैं। इस सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता है। मृदंग, मुचंग, सताउर, मंजीरा वाद्य यंत्र बज रहे हैं तथा सातों स्वरों में किन्नर गान कर रहे हैं एवं देव–गंधर्व नृत्य कर रहे हैं । पुष्प वर्षा के बीच एक दूसरे पर लोग झोलियों में अबीर व गुलाल लेकर एक दूसरे पर फेंक रहे हैं । सोने की पिचकारी श्रीकृष्ण अपने हाथ में लेकर कुछ सखियों पर रंग डाल रहे हैं जिससे उन्हें लगता है कि ये रंग की धार काम के तीर हैं। ललिता, बिरजा और राधिका प्रेमयुक्त होली खेल रही हैं। टडूदास कहते हैं कि जनसमुदाय इस होली को देखने भागा जा रहा है। शिव और ब्रह्मा भी यह दृश्य देखकर आश्चर्य चकित रहकर श्याम के चरणों को गह लेते हैं।

*जगत कौ रंग मतवारौ रग भीनी न करौ।*
*लोक महानद लगत सुहावन ता बिच जीब परौ।*
*करत किलोल खबर नहिं तन की प्रभु के कर सुधरौ।।*
*चरन पराग अबीर गुलालै प्रैम कौ राग भरौ।*
*मनसा बाचा ध्यान सुरत में भक्ति कौ रंग झरौ।।*
*इतने रंग पिचक मैं भर कैं मोह झपट पकरौ।*
*अरस परस फिर फाग बनत है तौ हिया सैं लगरौ।।*
*आसा लाग रही मेरे मन स्वामी बेग ढुरौ।*
*टडूदास भवफन्द निवारौ तुमरे शरन डरौ।।*

इस संसार का रंग मतवाला है इसमें अपने को न डुबोओ। संसार रूपी महानद के बीच अच्छा लगता है उसी में जीव पड़ा है। इसी में वह क्रीड़ायें करके मस्त रहता है उसे तन की सुध नहीं रहती वह प्रभु के हाथ से ही सुधर सकता है। चरणों में अनुराग रूपी अबीर–गुलाल लेकर, प्रेम का राग भरकर मन वाणी से भक्ति का रंग लेकर, मोह को झपटकर पकड़ लेना चाहिए। इस प्रकार से भक्ति की फाग बनती है तो हृदय से लगकर ईश्वर से मिलन की आशा लेकर तेजी से चलना चाहिए। कवि टडू दास कहते हैं कि हे प्रभु!,



हमें इस संसार के जाल से निकालिए। मैं आपकी शरण में पड़ा हूँ।

*जनिक लली के संइयां हमरी खबर नै बिसरै गुंइयां।*
*छिन दिन मास वरष कल्पन लग नाथ गहैं खो बईयाँ।*
*भूख न दिवस नींद नहिं जामिन सुनी कै नाथ जिवइयां।*
*दिल की आस भईं नहिं पूरन कल्प वृक्ष की छइयां।*
*अब श्री कृष्ण चन्द्र तन धरकैं द्वापर जुग के मइयां।।*
*टडूदास जोइ जोई मन भावै सोइ सोई अंतर नइयां।।*

हे जनकसुता के प्रियतम राम ! हमारी सुध न विस्मृत कर देना। क्षण, दिवस, मास, वर्ष और कल्पों तक मैं आपकी बांह पकड़े रहूँगा। जब से यह सुना है कि स्वामी आप ही जीवनाधार हैं तभी से दिन में न भूख लगती है और न रात्रि में निद्रा आती है। मेरे हृदय की आशा कल्पवृक्ष की छाया में पूर्ण नहीं हुई। अब द्वापर युग में श्रीकृष्ण का शरीर धारण कर आप प्रकट होंगे। कवि टडूदास कहते हैं कि आपके मन को जो–जो अच्छा लगेगा, मैं वही–वही करूँगा।

## दादरा

*ब्रह्मसखी आज होरिल राजा दशरथ ग्रह प्रगट भए।*
*महलन चलौ देख लो द्रग भर जिनके रंग शिव छाक रहे।*
*कोट मदन सस रबि तन लाजत ऐसे और ना जेहि भये।।*
*रूप अनूप सेष श्रुत शारद वर्णन वर्णन थाक रहे।*
*टडूदास तिहु लोक मोद भये असुरन के आनन्द गये।।*

ब्रह्म सखी री ! आज अयोध्या के राजा दशरथ के घर भगवन् प्रकट हुए हैं। महलों में चलकर दृष्टिभर उन्हें देख लो, वहीं शिव भी उनके रूप को निहार रहे हैं। हजारों कामदेव, चन्द्रमा व सूर्य की शोभा इनके सामने लज्जित है। इस अनुपम रूप का वर्णन करते हुए शेषनाग, वेद–पुराण व स्वयं सरस्वती वर्णन करते हुए थक गई हैं। कवि टडूदास कहते हैं कि तीनों लोकों में प्रसन्नता का वातावरण

निर्मित हो, राक्षसों का आनन्द गायब हो गया है।

*घायल कर दईं रंगीलीं अँखियन।*
*अधिक प्यारीं हैं रतनारी सो हन मारीं छतियंन।*

*रूप अपार मार छवि कोटन तन सुध विसरी सखियन।*
*ठांड़ीं सकल कनक पुतरी सीं लेतीं दरस अगुठियन।।*
*देख प्रीति बोलें रघुनन्दन बसहु हमारी कठियन।।*
*टडूदास हम तुम संग खैलैं धरहि मोर की पँखियन।।*

इन रंगीली (प्रेम के रंग से युक्त) आँखों से इन्होंने घायल कर दिया है। वे आँखें जो लालिमायुक्त हैं उनसे उन्होंने मेरे हृदय को वेध दिया है। असंख्य कामदेव की शोभा से युक्त उनके रूप को देखकर सखियों को अपने तन और मन का होश नहीं रहा। वे उनके दर्शन करके सोने की पुतलियों जैसी क्रियाहीन हो रही है। ऐसी प्रीति देखकर राम ने कहा कि हमारी माला (कठियन) में मोती बनकर बस जाओ। कवि टडूदास कहते हैं कि राम कहते हैं कि हम तुम सभी द्वापर में मोर पंख धारण कर संग खेलकर रास रचायेंगे।

*जनक लली के सइंयाँ हमरी खबर न बिसरै गुइयां।।*
*छिन दिन मास बरष कल्पन लग नाथ गहैं रहु बइयां।*
*हुकुम भयौ सो खबर न बिसरै हैं तुय शरण गुसइयां।*
*करनीदार नहीं कछु स्वामी जियरा मानत नइयां।*
*दीन जान प्रभु कृपा करौ अब दुख न कल्प तरु छइयां।*
*टडू दास जिन करहु उदासी प्रनत अनेक सहइयां।।*

हे जनकसुता के पति राम! मेरी सुध न बिसार देना। मैं क्षण, दिन, मास वर्ष तथा कल्पों तक आपकी बाँह पकड़े रहा हूँ। आपका आदेश शिरोधार्य रहेगा, मैं आपको कभी विस्मृत नहीं कर सकता। मैं किसी काम का नहीं हूँ फिर भी मेरा मन मानता नहीं है। मुझको



असहाय व गरीब समझकर प्रभु कृपा कीजिए और मुझे कल्पतरु की छाया में बुला लीजिये जिससे दुख समाप्त हो जाए। कवि टडूदास कहते हैं कि मेरी उदासी को बिना देरी किए आप दूर कीजिए।

*सुन्दर भीनी रात रे आबै लाड़ीला बानरा।*
*अब जिन कोऊ अलस्यावो सखी री लागी सजन बरात रे।*
*घंटा ध्वनि जांगड़ा अलापत बाज बहुत हिननात रे।।*
*मधुर मधुर फूलन की बरषा होन लगी शिव साख रे।*
*नभ अरु नगर कुलाहल भारी विश्नु सहित सुर साथ रे।*
*चारहिं भ्रात तुरंगन ऊपर कोटन काम लजात रे।*
*टडूदास छवि देख मगन भईं घर अगना न सुहात रे।।*

(सभी छन्द श्री हरिविष्णु अवस्थी के सौजन्य से)

कवि राम के दूल्हा बनने का वर्णन करते हुए कहते हैं कि हे सखी ! देखो कितनी सुन्दर रस भरी रात है, आज का दूल्हा कितना प्यारा है। अब तुम लोग आलस मत करो, देखो बारात सजने लगी है। घंटों व जांगड़ों (वाद्य यंत्र) की मधुर ध्वनियाँ निकल रही हैं तथा घोड़े हिनहिना रहे हैं। आकाश से पुष्प वर्षा हो रही है।, इसके साथ साक्षात् शिव हैं। आकाश व नगर में भारी शोरगुल हो रहा है। यहाँ विष्णु साक्षात् देवताओं के साथ पधारे हैं। चारों भाई राम, लक्ष्मण, भरत व शत्रुघ्न दूल्हा बनकर घोड़ों पर सवार हैं जिन्हें देखकर हजारों कामदेवों की शोभा लज्जित है। कवि टडूदास कहते हैं कि नगर की नारियों को अपना घर–आँगन अच्छा नहीं लगता वे इस छवि को देखकर निहारतीं ही रह गईं।

## रामप्रसाद सक्सेना

कवि रामप्रसाद सक्सेना के जन्म समय के बारे में कुछ पता नहीं चला किन्तु इनका जन्म स्थान ग्राम अकोना (राठ) जिला हमीरपुर उत्तरप्रदेश है। इनकी मृत्यु के बारे में प्रपौत्र कु. अशोक कुमार सक्सेना बताते हैं कि मृत्यु सन् 1909 में हुई थी। इनके बारे में एक किवदन्ती है कि चरखारी राज्य के ग्राम भरखरी के जमींदार के यहाँ किसी परिजन की तबियत खराब थी तो रामप्रसाद सक्सेना उन्हें भक्ति काव्य सुनाने गए थे। भक्ति काव्य को सुनकर भरखरी जमींदार के परिजन तो स्वस्थ हो गए थे किन्तु ये आकर अस्वस्थ हो गए थे और बाद में इनका निधन हो गया। इनके कुछ छन्द इनके पुत्र सिद्ध गोपाल सक्सेना की पांडुलिपियों के साथ प्राप्त हुए हैं। जो उद्धृत किए गए हैं।

### कवित्त

*भारी है बोझ अघ औगुन कौ मेरे शीश पाप*
*और त्रितापन की जरत हौ जरन में।*



*तुम सम कृपाल और दूसरो न देखों*
*कहूं ऋषिन में न मुनन में न नरन में न सुरन में।*
*'रामप्रसाद' के न अवगुण चित देव प्रभू,*
*करुणानिधान ढुरौ आपनी ढुरन में।।*
*राख हौ न मोकौ तौ जिहाज बूड़ जै है,*
*तासों दीन प्रतिपाल नाथ राखिये शरण में।।*

मेरे सिर पर अवगुणों व अज्ञान का भारी बोझ है। मैं पापों और तीनों तापों की जलन में जलता हूँ। मैंने ऋषियों, मुनियों, देवताओं और मनुष्यों में तुम्हारे समान कृपालु किसी दूसरे को नहीं देखा है। कवि रामप्रसाद कहते हैं कि हे करुणा के आगार ! आप अपनी गति से चलिए, मेरे अवगुणों को चित्त में मत लाइये। यदि मुझे आप नहीं रखेंगे तो मेरा जीवन रूपी जहाज डूब जाएगा। आप दीनों की रक्षा करने वाले स्वामी हैं, मुझे अपनी शरण में ले लीजिये।

*आरत अनाथ हौं असाध रोग पीड़ित हों*
*भीड़त हौ देख निज मन के छर छन्द में।*
*कबहूं बिरागी महात्यागी अनुरागी होत*
*कबहूं निरबन्द होत कबहूं अति बंध में।।*
*'राम प्रसाद' कछू मेरो न उपाय जो*
*कृपालु को सुहाय तौ लिख देव सन्द में।*
*विरद की जहाज भरी लाज की सो बूड़त हैं*
*प्रणन निवाज महापामर मत कन्द में।।*

मैं पापी, अनाथ, असाध्य रोगों से ग्रस्त, अपने खुद के छल छंदों से परेशान हूँ। कभी मेरा मन वैराग्य धारण करके महात्याग करने हेतु प्रवृत्त होता है तो कभी स्वछंद हो जाता है और कभी अत्यधिक बंधनों में बँध जाता है। कवि राम प्रसाद कहते हैं कि मेरा स्वयं पर कोई उपाय नहीं चलता है। आप कृपालु को जो अच्छा लगे

उसे सनद में लिख दीजिए। आपके यश से लदा हुआ जहाज आज डूबता दिख रहा है अतः इसको बचाने हेतु स्वामी इस महापापी, बुद्धि हीन पर कृपा कीजिए।

*गणका सै अगणका हों पापन को पुंज भरो,*
*बधिक सा अधिक निषाद से अगाध हों।*
*ऐसे बद कर्म करत लागत ना शर्म नेक,*
*परो रहौत भर्म मांझ बनो चहौत साधु हों।।*
*तुम ही हौ वैद देव भेषज निज भक्त मोह,*
*भारी भवसागर के रोग में असाध हों।*
*'रामप्रसाद' को जो तारहौ ना दीना नाथ,*
*विरदावली की धान पेल हाड़ी में रांध हों।।*

मैं गणिका से भी अधिक अगणित पापों के समूह से भरा हुआ हूँ। वधिक से भी अत्यधिक, निषाद से भी निकृष्ट हूँ। मुझे बुरे कर्म करते हुए थोड़ी भी लज्जा नहीं आती। भ्रांतियों में पड़ा रहता हूँ और साधु बनने की चाह रखता हूँ। आप ही चिकित्सक हैं इसलिए इस भक्त के मोह को खत्म करने हेतु औषधि दीजिए। मैं इस भवसागर में असाध्य रोगों से पीड़ित बड़ा हुआ हूँ। कवि रामप्रसाद कहते हैं कि हे दीनों के स्वामी! यदि मुझे आप नहीं तारेंगे तो मैं आपकी विरुदावली को धान की हँड़िया रखकर पकाऊँगा अर्थात् आपको आपकी विरुदावली याद दिलाता रहूँगा।

*मानौ जू मेरी या विन्ती बजरंग वीर*
*तुम्हरे भरपूर भरो कृपा को खजानौ जू।*
*जानौं जू मोह सदा कपटी कलंक कूर बंक*
*ओ निसंक हो के दैत उरानौं जू।।*
*रानौं जू 'रामप्रसाद' को पनाह लैबो*
*नांतर मैं कबहूं ना बैठ हों निवानौ जू।*



*बानौं जू भक्त कौ सो रक्षा कर राख लेव,*
*लेव ना परीक्षा कलिकाल कौ जमानौं जू।।*

हे बजरंग वीर ! आप मेरी विनय मान लीजिए आपके पास कृपा का समृद्ध कोष है। मुझे सदैव कपटी, कलंकी, क्रूर और तिरछा समझिये मैं बिना शंका के इसलिए उलाहना देता हूँ। कवि राम प्रसाद कहते हैं कि आप मुझे अपनी शरण में स्वीकार कीजिए अन्यथा में कभी शांति से नहीं बैठूँगा। इस भक्त की रक्षा कर लीजिए। यह कलियुग है इसलिए परीक्षा मत लीजिए।

*तृष्णा की लूंकै उठै ईर्षना भभूकैं महा,*
*ज्ञान प्राण सूकै तप्त वासना वयारी में।*
*अहं उष्णताई अनिश्चय की अकबाई झार*
*मत्सर झहराई तीव्र दुविधा की दुफारी में।।*
*'रामप्रसाद' सुमत तरुणी न ऐन होत*
*कैंसऊँ ना चैन परे तिरगुन तिदुवारी में।*
*ग्रीष्म को काल मोह करत है विहाल,*
*अब सींचिये कृपाल कृपा पावस के बारी में।।*

तृष्णा की लपटें उठती हैं जिसमें ईर्ष्या भभूका देकर जल रही है। इससे ज्ञान रूपी प्राण सूख रहे हैं। वासनाओं की गर्म हवा प्रवाहित हो रही है। अहंकार की उष्णता, अनिश्चय की उकताहट, मत्सर की तेजता इस दुविधा रूपी दुपहरी में फैल रही है। कवि रामप्रसाद कहते हैं कि सुमति रूपी तरुणी नहीं है जिससे किसी भी प्रकार तीन गुणों की तिफंग में फँसने से शांति नहीं मिलती है। यह गर्मी ऋतु मुझे व्याकुल कर रही है अतः हे कृपालु ! आप कृपा रूपी जल की वर्षा करके इसे सिंचित कीजिए।

*प्रेम के फुहारे अनुराग पिचकारे हौंज*
*आनंद सम्हारे शील चन्दन की क्यारी में।*

*अतर विवेक भरे कुण्ड सो अनेक झोंक,*
*आवत विशेष ध्यान प्राण की बहारी में।।*
*'रामप्रसाद' सुमति वाला के संग लिपट*
*समता परयंक पौढ़ सो ओ चित्र सारी में।*
*नाम की उसीर लगी टही सुख समीर करै*
*ऐसी तदवीर रहैं मोज मजेदारी में।।*

प्रेम के फब्बारे लगाकर, अनुराग की पिचकारी भरकर, आनंद का सहारा लेकर शील रूपी चन्दन की क्यारी को सींचिये। विवेक रूपी इत्र को कुंड में भरकर प्राणों में प्रसन्नता लाइये। कवि रामप्रसाद कहते हैं कि सुमति रूपी नायिका के संग लिपट कर समता रूपी पलंग पर शयन करिये। ईश्वर नाम का परदा लगा, सुख रूपी हवा को ग्रहण करने की युक्ति से जीवन मौज मस्ती में व्यतीत कीजिए।

*लूकै झहराती अधिकाती हैं रोज रोज,*
*खोज खोज हारी सखी आये वे सधाती ना।*
*लपटैं घघाती सो समाती मो करेजे बीच,*
*सीतल जमाती मोह एक हू सुहाती ना।।*
*'रामप्रसाद' ना पठाई, श्यान पाती भई*
*प्राणन की घाती मैं लगाये पीठ छाती ना।*
*दिन प्रति मुरझाती अकुलाती कर हाय हाय,*
*ग्रीषम अवाती मोह एकइ सुहाती ना।।*

लपटों की आग प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है, इन्हें रोकने की विधि ढूँढ़कर थक चुकी हूँ किन्तु वे सही नहीं जाती। ये लपटें जब प्रभाव छोड़ती हैं तो हृदय के भीतर जाकर समा आती है। जिससे मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता है। कवि राम प्रसाद कहते हैं कि कृष्ण ने चिट्ठी भी नहीं पहुँचाई है जिसे वे (गोपियाँ) छाती व पीठ से लगाकर शीतलता पा सकतीं। वे दिन प्रतिदिन व्याकुल होकर



मुरझाते हुए हाय–हाय कर रही हैं, उन्हें ग्रीष्म ऋतु का आगमन बिल्कुल अच्छा नहीं लग रहा है।

*हौज भरवाये सुभग चन्दन पुताये अतर अरगजा*
*सिचाये औ बिछाये फूल वारी के।*
*पंकज उसीरन के परदा लगाये सब भांत के*
*सुहाये कंछाये नीर झारी के।।*
*ताहू पर प्राण वीर जान हैं विदेशे हैं अंदेशे न संदेशे*
*कछू पाये गिरधारी के।*
*'रामप्रसाद' रये सौतिन की ओर हमें जोर सहे*
*जात नहीं ग्रीष्म दुपारी के।।*

हौजों में पानी भरवाया, अच्छे चन्दन से पुतवाया, अरगजा (शीतल लेप) से सिंचवाया और पुष्प बिछाये। कमलों के परदा लगाकर सभी प्रकार से सफाई कर पानी को छिड़का लेकिन मेरे तन की गर्मी नहीं जाती है। इसका कारण यह है कि मेरे प्राणों के प्रिय गिरधारी कृष्ण मुझ से दूर हैं और उन्होंने कोई सन्देश नहीं भिजवाया है। कवि रामप्रसाद कहते हैं कि गोपिकायें बताती हैं कि मुझे सौतिन के कारण ये ग्रीष्म की दोपहर सहन नहीं हो पा रही है।

## सवैया

*जांव कहां तज के चरणाम्बुज मोह कहूँ प्रभू ठौर न दीसें।*
*जासों कहों दुख रोय भली विध मोह भली विधि दांत सो पीसें।।*
*'रामप्रसाद' हिये अपने अनुमान के गांठ दई किस वीसें।।*
*मारें चहें अरु पालें चहें सब भांत को है छर भार कपीसें।।*

(उपर्युक्त सभी छंद सौजन्य से डॉ. अशोक सक्सेना)

मैं आपके चरण कमलों को त्यागकर और कहाँ जाऊँ ? मुझे कोई स्थान दिखाई नहीं देता है। मैं अपने दुखों का रोना किसके

पास जाकर सुनाऊँ? कवि रामप्रसाद कहते हैं कि मैंने अनुमान की गांठ बाँधकर प्रतिज्ञा कर ली है कि आपसे ही दुख सुनाऊँगा। आप हे कपीश ! आप समस्त कष्टों को नष्ट करने वाले हो इसलिए अब आप चाहे मुझे मारो या पालो।



## माधौ सिंह बुन्देला

माधौ सिंह बुन्देला का जन्म छतरपुर जिले के ग्राम सीलोन में सम्वत् 1927 में हुआ था। इनके पिता का नाम पृथ्वी सिंह बुन्देला था। ये चार भाइयों में सबसे बड़े थे। तीनों अनुजों बुद्ध सिंह, किशोर सिंह तथा पर्वत सिंह सहित चारों भाई भक्त प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। इनमें काव्य प्रतिभा बचपन से ही थी। ये आचार्य ईसुरी एवं गंगाधर के समकालीन कवि थे। इनकी जन्मभूमि सीलोंन के इर्द–गिर्द रनगुवाँ बाँध बँध जाने के कारण ग्रामीणों ने विस्थापित होकर नया सीलोंन गाँव बसा लिया है किन्तु पुराने सीलोंन में इनके पिता पृथ्वी सिंह का राजमहल तथा इनके द्वारा बनवाया गया बिहारी जू का मंदिर आज भी है। यहाँ लोग समय–समय पर भक्ति भावना से ओतप्रोत हो अभी भी दर्शनार्थ जाते हैं तथा माधौसिंह की भक्तिपरक रचनाओं का सामूहिक गायन करते हैं। इनके वंशज अमान सिंह बुन्देला के अनुसार कवि माधौसिंह को फड़बाजी का शौक गंगाधर व्यास की भाँति ही था। वे फागों के फड़ों व भजन मण्डली में मस्त हो जाने के कारण अपने गाँव–घर की खबर भूल जाते थे। उनके मानस में दिनरात रचना प्रक्रिया क्रियाशील रहती थी। कभी–कभी

रात में प्रकाश सुलभ न होता था तो कोयला से दीवार पर रचना लिख लेते थे फिर सुबह प्रकाश होने पर लिपिबद्ध करते थे। इनकी रचनाओं का हस्तलिखित संग्रह डॉ. के.एल. पटेल को शोधयात्रा के समय जीर्ण शीर्ण हालत में प्राप्त हुआ था जिसमें दोहा, पद, सोरठा, प्रभाति, कवित्त, कीर्तन, चौकड़ियों फागें तथा छन्दयाऊ फागें हैं। इनकी अनेक रचनायें आज भी इस क्षेत्र के झमटुली, सलैया, वरद्वाहा, भुसौर, कोंड़न, गंगवाहा, हरपुरा तथा रनगुवाँ आदि गाँवों में लोकमुख में हैं। इनकी जीवन लीला सम्वत् 2002 में समाप्त हुई।

दोहा – *गौरी पुत्र गनेश जू, देव बुद्धि अनुसार।*
*करहु कृपा जन जानके, मैटहु सोच अपार।।*

भजन – *भजो मन श्री गौरी के नन्दन।*
*चार भुजा अति सुभग विराजत माथे है चन्दन।।*
*सुन्डा डण्ड दन्त एक सोहत सोच सकल गंजन।*
*मकराकृत कुण्डल कानन में तुम संतन रंजन।।*
*कीजे कृपा जान जन अपनो मैटहु दुख दंदन।*
*माधौसिंह छवि देख मगन भये हरो विपत्ति फंदन।।*

कवि गणेश वंदना करते हुए कहता है कि हे पार्वती के लाल गणेश जी ! आप मुझे आवश्यकतानुसार बुद्धि प्रदान करें। अपना सेवक मानकर कृपा करिये और मेरी अनन्त चिन्ताएँ समाप्त करिये।

अपने मन को समझाते हुए कवि गौरीसुत गणेश का भजन करने का आव्हान करते हुए कहता है कि जिसके चार हाथ हैं और जिसके मस्तक पर चन्दन का बिन्दु शोभा दे रहा है। सूँड सहित, एक दाँत की शोभा से शोभित, कानों में मकर आकृति के कुण्डल धारण किए हुए संतों के मन में आनंद उत्पन्न करने वाले गणेश जी



अपना भक्त जानकर मेरे समस्त दुख दर्दों का हरण कर कृपा कीजिए। माधौसिंह कहते हैं कि यह छवि देखकर वे उसमें तल्लीन होकर समस्त विपत्तियों के फन्दों का हरण करने की प्रार्थना कर रहे हैं।

दोहा – *प्रगट भये भायन सहित, अवध पुरी हरि आन।*
*बाल चरित्र लागे करन, भूपत हित नारायन।।*

भजन – *खेलत चारऊ भाई भूप गृह शोभा छाई।*
*भीतर से जननी अति आतुर– दीनो मोदक लाई।।*
*कर लो तात कछू अव भोजन फिर तुम खेलो जाई।*
*देख हरि गये मुस्काई।।*
*कछुयक डार भूमि में दीनों कछुयक लीन चबाई।*
*काग भुसुण्ड कागतन करके किनका बीनत खाई।।*
*बचन तनकौ न पाई।।*
*देख–देख किलकत है ताको धाये चारऊ भाई।*
*कर पसार जब पकरन धाये–भागो काग उड़ाई।*
*मचल तब गये अंगनाई।*
*झंगुली फार फेंक दई टोपी, रो रो रार मचाई।*
*कौशिल्या कैकई सुमित्रा धाई तीनऊँ माई।*
*झपट लये गोद उठाई।*
*कोकिल सुआ हंस और मैना देहौ मोर मंगाई।*
*माधौ सिंह बल जाय तुम्हारी रहिये लाल रंगाई।*
*मात बहु रहीं समुझाई।*

कवि माधौसिंह कहते हैं कि विष्णु भगवान, राजा दशरथ के लिए अवधपुरी में भाइयों सहित प्रकट हुए हैं अर्थात् उन्होंने अवतार लिया है, और अवधपुरी में भाइयों सहित बाल लीलाएँ कर रहे हैं।

राजा के घर में चारों भाई खेल रहे हैं, जिससे राजन् के घर

में प्रसन्नता छा गई है, शोभा बढ़ गई है। राजमहल के भीतर से माता उनके खाने के लिए लड्डू लाई है, तथा वह कहती है कि हे लाल! पहले भोजन कर लो, फिर खेलो। माता को देखकर भगवान मुस्कुरा रहे हैं।

विष्णु बाललीला करते हुए कुछ मोदक खा रहे हैं, और कुछ धरती पर गिरा रहे हैं, और जो मोदक धरती पर गिरे हैं, काकभुसुण्ड कौवे का रूप धारण कर बचे अंश खा रहे हैं, और उन्होंने पूरा शेष भाग खा लिया है।

इस क्रिया को देखकर चारों भाई हंस रहे हैं, और जब वह हाथ पसार कर उन्हें पकड़ने आते हैं, तो कौआ उड़ गया तब रामचन्द्र जी आँगन में मचल गए। उन्होंने अपना झबला फाड़ दिया है, टोपी फेंक दी है और जोर–जोर से रोते हैं, तब कौशल्या, कैकई, सुमित्रा तीनों माताएँ आती हैं, और बालकों को गोद में उठा लेती हैं। तब माता मनाती हुई कहती हैं कि हम कोयल, तोता, हंस और मैना मँगा कर देंगे। कवि माधौ सिंह कहते हैं, मैं ऐसी बाल क्रीड़ाओं को देखकर बलिहारी जाता हूँ, उनकी माताएँ उनको विविध तरह से समझा रही हैं।

दोहा – *ललिता राधे श्याम सों, हंस हंस पूछें बात।*
*केल रात भर तुम करे, उठ भागे प्रभात।।*

स्थायी – *आज सखी उठ आये बड़ी भोर।*
*कुंजन से वृषभान लाड़ली औ नन्दलाल किशोर।*
*उमग गात पग धरत धरनि में, परखत नख सिरछोर।*
*दसन वसन खंडित मुख मंडित विथरी काजर कोर।*
*माधौ सिंह कहत रस संग में है दोई सरबोर।।*

ललिता सखी कृष्ण व राधा से हँस–हँसकर पूछ रही है कि



तुम दोनों ने रात भर केलि की तथा सुबह होते ही भागे चले आये। ललिता कहती है कि तड़के ही वृषभान सुता राधा तथा नंदपुत्र कृष्ण कुंजों से चले आए हैं। उनके पैर धरती पर जल्दी–जल्दी (शीघ्रता से) पड़ रहे हैं, और वे नख से शिख तक अपने को देख रहे हैं। वस्त्र दांतों से कटे हैं और आँखों के काजल की कोर बिखर कर मुख पर छा गई है। माधौसिंह कहते हैं कि दोनों रस सरोवर में सराबोर हैं।

दोहा – *मित्र कृष्ण के सुदामा, परे विपत में आन।*
*वसन विभूषन को कहै, असन बिना हैरान।।*

स्थायी – *सुदामा बहुत भये हैरान।*
*सत भामा बोली प्रीतम से सुनो कंत दे कान।*
*है हरि मित्र द्वारका तुम्हरे जाव प्रीत पहचान।।*
*चले हर्ष उठ वेग सुदामा वचन प्रिया के मान।*
*सिन्ध समीप पुरी हरि की, जहाँ तहाँ पहुंचे आन।*
*द्वारपाल ने खबर सुनाई सुन धाये भगवान।*
*भीतर लिवा गये है तिनको कीन बहुत सनमान।*
*लग लग हिये भेंट हरि कीन्हीं प्रेम न जाह बखान।*
*माधौ सिंह दई रिद्ध सिद्ध सब द्वज को कृपा निधान।।*

द्वारकाधीश कृष्ण के बालसखा सुदामा विपत्ति में हैं। वस्त्र और आभूषण की बात ही छोड़ो भोजन व आवास बिना परेशान है। सुदामा की दीनता को लखकर उनकी पत्नी सुदामा से कहती है कि हे स्वामी ! कान देकर सुनिये। आपके मित्र कृष्ण द्वारकापति हैं। उनकी प्रीति पहचान कर आप उनके पास जाइये। सुदामा पत्नी की बात मानकर प्रसन्नता के साथ गति से चल दिए। समुद्र के किनारे स्थित कृष्ण की पुरी द्वारिका में वह पहुँचकर द्वारपाल से श्रीकृष्ण तक संदेश भेजते हैं । श्रीकृष्ण संदेश पाकर दौड़कर आते हैं तथा मित्र को भीतर ले जाकर बहुत सम्मान देते हैं। बार–बार हृदय से लगाकर भेंट करते हैं, वे इतना प्रेम देते हैं कि उसका वर्णन नहीं

किया जा सकता है। माधौ सिंह कहते हैं कि दीन ब्राह्मण को समस्त निधियों से कृष्ण ने आपूरित कर दिया है।

दोहा – *हरि विचार मन में कियो, वामन रूप बनाय।*
*राजा बल सें जायकें, वसुदा लेव मंगाय।*

स्थायी – *वामन रूप बनाऊँ, फिर बलि छलि पै जाऊँ*
*माला धार लई मृग छाला पहरी चरन खड़ाऊँ।*
*कटि कोपीन लकुटिया कर में माथे तिलक लगाऊँ।*
*यह बिध बरन छिपाऊँ।*
*पूंछत–पूंछत डगर चलै है पहुंचे बलि के गाँऊ।*
*मख शाला मैं जाय भूप से कहो अपनो नाऊँ।*
*मैं राजन जो वर चाऊँ।*
*चार मास वर्षा रित आई कहो राजन कहाँ राऊँ।*
*तीन पैग धरनी दै राखौ, तुम्हरे नगर बस जाऊँ।*
*जौ जस तुम्हरो गाऊँ।।*
*जौ का मांगो ब्राह्मण तुमने देतन मैं सकुचाऊँ।*
*तीन पग की कौन चलावै साढ़े तीन नपाऊँ।*
*जौ बलिराज कहाऊँ।।*
*सुक्राचार्य सुनत चल आये सुन राजा मैं काऊँ।*
*ई ब्राह्मण कौ भूम न दइयो मैं तुमको समझाऊँ।*
*कौन गुन इनके गाऊँ।।*
*न मानी बलि दियो दान जब सो का चरित बताऊँ।*
*तीन लोक लौ हरि तन बाढ़ो जाकौ छोर न पाऊँ।*
*परौ बलि हरि के पाऊँ।।*
*होके दयाल दओ बलि को बर का नृप तोय साराऊँ।*
*माधौ सिंह कहत अस बानी कोमल शील सुभाऊ।*
*अब मैं निजपुर जाऊँ।।*



विष्णु ने मन में यह विचार किया कि वामन रूप धारण करके ही राजा बलि से वसुधा माँगी जा सकती है। उन्होंने विचार किया कि ब्राह्मण वेश हेतु गले में माला, शरीर पर मृगछाल तथा पैरों में खड़ाऊँ धारण करके कमर में पीलावस्त्र बाँध माथे पर तिलक लगाया जाए। इसी विधि से अपने रूप को छिपाया जा सकता है। उपर्युक्त रूप धारण करके वे रास्ता पूछते–पूछते राजा बलि के ग्राम पहुँच यज्ञशाला में प्रविष्ट हो अपना परिचय राजा बलि को देकर कहते हैं कि आगामी चार माह की वर्षा ऋतु में, मैं कहाँ वास करूँ? अर्थात् निवास हेतु मुझे तीन पग धरती दे दीजिए जिससे मैं आपके नगर में वास कर आपके यश का गुणगान करता रहूँ। राजा बलि कहते हैं कि हे ब्राह्मण! आपने यह क्या माँगा? मैं इतनी छोटी भेंट देते हुए संकोच में पड़ रहा हूँ। आप तीन पग की बात करते हैं मैं साढ़े तीन पग धरती नपवाये देता हूँ, तभी तो राजा बलि कहाऊँगा अर्थात् मेरे दरवाजे से कोई खाली हाथ नहीं गया, आप कैसे जा सकते हैं? यह खबर पाते ही शुक्राचार्य वहाँ आ गए और राजा से बोले हे राजन! तुमको मैं समझाकर कहता हूँ कि इस ब्राह्मण को भूमि मत देना, इसके गुणों का मैं बखान नहीं कर सकता हूँ। शुक्राचार्य की बात न मानकर राजा बलि ने जब दान में भूमि देने की ठान ली तो उसका चरित सुनाया नहीं जा सकता। तीनों लोकों तक विष्णु ने अपना शरीर बढ़ाकर तीन पग में तीन लोक नाप लिए। इस रूप को देखकर बलि भगवान विष्णु के पैरों पर गिर जाता है। माधौसिंह कहते हैं कि भगवन् प्रसन्न होकर बलि को वरदान दिया और कहा कि राजन मैं तुम्हारी क्या सराहना करूं? तुम्हारा स्वभाव राजा होते हुए भी कोमल और शिष्ट है, अब मैं अपने धाम को प्रस्थान करता हूँ।

दोहा – *फटो चित्त मिलबो कठिन, कोटन करो उपाय।*
*फिर जोरो नाहीं जुरै, जीसें जो फट जाय।।*

टेक – *मिलबो मुसकिल चित्त फटें सें, फट गवो नेह घटे सें।*

*अब बे बातें होनें नइयाँ, फिरकें कभऊँ लटे सें।*
*कड़ियौ गैल घाट दूरइ सें, ऐसे छैल छटे सें।।*
*माधौसिंह कहें दुख बिसरत, अपनौ काम सटे सें।।*

कवि माधौ सिंह कहते हैं कि एक बार भी मन फट जाए तो मिलना कठिन हो जाता है। करोड़ों उपाय करने से भी वह मन जुड़ता नहीं है। जो एक बार फट गया। हृदय फटने (टूटने) से मिलना कठिन हो जाता है। प्रेम घटने से ही मन फटता है। अब वे पुरानी बातें जो चित्त जुड़े की थी, दुबारा नहीं हो सकती हैं। ऐसे छटे छलिया मित्र को दरकिनार करते हुए दूसरे रास्ते व घाट से ही निकलना चाहिए। माधौसिंह कहते हैं कि अपना काम निकल जाने पर वह दुख भूल जाता है।

दोहा – *अटका बतला दो इक यारौ, जानो होय तुमारौ।*
*पंछी इक ऐसौ हम देखो, बेपर उड़ै विचारौ।।*
*अन्न खाय ना भूमै बैठै, बूढ़ौ होय न बारौ।*
*होबे गुनी चतुर जो इसको, भेद बताबै सारौ।*
*माधौसिंह कहै दंगल में, नातर हमसें हारौ।।*

कवि एक समस्या रखते हुए कहता है कि मित्रों हमारी एक समस्या का समाधान कर दीजिए। तुम क्या एक ऐसे पक्षी को जानते हो? जिसे हमने देखा। वह बिना पंखों के उड़ता है, वह अन्न नहीं खाता और न ही धरती पर बैठता है। उसका न बचपन आता और न ही वह बूढ़ा होता है। जो आपमें से गुणी व चतुर हों, वे हमारा भेद बतायै। माधौसिंह कहते हैं कि समस्या पूर्ति करते हुए या तो उस पक्षी का नाम बताइये अथवा हमसे हार मान जाइये। (इसका उत्तर मन है)

दोहा – *अब भई मोहन बिन हैरानी, सुनो सखी मम बानी।*
*हमसें प्रीत काट गिरधारी, कुब्जा कर लयी रानी।।*



*जाकी जात पांत कछू नाहीं, हरि के चित्त समानी।*
*माधौ सिंह हमसें बिछुरन कर, हिये निठुरता ठानी।।*

कृष्ण के गोकुल से ब्रज चले जाने पर सखियाँ ईर्ष्या भाव से कहती हैं कि मन को मोहने वाले कृष्ण के बिना हम सभी परेशान हैं। गिरधारी ने हमसे नेह तोड़कर कुब्जा को अपने हृदय की रानी बना लिया है। उसकी जाति का भी पता नहीं है। ऐसी कुब्जा उनके मन में समा गई है। माधौसिंह कहते हैं कि सखियाँ (ग्वालिनें) कह रही हैं कि हम से बिछुड़ कर निष्ठुर कृष्ण ने न मिलने का प्रण कर लिया है।

फाग – *राते आये काये तुम नइयाँ, हमें बता देव सइयाँ।*
*हेरें बाट रही सिजिया पै, उर बुलावो कई दइयाँ।।*
*डारत मदन मरोरें टोरें, अबै बैस लरकइयाँ।*
*माधौसिंह कयें बेग मिलौ अब, परौं तुम्हारी पइयाँ।*

परकीया नायिका नायक से उलाहना देते हुए कहती है कि हे प्रिय! हमें बताइये कि आप रात्रि में क्यों नहीं आये? सेज पर मैं तुम्हारी राह तकती रही। मैंने कई बार तुम्हें आमंत्रण दिया। कामदेव की पीड़ा से मैं पीड़ित हूँ। मेरी अभी आयु ही कितनी है? मैं किशोरी हूँ। माधौसिंह कहते हैं कि विरहिन नायिका कहती है कि मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, अब तत्काल मिलिए।

### छन्दयाऊ फाग

दोहा – *एक गुवालिन के भवन, गये छल तककर कान्ह।*
*हार उतारो गरे सें, गई नार पहिचान।।*

टेक – *भागो लेकर हार कन्हाई, पीछे ग्वालन धाई।*
छंद – *धाई है बाल, मिल जाय लाल, हिया छिड़ा हाल हरवा हरसे।*

*बलम हमार, पूछेंगे हार, कहँ दओ डार, काड़ें घर सें।*
*करहैं बहुत लड़ाई।*
*मिले न लाल बाल को मग में।*

उड़ान – *कीन्हें बहुत उपाई।। भागी लेकर .....*

छंद – *पाई न श्याम, गई नन्द धाम*
*कर क्रोध बाम, बोली बानी*
*सुनलेरी मात, इक मेरी बात*
*पत तेरे हांत, हे नंद रानी।।*

उड़ान – *तासे तुम ढिग आई।*
*भागो लेकर.....*

टेक – *सोवत हती भवन में अपने, तौलौ गये यदुराई।*

छंद – *हिय हांत डार, हरवा उतार*
*भागे मुरार, तब मैं धाई*
*दीनों न मोय, दे दिया तोय*
*ऐसी न होय, हम पै माई।*
*सो दीजे हार मंगाई। भागी लेकर.....*

टेक – *सै लइयत माखन चोरी, जाकी ऐसई जाई।*
*सुन लेरी नार, कहना हमार*
*जो लिया हार, हरि ने तेरा*
*आहै मुरार, दै पूछौ मार*
*तू ले जा हार, यह ले मेरा*
*ग्वालन गई मुस्क्याई। भागो लेकर.....।।*
*माधौ सिंह लै हार नार कौ अपने भवन सिधारी।।*

नटखट नन्दकिशोर कृष्ण एक ग्वालिन के घर छल से पहुँचे



तथा उसके गले से हार उतार लिया। उस ग्वालिन ने कृष्ण को पहचान लिया। हार लेकर कृष्ण वहाँ से भागे तथा ग्वालिन उनके पीछे दौड़ी।

ग्वालिन कृष्ण को ढूँढती हुई दौड़ रही है तथा कहती है कि मेरे पति हार के बारे में पूछेंगे कि तूने हार कहाँ खो दिया है? वे मुझसे झगड़ेंगे, घर से निकाल देंगे। ग्वालिन को कृष्ण रास्ते में बहुत खोजने पर भी नहीं मिलते हैं। जब श्याम नहीं मिले तो वह नन्दबाबा के घर पहुँच क्रोधित हो यशोदा से कहती है कि हे मात! मेरी एक बात सुनो। मेरी इज्जत आपके हाथ में ही है। मेरा हार गले से निकाल कृष्ण भागे हैं इसलिए मैं आपके पास आई हूँ। मैं अपने घर में सो रही थी कि कृष्ण वहाँ पहुँचे तथा उन्होंने गले में हाथ डालकर हार उतार लिया। वे हार लेकर भागे, उनके पीछे मैं दौड़ी, मुझे उन्होंने हार नहीं दिया, शायद आपको दे दिया हो। यदि नहीं भी दिया है तो भी उनसे मेरा हार मंगा दीजिए। मैं माखन की चोरी तो सहन कर लेती हूँ किन्तु अब हार चुरा लिया है। इस पर यशोदा कहती है कि रे नारि! यदि कृष्ण ने तेरा हार लिया है, तो उसके आने पर पिटाई लगाकर मैं पूँछुंगी, तब तक तू मेरा हार ले जा। इस पर ग्वालिन मुस्कुराकर हार लेकर अपने घर गई।

## छंदयाऊ फाग

दोहा – *रामसिया को भजौ नर, जो चाहौ सुख चैन।*
*नाहक बीते जात है, ये मूरख दिन रैन।।*

टेक – *भज लो राम सिया को भाई, जनम सफल हो जाई।*

छंद – *होवे जनम सफल उद्धार, भजलो राम सिया को यार।*
*हूहै भव सागर से पार, हरि गुन गायें।*
*देखो भजकें मीरा बाई, जाने लिया जहर को खाई।*
*बाके मौत पास न आई, बिस के खायें।*

*जानत लोग लुगाई।*
*भज लो.....*

टेक – *दुखी द्रोपदी देख प्रभू ने अम्बर दिया बड़ाई।*
*सौरी आय भीलनी वाम, जाकौ कोई लेय न नाम।*
*प्रभू गए ताही के धाम, फल ले आई।*
*खाये लछमन उर रघुराई, मन में बहुत गए हरसाई।*
*जाकौ स्वाद कहो न जाई, लछमन भाई।*
*तेहिं पावन गति पाई।।*
*भज लो.....*

टेक – *गौतम तिय पाखान बीस कर दई, वेद पुरानन गाई*
*गनका करौ अनेकन पाप, न जानें पूजा उर जाप*
*तिहकीं भई वेदन में छाप, महमा भारी*
*जाकौ अन्त समय जब आया, हरि ने दूतों को पठवाया*
*अपने पासई में बुलवाया न लगी बारी।*
*पहुँची हरि ढिग जाई।*
*भज लो.....*

टेक – *बरत अबा सें मनजारी के बच्चा लये बचाई।*
*भारई भारत के मैदान, बैठी धरकें हर कौ ध्यान।*
*रक्षा करै बेई भगवान, कै मर जाऊँ।*
*ताकी कीनहीं आन सहाई, दल के बीच मरन न पाई।*
*ऐसी–ऐसी हर प्रभुताई, कह लौ गाऊँ*
*जन की करत सहाई। भज लो.....*
*'माधौ सिंह' कहत नर तिनकी काये सुरत बिसराई।*

(सभी रचनायें सौजन्य से – डॉ. के.एल. पटेल)

कवि माधौसिंह मनुष्य को चेतावनी के स्वर में कहते हैं कि तू यदि सुख–शांति चाहता है तो सीता–राम का भजन कर। जीवन के



दिन व्यर्थ में बीत रहे हैं। सीताराम के भजन से जन्म सफल हो जाएगा। जीवन रूपी भवसागर से पार प्रभु के गुण गाने से ही होगा। मीरा ने भजकर देखा जिससे उसका जहर भी कुछ नहीं बिगाड़ सका। जहर खाने के बाद भी सियाराम की कृपा से मृत्यु उसके पास नहीं आई।

प्रभु ने दुखित द्रोपदी की लाज बचाते हुए उसका चीर बढ़ाया। शबरी भीलनी जिसका कोई नाम नहीं लेता था, उसके निवास पर प्रभु राम गए वह फल लेकर आई और उसके फल राम–लक्ष्मण दोनों भाइयों ने प्रसन्नता से खाये। उन फलों के स्वाद की प्रशंसा की, इस प्रकार शबरी ने भी पवित्र गति प्राप्त की।

वेद–पुराण कहते हैं कि पत्थर हो चुकी गौतम ऋषि की पत्नी को सुन्दर नारी बना दिया। गणिका ने अनेक पाप किये थे, वह पूजा–जप कुछ नहीं जानती थी। उसकी वेदों में चर्चा है। उसका जब अंतिम समय आया तो उन्होंने दूतों को भेजा, देर नहीं की और उसे अपने पास बुला लिया, वह भगवान के पास पहुँच गई।

जलते हुए आवा (मिट्टी के बर्तन पकाने का स्थान) में से बिल्ली के बच्चों को बचाकर जीवन दान देने वाले भी सीताराम ही हैं। भारत भूमि के भारों का हरण भी वही सीताराम करेंगे। मैं उनका ध्यान करता हूँ। प्रभु की प्रभुताई का वर्णन मैं कहाँ तक करूँ? वह अनन्त है। वे हमेशा पीड़ित जन की रक्षा करते हैं। इसलिए सीताराम को भजन कर लीजिए। माधौसिंह कहते हैं कि हे नर! तूने ऐसे कृपालु भगवान को क्यों विस्मरण कर दिया है ?

# रामदास दरजी

बुन्देलखण्ड के छतरपुर जिले के एक गरीब परिवार में कवि श्री रामदास दर्जी का जन्म श्रावण कृष्ण पक्ष 14 विक्रमी संवत् 1937 को हुआ। रामदास की प्राथमिक शिक्षा दीक्षा छतरपुर में ही हुयी। इनमें बचपन से ही काव्य प्रतिभा दिखाई देने लगी थी। वे अपने मित्रों के बीच में पहले तुकबंदियाँ किया करते थे। फिर छतरपुर के सैर साहित्य के फड़ों का उन पर असर पड़ा और उन्होंने रीतिकालीन परम्परा में रचना करना प्रारंभ कर दिया। वे वैष्णव आस्तिक कवि थे इन्होंने रीति काल के कवियों की तरह देवता, ऐतिहासिक पुरुषों के ऊपर आधारित कविताएँ लिखीं। उस समय छतरपुर में कवि गोष्ठी प्रति माह होती थी जिसमें समस्या पूर्तियाँ दी जाती थीं। रामदास आशु कवि थे, वे तत्काल कविता बना देते। पं गंगाधर व्यास रचित 'भर्तृहरि चरित्र' रामदास ने अपनी गरीबी अवस्था में छपवाया था यह उनकी उदारता का परिचायक है। इनके द्वारा रचित 'हरदौल चरित्र' अब उपलब्ध नहीं है। इनकी रचनाएँ लोककंठों में उपलब्ध हैं। कोई प्रकाशित ग्रंथ उपलब्ध नहीं है। इनके दो पुत्र



थे, बड़े पुत्र के पुत्र श्री बाबूलाल नामदेव छतरपुर में रहते हैं और एक पुत्र श्री विश्वनाथ नामदेव रीवा चले गये थे।

## कवित्त

*पाँयन के रँग को मजीठ ने न पायो रंग*
*रंभ खंभ जंघन की समता न होना हैं।*
*देख कटि जाकीं सिंह वन में निवास करैं*
*नाभी है गंभीर सुधा कुण्ड क्या निरोना है।।*
*'रामदास' श्रीफल उरोजन से हीन होत मुख*
*छवि देख दियों चन्द्र में दिठौना है।*
*नैन कंज नासा शुक दन्त बीज दाड़िम से*
*गात की गुराई तें मलीन होत सोना है।।*

नायिका के पावों (पैर के तलवों) की लालिमा मजीठ के रंग से भी अधिक लुभावनी और गहरी है। कदली के तनों की सुडौलता भी उसकी जांघों के सामने लज्जित हो जाती है। उसकी कमर की सुन्दरता को देख सिंह वन में निवास करने लगे (अर्थात् लज्जित हुए) नाभि की गंभीरता अमृत कुंड को भी पीछे छोड़ देती है। विल्व फल उसके सुन्दर कुचों के सामने श्री हीन से दिखने लगते हैं। मुख मण्डल की आभा को देखकर चन्द्रमा की सुन्दरता में भी दाग लग गया। आँखों की सुन्दरता के सामने कमल, नासिका के समान शुक की चोंच, दंत पंक्ति समक्ष अनार के बीज, देह के गोरेपन समक्ष स्वर्ण भी मलीन हो जाता है।

*विकल विहाल भई तलफति भूमि परी जल*
*बिन होत जैसी मीनन की गत हैं*
*नीर दृग ढारै न सम्हारै पर अंगन के*

*नेह की नदी में परी डूबत तरत हैं।*
*'रामदास' ताही समै सखी समझाय रही*
*होत क्यों अधीर धीर काहे न धरत हैं*
*रुक्मनी तिहारे हेतु ऐहैं ब्रजराज जो पै*
*साँची तुव चरन ससोजन में रत हैं।*

व्याकुलता से उसकी बुरी स्थिति हो गई है वह जमीन पर पड़ी इस प्रकार तड़प रही है जैसे पानी के बिना मछली तड़फती है। आँखों से अश्रु बहा रही है, देह के वस्त्रों को नहीं सम्भाल पा रही है और प्रेम रूपी नदी में कभी डूब रही है कभी उतरा रही है। रामदास कहते हैं कि इसी समय सखी उसे समझा रही है कि इतनी अधीर क्यों होती हो? धैर्य धारण क्यों नहीं करतीं? यदि तुम्हारा उनके चरण कमलों में सच्चा प्रेम है तो हे रुक्मणि! श्रीकृष्ण तुम्हारे लिये अवश्य आयेंगे।

*करमै न सोचो मोचो दृगन न अश्रुधार*
*बार–बार बिनबौं तिहारे पाँय पर मैं।*
*पर मैंने सुनी बालपन–मित्र द्वारकेस*
*'रामदास' रिद्धि जहाँ घर–घर मैं।*
*घर मैं न भूजी भाँग भेंट हेत दीजैं कहाँ*
*कहत सुदामा सौं सुदामा नार दर मैं।*
*दरमैं गये ते निज घर में निबैहैं प्रभु*
*दैहैं कछू द्रव्यमान स्वामी तुव कर मैं।*

सुदामा की पत्नी सुदामा से कहती हैं– हे स्वामी! आपके बार–बार पैर पकड़ विनती करती हूँ। तुम अपने प्रारब्ध के बारे में मत विचार करो और अपनी आँखों से अश्रु मत बहाओ। मैंने सुना है कि आपके बचपन के मित्र श्री कृष्ण द्वारिका के राजा हैं, वहाँ घर–घर में रिद्धि–सिद्धि का निवास है। सुदामा कहते हैं कि उन्हें भेंट में देने



के लिये अपने पास कुछ भी नहीं, फिर उन्हें क्या देंगे? तब पत्नी बड़े विश्वास के साथ कहती है कि उनकी देहरी (द्वार) पर पहुँचते ही वे अपने घर में आपका निर्वाह कर लेंगे और आपके हाथों में कुछ सम्पत्ति अवश्य देंगे।

*पाय दुरयोधन की सुधि जल माहिं दुरयों*
*पांडु–पुत्र वचन कहे हैं वीर वानी में।*
*त्याग भव–सिन्धु जल – सिन्धु में छिपे हों*
*आज गुप्त भये जिन्द से रहोगे जिन्दगानी में।*
*'रामदास' आन कर कीजे तृप्त शत्रुन*
*को दीजे उपहार प्रान युद्ध की निशानी में।।*
*नेक न लचैहो सिर धुन के पचैहौ मेरी*
*आँच न बचैहौ न बचैहो डूब पानी में।।*

पाण्डु पुत्र ने जब यह समाचार पाया कि दुर्योधन पानी में छिपा है तो वहाँ जाकर वीरतापूर्ण वाणी में कहा – तुम भव–सागर (संसार) छोड़कर जल–सागर में आकर छिप गये हो। आज गुप्त स्थान पाकर छिप गये हो किन्तु जीवन में सदैव अमर बने रहोगे। बाहर निकलकर शत्रु से युद्ध करके उसे संतुष्ट करो और युद्ध की निशानी में अपने प्राणों का उपहार दो। यदि तुम थोड़े भी नम्र नहीं होगे तो जीवन भर सिर धुन–धुन पछताओगे। मेरी चोट से नहीं बच सकोगे, पानी में डूबकर भी नहीं बच पाओगे।

*जानैं कहा निंदक प्रभाव परमेश्वर को जानैं*
*कहा सूम विधि दान के करन की*
*जानैं कहा पुरुष नपुन्सक तिया के भाव*
*जानैं कहा कायर कृपान मार रन की*
*'रामदास' जानैं कहा दासता को भाव मूढ़*
*जानैं कहा काशी क्रिया योग के जतन की*

*जानै कहा कीरत करैया अपकीरत को*
*जानैं बाँझ पीरा का प्रसूत हू के तन की।*

निन्दा करने वाला व्यक्ति ईश्वर के प्रभाव को कैसे जान सकता है? कंजूस व्यक्ति दान करने का विधि–विधान कैसे जान सकता है? पुरुषत्वहीन व्यक्ति रमणी के कामुक हाव–भावों को कैसे समझ सकता है? कायर पुरुष युद्ध में तलवार के घावों और आनंद को नहीं जान सकता है? कवि रामदास कहते हैं कि मूर्ख व्यक्ति दास भक्ति–भाव को क्या जानेगा? कर्मकाण्ड का विद्वान योग की क्रियाओं और उनके प्रभाव को कैसे जान सकता है? दूसरों की बुराई करने वाला व्यक्ति गुणों की चर्चा का अर्थ कैसे जान सकता है? जिस प्रकार बांझ स्त्री पुत्र–जनन की पीड़ा को नहीं जान सकती।

*आज्ञा मानि पितु की अवज्ञा राज्य करवे की*
*देवन के काज की प्रतिज्ञा कर मन में।*
*निज कुल–रीति की सुरीति प्रतिपाली सदा*
*नीति युत राखी प्रीति जानकी लखन में।*
*गोदावरी पास पच्चवटी में निवास कियों*
*निश्चरी लुभानी देख रूप के रतन में।*
*सूर्प नखा नाक–कान काट के पठाई लंक*
*मानौं राम रावनै चुनौती दीन्हीं वन में।।*

कवि रामदास भगवान राम के चरित्र का बखान करते हुए कहते हैं कि पिता की आज्ञा पाकर, राज्य का त्याग करके देवों के कार्यों हेतु रघुकुल की मर्यादाओं का पालन करते हुए भगवान राम ने सदा जनकसुता सीता तथा भाई लक्ष्मण से प्रीति जोड़े रखी। गोदावरी के निकट पंचवटी में वास करते समय राक्षसी सूर्पनखा अपने रूपजाल से उन्हें लुभाने आयी तो उसकी नाक–कान कटवाकर जंगल से ही रावण को राम ने चुनौती दे दी।



*चले गये करके सपूती पुत्र पारथ के*
*कौरव कपूत के अधर्म से दले गये।*
*दले गये चक्रव्यूह बीच महाभारत में*
*पाण्डव दुशासन–अनीति सों छले गये।*
*छले गये राजा बलि तीन पग भूतल दै*
*बावन स्वरूप धार श्री पति भले गये।*
*भले गये धर्म की ध्वजा को रोप 'रामदास'*
*धन्य–धन्य वीर नाम करके चले गये।*

पार्थ पुत्र वीर अभिमन्यु को कौरव कपूतों द्वारा छल से मारा गया। पाण्डव भीम दुशासन की अनीति से छले गये। राजा बलि को भी वामन अवतार रखकर लक्ष्मीपति विष्णु ने छला किन्तु इन सभी ने धर्म अर्थात् नैतिकता की पताका फहराकर अपना नाम अमर कर लिया।

*बरसे न बसुन्धरा गोकुल की, मन में डरपी बिजुरी दरसे*
*दरसे घन कारे मयूर नचे, तब चातक बोल लगे सरसे।*
*सर से हम 'दास' लगे उनको, कुबजा मिली जा दिन से हरि से*
*हरसे मन क्यों घनश्याम अरी, दरसे कहूँ पै औ कहूँ बरसे।*

कवि कहता है कि गोकुल की धरा पर पावस के मेघ न बरसें क्योंकि घटाओं के कारण चमकने वाली बिजली से मेरा मन डरता है। काले मेघ देखकर मोर नचते तथा चातक पिउ–पिउ करते हैं। कवि रामदास कहते हैं गोपिकायें कहती हैं कि जिस दिन से कुब्जा कृष्ण से मिली तभी से घनश्याम वहीं के हो लिये। अर्थात् रसवर्षा तो वहीं हो रही है। कहा जा सकता है कि घनश्याम अर्थात् काले मेघों के दर्शन यहाँ (गोकुल में) हो रहे हैं और वर्षा वहाँ (मथुरा में) हो रही है।

*टूटे करवाल के सकोप अभिमन्यु भयो कर*
*माहिं रथ चक्र लीन्हों खीच छन में।*

*चहूँ दिस धावें सामें बचन न पावें कोऊ*
*वीरन विदारें औं सिधारें सैन रन में*
*व्यूह मध्य एक ही अनेकन को मारें मान*
*'रामदास' कौतुक दिखावें क्षत्रियन में*
*होकर सरोष निरशंक हो चलावे चक्र*
*हौंस पार्थ–पुत्र के समानी यही मन में।।*

अभिमन्यु की वीरता का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि तलवार के टूटने से क्रोधित हो अभिमन्यु ने क्षणभर में रथ का पहिया हाथ में उठा लिया। उस चक्र को शस्त्र के रूप में प्रयोग करते हुए वह चारों दिशाओं में दौड़ते हुए कह रहा है कि आज मेरे सामने कोई बच नहीं सकेगा। मैं सभी को स्वर्ग का रास्ता दिखाऊँगा। चक्रव्यूह में फंसे अभिमन्यु को अनेक वीर घेरे हुए हैं। किन्तु फिर भी वह क्षत्रियोचित संघर्ष कर रहा है। अभिमन्यु के मन में यह चाह है कि वह इस चक्र से सभी को पराजित कर दे।

*हरदम देखा करते हैं रूप यार ही का*
*नाम भगवान कै लिवैया नर थोड़े हैं।*
*वे तो प्रात शाम करैं दरश दिवालन में*
*हम दिन–रैन रहैं मित्र के कनोड़े हैं।*
*भक्ति भगवान की सदैव करते हैं पर*
*'रामदास' देखे बहु निपट गपोड़े हैं।*
*लगन लगी है मेरी तैसी न लगाते वह*
*दिल्लगी उड़ाते ऐसे निंदक निगोड़े हैं।*

कवि रामदास कहते हैं कि सांसारिकता में लिप्त रहते हुए प्रेमी/प्रेमिका का गुणगान करने वाले संसार में बहुतायत हैं जबकि भगवान को स्मरण करने वाले लोग कम हैं। वे सुबह शाम मन्दिर में दर्शन न कर मित्रों के साथ यारी करते हैं। भगवान की भक्ति न करके मात्र गप्पे हाँकते हैं। जैसी लगन प्रभु से मुझे लगी वे वैसी नहीं



लगाते उल्टे मेरी निन्दा करके खिल्ली उड़ाते हैं।

*श्री वृष भानजा कौं मुख चन्द्र*
*सदैव चकोर है, चाहने वाले।*
*गोकुल वासन को घनश्याम सो*
*चातक प्यास बुझाहवे वाले।*
*ते ब्रज राज भये कुबजा–बस*
*ऊधव ! गोपिन डाहने वाले।*
*ऐसे सनेही सनेह सनें उत*
*वाह वा प्रेम निबाहने वाले।*

वृषभान पुत्री राधिका का मुख चन्द्रमा है और उसके दर्शन करने वाले चातक कृष्ण हैं। गोकुल के निवासियों को घनश्याम जैसा चातक मिला है। जो सभी की पिपासा को तृप्त करता है। जबसे वे (कृष्ण) ब्रजराज हो मथुरा में कुब्जा के पास जाकर गोपियों से ईष्या रखने वाले ऊधव के बस में हो गये हैं तब से गोकुल को भूल गये हैं। कवि व्यंग्य करता हुआ कहता है कि वाह ऐसे ही क्या प्रेम का निर्वाह किया जाता है?

*ग्रीष्म की गरिमा गर्माई उपचारन में*
*पावस में प्रानन पै परी कठिनाई है*
*शरद की शोभा दिखाई तना देरको*
*दरद घटों न वरी पीरा की अबाई है*
*पता नहीं लगो खरे कान्त को हेमन्त में*
*शिशिर के शासन में देह पियराई है।*
*'रामदास' वरनै फागुन की फाग आई*
*तबै सुनी छतरपुर में बसन्त की अवाई है।*

(उपर्युक्त सभी छन्द श्री दीनदयाल नामदेव के सौजन्य से)

विरहिन नायिका कहती है कि ग्रीष्म ऋतु की गर्मी उपचारों में बीती। वर्षा में प्राणों की पड़ी रही। शरद की शोभा थोड़ी देर को दिखी और इसमें पीड़ा घटी नहीं बल्कि बढ़ी ही। हेमन्त में पति का पता नहीं लगा, कहाँ रहे? शिशिर में शरीर पीला पड़ गया। रामदास कवि कहते हैं, सुना है कि फागुन में फाग के आते ही बसंत का आगमन छतरपुर में हो गया है।



## ठाकुर भुजबल सिंह

ठाकुर भुजबल सिंह का जन्म विक्रमी संवत् 1945 (ईस्वी सन् 1888) में ग्राम पनवाड़ी तहसील राठ जिला हमीरपुर (उ.प्र.) में हुआ था। आपके पिता का नाम ठाकुर फूल सिंह परिहार था। ये तीन भाई थे। भुजबल सिंह सबसे बड़े थे। अन्य दो छोटे भाई सुल्तान सिंह तथा वृन्दावन सिंह थे। भुजबल सिंह अविवाहित रहे। इनका बाल्यकाल अनेक विपन्नताओं तथा विपरीत परिस्थितियों में बीता। इनकी शिक्षा केवल दो कक्षा तक ही हुई थी। इन्हें पढ़ाने वाले मुंशी भोलानाथ ने इनकी काव्य प्रतिभा को जगाया। कुछ दिनों बाद परिवार की आर्थिक विषमता के कारण आप अपने थुरट निवासी बहनोई कुंवर बहादुर सिंह रईस के पास जाकर रहने लगे। यहाँ रहकर उन्होंने अपनी नियमित दिनचर्या बनाकर रचना करना प्रारंभ किया। थुरट के पास ही छतरवारा गाँव स्थित था, कुछ दिनों बाद आप छतरवारा में रहने लगे। यहाँ पर आपने बच्चों को पढ़ाना प्रारंभ किया। जिससे गाँव के मुखिया ने आपको कुछ काश्त हेतु जमीन एवं निवास हेतु मकान दे दिया। आप लम्बे समय तक यहीं रहे। काव्य सृजन की प्रक्रिया को गतिशीलता देने में छतरवारा का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

इनके बहनोई की मृत्यु के उपरान्त आपको थुरट की गृहस्थी का भार भी संभालना पड़ा था। फलतः आप छतरवारा से पुनः थुरट में रहने लगे लेकिन कुछ दिनों बाद ही सन् 1920 में आपका देहावसान हो गया।

भुजबल सिंह द्वारा रचित फागें लोक में बहुतायत में प्रचलित हैं किन्तु हस्तलिखित पांडुलिपि अप्राप्त है। कुछ फागों का संकलन श्याम सुन्दर बादल राठ, डॉ. आशाराम त्रिपाठी आदि ने किया है।

## चौकड़ियां

*रंग की नई तस्वीर उतारौ, जौ रंग मांय पवारौ।*
*न धरती न आसमान में, न पाताल विचारौ।।*
*तीन लोक की बात न करियो, जिये डार दओ तारौ।*
*भुजबल सिंह आज के फड़ में, ज्वाब देव कै हारौ।।*

(सौजन्य : डॉ. आशाराम त्रिपाठी)

इस रंग को छोड़कर नये रंग का चित्र उतारिये। जो रंग न धरती में हैं, न आसमान में और न ही पाताल में। अर्थात् इन तीनों लोकों में ताला डाल दीजिए, इन तीनों लोकों की तो बात ही न कीजिए। कवि भुजबल सिंह कहते हैं कि आज के मुकाबला में या तो उत्तर दीजिए या पराजय स्वीकारिये।

*मन में भरी चली गई लाली, भई न बोला चाली।*
*नारंगी से दोई जुबनवां, माली कैसी डाली।।*
*हमसें बैर प्रीत औरन सें, जेई करेजें साली।*
*भुजबल सिंह रजऊ की चूनर, प्रान खान जंजाली।।*

(सौजन्य : डॉ. आशाराम त्रिपाठी)



मेरे मन की लाली (प्रेम) मन में ही रह कई, उनसे वार्तालाप तक न हो सका। उनके सुन्दर छराहरे शरीर पर दोनों स्तन नारंगी के समान सुशोभित हो रहे हैं। मुझसे दुश्मनी का भाव रखकर दूसरों से प्रेमभाव प्रदर्शित कर रही है, यह बात मेरे हृदय को साल (कष्ट दे) रही है। भुजबल सिंह कहते हैं कि इन रजऊ (प्रेमिका) की चुनरी हृदय को जलाने वाली जी का जंजाल बन गई है।

*बालम हैं निरसई के मारे, ननदी विरन तुम्हारे।*
*देस–देस के वैद जुरे हैं, रोग टरै न टारे।।*
*घी शक्कर औ दार फुलकिया, सत बनवा कें हारे।*
*भुजबल सिंह रजउवा प्यारे, ऊसई हतै इकारे।।*

(सौजन्य : डॉ. आशाराम त्रिपाठी)

मेरे पति नामर्दी के शिकार हैं। वह अपनी ननद से कह रही है कि तुम्हारे भाई के रोग के इलाज हेतु अनेक जगह से चिकित्सक आकर एकत्र हुए हैं। घी, शक्कर के साथ दाल और फुलकियाँ (छोटे आकार की पतली रोटी) खिला रहे हैं। उनके लिए सत (दवा) बनवाकर हम थक चुके हैं। भुजबल सिंह कहते हैं कि हे रजुआ! प्यारे वे तो वैसे ही कमजोर थे अब रोग से और कृशकाय हो गए हैं।

## अधर की फाग

*कर से तनक अंत न जाने, जौलों काज सटानें।*
*धरनी से ताय, लीना उठाय, न देर लाय कारज कीन्हा।*
*कर के सहाय, लग गई ताय, कारज सटाय, सो रख दीन्हा।।*
*निस दिन घरन दिखानें।*
*कथ कही राय, दंगल में राय, ख्यालन लगाय, जे दरसाई।*
*ये अधरतान, कह राजा आन, गई तेरी शान, हारी खाई।।*
*जोड़ा दैके जाने।*

(सौजन्य : डॉ. आशाराम त्रिपाठी)

जब तक कार्य पूरा नहीं होता अर्थात् स्वार्थ सिद्ध नहीं होता तब तक हांथों बनाये रखते हैं। जमीन से ऊपर उठकर तुरंत काम पूरा करके सहायता कर दी और रख दिया। यह रात–दिन घर में ही दिखाई देता है। साहित्यिक अखाड़े में रहकर राय ने यह बात सोच समझ कर कही। यह अधर छंद है राजा कहते हैं कि इसका जोड़ा बनाइये अन्यथा तुम्हारी हार होगी और शान चली जायेगी।

## रंगत की फाग

*नयन चपल चंचल अमी, समी सरन तलवार।*
*राधा मन मुस्काय के, दई मोहनी डार।*
*राधा तिरछे नैन करे हैं, विह्वल श्याम परे हैं।*
*चल चपल चाल, मुसकाय बाल,*
*बई सैन घाल जैसे गांसी।*
*गिरे नंदलाल, गये बिसर ख्याल,*
*पर गये जाल, तन में आंसी।*
*ई नैनन में जब से जादू जादूगरिन भरे हैं।*
*उठा लेव इन धाय कोऊरी, विह्वल श्याम परे हैं।*

(सौजन्य : डॉ. आशाराम त्रिपाठी)

उनके चंचल नयनों में अमृत डोल रहा है और बिरौनियों सहित पलकें मानों शमी वृक्ष (एक कांटेदार वृक्ष) के आश्रय में तीखी तलवार है। ऐसी राधिका जी ने श्री कृष्ण को मन में मुस्कराते हुए वशीकरण कर दिया है। पुनः तिरछे नयनों से देखा जिससे श्री कृष्ण व्याकुल हो कर पड़े हुए हैं। उस नव यौवना ने मुस्कुराते हुए आतुरता से छलने की युक्ति की और संकेतों से कुछ ऐसा प्रहार किया कि श्रीकृष्ण के ह्रदय में बरछी के नुकीले फल की तरह घाव कर गये जिससे श्री कृष्ण गिर पड़े और मूर्छित हो गये। श्रीकृष्ण उनके फंदे में फंस गये और शरीर भी पीड़ित हो गया। जादू जानने वाली इस



नायिका ने अपनी आँखों में जब से जादू की क्रिया को समाहित किया है, तभी से श्रीकृष्ण उससे व्याकुल हो चुके हैं। हे सखी! कोई उन्हें वहाँ से दौड़कर उठा ले।

*जहँ तँह दिखा परत पियराई, पवन लतन झक झोरें।*
*बागन की ओर देख छाई लाली।*
*फूलन औ कलियन अलि गुंजत आली।*
*टोर फूल गजरा गुह ल्यावै माली।*
*कोयल तौ सौत बोल बाँधै वाली।*
*मौरै वहँ तँह देख रसाल, मैं हौं बिन प्रीतम बेहाल,*
*कोई समझा ल्यावै लाल, उन ढिग जाकें।*
*लागो फागुन मईना भारी, होरी खेलें नर उर नारी,*
*रंग की भर मारे पिचकारी, इक पर धाकें।*
*बारह मईना बीत गये, खड़ी बाम कर जोरें।*
*भुजबल सिंह दरस दै जाव, दिखा जाव दृग कोरें।।*

(सौजन्य : डॉ. आशाराम त्रिपाठी)

सभी दिशाओं में पीलाहट दिखाई देती है और हवा भी लताओं को अपने झौंकों से झकझोर रही है। हे सखी! बगीचों की ओर देखें तो सब ओर लालिमा छाई हुई है। कलियों और फूलों के ऊपर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं। फूल चुन कर माली ने हार तैयार कर दिया है। सौत सी दुखदायी कोयल तो समय बांध कर बोल रही है। सभी ओर आम के फूलों की बहार देखकर बिना प्रियतम के मैं व्याकुल हो जाती हूँ। कोई उनके पास जाकर उन्हें वास्तविकता बता कर यहाँ ले आये। फागुन माह के प्रारंभ होते ही सभी स्त्री–पुरुष होली का त्योहार मनाते हैं। रंग की पिचकारी भरकर एक दूसरे की ओर दौड़कर रंग डालते हैं और आनंदित होते हैं। भुजबल सिंह कहते हैं कि नायिका हाथ जोड़े खड़ी है एक वर्ष बीत चुका है। अतः हे कृष्ण!

यहाँ पर दर्शन दे दो और आँखों की प्यास बुझा दो।

*पूस मास लागे सखी, ठंड सतावत अंग।*
*जो होते प्रीतम घरै, परते उनके संग।।*
*जाड़े परत सखी री भारी, हो गये वदन मलीना।*
*जो दुख काऊ खाँ न होवै, हम तौ तलफ तलफ दिन खोबै,*
*वो तौ कुब्जा के संग सोबैं, सुख उन उन उन।*
*ऐसौ कीनौ जादू टौना, मोरौ मो लओ श्याम सलौना,*
*हमखों बिसरे चाँदी सोना, लागी धुन धुन धुन।।*
*तज दीनों श्रृंगार सखी री, भूले खाना पीना।*
*उन बिन सौक हमारी बिसरी, हो गये वदन मलीना।।*

(सौजन्य : डॉ. आशाराम त्रिपाठी)

पौष माह आ गया अब शीत शरीर के अंगों को प्रभावित करने लगा है यदि प्रियतम घर पर उपस्थित होते तो उनके साथ शयन करके शीत को प्रभावी न होने देती।

शीत ऋतु की तीव्रता का ध्यान आने पर मुख उदास हो जाता है। हे ईश्वर! ऐसा दुख किसी को न हो, हम इधर विरह की वेदना से व्याकुल होकर दिन बिता रहे हैं और वे कुब्जा के साथ आनंद विहार कर रहे हैं, सुख उन्हीं के पास है। कुब्जा ने ऐसा जादू–टोना किया कि हमारे भोले श्याम सुन्दर मोहित हो गये। हमें सोना–चाँदी अर्थात् ऐश्वर्य या वैभव की सामग्री कुछ भी अच्छी नहीं लगती, केवल एक लगन लगी है। श्रृँगार त्याग दिया है भोजन–पानी भी भूल गया। उनके यहाँ न होने पर अपनी सभी रुचियां भूल गये हैं और मुख पर उदासी छा गई है।



## कविराज बिहारी लाल

कविराज बिहारी लाल का जन्म संवत् 1946 में अश्विन शुक्ल दसवीं को प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में तत्कालीन रियासत बिजावर में हुआ था। यह बिजावर रियासत वर्तमान में जिला छतरपुर मध्यप्रदेश की एक तहसील है। आपके पितामह श्री दिलीप जी एक अच्छे कवि और बिहारी जी नामक राजमंदिर के प्रधान प्रबंधक थे। आपकी शिक्षा–दीक्षा विद्यालयों की सीमा के बाहर रहकर ही हुई। अनेक शिक्षा–विशारद्, उद्भट विद्वान् मुसाहिब श्री हनुमान प्रसाद जी ने आपको सभी आवश्यक शिक्षा दी और साहित्य एवं संगीत में दीक्षित किया।

आठ वर्ष की अवस्था में ही तत्कालीन महाराजा बिजावर श्री भानु प्रताप सिंह जू ने एक दोहे की रचना पर प्रसन्न होकर कवि जी की उपाधि दी। कहते हैं कि इसी आयु में महाराजा टीकमगढ़ महेन्द्र प्रताप सिंह जू ने अपने राज कवियों में स्थान दिया। तब से जीवनपर्यन्त ये टीकमगढ़ के राजकवि माने जाते रहे।

आकर्षक व्यक्तित्व के धनी कविराज बिहारी लाल जी का

शरीर हृष्ट–पुष्ट सुडौल और गठीला था। विशाल नेत्रों में प्रतिभा की आभा, चेहरे पर विरोचित स्वाभिमान और ऐंठी हुई पैनी काली मूछें उनके व्यक्तित्व को निखार देती थीं। राजाओं और राजकुलों से निकट सम्पर्क होने के कारण वे राजोचित शिष्टाचार–व्यवहार, रीति–नीति और आचार विचार से भलीभांति परिचित थे। राजदरबारी–स्वरूप में उनके सिर पर बुन्देलखण्डी क्षत्रियों जैसा खिचा हुआ साफा, राजसी रेशमी अचकन, पैरों में जरीदार नुकीली पनहियाँ और कमर में लटकती हुई मखमली म्यान में तलवार रहती थी। मन से संत प्रवृत्ति होने के कारण प्रौढ़ावस्था के द्वितीय चरण में वे सामान्य वेश–भूषा में ही रहने लगे थे।

आचार्य केशव की परम्परा में बिहारी कवि ने पांडित्यपूर्ण साहित्य–सागर नामक रीतिकाव्य की रचना की। जिसमें लगभग 2000 छंद हैं। गागर में सागर को चरितार्थ करने वाले लगभग 700 पद की रचना की। कविराज ने 13–1–1961 को अपना नश्वर शरीर छोड़ दिया था।

कविराज बिहारी की निम्नांकित रचनायें हैं –

प्रकाशित –

1. साहित्य सागर (लक्षण ग्रन्थ), 2. मथुरा–गमन, 3. वैराग्य वावनी, 4. शरीर–सप्तक, 5. गांधी–गमन, 6. गुरीरी–गारी, 7. पाप प्रक्षालन अष्टादशी, 8. बिहारी–बिहारी, 9. ज्ञान गीतावली, 10. कुण्डलनी–कल्प–लता

अप्रकाशित –

1. गीता गंगोत्री (गीता का पद्यानुवाद), 2. ईश्वरी गीता (देवी भागवत के सप्तम स्कंध के ज्ञानकांड प्रकरण का पद्यानुवाद), 3. वारिद–वसीठ (मेघदूत का पद्यानुवाद), 4. शांति–सम्वाद, 5. वीर–वावनी, 6. बिहारी–विनोद, 7. लगन लीला।



इसके अतिरिक्त सैकड़ों स्फुट रचनायें हैं जो गायकों को मौखिक याद है अथवा पाण्डुलिपि बस्ते में बंधे है।

## कवित्त (शरद)

*रंग भरी बांसुरी बजाई नंद नंदन जू,*
*संभु से समाधी जोगी तमक तमक उठे।*
*कहत बिहारी बृज–ग्वालिनी मनोज मींजी,*
*सरस सनेह दीप दिल में दमक उठे।।*
*भूषन रतन मनि पहिर कहूँ के कहूं,*
*गोपिन के वृन्द–वृन्द झमल झमक उठे।*
*देखत ही देखत रहस्य रंग मंडिल में,*
*चन्द्र मय तारन हजारन चमक उठे।।*

नेह–रंग की रसभरी बाँसुरी (बंशी) नंदलाल श्रीकृष्ण ने बजाई तो शिव के समान समाधि लगाये हुए योगियों के मन में राग आ गया। बिहारी कवि कहते हैं कि बृज की वनिताओं को कामदेव ने प्रभावित किया उसके मन में प्रेम के रसमय दीपक प्रकाशित हो गये। गोपियाँ अपने आभूषण और वस्त्र उल्टे–सीधे पहिन कर झुंड के झुंड बनाकर उसी ओर दौड़ पड़ी। देखते ही देखते (थोड़े समय में ही) रहस्य मंडली तैयार हो गई और चंद्रमा के चारों ओर जैसे तारे चमकने लगते हैं वैसा ही दृश्य वहाँ बन गया।

## सवैया – बसंत

*रुच कंचन थार अबीर 'बिहार', उड़ावत लाल गुलालन झोरी।*
*इत संग सखी लियैं राधे खड़ीं, उत श्यामलौ छैल करै बरजोरी।।*

*उनने उनकी प्रिय पाग रंगी, उनने उनकी रंग चुनरि बोरी।*
*मन मंदिर में मन मोहनी सें, मिलकें मन मोहन खेलत होरी।।*

सोने के थाल में अबीर (अभ्रक का चूरा) और झोरी (थैले) में लाल गुलाल भरकर उड़ाते हुए एक ओर सखियों सहित राधिका जी खड़ी हैं और उस तरफ श्याम सुन्दर जबरदस्ती कर रहा है। राधिका जी ने श्रीकृष्ण जी की प्यारी पगड़ी को रंग से रंग दिया, इधर कृष्ण जी ने उनकी चुनरी लेकर रंग में डुबो दी। (यह लौकिक क्रीड़ा अलौकिक में बदल जाती है) दोनों के हृदय में स्नेह हो जाता है। वे मन मंदिर में आपस में मिलते हैं और हृदय के भावों से होली खेलने लगते हैं।

## कवित्त

*गौवन कौ मोद भयो, ग्वालन प्रमोद भयो,*
*दूषन भौ दुष्टन को, भूषन भौ बंश कौ।*
*आरत हरैया भयो, कारज कौ करैया भयो,*
*धरम धरैया भयो, जगत प्रसंस कौ।*
*कहते बिहारी कवि गोपिन हुलास भयौ,*
*परम प्रकाश भयो, जैसे नभ अंस कौ।*
*दीन कौ दयाल भयौ, दासन कौ पाल भयौ,*
*नंद जू कौ लाल भयौ काल भयौ कंस कौ।।*

श्री कृष्ण का जन्म होने पर गौ वंश के लिये आनंद हो गया, ग्वालों को प्रसन्नता हो गई, दुष्ट जनों के लिये कष्टदायी हो गया (बुरा गया) और यदुवंश की शोभा बढ़ गई। दुखियों का कष्ट दूर करने वाला आ गया, कार्यों की पूर्ति करने वाला आ गया, धर्म को धारण करने वाला अर्थात् धर्म का आश्रय आ गया, और संसार में प्रशंसा करने योग्य परम पुरुष का जन्म हो गया।

बिहारी कवि कहते हैं कि गोपियों को उत्साह हुआ और जिस



प्रकार आकाश में सूर्य का प्रकाश बिखर जाता है उसी प्रकार पृथ्वी पर परम प्रकाश हो गया। दीन दुखियों पर दया करने वाला और अपने सेवकों का आश्रय पृथ्वी पर आ गया। नन्द बाबा के घर पुत्र का जन्म हुआ और कंस राजा के लिये काल का अवतरण हो गया।

*फनन फनन फन फन से पुकार भरै*
*काली कुल कठिन कराल दरसायो है।*
*ताके शीश सहज कलान सों किलोलैं करै,*
*निपट निसंक नयौ कौतुक बतायो है।*
*कहत बिहारी परो परो पालना में लखो*
*आज ये चरित्र पा कौ चित्त में न आयो है।*
*कालिंदी बसैया महाविष बरसैया ताहि,*
*छोटौ सौ कन्हैया भैया कैसे नाथ ल्यायो है।*

प्रत्येक फन से भयंकर फुफकार की ध्वनि निकल रही है। कालिया नाग ने अपना विकराल रूप बना लिया है। श्री कृष्ण उसके सिर पर स्वाभाविक रूप से आनंदित हो क्रीड़ा कर रहे हैं। बिना किसी भय के नया कौतूहल उत्पन्न कर दिया है। बिहारी कवि कहते हैं कि जो बालक दो दिन पूर्व (परसों) पालने में झूलते हुए देखा था उसका आज का यह खेल (क्रियाकलाप) कुछ समझ नहीं आ रहा। यमुना का निवासी अत्यन्त विषैला (महाविषधर) कालिया नाग को अपना छोटा–सा कन्हैया भैया नाथ कर के ले आया है अर्थात् अपने बस में कर लिया है।

*हरे हरे रंग लाय हरेई हिड़ोरन में,*
*हरे हरे झूलें कान्ह कालिंदी कछारी में।*
*हरी हरी भूमि हरे हरे खेत शोभा देत,*
*हरी हरी डूब रही ऊब नेह प्यारी में।*
*कहत 'बिहारी' हरी हरी केलि कुन्जन में,*
*हरे हरे डोलें पत्र हरी हरी डारी में।*

*चलो सुकुमारी मान छोड़ कें दुलारी भला,*
*को न हरि यारी करै ऐसी हरियारी में।*

हरे रंग की बेलों और पत्रों से हरीरे झूले को सजाया गया है। उस पर श्रीकृष्ण यमुना नदी के निचले मैदान में धीरे–धीरे झूल रहे हैं। सम्पूर्ण भूमि हरियाली से आच्छादित है। हरे खेत शोभा पा रहे हैं, अलग से जल के बहाव के पास हरी घास (दूर्वा) उग आई है। बिहारी कवि कहते हैं कि हरियाली से आवृत्त क्रीड़ा स्थल हरी–हरी लताओं की डालियों से लहरा रहे हैं। हे रमणी! मान छोड़कर तुम श्री कृष्ण के पास चलो, भला तुम्ही बताओ ऐसे आनंददायक समय में कौन ऐसी सुन्दरी होगी जो श्रीकृष्ण से नेह–नाता नहीं जोड़ना चाहेगी ?

## कवित्त

*चाहे करै चोजरी चबायने चहूँध धाम,*
*चाहे गृह काज लोक लाज गढ़ टूटैगो।*
*चाहे यह जावै ठांव चाहे घटै गाव नाव,*
*चाहे कोउ रोके राह चाह कोउ खूंटैगो।*
*कहत 'बिहारी' कवि अब तौ हमारौ मन,*
*श्यामले छबीले छैल संग रस लूटैगो।*
*चाहे जोर जूटे या मर्याद मेढ़ फूटै,*
*चाहे विश्व भर रूठै पै न नेह यह छूटैगो।।*

भले ही निंदक लोग चारों दिशाओं में जाकर मेरी हंसी करें और गृह काज अथवा लोक मर्यादा का किला टूट जाय, भले ही यह मेरा यह ठिकाना नष्ट हो जाय, भले ही मेरा नाव–गांव (पहिचान) समाप्त हो जाय और भले ही कोई मेरे मार्ग में व्यवधान बने अथवा मुझे रोकने समझाने का प्रयास करे। किन्तु बिहारी कवि कहते हैं कि अब तो हमारा मन सांवले सुन्दर नटखट कृष्ण के साथ रहकर



आनंद–रस का पान करेगा। भले ही किसी प्रकार की ताकत विरोध में लगा दी जाय अथवा मर्यादा की सीमा टूट जाय और सारा संसार नाराज हो जाय किन्तु प्रभु से लगा यह नेह का बंधन नहीं छूट सकता।

*तारे गीध गणिका औ उबारे गज व्याध सबै,*
*अन्तर न राखो अजामिल उत्पाती सों।*
*शरण गहै जो दीन बांह गह लेत ताकी,*
*ऐसी वान गाउत पुराण भांति भांति सौं।।*
*कहत 'बिहारी' है प्रतीत मोय मोहन की,*
*रीझत सनेह नर छीझत जात पांति सों।*
*मान लैहें भेद तो भगाय पै न दैहैं दूर,*
*पाय लै हैं प्रेम तो लगाय लैहैं छाती सों।।*

भगवान (श्रीकृष्ण) ने गीध और गणिका को भव सागर से पार कर दिया, गजेन्द्र और व्याध को भारी विपत्ति से छुटकारा दिला दिया। इस उद्धार की प्रक्रिया में आपने उत्पात करने वाले अजामिल में भेद नहीं माना। श्रीकृष्ण भगवान की जो दीन व्यक्ति शरण पकड़ लेता है वे उसका हाथ थाम लेते हैं। ऐसी विविध प्रकार से प्रभु की गाथा पुराण गाते हैं। बिहारी कवि कहते हैं कि मुझे श्रीकृष्ण पर पूरा विश्वास है वे प्रेम से प्रसन्न होते हैं और जाति आदि के कारण कोई दुराव नहीं मानते यदि अन्तर मान लेंगे तो भी दूर नहीं भगा सकते और यदि उन्होंने प्रेम देखा तो निश्चित ही छाती से लगा लेंगे।

*या भव सिन्धु अगम्य अपार, निहार निहार नहीं घवरइयौ।*
*हो बहु पार प्रवीण ''बिहारी'', न शंशय की चित लाग लगइयौ।।*
*और विशेष नहीं कहनै, इक वात हमारी यही चित दइयौ।*
*नीर में नाँव चलइयौ भली, पर नाव में नीर न आवन दइयौ।।*

यह संसार सागर अगम्य है। इसका पार पाना संभव नहीं

किन्तु इसे देख–देख कर घबड़ाना नहीं। बिहारी कवि कहते हैं कि निश्चित ही इससे चतुराई से पार हो जाओगे। मन में थोड़ा शंका मत करना। हमें कुछ अधिक विशेष बात नहीं कहनी है, केवल यही सीख मन में रखे रहना कि पानी में भले ही चलाना किन्तु अपनी नाव (नौंका) में पानी न आने देना।

*तीरथ अनेक करै मंत्र अभिषेक करै,*
*खेल करै कूद करै गावै राग वानी में।*
*व्याह संस्कार करै पर उपकार करै,*
*चाहै रहे आनी चाहै रहै अज्ञानी में।।*
*कहत बिहारी पर काहू में न होवै लिप्त,*
*सबसे विलग रहै ध्यान चक पानी में।*
*जगत में येन रहै ऐन सुख चैन रहै,*
*रैन रहै एसी ज्यों पुरैन रहै पानी में।।*

अनेक तीर्थ यात्रायें करिये और विविध प्रकार के कर्मकाण्ड आदि विधान सहित पूजन कराइये। अनेक प्रकार की क्रीड़ायें करिये और अनेक प्रकार से संगीत में प्रभु के गीत गाइये। अपना व्याह संस्कार कराइये और दूसरों के हित में अनेक कार्य करिये। चाहे आप ज्ञान प्राप्त करिये अथवा अज्ञानी बने रहिये। बिहारी कवि कहते हैं कि किसी भी क्रिया में लिप्त न होना। सबसे अलग बने रहिये केवल चक्रपाणि (भगवान) में ध्यान लगाये रखिये। आप संसार में खूब बने रहिये और पर्याप्त सुख–आनंद में रहिये लेकिन संसार में इस प्रकार रहो जिस प्रकार पानी में पुरैन का पत्ता, पानी में डूबा रहने पर भी गीला नहीं होता।

*साहसी सूर सिपाइ कहाय कें,*
*काम करै बस कायर टोली।*
*फूलन मार मरोर उठै,*



*फिर वीर विहार सहै किम गोली।।*
*भूपत रूप भुलायके आपनौ,*
*मागत भीख पसार के झोली।*
*राग बड़ो दुख होत हमें,*
*जब बोलत शेर स्यार की बोली।।*

(उपर्युक्त सभी छन्द सौजन्य से : भगवान दास विश्वकर्मा, बगौता)

शूरवीर योद्धा और बहुत साहसी कहलाने के बाद कायरों की तरह कार्य करे तो व्यर्थ है। बिहारी कवि कहते हैं कि फूलों की मार से ही तकलीफ हो जाय तो युद्ध में बंदूक की गोली कैसे सहन करोगे। तुम अपना राजा का रूप भूलकर झोली फैलाये हुए भीख मांगते हो। हे भगवान! हमें तब बहुत दुख होता है जब शेर सियार की बोली बोलने लगता है अर्थात् अपना प्रभुत्व छोटों का अनुकरण करने लगता है।

# कंचन कुँवरि

भक्ति चन्द्रिका श्रीमती कंचन कुँवरि का जन्म दतिया में संवत् 1951 वैशाख शुक्ल पक्ष तृतीया (पुष्य नक्षत्र) में हुआ था। इनके पिता जी करइया के जागीरदार श्री दीवान गजराज सिंह परमार थे। माता जी महाराजा दतिया की छोटी बहन श्रीमती उमराव जू राजा थी। कंचन कुँवरि बाल्यावस्था से ही धार्मिक प्रवृत्ति की थी। इनका विवाह बिजावर नरेश सवाई महाराजाधिराज श्री सावन्त सिंह बहादुर जू देव के साथ हुआ। इनकी सासु श्रीमती महेन्द्र महारानी वृषभान कुँवरि ने श्री कनक भवन नामक अयोध्या में प्रसिद्ध मंदिर बनवाया था। इन्होंने भी अयोध्या में सरयू के किनारे रिणमोचन घाट पर कंचन भवन बनवाया। इनके जीवन में अनेक विलक्षण भक्ति संबंधी घटनायें घटित हुई। यह एक समर्पित भक्त कवियित्री थीं। इन्होंने अपने आराध्य राम की लीलाओं के अनेक पद, सवैया, कवित्त, फाग, रसिया, गजल, दोहा, चौपाई छंद रचे। जो 'श्री काँचन कुँज विनोदलता' शीर्षक से संवत् 2018 में प्रकाशित हुए। इनके छंद बिजावर तथा अयोध्या में भक्तों के साथ आम जनता भी बड़े ही चाव से गाती है।



## पद

*मैया गोद खिलावै ललना।*
*लै उछंग कबहूँ दुलरावै कबहुँ झुलावै पलना।*
*कबहुँ उमंग हिय कर गहि निज कर चलन सिखावैं अँगना।।*
*कबहूँ जात द्वार लौ लालन आवत धाय घुटरना।*
*जननी झपट लेत कनियाँ तब मचल जात सुख भरना।।*
*विविध भाँति तब मातु मनावत कहि कहि मधुरे बचना।*
*कंचन कुंवर विहँसि अंचल गहि लगे पान पय करना।।*

माता अपने पुत्र को गोद में खिला रही है। उमंग में लेकर कभी उसे दुलारती है, तो कभी पलना में झूला झुलाती है। कभी उमंग से हाथों में लेकर हृदय से लगातीं हैं। तो कभी अपने हाथों से पकड़कर आँगन में चलना सिखाती हैं। कभी दरवााजे तक जाकर घुटनों के बल चलकर बालक आता है। जब सुख रूपी निर्झर का वेग बढ़ जाता है तो माँ झपट कर उसे पकड़ लेती हैं। मीठी–मीठी बातें करके विभिन्न प्रकारों से माता को मनाते हैं। कँचन कुँवर कहती हैं कि बालरूप में राम हँसकर माँ का आँचल पकड़कर पयपान करने लगे।

*सखी सो वरवस सिय पहँ आई।।*
*विह्वल गात बात अटपट कह तन मन सुध विसराई।*
*गहि कर पूंछत नवल अली सब काह भयो तुहि माई।।*
*तब धरि धीर कहत इत आये श्याम गौर दोउ भाई।*
*जिनहिं बिलोक विवस भईं सजनी रूप राशि सुखदाई।।*
*जिह्वा नैन नहीं जो देखै नैनन गिरा न पाई।*
*कंचन कुँवरि थकित गति मति भई कहौं कौन विधि गाई।।*

सखी सीता के पास विवश हो आकर हाथ पकड़कर पूछती है कि व्याकुल चेहरा, अटपटे वचन और तन–मन की सुधि बिसराने

वाली स्थिति क्यों हो गई है? सखी तुझे क्या हो गया है? तो इस पर धैर्य धारण कर सीता कहती हैं कि यहाँ पुष्पवाटिका में श्यामल और गौर वर्ण के दो भाई आए हैं। जिनके सुखकारी रूप सौन्दर्य को देखकर मैं सखी, विवश हो गई हूँ। उनको देखकर जीभ से कोई वचन नहीं निकले, नेत्रों की पलकें नहीं गिरीं। कंचन कुँवरि कहती हैं कि सीता जी की गति व मति दोनों थक जाती हैं।

*कहत सिय पिय से मोद भरी।।*
*अब रितु राज सुहावन आवत चहुँ दिशि धूम परी।*
*साज समाज बसंत खेलिये मो हिय चाह खरी।।*
*अतर अबीर गुलाल अरगजा केशर घोर धरी।*
*कंचन कुंवर लाल सुन हर्षे हँस बलिहार करी।।*

सीता जी प्रेम के अनुराग सहित प्रिय राम से कहती हैं कि अब ऋतुराज बसन्त का आगमन हो रहा है जिससे घरों दिशाओं में उसी की धूम है। समस्त समाज बसन्त के साथ क्रीड़ारत है इसलिए मेरे हृदय में भी यह चाह है कि मैंने इत्र, अबीर, सिन्दूर, अरगजा व केशर का घोल जो बना रखा है उसका उपयोग हो। कंचन कुँवरि कहती हैं कि यह सुनकर राम जी प्रसन्न हो हँस देते हैं।

## रसिया

*रसिया रस फैल करैं बांके।*
*घेरत नवल नारि इकली कर डारत नव योवन डांके।।*
*पिचकारिन रंग मार भिजावत कर हो हो मद रस छाके।*
*बर बस लाय हिये सुख पावैं घूंघट खोल वदन ताके।।*
*लख यह हाल सकल सखियन ते पुनि पुनि सिय स्वामिनि भाखैं।*
*है कोइ बीर अली मम दल में गहि लावै रघुवर जाके।।*
*बोली चन्द्रकला तेहि अवसर सिय पद कमल सीस नाके।*
*कंचन कुँवर जो आयसु पाऊँ पल में पेश करूं लाके।।*



रसिया (राम) रस के सुन्दर प्रहार कर रहे हैं। नई नारी को घेरकर उसके यौवन पर डकैती डालते हैं। पिचकारियों के रंगों की मार से सभी को भिगो देते हैं सभी रस में मदमस्त हो छक (तृप्त) जाते हैं। जबरदस्ती पकड़कर, घूंघट खोलकर, मुख को देखकर, सौन्दर्य दर्शन कर सुख पाते हैं। सभी सखियों की इस दशा को देखकर सीता जी कहती हैं कि री सखियों! मेरे दल में कोई ऐसा वीर है जो राम जी को पकड़कर ले आये। इस पर अवसर पाकर चंद्रकला सखी सीता के चरणों में शीश झुकाकर कहती है कि यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं एक क्षण में पकड़कर उनको आपके सामने हाजिर कर दूँगी।

*रसिया सोइ श्यामल रंग रंगौ।।*
*रूप सुधा की पियत बारुनी मस्त भयो रस प्रेम पगौ।।*
*जाकौ मन अनुराग भरौ नित युगुल चरन से ध्यान लगौ।।*
*नेह नगर में होरी खेले सोई सखी जेहि भाग जगौ।।*
*तन की तनक समार ताहि ना मन प्रीतम छबि जाल ठगौ।।*
*कंचन कुँवर धन्य सोइ जननी परम सनेही मोर सगौ।।*

(समस्त पद श्री ब्रजराज सिंह के सौजन्य से)

हे रसिक! तुम भी साँवरे (राम) के रंग में रंग जाओ। सौन्दर्य रूपी अमृत का पानकर मदिरा पान के जैसे मस्त होकर प्रेम रस में सराबोर हो जाओ। जिसका मन प्रेम के आपूरित हो नित्य दोनों के चरणों में ध्यान लगायेगा, वह प्रेम की नगरी में होली खेलेगा। इसी से सखी, उसका भाग्योदय होगा। शरीर की थोड़ी सी सुध नहीं रहती है जब वह प्रियतम के रूप जाल में ठग जाती है। कंचन कुँवरि कहती हैं कि हे सखी! वह धन्य है जिसके मन में श्रेष्ठ प्रेम है, वही मेरा सगा है।

## रामसहाय कारीगर

बुन्देली के आशु कवि श्री रामसहाय कारीगर का जन्म झाँसी जिले के ग्राम स्यावरी में सन् 1898 में हुआ। इनके पिता जी का नाम श्री हीरालाल था, जो स्वयं बुन्देली कवि थे। इनके दादा श्री खुमान भी बुन्देली के अच्छे कवि रहे हैं। इनकी शिक्षा चौथी तक ही हुई। इनके काव्य गुरु पं. बैजनाथ द्विवेदी थे। इन्होंने स्वाध्याय व उच्च कोटि के विद्वानों की संगत से काव्य में प्रवीणता हासिल की। आप अच्छे वास्तुकलाविद्, मूर्तिकलाविद् तथा चित्रकलाविद् थे। आप श्रेष्ठ गायक एवं संगीतकार भी थे। इनका स्वभाव अत्यन्त सरल, उदार व मृदुभाषी रहा। आपको दर्शन व ज्योतिष का भी अच्छा ज्ञान रहा। तत्कालीन जमींदारी शोषण के प्रति विद्रोह की भावना तथा सर्वहारा वर्ग के प्रति सहानुभूति इनमें थी। फड़काव्य की त्वरित रचनायें दंगल में लिखकर गाना इनका प्रमुख शौक था जिससे वे गायकी के दंगल जीतते रहे। 'फाग मनमोहन भाग–1' अंग्रेजी शासन काल में तथा 'फाग मनमोहन भाग–2' स्वतंत्र भारत में प्रकाशित हुई। इनका अधिकांश 'नई टकसार' का लोक साहित्य अप्रकाशित है। इनके प्रमुख अप्रकाशित ग्रंथों में 'मन आनंदकरन', 'अधर रामायण', 'अटका प्रकाश',



'अधर आल्हाखंड की कविता' आदि प्रमुख है। इनके रचना सामर्थ्य व वैविध्य को देखकर इन्हें बुन्देली का केशव कहा जा सकता है। इस महान् कवि का निधन सन् 1962 में हुआ।

दोहा – *निरख चंद्र को कुमुदिनी, कली देत विकसाय।*
*जो कलियां विकसित नहीं, भँवर वृथा लुभयाय।।*

चन्द्रमा को देखकर कुमुदिनी कली के रूप में विकसित हो जाती है अर्थात् वह कली बन जाती है। लेकिन जो कलियाँ विकसित होकर फूल नहीं बनती उन पर भ्रमर व्यर्थ में ही लोभी बनकर मंडराने लगते हैं।

चौकड़िया – *मधु रस लेन भँवर लुभयाये, कमल दलन पे छायें,*
*झूले नलिन आन कें मधुकर, कलिन–कलिन पे भाये।*
*खिली न जिन कंजन की कलियां, राम सहाये गाएं,*
*तौन कली को कभी भौंरहू, अंतस कबहुं न चाये।*

लोभी भँवरे कमल के फूलों की पंखुड़ियों का सामूहिक रूप से रस–मकन्द–मधु का सेवन करते हुए उनपर मंडरा रहे हैं। जो कुमुदनी हवा के मदमस्त झोंके से झूल रही हैं उनकी कलियों पर भँवरे चाहत लिए उड़ रहे हैं। लेकिन जिस कमल के फूलों की कलियाँ अभी खिली नहीं है। रामसहाय कवि गाकर कहते हैं उन कलियों की अंतरंगता वह भ्रमर कभी नहीं चाहता है।

दोहा – *पापी मन मानत नहीं, मदन करत इत तंग।*
*उत सुख सेजन है नहीं, मिलत प्रेम का संग।।*

एक तो वह पापी मन प्रणय–प्रसंग की कामना से मुक्त नहीं है, इसलिए मानता नहीं है और इस पर कामदेव भी परेशान करता

है। उधर–सुख रूपी सेज पर मेरे अपने प्रणय (प्रेम) का साथ ही प्राप्त नहीं हो पा रहा है।

दोहा – *कामिन सुन्दर दृश्य दिखाये, वक्ष स्थल पर पाये,*
*मनहु मनोज खेलवे गेंदन, वर–वक्षोज बनाये।*
*बिंब फलन की कली अधर जनु लख लाली शरमाये,*
*नैनरू बैन सैंन सुख दै कें, मानो मैंन बुलाए*
*'राम सहाय' प्रेम की बिरियां अंतस कबहु न चाये।*

कामिनी (नायिका) ने उसके सीने (छाती) पर अवस्थित सुन्दर दृश्यों का अवलोकन कराया है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे साक्षात कामदेव ने गेद का खेल खेलने के निमित्त वक्ष–स्थल पर गेंद रूपी उरोजों की रचना की हो। नायिका के होंठ बिम्बों के फलों की कली से इतने अरुणाई लिये हुए हैं जिसे देखकर स्वयं लालिमा (लाली) शरमा जाती है। ऐसा लगता है कि आँखों की वाणी के इशारों से सुख प्राप्ति के लिये मैंने नायिका को बुलाया हो। कवि रामसहाय कहते हैं कि इस प्रेम–वेला के समय मैंने कभी अपनी प्रेयसी से अंतरगता (शारीरिक संबंध) जोड़ने की चाह नहीं की है।

दोहा – *श्री शारदा आन कें, कर कंठन स्थान।*
*हे जननी हरि के चरित, करन चहत कछु गान।।*

शैर – *अज्ञान जान जननी दै जन को ज्ञाना।*
*दैं जोर कड़ी छंद शैर सुनें सुजाना।*

टेक – *राजा टेक धनुष की बनें, सीता जी के लानें*

छंद – *सुन्दर धनुष जस की साजा, आये देश–देश के राजा,*
*टूटा धनुष हुआ कछु काजा, कयें जनक नरेश।*
*नैयां छत्रानी जग कोय, जाने छत्री जाया होय*
*निज–निज घर को जाना होय, सुन सकल नरेश।*



हे सरस्वती माता! तुम आकर मेरे गले में निवास कर विराजमान हो जाओ। हे माँ शारदे! मैं भगवान राम के चरित्र का कुछ गुणगान करना चाहता हूँ।

हे माता वीणापांणि! मुझे अज्ञानी समझकर ज्ञान प्रदान करो, जिससे मैं आशु कवि के रूप में कविता से कड़ियाँ जोड़कर छंद और शैर बनाऊँ, जो सुधीजन ध्यान से सुनें।

सीता जी के लिए धनुष की टंकार ठीक से तनें धनुष यज्ञ स्थल की सज–धज न्यारी है, जिसमें देश–देश के महाराजा भाग्य अजमाने आये हैं। धनुष टूट नहीं पाया इसलिए सीता जी का स्वयंवर नहीं हुआ। राजा जनक खिन्न होकर कहते हैं कि इस पृथ्वी पर ऐसी कोई वीर छत्राणी नहीं है जिसने वीर पुत्र को जन्म दिया हो। यहाँ उपस्थित सभी राजाओं सुन लो। आप अपने–अपने घरों को वापस प्रस्थान कर जाओ।

दोहा – *लखिन तड़क के ये कही, कितना हर को दण्ड।*
*कहो उठा तू गेंद से, ये सारे नौ खण्ड।।*

शैर – *लखन क्रोध देख हरी शांत किए हैं*
*रिषराज दई आज्ञा, हरि हरषे हिये हैं।*

जनक का यह संवाद सुनकर लखन बिजली और बादलों जैसी गर्जना करते हुए बोले वाह शिवजी का धनुष कितना गुरुतर है, अगर आप कहें तो मैं इस ब्रह्माण्ड के समस्त नौ खण्ड गेंद के समान उठा लूँ। लखन का यह क्रोध देखकर भगवान राम ने उन्हें शांत किया। महर्षि विश्वामित्र ने उन्हें आज्ञा दी यह जानकर भगवान राम का हृदय हर्ष से परिपूरित हुआ।

## चुरहेरिन लीला

दोहा – *जपत नाम जिनका सदा, शारद शेष, गनेश।*
*नारदाद ब्रह्मा रहें, भजे सुरेश महेश।।*

शैर – *सो चरित करत ब्रज में नित नए–नए हैं,*
*प्यारी के मिलन हेत, नार नर सें भये हैं।*

टेक – *मोहन कीनें भेष जनानें, पैरन लागे गानें,*

छंद – *सुन्दर मोतिन मांग सवारी, माथे दई दावनी प्यारी*
*तामें रुनका करें बिहारी, नेंचे बिंदिया।*
*ताके नेंचे बुदका कारे, बिच–बिच बूंदा लगत प्यारे,*
*कानन कन्नफूल झुमकारे, दांतन मिसिया।*

उड़ान – *नैनन रेख लगी कजरा की लागत भौत सुहाने*
*मुख में दयें पानन की बिरियाँ लाली कंठ दिखाने।*

(सौजन्य : डॉ. डी.आर. वर्मा)

जिनका नाम सरस्वती, शेष नाग और गणेश जी जपते रहते हैं जिनका नाम महर्षि नारद और प्रजापिता ब्रह्मा रटते हैं जिन्हें इन्द्र और भगवान शंकर भजते रहते हैं वह पावन ब्रजभूमि में नित्य नवीन चरित्र नाटकीय ढंग से करते रहते हैं। यहाँ देखो वे राधा प्यारी से मिलने के लिये अच्छे खासे पुरुष से स्त्री बन गये हैं।

मोहन ने आभूषण आदि पहनकर स्त्री का वेष धारण कर लिया है। अपनी मांग उन्होंने सुन्दर मोतियों से श्रृँगारिक रूप में सजाई है। माथे पर दावनी उसको वे रुन–झुन बजाते हैं, उसके नीचे बिंदिया पहने हुये हैं। बिंदिया के नीचे काले रंग के बुंदका और जिनके बीच–बीच में न्यारे बूंदा लगे हुये हैं। कानों में कर्णफूल, धारण किये हुये अपने दातों में मिसिया लगाये हैं। आँखों में काजल रेख



आँजे हैं जो बहुत अच्छा लग रहा है। मुँह में पान का बीड़ा चबाए और गले में लाली लगी हुई है।

दोहा – *पैर बिचोली लल्लरी, सर माला लई डाल,*
*गजरा हीरन के हिये, पैरी मोतिन माल।*

टेक – *बिच–बिच कनी लगी हीरन की देखत दिपन दिमाने*

छंद – *चूरा पैर लए कंचन के, पीछें दौरी उर ककनन के*
*रुनका बजत हलें हांतन कें, रुन झुन रुन झुन*
*पैरे बइयन बीच बजुल्ला, छत्री बगवा और पटिल्ल*
*उंगरिन छाप मुदरियां छल्ला होय छुन–छुन–छुन*

उड़ान – *झांझे लच्छे बांके बिछिया, पांव धरत झन्नाने,*
*दुर की दिपन लुरक की सरकन घूंघट उड़त दिखाने*

(सौजन्य : डॉ. डी.आर. वर्मा)

गले में बिचौली और लल्लरी और सिर पर माला पहन, हीरों के गजरा हृदय के ऊपरी हिस्से पर धारण कर, मोती माला पहने हैं।

इन आभूषणों के बीच–बीच में हीरे के कण जड़े हुए हैं जिनकी दीप्ति देखकर लोग दीवाने हो जाते हैं।

सोने के चूड़ा और दौरी हाथ में पहनें, जो स्वर्ण निर्मित हैं उसके पीछे दौरी और ककना पहन लिये, ये गहने हाथों में रुन–झुन, रुन–झुन की ध्वनि कर रहे हैं। बाहों के बीच में बजुल्ला, छन्नी, वगवा और पटिल्ला भी हाथों में श्रीकृष्ण भगवान धारण किये हुये हैं। वे अपनी अंगुलियों में अंगूठी और छल्ला पहने हुए हैं। जो छुन–छुन–छुन की आवाज करते हैं।

झांझे, लच्छे, बांके और बिछिया पांवों में धारण किए हुए हैं जो चलते हुए झन, झन की ध्वनि करते हैं। नाक में दुर की दीप्ति और

उड़ता हुआ घूँघट दिखाई देता है।

दोहा – *चोली पैरें बदन में जाने कहां छिंपाय।*
*चूनर ओढ़े बैगनी, मन ही मन मुस्कांय।।*

टेक – *दामन घूम घुमारौ पैरें, पवन लगे फाराने*

छंद – *बन कें नार चली अलबेली, जग की शोभा सकेली,*
*धर के डलिया चली अकेली चुरियन वाली*
*लैलो ले लो चुरियां आली, नीली पीली है जंगाली*
*गुइयां लेओ हरीरी लाली – तकतन बाली।*

उड़ान – *चाल चलत मतवाले गज की बोलत–बोल सुहाने*
*कोहल–सी कूकत फिरैं राधा के बरसानें।*

(सौजन्य : डॉ. डी.आर. वर्मा)

श्रीकृष्ण भगवान बदन में चोली तो पहने हैं लेकिन वह कहाँ छिपी है पता नहीं, वे बैंगनी रंग की चूनर ओढ़े हुए हैं, घुमावदार दामन पहने हैं जो हवा से फहरा रहा है।

ऐसी अलबेली स्त्री बनकर चली है जिससे इस दुनियाँ की शोभा न्यारी है। यह चूड़ियों वाली अपने सिर पर चूड़ियों से भरी डलिया अकेले लेकर चली है। वह बोलती है कि साथी चूड़ियाँ ले लो, चूड़ियाँ ले लो, इन चूड़ियों का रंग पीला और नीला, हरा और लाल है और कुछ ऐसी हैं जो दर्पण का कार्य करती हैं।

हाथी की मतवाली चाल और सबके अच्छे लगने वाली वाणी बोलती है वह नारी। यह राधिका के बरसाने में कोयल जैसी मीठी बोली चूड़ियाँ बेचते समय बोल रही है।

दोहा – *सुनी राधिका लाड़ली, चुरहेरिन की टेट,*
*टेर ल्याव ललता सखी, जल्दी, करौ न देर।।*



टेक – *तुरतई लुवा गई महलन में, हँस–हँस लगी बताने,*

छन्द – *जल्दी आओ पैर लो गुइया, राधे तुरत पसारी बइंया,*
*तुरतइ पकरी लरम कलइयां – कौंचा मसकें*
*हरि के हातन को पेंचान, तुरतई गईं राधिका जान,*
*तुम हो छली नंद के कान– कँय – हँस – हँस के।*

उड़ान – *नैनन बैनन फरक नईं –नर से बने जनाने।*
*बने चुरेरिन स्यामले, अब हमने पैचाने।।*

(सौजन्य : डॉ. डी.आर. वर्मा)

बरसाने में राधिका जी ने चूड़ी बेचने वाली की पुकार सुनकर वे ललता सखी से बोली कि तुम देर न करो उसे बुलाकर लाओ।

ललिता सखी तुरंत चूड़ियों वाली को राधिका के महलों में ले गई और हँस–हँस के राधा को बताने लगीं कि आओ जल्दी चूड़ियाँ पहन लो सखी। राधा ने अपनी बांह तुरन्त उसके समक्ष फैला दी, हथेली मसलकर शीघ्र ही चूड़ियों वाली ने कोमल कलाई पकड़ ली। राधा ने चूड़ियों वाली के हाथ देखे तो वह श्रीकृष्ण के हाथों को पहचान गई और हँस–हँस के कहने लगी हैं नंद लाला के कन्हैया तुम बड़े छल करने वाले हो।

इनकी आँखों की भाषा में कोई अंतर नहीं है। तुम पुरुष से स्त्री बने हो। तुम चूड़ी बेचने वाली बनी हो अब हमने तुम्हें पहचाना है।

दोहा – *सुनत लाड़ली के बचन, मनमोहन मुस्काय।*
*प्रेय मगन राधा भई, भेष देख हरषाय।।*

टेक – *नित–नित चरित करन हरी नए–नए 'राम सहाय' बखानें।*

छंद – *कातीं प्यारीं सखियां दरसन, ऐसई देव हमेशा दरसन,*
*लागी चरन स्याम के परसन, हरी मगन भये।*
*ऐसे कान गये वरसाने, मिलवे राधाजी के लाने*
*मिलकें भवन आपने आनें, कर चरित नऐ*

उड़ान – *रंग भरिया, छलिया बड़े, है नटखट की खानें।*
*सायर भूल सुधार लीजियो, माफी पै गम खाने।।*

(सौजन्य : डॉ. डी.आर. वर्मा)

राधा लाड़ली के वचन सुनकर श्रीकृष्ण भगवान मुस्कुराने लगे। चूड़ी वाली के वेश में श्रीकृष्ण को देखकर राधा प्रेमानुभूति में मग्न होकर हर्षित हो रही हैं।

राम सहाय कहते हैं श्रीकृष्ण भगवान नित्य नये चरित्र करते हैं। राधा की प्रिय सहेलियाँ प्रसन्न होकर कहती हैं कि हे भगवान! हमें हमेशा ऐसे ही दर्शन देते रहना। इतना कहकर प्रभु के चरण स्पर्श करने लगीं। यह देखकर भगवान प्रसन्न हुये। इस तरह वेष बदल श्रीकृष्ण राधा से मिलने के लिये बरसाने गये। ऐसे नये चरित्रों का निर्माण करके वे राधा से मिलकर लौट आये।

श्रीकृष्ण बड़े रंगीन मिजाज के हैं, वे छलिया और बड़े नटखट भी हैं। राम सहाय कहते हैं कि हे कवियों! अगर मुझसे यह आख्यान लिखने में कोई भूल हो गई हो तो भूल सुधार कर लेना। मुझ पर गम खाकर आप माफ कर देना।



## कवि जुझार सिंह

चरखारी राज्य के संस्थापक राजा खुमान सिंह के भाई पृथ्वी सिंह की चौथी पीढ़ी के कुँवर जुझार सिंह के पुत्र मलखान सिंह (1880–1933 ई.) चरखारी के राजा रहे। चरखारी नरेश मलखान के पिता होने के कारण नृपति जुझार सिंह लिखा गया है। कवि जुझार सिंह के चरखारी नरेश के पिता होने के कुछ प्रमाण मिलते हैं। पं. गोरेलाल तिवारी ने चरखारी के राजाओं का निम्नांकित क्रम दिया है–

खुमान सिंह संवत् 1821 (सन् 1764) में गद्दी पर बैठे। विजय बहादुर (विक्रम सिंह) सं. 1860 (सन् 1803) में, रतन सिंह सं. 1879 (सन् 1822) में गद्दी पर बैठे इनकी मृत्यु सं. 1914 (सन् 1857) में हुई।

कवि मोतीलाल चरखारी ने अपने खण्डकाव्य प्रेम पयोधि में नृपति जुझार सिंह को गुरु के रूप में स्वीकारा है –

*चक्रपुरी मम जन्म जहां छत्रसाल राज चन्द आयो है*
*तासु बंस भूपत जुझार सिंह पालो मोह पढ़ायौ है*

*भये श्याम के भक्त नीति निध जिन निज कवता बहु ग्रंथ कहे*
*रच सर कूप अनेक देवगृह राजधर्म सब भांत गहे*
*तिन सों में पूछों कछु पिंगल वने भूप सो मोह कहे*
*मगण नगण अरु मगण भगण गहु चरन चार सुभ अधिक कहे*
*कविन विवेक अनेक कहे सुभ कवता देन सकल फल की*
*श्री हरि चरित वरन करबे में नहि विसेष कछु पिंगल की*

यह भी निश्चित है कि राजा रतन सिंह के विवाह में मोती कवि थे क्योंकि टीका के समय का कवित्त मिला है। उपरोक्त छंद से यह तो ज्ञात होता है जुझार सिंह विद्वान कवि थे और छत्रसाल के वंशज थे। मोती कवि को सान्निध्य मिलने का मतलब है वे स्वयं राजा न होंगे। अतः चरखारी नरेश के पिता होना निश्चित होता है। इनका रचनाकाल भी सन् 1800 के आसपास ही निश्चित है।

वे श्रीकृष्ण के भक्त थे उनकी सभी रचनायें भक्ति रस की हैं। कवि ने अवश्य ही ग्रन्थों के रचने की बात लिखी है। एक ग्रन्थ के कुछ पन्ने मुझे देखने मिले हैं जिससे लगता है उन्हें रागों का भी ज्ञान था।

*मैं तो आनंद अली आज लौ न देखो कहूँ*
*आप ही झूलन हार आपही झुलावै।*
*गरजति घन बरषति जोर कोकिल पिक वचन शोर,*
*तड़ित चमक चमक चहुं ओर दंपति हरषावै।।*
*भींजि रहे सबै अंग वसन अंग कुसुम रंग,*
*भूलति दोउ एक संग दिल बहार आवै।*
*सिंह जुझार करि विचार शोभा उर धारि धारि,*
*श्याम गौरि छवि निहार मदन रति लजावै।।*

(श्री हरिगोविन्द घोष, चरखारी की मूल पाण्डुलिपि से प्राप्त)

हे सखि! मैंने आज तक ऐसा नहीं देखा कि झूलने वाला ही



स्वयं अपने आप को झुला रहा हो। (यहाँ ऐसा ही देखने को मिल रहा कि श्री राधा–कृष्ण जी दोनों अकेले अपने आप झूल रहे हैं) बादल जोर–जोर से गर्जना के साथ वर्षा कर रहे हैं। कोयल आदि की बोली से शोर हो रहा है, चारों ओर बिजली बार–बार चमक जाती है वहाँ श्री राधा–कृष्ण की जुगल जोड़ी प्रसन्न हो रही है। उनके सभी अंग वर्षा की बूंदों से भीग रहे हैं और पुष्पों के रंगों जैसे सुन्दर वस्त्र भी गीले हो रहे हैं किन्तु दोनों एक साथ आनंद से झूल रहे हैं और हृदय में नव उमंग लिये हुए हैं। कवि जुझार सिंह कहते हैं कि श्याम सुन्दर और राधिका जी की शोभा को देखकर कामदेव और रति लजा जाती हैं।

*जल शय्या मंदिर मन मोहन जलभल जलज रसाल।*
*मणिमय दिव्य नाव पर राजति राधा कृष्ण कृपाल।।*
*बसन झीन तनु सुंदर सोभित उर मोतिन की माल।*
*सप्त स्वरन बाजे स्वर साजे गावत दै दै ताल।।*
*सुर नर मुनि लखि छवि सुम बरषहि कहि जय शब्द विशाल।*
*सिंह जुझार चरण युग वंदति सहित लाड़िली लाल।।*

(श्री हरिगोविन्द घोष, चरखारी की मूल पाण्डुलिपि से प्राप्त)

श्री राधा–कृष्ण जी पराग युक्त कमलों के निर्मल जल वाले सरोवर में मणियों से जड़ी दिव्य नाव पर बनी शैय्या पर विराजमान हैं। उनके शरीर पर सुन्दर पतले वस्त्र सुशोभित हैं और गले में मोतियों की माला है। सातों स्वरों में संगीत बज रहा है और सभी प्रसन्नता से गा रहे हैं। देवतागण, मुनिगण और मनुष्य इस शोभा को देखकर पुष्पों की वर्षा कर रहे हैं और जय–जयकार ऊँचे स्वर में कर रहे हैं। कवि जुझार सिंह जी कहते हैं कि मैं श्री राधा–कृष्ण के युगल पदों की वंदना करता हूँ।

*बदरवा देखें मन अकुलात*
*पवन चलति अतिशय पुरवाई घन जल कण बरषात।*

*पिय पिय बोलि पपीहा बोलति सो नहिं हमें सुहात।।*
*जुगनू चमक दमक दामिन की चहु दिश अनल दिखात।*
*झिल्ली झनक परत जब कानन सो सुनि जिया डरात।।*
*हरष रहित उन नंद नंदन बिन बरष भई है रात।*
*नृप जुझार सिंह अली मिलावह खुस करहों परभात।।*

(श्री हरिगोविन्द घोष, चरखारी की मूल पाण्डुलिपि से प्राप्त)

बादलों को देखते ही मन में बेचैनी होने लगती है। पुरवाई पवन तीव्रता से चलती है और घनघोर वर्षा हो रही है। चातक पिय–पिय की बोली बोल रहा है – यह सब हमें कुछ भी अच्छा नहीं लगता। जुगनू का चमकना और बिजली का कौंधना मुझे लगता है जैसे चारों तरफ आग लगी हो। जंगल में जब झींगुर के बोल सुनाई देते हैं तो हृदय में डर लगने लगता है। नंदनंदन श्री कृष्ण के बिना आनंदविहीन यह एक रात्रि भी एक वर्ष के समान लगती है। कविवर राजा जुझार सिंह बताते हैं कि नायिका अपनी सखी से कहती है कि मुझे प्रियतम से मिला दो तो मैं सुबह होते ही तुम्हें प्रसन्न कर दूँगी।

*हिडोरा दोऊ झूलत रंग भरे।*
*राधे सहित गुमान बिहारी छवि सौं छवि अगरे।।*
*कनक डोल मुक्ता लर झालर रेशम डोर हरे।*
*ललिता झमकि झुलावति झुकि झुकि सखियन गान करे।।*
*साजि साजि नर नारि नगर तें डगर डगर डगरे।*
*छवि अतोल लोचन भरि भरि के लाभ लेत सिगरे।।*
*यह आनंद देखिकर दिवतें देवन सुमन झरे।*
*सिंह जुझार हेतु पद पंकज सुर तरु फलनि फरे।।*

(श्री हरिगोविन्द घोष, चरखारी की मूल पाण्डुलिपि से)



आनंदित होकर श्री राधिका जी के साथ गुमान बिहारी (श्रीकृष्ण जी) झूला झूल रहे हैं। दोनों के सौन्दर्य की छटा एक दूसरे से आगे ही लगती है। झूले में डोली सोने की बनी है, मोतियों की झालरे लटक रहीं हैं और हरे रंग की रेशम डोर लगी है। ललिता सखी झुकि–झुकि कर झूला झुला रही है और सखियां गीत गा रहीं हैं। नगर के स्त्री–पुरुष सुन्दर साज सजाकर सभी मार्गों से धीरे–धीरे चले आ रहे हैं और श्री राधा–कृष्ण की असीम शोभा को नयन भर भर के दर्शनों का लाभ लेते हैं। इस आनंद को देखकर आकाश से देवता लोग फूल वर्षा में लगे। कवि जुझार सिंह के हित में श्री राध ाा–कृष्ण जी के चरण कमलों से कल्प वृक्ष के फल फलने लगे अर्थात् चरण कमल कल्पवृक्ष का लाभ देने लगे।

*श्री हरि नें नर हरि तनु धारौ।*
*जानि वार तरवार दास शिर खंभ कारि कें आनि हंकारौ।*
*तन मन धन सों चरण शरण लखि दीन जानि प्रहलाद उबारौ।*
*देवन दुख मेट्यौ करुणानिधि हिरण्यकाशिपु उर नखन विदारौ।।*
*सुर सुरेश पालक प्रभु प्रगटयौ चारहु वेदन सुयश उचारौ।*
*राजा अखंड दियौ प्रहलादहि पुनि निज लोक माँहि पग धारौ।।*
*जब जब भीर परी सुर संतन तब तब प्रभु इमि आनि उबारौ।*
*कारज करण सिद्धि जन मन के सिंह जुझार ध्यार उर धारौ।।*

(श्री हरिगोविन्द घोष, चरखारी की मूल पाण्डुलिपि से प्राप्त)

श्री विष्णु भगवान ने नरसिंह का शरीर धारण किया। जब उन्होंने देखा कि मेरे सेवक के सिर पर तलवार का प्रहार हो रहा है तो खम्भे को फाड़कर उन्होंने ललकार दी। तन, मन और धन से दीन बनकर अपने चरणों में शरण लेने वाले प्रहलाद को उन्होंने बचा लिया। करुणानिधान भगवान ने हिरण्यकश्यप के हृदय को नाखूनों से फाड़कर देवताओं के दुख को मिटाया। देवताओं का पालन करने वाले प्रभु प्रकट हुए और चारों वेदों ने उनका यशगान किया।

प्रहलाद को अखण्ड राज्य प्रदान किया फिर अपने लोक को प्रस्थान किया। जब भी संतों और देवताओं पर आपत्ति आई तब–तब प्रभु ने आकर छुटकारा दिलाया। कवि जुझार सिंह कहते हैं कि मनोकामना पूरी करने वो प्रभु का हृदय में ध्यान करिये।

*व्रज वीथिनि विहरति है रसिया।*
*माथें मुकुट लकुट कर शोभित अधर मधुर वाजति वसिया।*
*हनि मुष्टिका चाणूरहि मारयो कंस पछारयौ गहि चुटिया।*
*राज दियौ नृप उमसेन कों उदय अस्त जह लौं शासिया।*
*सिंह जुझार गुमान बिहारी पद पंकज हिरदें वसिया।।*

(सौजन्य : डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी, टीकमगढ़)

ब्रज की गलियों में श्रीकृष्ण विहार कर रहे हैं। उनके सिर पर किरीट और हाथ में छड़ी शोभा दे रही है। उनके होंठों पर रखी बाँसुरी से मधुर ध्वनि निकल रही है। उन्होंने मुष्टिका और चाणूर का वध किया तथा चोटी पकड़कर कंस को पछाड़ दिया। फिर महाराजा उग्रसेन को सम्पूर्ण राज्य दे दिया। कवि जुझार सिंह कहते हैं कि गुमान बिहारी (श्रीकृष्ण जी) के चरण कमल मेरे हृदय में बस जाय।

*व्रज कच्छ मच्छ खेलैं होरी।*
*प्रभु वराह नरसिंह रंग रँग वामन लिय गुलाल झोरी।*
*परशुराम श्रीराम कुमाकुम कृष्णचंद्र कुमकुम घोरी।*
*श्री जगदीश ईश पिचकारी संकर्षण पुस्पन झोरी।*
*वाजति ताल मृदंग बीन डफ् मची फाग व्रज की खोरी।*
*सिंह जुझार अवतार दशहु के पद वंदति युग कर जोरी।*

(सौजन्य : डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी, टीकमगढ़)

ब्रज में भगवान मत्स्य (भगवान विष्णु के प्रथम अवतार) और भगवान कच्छप (श्री विष्णु भगवान के द्वितीय अवतार) प्रसन्नता से होली खेल रहे हैं। भगवान वाराह (भगवान विष्णु के तृतीय अवतार)



और श्री नृसिंह भगवान (श्री विष्णु का चौथा अवतार – आधे सिंह और आधे पुरुष) विविध रंग लिये हुए हैं। भगवान वामन (भगवान विष्णु ने बलि को छलने के लिए अवतार लिया था) अपनी झोली में गुलाल भरे हुए हैं। भगवान परशुराम, श्रीराम और श्रीकृष्ण अलग–अलग पागों में केसर अथवा रोली लिये हुए। श्री जगदीश प्रभु के हाथों में सुन्दर पिचकारी और फिर श्री संकर्षण भगवान (श्रीकृष्ण के भाई बलराम) कुसुमों से झोली भरे हुए हैं। ब्रज में मृदंग, ढोलक, वीणा, डफ आदि वाद्य बज रहे हैं और ब्रज की गलियों में होली खेली जा रही है। जुझार सिंह कहते हैं कि भगवान के दसों अवतारों के चरणों की दोनों हाथ जोड़कर वंदना करता हूँ।

*गोवर्द्धनधारी धाम लगै गोवर्द्धन बाग सुहावनौ।*
*वारा मास वास तह कीन्हें ऋतु वसंत ह्यै पाहुनौ।*
*त्रिविध समीर कीर कल कोकिल भ्रमरन भीर लुभावनौ।*
*फूले तरु तरु पर तरु फूलै झूले अंमन मौर झुमावनौ।*
*चलति फुहारे पंच रँगवारे जनु मेघन सावनौ।*
*करति विहार कृष्ण राधायुत सिंह जुझार मनभावनौ।।*

(डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी के सौजन्य से प्राप्त)

गोवर्द्धन पर्वत धारण करने वाले श्रीकृष्ण के धाम में गोवर्द्धन बाग अत्यन्त सुन्दर हैं। बारहों महिने बसंत ऋतु यहाँ मेहमान बनकर रहती है। शीतल, मंद, और सुगंध युक्त पवन चलती है, कोयल और तोते की मधुर बोल सुनाई देते हैं, भ्रमरों के समूह आकर्षित होकर यहाँ भ्रमण करते हैं। वृक्षों पर पुष्पों की शोभा देखने को मिलती है। आम के वृक्षों पर आम की बौरें झूल रहीं हैं। श्रावण माह की तरह छाये मेघों से हल्की सुखदायी पांच प्रकार की फुहार आनंद दे रही है। कवि जुझार सिंह कहते हैं कि ऐसे में मनमोहन श्रीकृष्ण राधिका जी के साथ यहाँ बिहार कर रहे हैं।

# मोती कवि

कविवर मोती का जन्म चरखारी के एक प्रतिष्ठित घोष परिवार में सन् 1895 ई. के लगभग हुआ था। इनकी रचनाओं में कहीं मोती राम और कहीं मोती लाल की छाप भी मिलती है, किन्तु उन्हें 'मोती हरकारा'' के नाम से लोग अधिक जानते हैं। वे एक अच्छे तांत्रिक भी थे। इनके पिता चरखारी नरेश मलखान सिंह के दरबार में थे। पिता का देहावसान हो जाने पर लगभग 12–14 वर्ष की आयु में ही इन्हें चरखारी नरेश ने अपने यहाँ रख लिया था। इस समय चरखारी की गद्दी पर राज बहादुर जुझार सिंह जू देव बैठ चुके थे। बालक मोतीराम की काव्य प्रतिभा ने जुझार सिंह जू देव को प्रभावित भी किया था। कवि ने उन्हें अपने काव्य गुरु के रूप में सम्मान दिया है–

1. *चक्रपुरी मम जन्म जहां छत्रसाल राज चल आयो है।*
   *तासु बंस भूपत जुझार सिंह पालो मोह पढ़ायो है।।*
2. *तिन सैं में पूछौ कछु पिंगल वर्ण भूप सो मोह कहे।*
3. *यह सुभ वचन नृपत मुंह भाषिय लीने मैं निज धार सो मन।*

महाराजा श्री मर्दन सिंह के राज्यकाल में इन्होंने कवि के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त की। महाराजा साहब के विवाह में द्वारचार के समय



चारण प्रवृत्ति को संजोये इनके द्वारा पढ़ा गया एक छन्द दृष्टव्य है–

*'रतन जड़त भूषन अंग अंग पै सजाये भूप*
*रूप सो अनूप बनै कहत न कवीन्द्र पै।*
*श्रीमन् महाराजाधिराजा अरिमर्दन सिंह ब्राजे*
*बन दूल्हा जिन दूल्हा गयेंन्द्र पै।'*

**रचनायें –** एक खण्ड काव्य 'प्रेम पयोधि' इनके ज्येष्ठ पुत्र श्री जुगल किशोर जी के सौजन्य से देखने को मिला। इसमें उद्धव गोपी प्रसंग कुछ व्यावहारिक धरातल को छूते हुए चला है। रचनाकाल के सम्बन्ध में कवि ने ग्रन्थ में लिखा है –

*'एक सहस नौ सौ में जसनों संवत् अधिक नवासी के।*
*सावन सुक्ल पक्ष सुभ सातें जस बरनौं सुषरासी के।।'*

तदनुसार श्रावण शुक्ल पक्ष सप्तमी संवत 1989 अर्थात् सन् 1932 ई. में ग्रन्थ रचना प्रारम्भ की। 'मोती माला' ने 108 दोहों का संग्रह बताया जाता है किन्तु इसके कुछ ही दोहे देखने को मिल सके। 'गोपाल अष्टक' की रचना कवि ने जीवन के अन्तिम क्षणों में आत्म शान्ति के लिए की थी– 'मोती धीर धरौ मन में, है सांवरो सुंदर सोच विमोचन।' कुछ ग्रन्थों की चर्चा है किन्तु उपलब्ध नहीं है। कवि की फुटकर रचनाओं में ख्याल और फागें बहुत लोकप्रिय हैं। घनाक्षरियों और सवैयों में कृष्ण लीला की श्रृँगार रस एवं भक्ति भावना प्रधान रचनायें भी बहुत मिलती हैं। साहित्य–फड़ों के लिए कवि ने पर्याप्त रचनायें दी हैं जो आज भी गायकों के बस्तों में बंधी हैं।

## कवित्त

*देर न करीती दीन द्रोपदी पुकारी जब,*
*सभा बीच नीच खींच पट खोलो है।*

*देर न करीती प्रहलाद प्रन पालो प्रभु,*
*देर न करीती जब भक्त चित्त डोलो है।*
*मोती जन आरत सो भारत में भार ही की,*
*देर न करीती गज घंट गिरो पौलौ है।*
*मोरी बेर देर औ अबेर कैसी दीनानाथ,*
*देर न करीती जब करी हरी बोलो है।।*

(गायक – श्री देवी साहू)

जब दुष्ट दुष्शासन ने सभा के मध्य द्रोपदी की साड़ी खींची तो द्रोपदी ने पुकारा आपने आने में विलम्ब नहीं किया था। आपने भक्त प्रहलाद के प्रण को पूरा करने में थोड़ा भी विलम्ब नहीं किया और भक्त के मन ने जैसे ही चाह की आप तुरंत पहुँच गये। दीन जन के पुकारने पर, आपने तनिक भी देर नहीं लगाई और हाथी का घंटा गिराकर बिल्ली के बच्चों को बचाया था। आपने तब भी विलम्ब नहीं किया था जब हाथी ने मगर से रक्षा हेतु पुकारा था फिर हे दीनों के स्वामी! केवल मेरे लिये ही इतनी देर क्यों लगा दी ?

*आली आज लाल ते गुमान कीन्हों लाड़ली ने,*
*हेरत मुख फेरत दृग भये लाल डोरी के*
*भौहन को तान कमान पनिच वरन कर,*
*कारे कजरारे नैन जोरे बरजोरी के।।*
*मोती सखी सियानी जे चिमानी चित्रसारी में,*
*वारी में मीन मृगा वन में कंज खोरी कें।*
*बोलत न बनै बैन देखत रये नैन येन,*
*वीर वीरता के वे किशोर श्री किशोरी के।।*

(गायक – श्री देवी साहू)

हे सखी ! आज श्रीकृष्ण से राधिका जी ने गुमान कर लिया है। वे देखते ही मुंह दूसरी ओर पलट लेती हैं, नेत्रों (क्रोध में) के



किनारों पर लाल डोरे से खिंच गये हैं। भृकुटी को चढ़ा कर (क्रोधित होकर) धनुष और प्रत्यंचा के समान बनाकर काले काजर युक्त नेत्रों को बलपूर्वक (बाण के रूप में) जोर लिया है। मोती कवि कहते हैं कि जो सखियाँ चतुर (बुद्धिमान) थीं वे रंग–महल में चुप होकर दुबक गई, वे ऐसी लग रही थीं जैसे पानी में मछली, वन में हिरण और छोटे कटोरे में कमल का पुष्प। किशोरी जी के वीरत्व से परिपक्व किशोर नयन अच्छी तरह देखते तो रहे किन्तु उनके मुँह से (क्रोधवश) शब्द नहीं निकले।

*ऊधौ गिरधर ते ब्रज भरकें सुनो सूर सुत करकें।*
*जौन चेटका कौ पति ठहरै बांधो हमें पकर कें।*
*धरियो सिफर जौन पै जावै जी तज प्रानी पर कें।*
*ता रिपु के बाहन कौ भक्षण डोलत है सिर धर कें।*
*'मोती' तौन सकल ब्रज भर कें लै गये मोहन हरकें।।*

हे उद्धव जी अपने कान देकर सुनो कि श्रीकृष्ण ही पूरे ब्रजवासियों के अपने थे। उन्होंने हम सबको प्रीत के बंधन में बांध लिया और हमारे मन को हरण करके ले गये।

**फाग**

*खोवै न द्रव्य कहूं लोभी ग्यान बातन में,*
*बल न जताय कभउं नाहर पड़इयन में।*
*ज्ञानी न ज्ञान देत मूरखन की सभा बीच,*
*डाकू न वार करै फूंस की मड़इयन में।*
*संत नहीं वीर्य देत गनिका व्यभिचारन में,*
*जलधि स्वांति बरसै न जानके भड़इयन में।*
*मोती लाल हाल जौ विचार कें बखान करै,*
*सूरवीर खोवै न लोइया लड़इयन में।*

(गायक – जुगल किशोर)

लोभी व्यक्ति ज्ञान की बातों के लिये अपना धन व्यय नहीं करता, शेर कभी पड़ेरुओं (गाय–भैंस के छोटे बच्चों) को अपनी ताकत नहीं दिखाता। ज्ञानी व्यक्ति मूर्खों की सभा को नहीं समझाते, डाकू घास–फूंस के घरों (गरीब के मकानों) पर डाका नहीं डालते। संत व्यक्ति व्यभिचारी स्त्रियों अथवा वेश्या को रतिदान नहीं करता। स्वाति नक्षत्र के जल की वर्षा पितृपक्ष में नहीं होती। मोती कवि कहते हैं कि मैं विचार (चिंतन) करके कहता हूँ कि अच्छा वीर और योद्धा कभी भी अपने बाण सियारों को मारने के लिये नष्ट नहीं करता।

## फाग

*कारे सब नईं होत विकारे हमने सोच विचारे।*
*एक दोस भौंरा कौ देखत सब दोषल कर डारे।*
*कारे सिंधु महाकारे तें चौउदा रतन निकारे।*
*कारे केस बिना नईं आदर नारी नृपत दुआरे।*
*मोती नाम लेत कारे कौ सो सुर धाम सिधारे।।*

(गायक – श्री जुगल किशोर, चरखारी)

हमने चिंतन कर लिया है कि सभी काले रंग वाले खराब नहीं होते। केवल एक भ्रमर का दोष देखकर सभी काले रंग वालों को दोषी कह दिया। (कवि आगे काले रंग वालों के गुणों की चर्चा करते हुए कहता है कि) काले समुद्र को मंदराचल पर्वत (नागराज की सहायता से) द्वारा मंथन कर चौदह रत्न प्राप्त किये गये थे। सिर पर काले बालों के बिना युवती और राजा दोनों के द्वार पर सम्मान नहीं मिलता। अर्थात् दोनों जगह युवा अवस्था का ही सम्मान है। मोती कवि कहते हैं कि काले कृष्ण का नाम लेने वाले देव लोक को पा जाते हैं।



*कलियां अपने गुन नईं कातीं भौंरे दोष लगातीं।*
*मदमातो जोवन जब आओ उपत उपत बैठातीं।*
*बैठत संपुट कंज कली भई कैद रहे इक राती।*
*जो ना होतो उदय भान कौ तो फांसी करवातीं।*
*मोतीराम जसीली बनकें बुझी आग सुलागातीं।*

(गायक – श्री जुगल किशोर, चरखारी)

कलियाँ अपने लक्षणों की बात न कहकर भ्रमर को दोषी बतातीं हैं। मदमस्त जवानी के आने पर वे भ्रमरों को आमंत्रित करती हैं। खिले कमल पर जब भौरा बैठता है तो वह (सूर्यास्त होने पर) अपने दलों को सिकोड़ कर कली के रूप में बदल जाती है और भौरा एक रात्रि के लिए कैद हो जाता है। यदि सूर्योदय न हुआ होता तो भौरा की तो फाँसी निश्चित थी। मोती कवि कहते हैं कि ये कलियाँ रसवान बनकर शान्त हृदय में कामाग्नि पैदा कर देती हैं।

*नैना अबै चली गई घालैं बरछी कैसी भालें।*
*देखत तकत हजारन रै गये लिखी चितोर दिवालें।।*
*कइयक गिरे तमारौ खा कें ऊँचे सें भये खालें।*
*मोती लाल जियें वे कैसें जिन्हें करेजें सालें।।*

अभी–अभी नयनों से प्रहार करते हुए नायिका निकल गयी है। उसमें (नयनों में) बरछी की नोंक की तरह प्रभावी पैनापन है। हजारों लोग हतप्रभ हुए चित्र लिखे से देखते रह गये। बहुत से मदहोश होकर नीचे गिर गये। मोती कवि कहते हैं कि वे कैसे जीवित रह सकते हैं जिनके हृदय में चोट लगी है ?

*रसना राम नाम खां बोलौ बड़ो नाम अनमोलौ।*
*भूलो फिरत मोह सागर में जौ मन डोलौ डोलौ।।*

*भव सागर से पार करें खां है आशा अब तो लौ।*
*मोती लाल झपट हिरदे के कपट किवारे खोलौ।।*

(गायक – श्री जुगल किशोर, चरखारी)

कवि अपने आप से कहता है कि जिह्वा से राम का नाम लो, यह अमूल्य है। मोह रूपी समुद्र में मन भटकता फिरता है (भुलावे में घूमता है)। इस संसार सागर को पार करने के लिये हे प्रभु! अब आप तक ही आशा टिकी है अर्थात् आपका ही भरोसा है। मोती कवि कहते हैं कि शीघ्र ही हृदय के छल से निर्मित कपाटों को खोल लो।

*गज खां पकरें ग्राह दसन में खेचत जतन जतन में।*
*पूरौ फंसो गसो पद मोरौ पावत नहीं भगन मैं।।*
*तब चिक्कार पुकार राम खां पहुंचो चित्त चरन में।*
*'रा' के कहत कष्ट गओ मोती 'म' भओ ठीक मगन में।।*

(गायक – श्री जुगल किशोर, चरखारी)

हाथी को मगर ने अपने दाँतों में जब जकड़ लिया तब पहिले तो अपने आपको वह उससे छूटने के लिये अनेक प्रयासों सहित बाहर खींचता रहा, जब उसने मन में समझ लिया कि उसका पैर पूरी तरह मगर के मुँह में फंस चुका है और छूट कर भागने की कोई सम्भावना नहीं है, तब उसका मन प्रभु श्रीराम के चरणों में पहुँचा और आर्त भाव से चीख कर उनका नाम लिया। मोती कवि कहते हैं कि 'रा' का उच्चारण होते ही कष्ट दूर हो गया 'म' की पूर्ति आनंद की अवस्था में हुई।

*जब जब परी दास पै पीरा, हरन आये रघुवीरा।*
*एक बार प्रहलाद भगत हित नरसिंह धरो सरीरा।*
*बचा लओ गज खां जल भीतर करो सिंधु के तीरा।*
*मोती लाल बचा प्रभु लइयो भवनिधि अगम गंभीरा।।*



जब–जब भक्त पर आपत्ति आई श्रीरामचन्द्र जी स्वयं उसके निर्वाणार्थ आये। एक बार प्रहलाद भक्त के हित में नरसिंह रूप धारण किया था। एक बार जल के भीतर मगर से बचाकर समुद्र के किनारे ला दिया था। कवि मोती कहते हैं कि हे प्रभु! यह संसार सागर बहुत गहरा है इससे मुझे उबार लेना।

## ख्याल

*लखन भ्रात सें मिलो पिया तुम लै सिया छोड़ हिया का छल।*
*लघु कर जानो नहीं, दशरथ सुत में त्रिभुवन कौ बल।। टेक।।*
*लै कैं मिलौ जानकी जब तुम दया करेंगे दीन दयाल*
*लोट जायेंगे लंक से रामचन्द्र लक्ष्मण कपि भालु*
*लगै न कुल खां कलंक जामें सोइ करौ मोरे प्रतिपाल*
*लड़ें न जीतो राम सें कहों मैं तुम सें हाल।।*

*उड़ान–लियें कपिन की सेन परे हरि एक सें एक हैं सूर धवल।*
*लघु कर जानो नहीं, .....।।*
*लाल ध्वजा फहराये लंक में अर बल भये बालि के लाल*
*लाल बालि के लड़ेंगे तुमसें तब तुम का करहौ दस भाल*
*लै कैं गदा अंजनी नन्दन जब दस मुख पै दै हैं घाल*
*लखौ पिया तुम हिया में अपने तब न चलेंगे ऐसे गाल।*

*उड़ान–ल्याये चुराय पिया जगजननी कहं दसमुख की गई अकल।*
*लघु कर जानो नहीं, .....।।*
*लखी न लख में एक दसानन बहुत तरह समुझायो बाल।*
*लिये दस लंगर परे हैं तिनकौ तनक न मन में ख्याल।*
*लगे हैं गेरां समुद्र गढ़ जीत लिये दसहूं दिगपाल।*
*लंकपती खां कौन डर जाके बस में जम औ काल।।*

*उड़ान–लिया उठा गिर सहित पसूपति कहु मोसें है कौर सबल।*
*लघु कर जानो नहीं, .....।।*

*लाज रहै जामें पिया प्यारे आनंदसिंह कौ यही सबाल*
*लाला बलदेव कथें छंद यह डाला तेरे ऊपर जाल*
*'ल' से 'ल' तक कहो ख्याल कूँ नईं उठकें दे जाना चाल।*
*लपक कें तोरी लाड़ले चंग छीन लेगा तत्काल।।*

*उड़ान–लिये चंग छंद कवि मोती कहें सुनकें दुस्मन गये निकल।*
*लघु कर जानो नहीं, .....।।*

मंदोदरी रावण से कह रही है– हे प्रियतम! आप ह्रदय का छल दूर कर सीता को साथ ले जाओ और लक्ष्मण के भाई श्रीराम से मिलो। उन्हें तुम छोटा मत मानो, दशरथ के पुत्र श्री राम में तीनों लोकों की शक्ति है।

जब आप सीता को ले जाकर मिलोगे तो दीनों पर दया करने वाले श्रीराम आप पर दया करेंगे और वानर, भालू, लक्ष्मण सहित श्रीराम लंका से वापिस लौट जायेंगे। हे मेरे पालनकर्ता! वही कर्म करो जिससे कुल को किसी प्रकार का दोष न लगे। आप श्रीराम से युद्ध नहीं जीत सकते, यह मैं निश्चित रूप से कहती हूँ। श्रीराम अपनी वानरों की सेना में एक से एक बलशाली योद्धाओं सहित डेरा डाले पड़े हैं।

लंका के ऊपर लाल ध्वज फहराने की सामर्थ्य रखने वाले बालि पुत्र अंगद हठी शक्ति के रूप में उपस्थित हैं। जब वही बालि पुत्र आपसे युद्ध करेंगे तब क्या कर सकोगे ? अंजनी पुत्र हनुमान जी जब अपनी गदा से आपके दश मुखों पर प्रहार करेंगे (तब आप क्या करोगे)। हे प्रियतम! आप अपने ह्रदय में विचार कर देखो, तब आपका मुँह इस तरह नहीं चल सकेगा। आप जगत की माता को चोरी से ले आये हो, आपकी बुद्धि कहाँ नष्ट हो गई ?

मंदोदरी ने अनेक प्रकार से समझाया किन्तु रावण की समझ में एक भी बात नहीं आई। वह बोला– दस लंगर समुद्र में पड़े हुए



हैं उसकी तुम्हें जानकारी नहीं है। लंका गढ़ के चारों ओर समुद्र फैला है, मैंने दशों दिगपालों को भी जीत लिया है। हे प्रिये! जिसके काबू में यम और काल हैं उस लंकापति रावण को किसी का कैसा भय? भगवान शंकर सहित मैंने कैलाश पर्वत को उठा लिया था भला मेरे से अधिक बलवान कौन है ?

आनंद सिंह का प्रश्न यही है कि हमारे पक्ष की लाज बची रहे। लाला बल्देव कहते हैं कि हमने छंद पढ़कर तुम्हारे ऊपर जाल डाल दिया है। अब ल से ल तक छंद कहो वर्ना स्थान छोड़कर भाग जाओ अन्यथा लाड़ले चंग छीन लेगा। मोती कवि ने छंद लेकर धंग कहना प्रारंभ किया तो दुश्मन स्थान छोड़कर भाग गये।

अंतिम छंद में दूसरे पक्ष को चुनौती है और गाने के लिये 'ल' से 'ल' का विषय दिया गया है। इसमें 'गायकों' के नाम दिये गये हैं।

## प्रेम पयोधि

दोहा–*कंस आद खल मार के उग्रसेन दयो राज।*
*भक्त सकल सुष में करे मथरा में ब्रजराज।।*
*प्रेम जसोदा नंद कौ उर सब ब्रज कौ चैन।*
*भूलत ना तो स्याम को रटत रहत दिन रैन।।*

कंस आदि दुष्टों को मारकर श्रीकृष्ण जी ने महाराज उग्रसेन को राज्य दे दिया और मथुरा में भक्त जनों को सुख–शान्ति प्रदान की। यशोदा माता और नंदबाबा का स्नेह और ब्रज का वह आनंद–शांति श्री कृष्ण को भूलता नहीं है, वे रात–दिन यही बात दुहराते रहते हैं।

छंद –*ऊद्यो ये अक्रूर मदन सब ब्राजे स्याम के पास ही थे।*
*रहत हते हर बार साथ में सषा स्याम के षास ही थे।।*

*बोले सब से कृष्ण चंद्र हमें ब्रज कौ सुष नई भूलत है।*
*वो प्रेम जसोदा नंद गोप कौ नेह नैन में झूलत है।।*

श्रीकृष्ण के पास में ही उद्धव जी, मदन जी और अक्रूर जी बैठे हुए थे। ये सदैव ही साथ में रहते हैं क्योंकि वे उनके आत्मीय मित्र हैं। श्रीकृष्ण जी सबसे कहने लगे कि मुझे ब्रज का आनंद–सुख भूलता नहीं है। यशोदा माता, नंद बाबा और गोप–ग्वालों का स्नेह आँखों में झूलता है।

*ब्रजवासिन कौ प्रेम सखा मै कैसें तुमें वषान करों।*
*फांस लयो है मोय मोह में केहि विध उनसे मान करों।।*
*यैसो कै कें प्रीत सिंध में डूब गये मोहन प्यारे।*
*यह हाल स्याम को देष नेह में विश्मय उद्यव चित धारे।।*

हे मित्र! मैं तुमसे उन ब्रजवासियों के प्रेम का कैसे वर्णन करूँ? उन्होंने मुझे अपने नेह के बंधन में बांध लिया है। मैं उनसे कैसे अभिमान कर सकता हूँ ? इस तरह कहकर श्रीकृष्ण प्रेम–सागर में डूब गये। उनका यह हाल देखकर उद्धव जी को आश्चर्य हुआ और वे मन में विचार करने लगे।

*ब्रह्म सच्दानंद कृष्ण यह निराकार साकार भये।*
*कहैं वेद भुय भार देष हरि भक्तन हित औतार लये।।*
*उठ खड़े भये तत्काल उधव जी हाथ जोर बोले बानी।*
*प्राक्रित सम तुम मोह मूल में मोहे हौ गुण निध ग्यानी।।*

श्रीकृष्ण परब्रह्म परमात्मा हैं। चिदानन्द निराकार भगवान ने मनुष्य का यह शरीर धारण किया है। वेद कहते हैं कि पृथ्वी का भार दूर करने और भक्तों के लिये अवतार धारण करते हैं। तुरन्त उद्धव जी खड़े हो गये और हाथ जोड़कर यह वचन बोले कि हे कृष्ण, आप संसार के सामान्य प्राणियों की तरह मोह मोहित हुए से वचन बोल



रहे हो जबकि तुम गुणसागर और ज्ञानवान हो।

*यह मोह भूल की भूल भाल में परै तौ पावे पार नहीं।*
*है असार संसार स्याम तुम जानत हौ कछु सार नहीं।।*
*सुष दुख समपत विपत काल अरु कर्म भोग भल मंद सुनो।*
*योग वियोग जाल जग जानो हित अनहित भ्रम फंद सुनो।।*

हे कृष्ण ! जी, यदि तुम इस मोह की जड़ संसार के भुलावे में पड़ जाओगे तो फिर इससे बच नहीं सकोगे। यह संसार व्यर्थ है, सार रहित है, इससे मोह कर लेने से कोई लाभ नहीं है और तुम भी यह सब अच्छी तरह जानते हो। सुख–दुख, सम्पत्ति–विपत्ति, काल और सांसारिक कर्म–भोगादि सब निरर्थक हैं। मिलना और बिछुड़ना इस जगत के फँसाने वाले जाल हैं और लाभ–हानि भी भ्रांति है, धोखा है।

*जन्म मरण धन धरन धाम पुर जात पाँत परवार कहे।*
*सुनहु स्याम सब स्वर्ग नर्क बहु जहं लग जग व्योहार कहे।।*
*स्वप्न सरस यह सब माया कौ जाल जगत फैलायो है।*
*सो माया के ईश आप फिर मोह कहां से आयो है।।*

जीवन–मृत्यु, धन–सम्पत्ति, धरा–धाम, घर–गाँव, जाति–पांति, परिवार और स्वर्ग–नर्क आदि जहाँ तक संसार का व्यवहार होता है। श्याम सुन्दर तुम सुनो वह सब स्वप्न की तरह जगत में माया द्वारा फैलाया हुआ जाल है। इसी माया के आप स्वामी हैं फिर आप के मन मोह कहां से आ गया ?

दोहा– *यह विचार भूलौ नहीं अस्तमान जग जान।*
*सुष दुष हान न लाभ कछु जबहिं जगै दृग ग्यान।।*

यह तत्व की बात कि संसार नश्वर है कभी नहीं भूलना चाहिए। जब ज्ञान के चक्षु खुल जाते हैं तो सुख–दुख और हानि–लाभ आदि का प्रभाव नहीं पड़ता।

छंद– *यह सुन बोले कृष्ण चन्द्र तुम सखा ग्यान गुण जानत हौ।*
*जो खुलो मोक्ष को मार्ग उयै तुम भली भांत पहचानत हौ।।*
*सुनो मित्र ने ब्रजवालों संग लाग्यिो स्वच्छ विहार रचन।*
*विविध काम वस नार भेष धर आये जहां सब देव नचन।।*

यह सुनकर श्रीकृष्ण जी बोले कि हे मित्र, तुम ज्ञान के तत्व को जानते हो और मोक्ष के लिये जो द्वारा खुला हुआ है उसकी भी तुमको अच्छी तरह से पहचान है। फिर मित्र को सुना कर ब्रज के लोगों के लिये स्वच्छ विचार श्री कृष्ण जी के मन में आया, जहां पर अनेक देवता गण एक आकांक्षा लेकर वनिता वेश धारण कर नृत्य करने आये थे।

*विश्वनाथ गोपेश्वर होकें चन्द्रकला शश आये थे।*
*मोरे संग रहास मंडल में सुख अनेक सुर पाये थे।।*
*सो सषा जसोदा नंद राधका ब्रजवाल विरह दुष पाते हैं।*
*हम कह आये हते सोई आसा सब जीते हैं विलषाते हैं।*

भगवान विश्वनाथ अर्थात् शंकर जी भी चन्द्रकला सहित चन्द्रमा को धारण किये हुए वेश बदलकर वहां पधारे थे और अनेक देवताओं ने मेरे रहस मंडल की क्रीड़ा में सहभागी बन कर आनंद प्राप्त किया था। वे मित्रगण बाबा नंद, यशोदा माता, राधिका जी और ब्रज की बालायें वहां विरह के दुख में दुखी हैं। मैंने उनसे लौटने की बात कह दी थी उसी आशा में वे सब जीवित हैं और दुख भी भोग रहे हैं।

*वह उनकी सच्ची प्रीत देष इक क्षण भर मोय न भूलती हैं।*
*नीर हीन जिन दीन मीन ज्यों त्यों मो बिन वह कूलती है।*
*मोरे परम मित्र तुम, जाओ यह ग्यान कहौ विन्द्रावन में।*
*ब्रज वनता मोरो वियोग तज धीर धरें अपने मन में।।*



उनका सच्चा प्रेम देखकर एक क्षण मात्र के लिये भी वे मुझे नहीं भूलती हैं। जिस प्रकार पानी के अभाव में मछली की दयनीय स्थिति हो जाती है वैसे ही वे मेरे न होने पर पीड़ा में कराहतीं हैं। मेंरे प्रिय सखा तुम वहां वृन्दावन में जाकर यह अपना ज्ञान उनको सुनाओ ताकि ब्रज की ग्वाल बालायें भी मेरे वियोग से त्राण पाकर धैर्य धारण करें।

*कन्थ भाव तज देय राधिका पुत्र भाव जसुधा मईया।*
*मोकौई सुर सम मान भजन ब्रज करै ग्यान कहियो भइया।।*
*बनता सवै ब्रह्म आराधैं कहीयौ यह पाती दैकें।।*
*समझा सबै शीघ्र आ जईयो रोहन माता कों लैकें।।*

राधिका जी मेरे प्रति पति का भाव छोड़ दें और यशोदा माता पुत्र का भाव छोड़ दें और सभी स्त्रियाँ ब्रह्म की आराधना करें। यह पत्र देकर उन्हें समझा देना और उन्हें समझाने के बाद रोहणी माता को लेकर तुरंत वापिस आ जाना।

*क्रीट मुकट पीताम्बर बांधो प्रभु निजकर ऊधो तन में।*
*अपने रथ बैठार कृष्ण कह तात जाव विन्दावन में।।*
*चलत समय बलराम कृष्ण के भयो नीर नैनन जारी।*
*आंहै कछु दिन में संदेस यह कहियो ब्रज में गिरधारी।*

श्रीकृष्ण भगवान ने उद्धव जी को कुंडल, मुकुट पहनाये और अपने ही हाथों से पीताम्बर उनके शरीर पर बाँधा। अपने रथ पर बैठाकर कहा– भइया तुम अब वृन्दावन जाओ। उद्धव के चलते समय बलराम और कृष्ण दोनों के नेत्रों में आँसू बहने लगे। फिर कृष्णजी ने कहा कि तुम यह संदेश दे देना कि कुछ दिन बाद गिरध ाारी (कृष्ण) ब्रज में आयेंगे।

*कछु आभूषण भूषण देके प्रभु बोले मईयै दईयो।*
*छूवो चरन दोई मैइन कौ मुष तें पालागन कहीयो।।*

*कहियो भूल न जावैं मोकूं बैसई प्रेम प्रभाव करें।*
*वह क्षीमर कों क्षीर हमारौ निज कर भाव पिवाओ करें।।*

श्रीकृष्ण जी ने कुछ गहने–वस्त्र आदि वस्तुएं देकर कहा कि ये दोनों माताओं को दे देना और मेरी ओर से उनके चरण छूकर पालागन (पांय लागों) कहना। उनसे यह भी कहना कि मुझे भूल मत जाना और पहले की तरह स्नेह बनाये रखें। वह क्षीमर के दूध को अपने हाथ से उसी भाव से पिलाया करें।

*भाव सहित वह सेज हमारी मइया रोज लगाओ करें।*
*बैसई गाय बजाय भावतें तैसई अवै सुबाओ करें।।*
*प्रात होत वन की वेरा पर ओई भाव सुभाओ जगाओ करें।*
*ओई माखन ओई मेवा मिश्री ओई भाव तें भोग लगाओ करें।।*

माता जी हमारी शैया नित्य उसी भाव से लगाया करें और जिस प्रकार पहले गीत गाकर सुलातीं थीं उसी प्रकार सुलाती रहें। प्रातःकाल होते ही जंगल जाने के समय उसी भाव से जगाया करें और पहले की तरह मक्खन, मिश्री, मेवा आदि का प्रसाद जैसे मुझे खिलातीं थीं उसी प्रकार से खिलाया करें।

*राषैं सदा सकल सुध मोरी मइया तें कहियो भइया।*
*ल्यावे रोज षरग तें मोरे दरसन हित स्यामा गईया।।*
*निस दिन अपने हिय में राखें मूरत मोरी मन भर कें।*
*ऊसई बातें रोजई करहौं सपने में गोदी पर कें।।*

भैया उद्धव जी माता यशोदा से कहना कि मेरा सदैव सभी प्रकार से ध्यान रखा करें। उनसे कहना कि मुझे दर्शन कराने के लिये नित्य श्यामा गैया (काले रंग की गाय) को खिरक (पशुओं के बांधने का स्थान) से छोड़कर लाया करें। रात–दिन अपने हृदय में मेरे स्वरूप का मन से ध्यान करते हुए वहीं बनाये रखें। मैं स्वप्न में



उनकी गोद में लेटा हुआ पहले की तरह बातें करता रहूँगा।

दोहा – *जो जो मईया करत तीं सो सो करतई जांय।*
*सुध भूलें मन ते नहीं षवर न देह भुलाय।।*

माता यशोदा जो कुछ भी पहले नित्य किया करती थीं वैसे ही करतीं रहें मुझे स्मरण भी करतीं रहें मुझे कभी भूल न जांय।

छंद –*कहौ हार घुन्चू हिये झूलत भूलत ना कामर कारी।*

*लेत आईयो लकुट मात सें मुरली मोर परम प्यारी।।*
*वो गेंद बड़ी चौगान षेल की जो काली दह तें ल्याये थे।*
*लईयो मंगा मात से कहीयो श्री दामें दै आये थे।।*

मुझे अभी भी घुंघुचुओं (गुंजा–एक बेल का फल) का हार हृदय पर झूलने लगता है और काली कंबल कभी नहीं भूलती। माता यशोदा से मेरी छड़ी और मेरी परम प्रिय बाँसुरी भी लेते आना। वह गेंद भी ले आना जो चौगान खेलने की थी उसे मैं कालिया दह से लाया था, माता जी को बता देना कि वह गेंद मैं श्रीदामा (एक सखा) को देकर आया था उससे मांग कर भेंज दें।

*वह प्रेम भरी सुन बान ग्यान उद्धव के सरमाते हैं।*
*मनहु नेह धर देह प्रीत को भाव संदेस भिजाते हैं।*
*उद्धव जी कर जोर कहें मैं सब तरह उन्हें समझाऊँगो।*
*थोड़े दिना वृन्दावन रहकें शीघ्र शरण में आऊँगो।*

प्रेम का वह माधुर्य स्वरूप सुनकर उद्धव जी का ज्ञान लज्जित हो गया। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो स्नेह स्वयं स्वरूप धारण कर भाव रूपी संदेश भेज रहा हो। उद्धव जी हाथ जोड़ कर बोले कि मैं उन्हें सब तरह से ज्ञान सिखा कर तथा कुछ दिन वृन्दावन में निवास कर शीघ्र ही आपकी शरण लौट आऊँगा।

*ब्रज मग कों रथ बढ़ा चले फिर पकर लयो मोहन आकें।*
*भूले नहीं हमें सुख ब्रज कौ कह दइयो जा समझा कें।।*
*जा दिन ते सब बृज बनतन तज बिछरो मैया मैं तोतें।*
*ता दिन ते कहीयो कोउ ऊधौ कहात कन्ईया नई मोतें।।*

ब्रज के मार्ग पर जैसे ही उद्धव जी का रथ आगे बढ़ा कि कृष्ण जी ने पुनः उसे रोक लिया और बोले–तुम अच्छी तरह सबको समझाकर कहना कि मुझे ब्रज का सुख–आनंद किसी प्रकार भी भूला नहीं है। उद्धव जी माता यशोदा से भी कहना कि जिस दिन से मैंने ब्रज की बालाओं को छोड़ा है और आपसे विछोह हुआ है तबसे कोई मुझे 'कन्हैया' कहने वाला नहीं मिला।

*पाल पोष तुम दोऊ भइयन को करें रये निज नैनन में।*
*हमने सेवा कर ना पाई है यही सोच भारी मन में।।*
*रिणियां बने बंधु दोऊ तोरे मात नेह के दावा सें।*
*कोटन जन्म उरण नहीं तुमतें कह दईयो नंद बाबा सें।।*

आपने जितने स्नेह से हम दोनों भाइयों का पालन–पोषण करके बड़ा किया और जैसे आँखों में सम्हाले रहीं उसके बदले में हम आपकी सेवा नहीं कर पाये यही चिंता मन में लगी रहती है। हम दोनों भाइयों के ऊपर माता के स्नेह का ऋण बना हुआ है और नंद बाबा से भी कहना कि करोड़ों जन्म लेकर भी हम तुम्हारा ऋण नहीं चुका सकते।

दोहा – *भक्त मुक्त मैं दै चुको चार पदारथ हाल।*
*उरिण नहीं रिन में रह्यो तोसों तोरौ लाल।।*

('प्रेम पयोधि' के छंद श्री बृजगोपाल घोष से प्राप्त)

मैंने भक्ति के फलस्वरूप चारों पदार्थों (अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष) को तो पहले ही दे दिया है, किन्तु वात्सल्य के नेह से तुम्हारा पुत्र तुम दोनों के ऋण से कभी मुक्त नहीं हो सकता।



## पंचम सिंह श्रीवास्तव (खरे)

बुन्देलखण्ड के इस महान शब्द शिल्पी महाकवि पंचम सिंह श्रीवास्तव (खरे) का जन्म टीकमगढ़ (म.प्र.) जिले के ग्राम भेलसी में मार्गशीर्ष कृष्णा तृतीया सम्वत् 1954 (सन् 1897 ई.) में हुआ इनके पिता लाला सोवरनसिंह सिद्धस्त तांत्रिक राजवैद्य और एक अच्छे कवि थे। ये ओरछा नरेश प्रताप सिंह के आश्रय प्राप्त राजवैद्य थे। पितामह लाला गुपाल सिंह पन्ना नरेश के दरबारी कवि और राजवैद्य थे व प्रपितामह लाला माधौसिंह शाहगढ़ नरेश महाराजा बखतबली शाह के यहाँ राजकवि–राजवैद्य खास कलम ड्योढ़ी अफसर आदि सम्मानित पदों पर प्रतिष्ठित थे। इस प्रकार कहा जा सकता है कि महाकवि पंचम की काव्य प्रतिभा वंशानुगत उपलब्धि है।

पंचम की प्रारम्भिक शिक्षा खरगापुर में सम्पन्न हुई इसके बाद इन्होंने घर पर ही हिन्दी– उर्दू – फारसी का अध्ययन किया तथा वयस्क होने पर राजस्व विभाग में नौकरी कर ली। उन्नीस वर्ष की अवस्था में इनका विवाह पुक्खन देवी नामक एक सुशील कन्या से हुआ।

78 वर्ष की आयु तक समाज शिक्षा और संस्कृति की निःस्वार्थ

सेवा करते हुए बुन्देलखण्ड का वह जाजुल्यमान नक्षत्र अपने पीछे भरा–पूरा परिवार छोड़ भाद्रपद शुक्ल द्वितीया सम्वत् 2032 (1975 ई.) को सदा के लिए अस्त हो गया।

महाकवि पंचम के 12 वर्ष की आयु से कविता लिखने के प्रमाण मिलते हैं इनकी दो–एक लघु रचनाओं के अतिरिक्त शेष साहित्यिक कृष्ण की बहुरंगी झांकियों से बिम्बित हैं। इस महान शब्द शिल्पी को सन् 1942 में नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी ने 'महाकवि' की उपाधि से विभूषित किया एवं साहित्यिक सभा के सदस्य के रूप में अंगीकार किया।

इनकी रचनाओं में 'श्यामायन' प्रबंधकाव्य, 'कवित्त संग्रहावलीं', 'द्रोपदी पच्चीसी', 'अंगद चालीसा', 'ऊदल का विवाह', 'गजलों का गुलदस्ता' तथा 'बुन्देलखंडी गीत मंजरी' अप्रकाशित है। प्रकाशित रचनाओं में 'वाटिका विहार' तथा 'पीतपट पचासा' है।

## सवैया

*जानकी राम कौ रूप विलोक–सो बाबरी बात विचारत नाही।*
*मूरत सो हिय बीच सम्हार–धरी है विचार कियौ मनमाही।।*
*झाँप दृगन्चल सोच रही–हम कैद करें प्रभू जात कहांही।*
*'पंचम' आली विसारत सो सुधि–देर भयौ पल टारत नाही।।*

(सौजन्य : भान सिंह श्रीवास्तव)

सीता ने राम का रूप देखा तो पागल सी होकर कोई बात नहीं सोच पाती। उस मूर्ति को अपने हृदय के मध्य स्थापित कर मनमाने ढंग से विचार करने लगी। बिना पलक झपकाये, वह देखती रह गई जिससे लगता है कि सोच रही हों कि हम प्रभु को कैद



करके ही रहेंगे। वे कहाँ जा रहे हैं? पंचम कवि कहते हैं कि सखी ने देखा कि सीता सुख–बुध खो पलकों को बिना झपकाये लगातार देख रही हैं, तो टोक दिया।

## कवित्त

*बाजी कहै बाजी से बतावैं बाजी बाजीखड़ी,*
*बाजी चली आबैं देती सूरत इसारे की।*
*बाजी कहें हमें तो सुनावौ बाजी बात कैसी*
*बाजी कहें ठेरौ बात बड़े घर वारे की।।*
*'पंचम' सो बाजी कहैं जातौं बड़ी साजीबात,*
*बाजी कहें हाँजी लागी लगन पधारे की।*
*बाजी कहै मैं तो सुन आई कै सगाई होत,*
*राधिका किशोरी और पीत पटवारे की।।*

(सौजन्य : भान सिंह श्रीवास्तव)

एक सखी दूसरी सखी से बात कर रही है और कुछ सखियाँ खड़ी हैं एवं कुछ वहीं इशारे पाकर चलीं आ रही हैं। एक सखी कहती है कि रुक जाओ यह बात बड़े घरवाले की है। पंचम कवि कहते हैं कि एक सखी कहती है कि यह तो बड़ी अच्छी बात है। तो दूसरी सखी हाँ में हाँ मिलाते हुए कहती है कि मैं सुनकर आ रही हूँ कि राधिका और पीताम्बर कृष्ण की सगाई हो रही है।

*बालिदस्य भाल से भुआल काल जाल में,*
*गय चित्त की भरी ही बात चित्त में भरी रही।*
*दीप दीप दीप सो दिलीप का जला था वा चला था,*
*मानधाता के पताका की खरी रही।।*
*गंगपुत्र ज्ञानी बागुमानी दुर्योधन गय,*
*'पंचम' कह भारत में पारथ की तरी रही।*

*ऐसे भय धबल्ल धरा आपनी बताय धाय,*
*धरा में धसे हैं धरा धरा धर धरी रही।।*

(सौजन्य : भान सिंह श्रीवास्तव)

बलि और दसशीश (रावण) जैसे पराक्रमी राजा भी काल के जाल से नहीं बच सके उनके मन में जो बहुत करने का था वह मन में ही रह गया। धरती पर अनेक द्वीपों में जिस महाराजा नाम के दीपक जलते और जिनके ध्वज का सम्मान सदैव रहा ऐसे पराक्रमी और ज्ञानवान गंगापुत्र भीष्म भी चले गये और अभिमानी दुर्योधन नहीं बच सका। पंचम कवि कहते हैं कि भारत में अर्जुन जैसे महान धनुर्धारि और बलवान अनेक योद्धा जिनका भय सर्वत्र था वे सब इस धरती को अपनी बता रहे किन्तु इसी धरा में समा गये। यह धरा (धरती) किसी की नहीं हुई। यह धरती (पृथ्वी) यहीं जहाँ–तहाँ बनी रही।

*बेटी भ्रषभान कीरी आन भ्रष भान की है,*
*आज मान वान कान संग प्रीत पालौ ना।*
*वदन मयन्क सौ दुरौ रहे दुकूल मध्य,*
*चंचल द्रगंचल कर अंचल सम्हालौ ना।*
*पंचम प्रतीत राख छांड़रस रीत वेंन,*
*बेनहूँ सुधासे सुधाकर से निकालौ ना।*
*जोंलों गिरधारी गिरधारें सुन प्यारी तौलों,*
*कठिन कटाक्ष कोर वोर बाकी घालौ ना।।*

(सौजन्य : भान सिंह श्रीवास्तव)

हे राधा! तुम वृषभान की पुत्री हो और तुममें हठ की तीव्रता वृष राशि के सूर्य की तरह है। तुम आज यह बात मान लो कि कन्हैया (श्रीकृष्ण) के साथ प्रेम न करो। चन्द्रमा के समान तुम्हारा सुन्दर मुख साड़ी के महीन कपड़े के बीच ढका रहे अब आँख की



चपल पलकों को धोती के पल्लू (छोर) से मत सम्भालिये। कवि पंचम कहते हैं कि विश्वास हृदय में रखिये और औपचारिक रसीली वाणी को छोड़ दीजिये। तुम्हारे वचन अमृत के समान है इन्हें चन्द्रमा रूपी मुख से मत निकालिये। हे राधे! जब तक श्री कृष्ण जी गोवर्धन पर्वत धारण किये हुए हैं तब तक तुम अपने बांके नयनों की कोर से कटाक्ष का प्रहार मत करना।

## सवैया

*लाड़ली लाल किलोलन में, अनमोलन अंकन जोरन की है।*
*है मणि की मुशक्यान लखौ मुकतान की नासा सकोरन की है।।*
*पंचम हाँसी हजारन की छवि हीरन की मुख मोरन की है।*
*लाखन की लिपटान कटाक्ष–कटीली की क्रेल किरोरन की है।*

(सौजन्य : भान सिंह श्रीवास्तव)

श्री राधा और कृष्ण जी (लाड़ली–लाल) के आनंद विहार में अत्युत्तम अंगों के क्रियाकलापों के दर्शन अनमोल हैं। उनकी मुस्कान के दर्शन मणियों से अधिक मूल्यवान और नासिका का सौन्दर्य मुक्ताओं से ही आंका जा सकता है। पंचम कवि कहते हैं कि उनकी हँसी की शोभा हजारों में और मुख के मुस्काने का सौन्दर्य हीरों में आंका जा सकता है। उनके आलिंगन के लावण्य पर लाखों और बांकी चितवन तथा विविध क्रीड़ाओं पर करोड़ों निछावर हैं।

## कवित्त

*क्यारी फुलवारी ना दिखाती है सुगन्धवारी,*
*हौवेगो नाही तू मनमौज मस्तानी है*
*कैसौ भओ आनो फिरै घूमत भुलानो,*
*कहत पंचम नही ये गुलरूह गुलश्तानो है।।*
*कुंज कुबजा की मथुरा में अवलोक जाय,*
*खूबियाँ खुलासा खुशवोय कौ खजानौ है।*

*बाबरे मलिन्द मतिमन्द भाग भाग हाँ से,*
*मिलैना पराग ये तौ बाग बीरानो है।।*

(सौजन्य : भान सिंह श्रीवास्तव)

हे भ्रमर! फूलों की क्यारियों में फूल तो हैं किन्तु उनमें सुगंध नहीं दिख रही। यहाँ अब मौज मस्ती (आनंद विहार) की उमंग नहीं है। पंचम कवि कहते हैं तुम यहाँ कैसे आये और भूले से घूम रहे हो? यह कोई गुलरुह गुलश्ताना नहीं है। तुम मथुरा में स्थित कुब्जा के कुंज को देखकर आओ, वहाँ अच्छाइयाँ हँसती मिलेंगी और सुंगध का भंडार मिलेगा। हे बुद्धिहीन! पागल! भ्रमर यहाँ से भाग जा, यह बाग उजड़ गया है यहाँ पराग भी नहीं मिलेगा।

*कारे होत काग और कोयल कुरंग कारे,*
*– कारे नाग होत दगाबाज मनमाने हैं।*
*कारे होत मेघ बाट रोकत बटोहन की*
*– पंचम विथा में गड़गड़ात देत ताने हैं।।*
*कारे मलिन्द गुल चूस के न आवैं पास*
*– ऊधौ सुनो कारे होत कपट खजाने हैं।*
*हारे हम कारे सें हैं होत ठगहारे कारे*
*– कारे ने पठाये कारे रंग परवाने हैं।।*

(सौजन्य : भान सिंह श्रीवास्तव)

कौवा काले होते हैं कोयल और हिरन भी काले होते हैं, नाग भी काले होते हैं, ये सभी धोखा देने वाले होते हैं। पंचम कवि कहते हैं कि बादल भी काले होते हैं ये व्यर्थ में गर्जना करके मार्ग में राहगीरों को रोक देते हैं। काले भ्रमर पुष्प का रस चूसकर पुनः उसपर वापिस नहीं आते। इस प्रकार हे उद्धव जी! काले सभी कपट के भंडार होते हैं। हम काले लोगों में पराजित हो चुके हैं। सभी काले ठगने वाले होते हैं। एक कारे ने ही दूसरे कारे को वाहक बनाकर



यहाँ भेजा है।

*डारिये रंगलला मन को गिरधारी जू सारी भिजोय सो लीजे*
*लीजे लगाय गुलाल लला अब जो मन आवै मनोहर कीजे*
*कीजिए फाग में हाजिर हूँ – कह पंचम प्यारे जराहू पतीजे*
*जो करन सब आप करौ हुरयोरन में हमें सोंप न दीजे।*

(सौजन्य : भान सिंह श्रीवास्तव)

हे नंदलाला! तुम अपने मन भरकर रंग डाल लो और मेरी साड़ी अच्छे से भिगा दो। मुझे अपने हाथों से गुलाल भी लगा लीजिये और हे मनमोहन! तुम जैसा अच्छा लगे सो कर लो। मैं उपस्थित हूँ कोई कमी मत रखो, जो करना है वह आप स्वयं करो किन्तु उन होरी के हुरियारों (होली के मद में मदहोश उत्पाती जनों) को न सौंपियेगा।

*दांमनी दमंके ज्वाल धूमसे धुकोरे धरा,*
*दाबानल कालका कराल घमशान है।*
*चड़चड़ात झड़झड़ात तड़तड़ात लूमें लेत,*
*झूंमें झार यैंसें जैसे प्रलय के निशान हैं।।*
*दीखत न दाव सो उपाव और औरत ना,*
*पंचम पुकारे ब्रजवासी कहां कान हैं।*
*आन तुम्हें नन्द की बचाय लीजे प्रान,*
*चारों ओर चार भान कैधो क्रोध में कृशान हैं।।*

(सौजन्य : भान सिंह श्रीवास्तव)

दावाग्नि (जंगल में लगने वाली अग्नि) कालिका के समान प्रचण्ड और भयंकर रूप में प्रकट हुई। बिजली–सी चमक रही है। अग्नि शिखा (आग की लपटें) ऊँचाई तक उठ रही हैं। धुँआ धरा पर गहरा छा गया है, धड़धड़ाहट हो रही है। सूखी लकड़ियों के टूटने

की चड़चड़ाहट और कुछ पेड़–झाड़ जलने गिरने की भयंकर झड़–झड़ाहट की ध्वनियाँ हो रही है। ज्वाला ऊँचाई तक लूमें ले रही है। पंचम कवि कहते हैं कि न तो किसी को कोई उपाय सूझता है न कोई बचाव का मार्ग मिलता है। ब्रज के लोग जोर–जोर से चिल्ला रहे हैं कि कन्हैया कहाँ है? कहाँ है? तुम्हें नन्द बाबा की सौगंध है हमारे प्रान बचा लो, यह अग्नि इतनी क्रोधित है मानों चारों ओर से चार सूर्य निकट आ गये हों।



## राजाराम शुक्ल 'रत्नेश'

छतरपुर में व्यास मंडल के प्रमुख कवि पं. राजा राम शुक्ल जी फाग–सैरों के साथ–साथ कवित्त, घनाक्षरी, सवैया आदि की रचनाओं द्वारा साहित्य की प्राचीन परम्परा को जीवित रखने वाले अनूठे कवि के रूप में जाने जाते हैं। आपका जन्म भाद्रपद शुक्ल सप्तमी संवत् 1955 को छतरपुर (म.प्र.) में हुआ था। प्रतिष्ठित सनाढ्य कुल में जन्में राजाराम शुक्ल की शिक्षा घर पर ही हुई। लोहे का व्यवसाय उनके जीवन–यापन का साधन था।

संघर्ष भरे न्यायप्रिय कर्मठ जीवन के द्वारा उन्होंने समाज में प्रतिष्ठा पाई। समाज के पंच अथवा मुखिया के रूप में उन्हें विशेष रूप से जाना गया। सामाजिक समस्याओं अथवा व्यक्तिगत समस्याओं को सुलझाने में वे नगर के अग्रगण्य महाजन के रूप में प्रतिष्ठित थे।

चेहरे की गम्भीरता, लम्बा इकहरा शरीर, गेहुँआ रंग और साधारण धोती–कुरता का पहनावा ही उनके व्यक्तित्व की छाप थी। सहजता, सरलता और सहृदयता ही उनकी विशेषता थी।

बुन्देली फड़ साहित्य में सैर सर्जक के रूप में कवि रत्नेश

व्यास मण्डली के प्रमुख स्तम्भ रहे। सैर–प्रतियोगिताओं के क्षणों में कवि की आशुकाव्य–प्रतिभा ही आवश्यक होती है। गायन में विषय या संदर्भ मिलते ही कलम से सृजन प्रारंभ हो जाता है। कवि रत्नेश में यह आशु–कवि की प्रतिभा बड़ी विलक्षण थी। श्री रत्नेश जी ने रीतिबद्ध ब्रजभाषा काव्य और लोकगीतों सहित बुन्देली काव्य को भी अपनी रचनाओं में स्थान दिया। घनाक्षरी, सवैया, पद एवं लोकगीतों को उन्होंने अपने भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। लोकगीतों में सैर नामक छंद उन्हें विशेष प्रिय रहा।

घनाक्षरियों और सवैयों में कृष्ण–लीला ही प्रमुख है। अतः श्रृँगार रस और भक्ति भाव की प्रधानता मिलती है। पदों में उनकी भक्ति भावना के विविध रूप देखने को मिलते हैं। सैरों की रचना उन्होंने अधिक संख्या में की है। संख्या में ही यदि देखा जाय तो दूसरा स्थान, बुन्देली काव्य में विशेष प्रचलित 'फाग' छंद को है। इन फागों में रसिक–हृदय का प्रणय निवेदन और विरहानुभूति के भावों की अभिव्यक्ति विशेष रूप से मिलती है।

## सैर

*दोहा –* *सब सिंगार वर नार कर बैठी भवन मंझार।*
*वेसर पहिरत ना बने कवि जन करौ विचार।।*

*सैर –* *लेकर सुवाल वारि विमल कमल मृणाली*
*कर मज्जन ततकाल वाल चाल उताली*
*केसर कपूर अंबर लै अंगहि डाली*

*टेक –* *वेसर न बनै पहरत किहिं कारन आली.....*
*तर अतर में सुगन्ध केश घूंघर वाली*



*सज कें सकल सिंगार अंग झलके लाली.....*
*वेसर न बनै पहिरत..... ।।*
*वानल वनाम कही रंग गज गति वाली*
*शोभा अनूप नारि मनौ सांचे ढाली*
*वरनन करैं कहाँ लौ का दैय मिसाली.....*
*वेसर न बनै पहिरत ..... ।।*

*रतनेश पै प्रसन्न सदा है वनमाली*
*है स्वर्ण में सुगन्ध चन्द्र छटा निराली*
*नायका और अलंकार कहना हाली.....*
*वेसर न बनै पहिरत ..... ।।*

एक उत्तम नायिका सम्पूर्ण श्रृँगार करके भवन के मध्य में बैठी हुई है। उससे नथ पहिनते नहीं बन रहा है। कविजन इस समस्या का समाधान करें।

सुन्दर यौवना ने अपने मनोहर कमलनाल के समान हाथों से जल लेकर शीघ्रता से स्नान किया और केसर कपूर तथा अंबर (एक सुगंधित द्रव्य) अपने शरीर पर डाल लिये हैं किन्तु क्या कारण कि उससे नथ पहनते नहीं बन रहा है ?

इत्र आदि सुगंधित द्रव्यों को लगाये हुए सुंदर घुंघराले बालों वाली नायिका सभी श्रृँगार किये हुए हैं। उसके अंगों से लालिमा झलक रही है किन्तु क्या कारण है कि उससे नथ पहनते नहीं बन रहा है?

श्यामा तुलसी के समान आकर्षक रंग वाली और हाथी के समान मंथर गति वाली उस नायिका के साँचे में ढले से अंगों की अनुपम शोभा दर्शनीय है। कवि कहता है कि मैं उसकी कौन–कौन सी उपमायें देकर वर्णन करूँ किन्तु नथ उससे पहिनते नहीं बन रहा है, क्या कारण है?

कवि रत्नेश पर भगवान कृष्ण सदा प्रसन्न रहते हैं। स्वर्ण में सुगंध की तरह उस नायिका की शोभा अनुपम है। नायिका और अलंकार को विवरण सहित बतायें। (अखाड़े में दूसरे पक्ष से इसी प्रकार प्रश्न प्रतियोगिता हेतु किये जाते थे)

## सैर

*दोहा –* *पूंछत हौं लघु प्रश्न तुम, सुनहू खोल निज श्रोन।*
*स्वयं दूतिका संग की, होत नायका कौन।।*

*सैर –* *नहिं वीर तीर कोऊ का करो चाइये*
*समसीर सम समीर हियें न लगाइये*
*नाकर अधीर धीर तीर न छुड़ाइये*
*मम मीत पौन भौन मंद मंद आइये.....(टेक)*
*विरहा के ज्वाल धधकत कैसें सिराइये*
*पंखा न पास कैसें मन शांति पाइयै*
*आवन की आस लागी दरसन कराइये।*
*मम मीत पौन.....।।*
*तब हेत खोल राखी खिरकी हवाइये*
*तन अतनु तपन कान आन कैं बुझाइये*
*कीजै उताल गौन लाल सीस नाइये।*
*मम मीत पौन.....।।*
*सावन की रैन श्याम घटा सैं बचाइये*
*नायका भेद मजलिस में कह सुनाइये*
*रतनेश नये नये नित सैर गाइयै।*
*मम मीत पौन.....।।*

मैं छोटा सा प्रश्न पूँछता हूँ कान खोलकर सुनो, स्वयं दूतिका के साथ कौन सी नायिका होती है।



कोई नायक निकट नहीं है फिर क्या करना उचित है। वाणों के समान तीक्ष्ण हवा के झोकों को हृदय में मत मारो। मुझे बेचैन मत करिये। मेरा धैर्य का किराना मत छुड़ाइये। मेरे प्रिय (हितैषी) पवन धीरे–धीरे भवन के भीतर प्रवेश करो।

विरह की धधकती ज्वाला का कैसे शमन हो? पंखा पास न होने पर कैसे शान्ति मिले? प्रियतम के आने की आशा लगी है कृपया तुरंत दर्शन करायें। हे प्रिय पवन! भवन के भीतर–धीरे प्रवेश करो?

तुम्हारे लिये यह खिड़की खोल कर रखी है। कामदेव की ज्वाला से तप्त देह की तपन को हे कृष्ण! आकर शान्त करो। मैं नमन करती हूँ शीघ्र इस ओर प्रस्थान कीजिये।

सावन की काली रात्रि और घनघोर काली घटा से मेरी रक्षा कीजिये। (पुनः कवि दूसरे पक्ष से कहता है) सभा में इस नायिका का भेद बताइये। रत्नेश कवि नये–नये सैर बनाकर नित्य गाते हैं।

## सैर

दोहा *–जेते नार श्रृंगार सखि कीन्हें कर कर ख्याल।*
*मृग मद की वैंदी सुक्यों देत भाल नहिं वाल।।*

सैर *–अंग अंग में विभूषन रुच रुच सम्हालना*
*है झलक रही जौवन की जोत जालना*
*जगमगत है जवाहर की कंठ मालना*
*मृगमद की भाल वैंदीं क्यों देत वाल ना.....।।टेक।।*
*चह चह चारु चंदन को लेप डालना*
*अरगजा अंग रागन केसर कमालना*
*दुति देह की सुरंग कंज सें मिसालना*
*मृग मद की भाल वैंदी.....।।*

*मन रंजन दृग खंजन की है मजालना*
*गति गज की गइ भूल देख वाल चालना*
*रति रूप से अनूप तिया अजब ढालना।*
*मृग मद की भाल वैंदी.....।।*
*नैनन के वान तान तान करो घालना*
*रतनेश कहै दुसमन की गलै दालना*
*कवि कोष देख उत्तर देना उतालना।*
*मृग मद की भाल वैंदी.....।।*

नारियोचित सभी श्रृँगार नायिका ने पूरी तरह ध्यान करके कर लिये हैं किन्तु क्या कारण है कि वह कस्तूरी की बेंदी माथे पर नहीं लगाती? (अखाड़े की प्रतियोगिता में दूसरे पक्ष के लिये प्रश्न है)

प्रत्येक अंग के आभूषणों को मनोयोग से यथास्थान सजा रही है। यौवन की आभा का प्रकाश बिखर रहा है। जवाहर की गले माला जगमगा रही है। क्या कारण है कि वह कस्तूरी की बेंदी माथे पर नहीं लगाती?

सुन्दर चंदन, केसर, कपूर आदि से बना अरगजा (सुगंधित द्रव्य) का अंगों पर लेप करने से यौवना का पूरा शरीर ऐसा दैदीप्यमान है कि उसकी उपमा कमल से भी नहीं दी जा सकती। क्या कारण है कि वह कस्तूरी की बेंदी धारण नहीं करती?

उसके चंचल नेत्रों की बराबरी खंजन पक्षी के नेत्र भी नहीं कर पा रहे हैं। हाथी की चाल भी उसकी मंदमंद गति से बराबरी नहीं कर पा रही। रति के रूप सौन्दर्य से भी अधिक उसकी सुन्दरता दिख रही है। फिर क्या कारण है कि वह कस्तूरी की बेंदी धारण नहीं करती?

कवि रत्नेश कहते हैं कि नयनों के बाणों से घायल न करो।



अब इस विपक्ष की नहीं चल पा रही है। (फिर वह प्रश्न दुहराता है कि) अपने साहित्य के कोष में देखकर शीघ्र ही उत्तर दो कि वह यौवना कस्तूरी की बेंदी माथे पर क्यों नहीं लगा रही ?

*पावै कहूं फागुन में सांवरे सलौने तोहि,*
*पीत पट छोर मोर पंख हूँ उतारेगी।*
*चूनरी पिन्हाय दैकें बेंदी वर भाल हूं में,*
*नैनन अंजाय तन कंचुकी सुधारेगी।।*
*आप लैकें मुरली बजाय संग प्यारे तब,*
*तोही कौं नचाय है औ होरी है उचारेगी।*
*हाथ जोरिआयै तोहू मार पिचकारिन के,*
*देखत ही बाल लाल लाल कर डारेगी।।*

हे सांवले सुन्दर कन्हैया! यदि फागुन में राधिका जी को तुम मिल गये तो वह तुम्हारा पीताम्बर और मोर मुकुट उतार अलग रख देंगी फिर चुनरी पहिराकर माथे पर बिन्दी लगायेगी। आंखों में काजल लगायेगी और बदन पर सम्हालकर चोली भी पहना देगी। आपसे मुरली छुड़ाकर स्वयं बजायेंगी और आपको नचाते हुए 'होरी है', 'होरी है' बोलेंगी। आप कितने ही हाथ जोड़ो लेकिन वह छोड़ेगी नहीं बल्कि पिचकारी की मार से पूरे तन को लाल रंग से सराबोर कर देगी।

*मन भावन आवन औध गई सजनी कछु मोहिं सुहाये नहीं।*
*उनये नहीं नेह के मेह उतै पिक मोरन शोर मचाये नहीं।*
*वरसावत नैन घटा नित ही इत सें रितु पावस जाये नहीं*
*मग भूल गये रतनेश कहें घनआनंद आज लौ आये नहीं।*

हे सखी! प्रियतम के आने की अवधि निकल गई है इसलिये मुझे कुछ अच्छा नहीं लग रहा। ऐसा प्रतीत होता है कि वहाँ नेह के बादलों का उदय नहीं हुआ इसलिये कोयल और मोरों ने अपना राग

नहीं अलापा होगा। यहाँ तो घटा रूपी नेत्र प्रतिदिन पानी बहाते रहते हैं इसलिये यहाँ से तो वर्षा ऋतु कभी जाती ही नहीं है। लगता है प्रियतम इस ओर का रास्ता भूल गये हैं। इसी कारण श्री कृष्ण आज तक यहाँ नहीं आ सके।

*प्रथम समागम की धौंस जान चन्द्रमुखी,*
*सुखी सब भांत पै दुखी सी परत है।*
*सांझ होत सास के समीप जाय बैठी बाल,*
*हाल निज जी कौ नहीं नेक उचरत है।*
*पिय परछाई के परत पर जात पीरी,*
*धीरी धीरी श्वासन ते आहन भरत है।*
*शिशिर दली सी कैधों मोहन छली सी,*
*रतनेश त्यों कली सी लली सी सी करत है।।*

प्रथम मिलन के डर से दुखी सी दिखाई पड़ रही नायिका मन में पूरी तरह से प्रसन्न है। सायंकाल होने पर अपनी सास के पास बैठ जाती है किन्तु मुँह से मन का कोई हाल नहीं कहती। प्रियतम की केवल छाया पड़ने से ही पीली सी पड़ जाती है (डरी हुई सी दिखने लगती है) और धीरे धीरे आहें सी भरने लगती है। कवि रत्नेश कहते हैं कि कली सी नवयौवना शीत के प्रकोप से व्यथित की तरह अथवा मोहित हो धोखे से पीड़ित होने की तरह सी–सी शब्द धीरे–धीरे होठों से निकालती है।

*पौढ़ी परयंक प्राण प्यारी प्रान प्यारे संग,*
*केलि की उमंग युग्म प्रेम उच्च कोटि के।*
*गल भुज मेलि मेलि लंकन सों ठेलि ठेलि,*
*रति की उलेल रतनेश अंग जोटी कै।।*
*नेह सरसाने नैन नींद भर आने कछू,*
*श्रवन सुनाने बैन गजर बजोटी के।*



*हाय कर सिसक सकानी सी जकानी जबै,*
*लागे करें खोटी ये पखेरु लाल चोटी के।।*

प्राण प्रिया प्रियतम के संग पलंग पर लेटी हुई है। दोनों के हृदय में प्रेम का उत्तम भाव है और काम कला–क्रीड़ा का उत्साह भरा हुआ है। बार–बार गले में बाँह डालकर और कमर से बार–बार ढकेलते हुए काम क्रीड़ा कर रहे हैं। काम क्रीड़ा के प्रवाह की तीव्रता अंग–अंग में बराबरी से प्रवाहित थी। नेत्र प्रेम–रस से रसपूर्ण हो गये। हल्की नींद का भी आभास होने लगा। तभी (पहर–पहर पर बजने वाले घंटों में) प्रातः काल का घंटा कानों को सुनाई दिया जिससे वह हाय सहित सत्कार कर सशंकित हो भौचक्की सी हो गई, तुरन्त बाद लाल चोटी वाले पक्षी अर्थात् मुरगा ने बांग देना शुरू कर दिया (नायिका को यह खोटा अर्थात् बुरा लगने लगा)।

*लग गये निरमोही सों नैना, कहतन कछू बनैना*
*कलन समान दिवस निस बीते कैसउं चैन परैना।*
*कह दो जाय पतंग कीट सौं दीपक संग जरैना।*
*कह रतनेश प्रीति इक अंग की कोऊ भूल करैना।*
*निरमोही के निठुर नेह की कबहुं प्रतीत धरैना।।*

नायिका कहती है कि मुझे निर्दयी से प्रेम हो गया, अब अपना कष्ट किसी से कुछ कहते नहीं बनता। ग्रहण लगने की तरह रात और दिन बीत रहे हैं, किसी प्रकार शान्ति नहीं मिलती। (नायिका कहती है कि) कीट–पतंगों को मेरा संदेश दे दो कि वे दीपक की लौ पर अपने प्राण न दें। कवि रत्नेश कहते हैं कि भूलकर भी कोई एक पक्षीय प्रेम न करे। कठोर हृदय वाले व्यक्ति के प्रेम का कभी भी विश्वास नहीं करना चाहिये।

*होरी खेलत महल मझारी श्री बांकुरे बिहारी।*
*ललता सखी विसाखा संग में श्री वृषभानु दुलारी।।*

*प्रेम रंग पिचकारी भर कर तक मारी गिरधारी।*
*सारी भइ सरबोर प्रिया की बहु अमोल जरतारी।।*
*तब राधे ने बुला गोपियन हुकम कर दयो जारी।*
*पकर लेव आतुर आली यह छलिया छेल बिहारी।*
*सखी भेष कौ साज सजा दो कर दो नर से नारी।।*
*कह रतनेश फाग मैं बरनी लीला ललित बिहारी।।*

महल के बीच में श्रीकृष्ण होली खेल रहे हैं। दूसरी ओर ललता और विसाखा सखी के साथ वृषभानु नन्दिनी राधिका जी है। स्नेह सहित पिचकारी में रंग भरके श्रीकृष्ण ने राधिका जी को निशाना बना कर घाल दी। अनमोल धागों से जड़ी साड़ी रंग से पूरी तरह भीग गई। तब राधिका जी ने सभी सखियों को आदेश दिया कि शीघ्र ही इस छलिया कृष्ण को पकड़ लो और सखी का अर्थात् नारी का पूरा भेष बनाकर पूरी तरह नर से नारी बना दो। कवि रत्नेश कहते हैं कि मैंने लीलाधारी कृष्ण के फाग की लीला का वर्णन किया है।

*बरसाने बीच मची होरी, जइयो जिन भूल उतै गोरी।*
*मनचाई कर लेय मुरारी सारी करदें सरबोरी।।*
*मेलत गाल गुलाल लाल जू वीर अबीर भरैं झोरी।*
*काहू की बरजी ना मानै पकर लेत कर बरजोरी।।*
*मन भावन मन बांध लेत है डार प्रेम रंग की डोरी।*
*चंचल चतुर चलांक चोर है कर लैहै चित की चोरी।।*
*पछतैहै जो मान न लैहै हो जैहै फजियत कोरी।*
*कहैं रतनेश राग रसिया में सरस फाग नव रस बोरी।।*

(समस्त छंद सौजन्य से : श्रीयुत श्रीनिवास शुक्ल)

एक सखी दूसरी से कह रही है कि बरसाने के बीच में होली खेली जा रही है वहाँ भूलकर भी नहीं चली जाना। वहाँ कृष्ण कन्हैया



अपने मन की कर लेता है और साड़ी पूरी तरह भिगो देता है। किसी के मना करने पर नहीं मानता, जबरदस्ती वह हाथ पकड़ लेता है, थैले में अबीर–गुलाल भरे हैं सो गालों में खूब लाल–लाल गुलाल मल देता है। इसके साथ ही स्नेह की डोर से वह मनमोहन मन को बांध लेता है (बस में कर लेता है)। वह ऐसा नटखट, बुद्धिमान और चालबाज चोर है कि तुरंत चित्त की चोरी कर लेता है। सखी कहती है कि जो हमारा कहना नहीं मानेगी उसे बाद में पछताना पड़ेगा और उसकी दुर्दशा हो जायेगी। रत्नेश कवि कहते हैं कि यह रसिक राग के रस से पूर्ण फाग नव रसों का आनंद देती है।

## श्रीपत सहाय रावत

कवि व क्रांतिकारी श्री श्रीपत सहाय रावत का जन्म हमीरपुर जिले के ग्राम जराखर में विक्रम संवत् 1956 को हुआ। इनके पिताजी स्वर्गीय खूबचन्द्र जी रावत लोधी राजपूत क्षत्रिय समाज के एक सुप्रतिष्ठित सदस्य थे। वे स्वयं एक कवि व सच्चे देशभक्त थे। इनके यहाँ उस समय की अनेक साहित्यिक व राजनैतिक पत्रिकायें आती थीं। श्रीपत सहाय की प्रारंभिक शिक्षा गुरु श्री चतुर्भुज पाराशर के निर्देशन में हुई। वे ही इनके काव्य गुरु थे। परीक्षाओं के रूप में आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रथमा की परीक्षा इलाहाबाद केन्द्र से उत्तीर्ण की। आप एक प्रतिभा सम्पन्न कवि थे। आपकी दो पुस्तकें 'ग्राम सतसई' तथा 'काव्य कृपाण' प्रकाशित हुई हैं। काव्य कृपाण में राष्ट्रीय रचनाओं का तथा ग्राम सतसई में ग्रामीण जीवन की सुन्दर झाँकी अंकित की गई है।

इन्होंने आजादी की लड़ाई में सक्रिय योगदान दीवान शत्रुघन सिंह के साथ दिया। 1936–37 की गहरौली कांफ्रेंस में जिसमें नेहरू जी पधारे थे, तथा 1938 में इनके गाँव जराखर में आयोजित कांफ्रेस आपका योगदान उल्लेखनीय रहा था। जराखर



कांफ्रेंस में नेहरू जी, पं. गोविन्द वल्लभ पन्त, सम्पूर्णानन्द तथा बुन्देलखण्ड के श्रेष्ठ कवि घासीराम व्यास आदि पधारे थे। आपने स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान अनेक जेल यात्रायें की। इनमें 1930 में हमीरपुर व इलाहाबाद जेल में, 1932 में लखनऊ व फैजाबाद जेल में, 1940 में फैजाबाद जेल में तथा 1942 में उन्नाव जेल में बन्द रहे। जेल में इनके साथ अनेक राष्ट्रीय नेताओं के साथ कवि मित्र श्री बालकृष्ण शर्मा तथा श्री बालेन्दु जी आदि भी बन्द रहे। आप आजादी मिलने पर दस वर्ष तक लगातार विधायक रहे तथा क्षेत्र के विकास हेतु अपना जीवन न्यौछावर कर दिया।

*वीर का न्यायपूर्ण रहना व्यवहार सदा*
*वीर मुँह देखी कभी बात नहीं करता है।*
*वीर ही पराये दुःख देखकर दुःखी रहै,*
*वीर ही अनाथों के महादुःख हरता है।*
*वीर जो कहेगा वही करके दिखावेगा*
*धोखा दे दूसरों की सम्पत्ति नहिं हरता है।*

वीर सदैव न्याय के पक्ष में बोलता है और वह किसी भी प्रकार से मुँह देखी बात नहीं करता है, उसकी नजर में सभी बराबर हैं। वे वीर ही होते हैं जो दूसरों के दुख से दुखी होते है एवं असहायों, अनाथों के कष्टों का हरण करते है, क्योंकि वह शरीर के साथ–साथ हृदय से वीर होते हैं। कवि श्रीपति कहते हैं कि वीर की कथनी करनी में अन्तर नहीं होता, वह जो कहता है वही करता भी है, वह किसी भी प्रकार के छल इत्यादि के द्वारा दूसरों की सम्पत्ति का हरण नहीं करता है।

*शेर शिवाजी देशभक्त का नाम कभी न डुबावैंगे।*
*बलिवेदी के लिये दौड़ कर हंसते हंसते जावैंगे।।*

*प्रण प्रताप का पूरा होगा इसमें देर न लगावैंगे।*
*किंचित मात्र लक्ष मारग से पीछे पग न हटावैंगे।।*

कवि ने मातृभूमि के परम उपासक शिवाजी की तुलना शेर से की है और देशवासियों का आह्वान करते हुए कहते हैं कि जिस देशभक्ति के कारण उनका नाम अमर हुआ है वह नाम हम नहीं डुबोएँगे। मातृभूमि की रक्षा के लिए पल भर देर न करते हुए हँसकर अपना बलिदान दे देंगे, कवि श्रीपति जी आगे कहते हैं कि महाराणा प्रताप ने जो प्रण किया था, उसको पूरा करने में देर नहीं करेंगे। जो लक्ष्य निर्धारित किया है उसकी ओर बढ़ने वाले कदमों को पीछे नहीं हटायेंगे अर्थात् उस लक्ष्य की ओर लगातार बढ़ते ही जायेंगे।

*खाक छान कर वन वन की हम कष्ट महान उठावैंगे।*
*भोग विलास स्वार्थ आदिक को लातों से ठुकरावैंगे।।*
*एक बार हल्दीघाटी का फिर से दृश्य दिखावैंगे।*
*किसी विपत्ति से कभी न डर के पीछे पग न हटावैंगें।।*

जिस प्रकार शिवाजी अनेक कष्टों को सहन करते हुए वनों में फिरते रहे और जंगली अनाज की रोटियाँ खाई थीं, उसी प्रकार हम भी सत्य रूपी वनों में घूमते हुए महान कष्टों को उठायेंगे और भोग, विलास, स्वार्थ, छल–छन्द इत्यादि को लात मारकर दूर भगा देंगे। कवि श्रीपत जी आगे कहते हैं कि पुनः एक बार हल्दी–घाटी के जैसा संग्राम का दृश्य दिखलायेंगे। महाराणा प्रताप द्वारा बताए गये मार्ग से कभी भी पैर वापस न खीचेंगे चाहे उस मार्ग पर अनेकों कष्टों को सहन करना पड़े।

*प्रजा–मन–मन्दिर में राजत थे देव–रूप*
*संकट में मित्र बृद्ध बनिता आबाल के।*
*विद्या अभिधान सोपान देश उन्नति के*
*पुंज शौर्य साहस के कुशल कर बाल के।।*



*दीनन की ढाल थे मराल न्याय करने के*
*दुष्टन के काल कुल–गौरव नरपाल के।*
*भारत के लाल आदर्श महिपाल रहे*
*'श्रीपति' गुन–गान करें वीर छत्रसाल के।।*

महाराज छत्रसाल प्रजा के मन–मंदिर में देव रूप में राज्य करते थे, अर्थात् अपनी वीरता एवं न्याय के कारण उनकी स्थिति ईश्वर तुल्य थी। वे बृद्धों, बनिता, अबलाओं को संकट से उबारने वाले मित्र थे, देश की उन्नति में सहायक सोपान विद्या, अभिधान धारण करने वाले, शौर्य साहस के पुंज या प्रतिमूर्ति एवं कुशल करने वाले थे। दीन–हीन, निस्सहाय लोगों के लिये वे ढाल का काम करते थे तथा वास्तविक न्याय के पक्षधर थे, राजाओं के कुल गौरव महाराज छत्रसाल दुष्टों के लिए काल के समान थे। कवि श्रीपत जी वीर छत्रसाल के गुणों का गान करते हुए कहते हैं कि भारत माता के लाल वीर छत्रसाल एक आदर्श महाराज थे।

*युद्ध के नगारे जब बाजे आय द्वारे पर,*
*क्रोधित उतारी पोशाक सब जनाने की।*
*कर में कृपाण लै कटार खोंस कम्भर में,*
*कीन्ही सब देखभाल किला कारखाने की।*
*सेना चतुरंग ले तुरंग पै सवार हो,*
*धूर में मिलाई शान सारे तोपखाने की।।*
*झांसी महरानी ने होकर सुकमार नार,*
*राखी थी पूरी तरह आन मरदाने की।।*

जब झाँसी के द्वारा अंग्रेजों ने युद्ध का एलान किया तब झाँसी की रानी ने क्रोधित होकर औरतों वाली पोशाक छोड़कर मर्दाना पहनावा धारण किया। एक हाथ में तलवार दूसरे हाथ में ढाल लेकर और कमर में खंजर खोंसकर सभी प्रकार से झाँसी के किले की रक्षा

की। महारानी ने अपनी सेना के चारों अंगों को लेकर किले के शिखर पर पहुँच गईं और विदेशियों के सारे तोपखानों को जो युद्ध में उसकी शान बढ़ा रहे थे, धूल में मिला दिया अर्थात् तहस–नहस करके रख दिया। आगे कवि श्रीपत जी कहते हैं कि झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने एक कोमल स्त्री होने के बावजूद भी हर प्रकार से वीरों की इज्जत बचा रखी थी।

*राज पर चढ़ाई की अवाई सुनी शत्रू की,*
*अंग अंग फरके उमंग भरे तन के।*
*दृष्टि पड़ी ढाल पर हाथ करवाल पर,*
*पाग लाल भाल पर मिसाल मर्दन के।।*
*पहने दस्ताने मस्ताने कसे बख्तर और,*
*साज सजे रण के तो अस्त्र शस्त्र ठन के।*
*महलों के फाटक से निकल पड़ी घोड़े पै,*
*फार कढ़ै चपला ज्यों घान घोर घन के।।*

इस पद में कवि कहता है कि जब महारानी ने राज्य पर आक्रमणकारियों की चढ़ाई के बारे में सुना तो क्रोध से अंग फड़कने लगा, परन्तु उसमें भी शरीर उमंग से भर गया। तभी महारानी की दृष्टि ढाल एवं तलवार पर पड़ी, उत्साह से क्रोधित महारानी का मस्तक लाल हो गया था और उसकी तुलना सिर्फ वीर पुरुषों से की जा सकती है। उन्होंने युद्ध के सभी उपयोगी पाँचों अस्त्रों को धारण किया और हाथों में दस्ताने भी कसे। युद्ध के सारे सामान तैयार किये तो अस्त्र–शस्त्र अपने आप बज उठे। आगे कवि श्रीपत जी महारानी लक्ष्मीबाई की उपमा बिजली से देते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार तमाम घनघोर काले बादलों को चीरकर बिजली चमक उठती है उसी प्रकार महारानी भी घोड़े पर सवार होकर महलों के द्वार से निकल पड़ी।



*पीठ पै सुवन कसे ऐसी महारानी जंचै,*
*गिर्जा गनेश लिये जाती चन्द्रमौल कैं,*
*आन बान वाली मैदान में निकल गई,*
*कर में कृपाण लैके सर्व सैन्य रौल कैं,*
*जैसे रण चण्डी शत्रु झुंड मुंड खंड करें,*
*वैसे अंड वंड कीन्हीं शत्रु सैन्य पौल कैं।*
*पीछे दगाबाज ने आ बार करन चाहो तो,*
*घोड़ा को घुमा कें रानी भाला हन्यो तौल कैं।।*

कवि श्रीपत जी कहते हैं कि महारानी अपने पुत्र को पीठ पर कसे ऐसी प्रतीत हो रही हैं जैसे देवी पार्वती जी अपने पुत्र गणेश को कैलाश में लेकर जाती हैं। अपनी इज्जत, शानों–शौकत को धारण करने वाली महारानी हाथों में तलवार एवं सभी सैनिकों को लेकर रण क्षेत्र पर निकल गई। महारानी लक्ष्मीबाई दुश्मनों के अंगों को भंग कर रही थीं। तलवार से सैनिकों को पौल (काट) रहीं थी जैसे देवी रणचण्डी शत्रुओं के झुण्ड को धड़विहीन करती हैं। जब महारानी दुश्मनों को मार रहीं थीं तभी एक धोखेबाज ने पीछे से आकर उन पर जैसे ही हमला करना चाहा वैसे ही झांसी की रानी ने अपने घोड़े को घुमाकर उसे भाले से मार गिराया। उसका काम तमाम कर दिया।

*चक्कर कर घोड़ा यों कावा काट धावा करे,*
*दादुर के समूह में ज्यों खेले भुजंगिनी।*
*खैंच के सिरोही वीर रानी काठ छांट करे,*
*चीड़ फाड़ डारै पैड़ जैसे कि मतंगिनी।*
*भर कै छलांगैं और सांगैं फेंक मारें कई,*
*छेद डारैं दानव ज्यों दुर्गा रण–रंगिनी।*
*भालों की दपेटों की चपेटों में लपेटे फिरै,*
*भेड़ों के झुण्डों को ज्यों रपेटे फिरै सिंहिनी।*

युद्ध क्षेत्र में महारानी का घोड़ा अपने पैरों से भूमि को काट–काट कर शत्रु दल पर ऐसे आक्रमण करता है जैसे दादुर के समूह से नागिन खेलती है। महारानी तलवार के बल पर दुश्मनों की भीड़ को ऐसे काट–छाँट कर रही हैं जैसे आरी पेड़ को चीड़–फाड़ डालती है। झाँसी की रानी बड़ी ही स्फूर्ति के साथ शत्रुदल पर साँगें ऐसे मारती हुई प्रतीत होती हैं जैसे कि दुर्गा दानवों को रण में छंद–भेद कर डालती है।

आगे कवि श्रीपत कहते हैं कि जिस प्रकार सिंहनी भेड़ों के झुण्ड पर टूट पड़ती है और अपना शिकार करती हैं उसी प्रकार रानी लक्ष्मीबाई भी भालों की नोंक पर दुश्मनों को नाथ डालती है।

*दुर्गा को रूप धुवाँधार धरे बाई साव,*
*झांसी के किले पै मचे तोपों के धड़ाके हैं।*
*आली पर बार–बार गोली पर गोली गिरे,*
*आगे और पीछे कड़ाबीन के कड़ाके हैं।*
*बढ़ी जाय आगे नहीं पाँव धरै पीछे वह,*
*काल से कराल व्याल भालों के सड़ाके हैं।*
*मारैं सरराटे परराटे परै बैरियों के,*
*खड़ग और खाँड़े के खूब ही खड़ाके हैं।*

कवि कहता है कि लक्ष्मीबाई ने युद्ध के मैदान पर दुर्गा के समान विकराल रूप धारण कर लिया है। झाँसी के किले पर तोपों की धड़ाम–धड़ाम की आवाजें सुनाई दे रही हैं। दुश्मनों की भीड़ पर गोलियों की बरसात हो रही है, इतना ही नहीं कड़ाबीन (तोप का नाम) की मार के सामने कोई भी शत्रु अपने पैर नहीं टिका पा रहा है। काल से भी अधिक विकराल मार रानी के भालों की है, जिसके सहारे वे आगे बढ़ती जाती हैं। दुश्मनों पर जब रानी के सरराटे की मार पड़ती है तो उनके होश उड़ जाते हैं। युद्ध क्षेत्र में खड्ग और



खाँड़े की आवाजें ही सुनाई पड़ती हैं।

*झाँसी महारानी का साहस देख शत्रु कहैं,*
*उलझे जो इससे यह मूर्खता हमारी थी।*
*कहते थे फूलों की कोमल फुलवारी इसे*
*यह तो महा आफत के काँटों की क्यारी थी।।*
*आये थे लेने जान सुरभी राज महलों की*
*पैनी नखों वाली ये तो सिंहनी शिकारी थी।*
*समझे थे नारी सुकमारी भ्रम भारी रहा*
*रेशम की सारी मढ़ी लोहे की कटारी थी।।*

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई का अद्वितीय रण कौशल देखकर उनके दुश्मनों में खलबली मच गई और वे आपस में कहने लगे कि यह मूर्खता थी जो इनसे बेकार में उलझ गये। हमने सुना था कि यहाँ की रानी फूलों की बगिया के समान सुकोमल है लेकिन यह भ्रम था, जबकि वास्तविकता यह है कि रानी भारी विपत्ति रूपी काँटों की क्यारी हैं। शत्रु आगे कहते हैं कि हम तो राजमहलों की शोभा हरने आये थे अर्थात् रानी को मारकर झाँसी को अपने अधीन करना चाहते थे यह हमारी सबसे बड़ी भूल थी क्योंकि रानी पैने नाखूनों वाली वह सिंहनी है जो घर आये शिकार को छोड़ती नहीं है। कवि श्रीपत जी आगे कहते हैं कि दुश्मनों ने समझा था कि रानी सुकोमल स्त्री है यह उनका बड़ा भारी भ्रम था क्योंकि रानी रेशम की साड़ी में लिपटी लोहे का खंजर है।

## योग मदिरा

*आया हूँ मधुशाला, भर ला हाला से यह प्याला।*
*रंग न भदरंग होने पावे, रंग रहै गुल लाला।।*
*ला प्याले पर प्याला, आला फिर–फिर जावे ढाला।*
*पी जाऊँ दिल भर कर, ला, ला, हो जाऊँ मतवाला।।*

कवि कहता है कि आज मैं शराबखाने में आया हूँ, यह प्याला है जिसको मदिरा से भरकर ले आओ, इसका रंग बेरंग नहीं होना चाहिये एवं रंग अदृश्य रहना चाहिये। आज जितने जाम पे जाम लाना हो ले आओ क्योंकि आज मैं दिल खोलकर पीना चाहता हूँ, शराब पीकर मैं मतवाला हो जाना चाहता हूँ अर्थात् किसी भी प्रकार का होश न रहे।

*विशद, ऐसी आवे फिर सम हो गोरा काला।*
*मस्त रहूँ मस्ती में अपनी पुरुष लखूं न बाला।।*
*इच्छाएं न रहें किसी की होवें शमन कसाला।*
*शाँति–निकेतन बन जावे फिर यह मेरी मधुशाला।।*

कवि श्रीपत कहते हैं कि मदिरालय की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि यहाँ पर आने वाला हरशख्स चाहे वह गोरा हो या काला, अमीर हो या फिर गरीब, सभी बराबर हैं। कवि कहता है कि मैं अपनी मस्ती में मस्त रहना चाहता हूँ, किसी पुरुष को देखूँ न स्त्री को। मेरे मन में किसी भी प्रकार की इच्छा शेष न रहे और न ही कोई किसी की इच्छाओं को नष्ट करे। कवि की इच्छा है कि मेरी यह मधुशाला शांति–निकेतन बन जाये। जहाँ सिर्फ और सिर्फ अमन खुशहाली हो।

*आंखों में वह महातेज हो मुख–मंडल द्युति वाला।*
*आलोकित हो उठे भवन फिर निशि दिन रहे उजाला।।*
*बीणा–हृदय करूँ मैं झंकृत खोल मधुर स्वर ताला।*
*'श्रीपति' तन मन तार बजें मिल राग अनन्त निराला।।*

(सभी छंद डॉ. संतोष भदौरिया के सौजन्य से)

इस पद में कवि अध्यात्म की ओर मुड़ता है, वह उस अलौकिक शक्ति का आभास पाता है जिससे वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड प्रकाशित है।



कवि कहता है कि मुख की अद्वितीय आभा एवं आँखों में वह महातेज होना चाहिये जिससे घर (हृदय रूपी घर) चमक उठे और सदैव उसमें अमर प्रकाश प्रकाशित रहे। वह आगे कहता है कि अभी तक मैंने अपने स्वर को वेद रखा था लेकिन आज हृदय को वीणा बनाकर एवं स्वरों पर जो ताला रखा है उसे खोलकर मधुर ध्वनि निकालूँगा – कवि श्रीपत जी आगे कहते हैं कि मेरे इस शरीर एवं मन के जो तार हैं वे बज उठे हैं और उस अनन्त निराले राग से एकाकार स्थापित करेंगे जिससे सभी राग निकलते हैं।

## लालजी सहाय वर्मा 'विशद'

लालजी सहाय वर्मा 'विशद' का जन्म यमुना नदी के किनारे बाँदा जिले में स्थित महावरा गाँव में श्रावण मास विक्रम संवत् 1957 (सन् 1899) को हुआ था। आपके पिता का नाम श्री राजबहादुर वर्मा था। इनके मझले चाचा का नाम जंग बहादुर वर्मा था। इनको मंझले चाचा ने ही पढ़ाया–लिखाया था। इनके मन में राम चरित मानस के प्रति विशेष अनुराग था। आपकी नियुक्ति पहले अजयगढ़ स्टेट के वन विभाग में हुई तदुपरान्त आप तहसीलदार नियुक्त किये गये। आपके दो पुत्रियाँ थीं। इनके ग्रंथ 'विनय कौमुदी' तथा 'सुयोधन संबोधन' है, जो दोनों अप्रकाशित हैं। इनका देहावसान 3 सितम्बर 1951 को हुआ।

*ब्रजवन गगन घन गंभीर।*
*कदम्ब डारिन करत कलरव केकि चातक कीर।*
*नवल श्याम समीप श्यामा लसत कुंज कुटीर।।*
*मनहुं विद्युत तजि चपलता–थिर भई घन तीर।*



*नव लता पल्लवन छेड़त बहत मन्द समीर।*
*इत उड़त पट पीत हरि को उत प्रिया को चीर।*
*दमक ज्यों ज्यों दामिनी त्यों कंपत तीय शरीर।*
*निरखि छबि हरि ह्रदय लावत होय प्रेम अधीर।*
*मंजु श्यामल गौर तनु पै लसत बिन्दु सुनीर।*
*घन तड़ित पै मनहु राजत बिशद उड़गण भीर।।42।।*

कवि ने ब्रज में कृष्ण व राधा का सुल्लेख किया है। यह ब्रज रूपी वन आकाश की तरह घनघोर गंभीर जैसे लगता है। कदम्ब की डालियों में चातक, मोर कलरव कर रहे है। श्याम यानि कृष्ण व श्यामा यानि राधा नूतन वस्त्रों के साथ वन रूपी कुटीर में विराजमान है। मानो बिजली की तेज चमक यानि चाँदनी रूपी घन यहाँ ऐसा लगता है कि स्थिर हो गई है। लतायें नई–नई शाखाओं से पुष्पित पल्लवित हो रही हैं। वहीं धीरे–धीरे हवा प्रवाहमान है। इधर कृष्ण का पीला वस्त्र उधर प्रिया का वस्त्र हवा में उड़कर एक दूसरे से प्रेम मान रहे हैं। जैसे उनका शरीर दमक रहा है वैसे ही उनका शरीर भी कंपन कर रहा है। हरि का शरीर निरखने पर उनकी छवि प्रेम रूपी संसार में मग्न है। राधा व कृष्ण के शरीर में स्वच्छ पानी की बूँदें (पसीना) विराजमान है। बादल में बिजली के तड़कने से उसकी रोशनी ऐसी लग रही है मानो जुगनू अपना प्रकाश दिखाता उड़ गया हो।

*नाथ मम चूक क्षमा कर दीजै।*
*स्वारथ लागि अमित अघकीन्हे, कहँ लौं बैठि गनीजै।।*
*रसना सों तुम्हरो गुण तजिकै परनिन्दा नित कीजै।*
*विषयन को सर्वस्व जानिकै उनहीं में मन दीजै।।*
*प्रभु तुमसों हौं कीन्ह ढिठाई सो नहिं चित्त धरीजै।*
*रघुकुल तिलक सियापत राघव अब तौ कृपा करीजै।।*

*हा हा करत जोरि कर दोऊ विशद पुकार सुनीजै।*
*सब अपराध बिसारि दयानिधि चरण शरण मँह लीजै।।86।।*

हे नाथ! मेरी भूल को क्षमा कर दीजिए। अभी तक मैं अपने स्वार्थ में लगा था, कहीं बैठकर भी आपका नाम नहीं लिया। अभी तक तुम्हारे (हरि) गुणों को छोड़कर परनिन्दा रोज करता रहा। सभी कुछ जानकर उन्हीं में अपने को बैठाये रहा। हे प्रभु! तुमसे मैं अभी तक ढीठता कर, दूर भागता रहा, इसलिए शरीर में शांति नहीं मिली। हे रघुकुल के तिलक राघव राजाराम! अब तो कृपा करिये। कवि विशद कहते हैं कि मैं हाथ जोड़कर पुकार कर रहा हूँ कि हे दयानिधि, दयावान! सभी अपराधों को भुलाकर मुझे अपनी शरण में ले लीजिए।

*मन तू प्रीति रीति नहिं जानी।।*
*अलि सरोज मृग नाद मीन जल शलभ दीप रति मानी।*
*पावन प्रीति रीति इनसों सिख ये वाके गुरु ज्ञानी।।*
*मधुकर कमल संग कीन्ही शुचि प्रीति बिना छल सानी।*
*संपुट गहत निछावरि कीन्हे प्राण परम सुख जानी।।*
*साँची प्रीति कुरंग नाद की कबिजन बहुत बखानी।*
*मन चीते ढिँग शर सहि छोड़त तनु बिनु खेद गलानी।।*
*प्रीति पुनीत मीन की कहियुत जल ही हाथ बिकानी।*
*त्यागत प्राण निमेष न लागत बिछुरत प्रियतम पानी।।*
*दीप प्रेम पतंग लुभान्यो अनुपम रति उर आनी।*
*ह्वै बलिहार प्राण प्यारे परि दहत प्राण प्रण ठानी।।*
*झूँठो नेह कियो मोहन सों क्यों उन बिन सुख मानी।*
*साँची 'विशद' प्रीति करु इन सम तजि छल कपट सयानी।।*

मन तूने प्रेम की परंपरा नहीं जान पाई। कवि ने भौंरा व कमल के संबंधों को हिरन व कस्तूरी, मीन व जल, पतंगा व दीप का, इन



सभी ने रीति को माना है। पवित्र प्रेम इनसे सीखकर ही ये वास्तविक गुरु के समान है। भौंरा व कमल ने अपने प्रेम को बिना किसी छल के साथ स्वीकार किया है। कमल के अन्दर प्रवेश होकर अपने प्राण को त्याग देता है जिससे उसे परम सुख प्राप्त होता है। मृग व नाद की कहानी को बहुत से लोगों ने, कवियों ने बखान किया है। कस्तूरी जो स्वयं उसके पास है, उसे प्राप्त करने के लिए वह तनिक भी संकोच नहीं करता। प्रेम के इस पवित्र धर्म को मछली ने भी निभाया है, वह जल के हाथ ही बिकी है। यदि उसे पानी से अलग कर दिया जाय, तो प्राण त्यागने में तनिक देर नहीं लगती। इसी तरह दीपक व पतंगा में पतंगा ने अपने प्रेम भावना का स्वच्छ परिचय दिया है। जलते दीपक में पतंगा अपने प्राणों को न्यौछावर कर देता है। अभी तक मैंने केवल झूठी व दिखावे की भक्ति की है, अब मोहन के बिना सुख कहाँ मिलने वाला है ? कवि विशद कहते हैं कि मैंने अभी तक जो प्रेम किया है वह प्रेम छल, बल, कपट, बदमाशी से ओत–प्रोत था।

*गोधन संग लिये हरि आवत।।*
*प्रमुदित सखा संग लीन्हे अरु खेलत हँसत हँसावत।*
*सुनरी सखी ललित स्वर जे हरि मुरली माहिँ बजावत।।*
*गुंजमाल उर लकुटि कमल कर गोरज कच लपटावत।*
*मोर पंख को मुकुट चारु शिर कुंडल श्रवन सुहावत।।*
*अमल कमल दल नयन मनोहर तिलक भाल छबि छावत।।*
*शुभ रँग वारी पीत पिछौरी न्यारी छवि दरसावत।।*
*वद कै होड़ सखन सों पुनि पुनि हेरी टेर उठावत।।*
*पूरी टेर न आवत तुमसों कहि कहि सखा खिझावत।।*
*जिहि सुख हेतु विरंच शंभु मुनि निशवासर ललचावत।।*
*'विशद' धन्य सो सुख ब्रजवासी बिन तप तीरथ पावत।।90।।*

कवि कहते हैं कि हरि गाय रूपी धन (गायों) को लेकर आ रहे

हैं। उनके साथ उनके सखा प्रफुल्लित, हँसते हुए, खेलते हुए नजर आ रहे हैं। एक सखी दूसरे से कहती है कि हे सखी! ये हरि मधुर स्वर से मुरली मेरे लिए बजा रहे हैं। गुंज की माला हृदय में लपेटे हुए हरि नजर आ रहे हैं। मोर के पंखों को मुकुट में धारण कर अच्छे लग रहे हैं। कमल के समान नयन, भाल में लगा मनोहर तिलक छवि को और अधिक सुशोभित कर रहा है। पीले रंग की कछौटी की सुन्दरता देखते ही बनती है। मित्रों के साथ चिल्लाने की होड़ भी देखते ही बन रही है, कुछ मित्र कृष्ण को चिढ़ा रहे हैं कि तुम्हारी आवाज पूरी उच्चरित नहीं होती। कवि विशद कहते हैं कि जिस सुख हेतु ब्रह्मा व शिव सहित अनेक ऋषि, मुनि दिनरात तरसते रहते हैं, वह सुख इन ब्रज के निवासियों को बिना तपस्या व तीर्थ किये हुए प्राप्त हो रहा है।

*पावस विरह लग्यो एसहुँ ब्रज वनिता स्याम बिसारि दईं।*
*बिन ब्रजराज दरश ये अखियाँ सावन भादौं मास भईं।।*
*मेचक जलद पूतरी बिन रव अँसुवन की झरि लागि रहै।*
*थर थरात तन अरी सखी नित स्वांस समीर प्रचंड बहै।।*
*अरुणाई धनु इन्द्र धवलता बक अवली बहु छाय रही।*
*चारु चपलता छिन पै छिन सोइ दामिनि जनु छहराय रही।।*
*उलहनि सुरति अमर बेलि नव उर निकुंज उलझवति री।*
*पिय गुन सुमिरन बेदल विकसत दुख उपवन हरियावत री।।*
*'विशद' मधुपुरी जाय कहो इत पावस चाह न एक घरी।*
*ब्रजनागरि कुमुदिन जोवति पिय आगम–सरद स्नेह भरी।*

वर्षा ऋतु में ब्रज की ग्वालिनों को श्याम का विरह व्यथित कर रहा है। कवि कहते हैं कि बिना ब्रजराज कृष्ण के दर्शन किये गोपिकाओं के चक्षुओं से श्रावण व भाद्र पद में होने वाली वर्षा जैसी अश्रुधार प्रवाहित हो रही है। काले रंग के बादल जिस प्रकार बिना गर्जना किए बरसते हैं वैसे ही गोपिकाओं की आँखों की काली पुतरी



से निरन्तर आँसू बह रहे हैं। विरह में पूरा शरीर थर–थर काँप रहा है व श्वांस रूपी तेज हवा प्रवाहित हो रही है। लालिमा युक्त इन्द्र धनुष सफेद बगुलों की कतार जैसा ही रंग खोकर सफेद हो गया हैं। क्षण–प्रतिक्षण चमकने वाली बिजली की चपलता से गोपिकाओं के हृदय में तमाम स्मृतियाँ बार–बार कौंधती हैं, जो कृष्ण से जुड़ी हैं। कवि विशद कहते हैं कि कोई जाकर इन्द्र से कहे कि ब्रज में इस पावस ऋतु की चाहत एक घड़ी की भी नहीं है। और ब्रज वनिताएँ कुमुदिनी के समान शरद ऋतु के आगमन की प्रतीक्षा कर रही हैं कि कब प्रिय का आगमन होगा?

*मधुप–मन जीवन–मधु सरसात।।*
*वय–तरु रजनि–दिवस–किशलय युत उपवन–जगत दिखात।*
*लंब निमेष परमाणु विपल पल नव अंकुर बहु भाँत।।*
*विविध बहु लता कुंज वन भाव–कुसुम दरसात।*
*सुभग मनोरथ पुंज उड़त हिय नभ कल नभग जमात।।*
*अन्तःकर्ण विमल सर विकसित नव–रस उत्पल पाँत।*
*त्रय गुण जलचर बुधि मरालि वर प्रमुदित तहँ विलसात।।*
*हुलसत हृदय सुमति सोई डोलत सीतल सुरभित वात।।*
*अद्भुत या ऋतुराज माधुरी अनुपम 'विशद' लखात।।*
*हरहै या सोभा सुख छिन महँ गीषम काल हठात।*
*सावधान चित चंचरीक गह माधव पद जलजात।।*

मन रूपी भौंरा जीवन रूपी अमृत पीने के लिए आतुर है। दिनरात पेड़–पौधे नवीन किसलयों से युक्त उपवनों (उद्यानों) में दिखलाई देते हैं। विभिन्न प्रकार के नव अंकुर अंकुरित हो, नवजीवन को धारते हैं। विभिन्न लतायें उद्यानों में भावरूपी प्रसूनों से लद जाती हैं। सुन्दर मनोरम पक्षियों के झुण्ड आकाश में उड़ते हैं। हृदय के अन्तःकरण रूपी पवित्र तालाब में नवरसों से युक्त पक्तियाँ विकसित होती है। तीनों गुणों से युक्त जलचर प्रसन्नता से ओतप्रोत हैं। इसी

समय हृदय सुमति से ओत–प्रेम हो जाता है। हृदय शीतलता से भी पूर्णतः भर जाता है। विशद कवि कहते हैं कि बसंत जो ऋतुराज है उसकी सुन्दरता अनुपम व अद्वितीय है। ग्रीष्मकाल की ऋतु सुख व शोभा को जैसे हठ से छीन लेती है। कवि सावधान करता है कि हमें मन रूपी भौंरे को कृष्ण के चरणों में ही अनुराग से पूर्ण करना है।

*जा दिन तें त्यागो तुम ब्रज कौ निवास कान्ह,*
*बाढ़यो ब्रज बासिन के विरह प्रपुंज है।*
*विशद न चाहत अलिन्द अरविन्द रस,*
*भानु के प्रकास हूँ न फूलत सुकंज है।।*
*फिरत दुखारी गाय गोप वन बीथिन,*
*मैं देह गेह भावत न भावतीं निकुंज है।*
*ललित कलान वारे यशुदा के प्राण प्यारे,*
*याही रट आठौ याम गोपिन कौ बंज है।।*

जिस दिन से हे कृष्ण! तुमने ब्रज का निवास त्याग कर मथुरा में निवास कर लिया, उसी दिन से ब्रजवासियों में विरह की अग्नि प्रज्ज्वलित हो गई। कवि विशद कहते हैं कि कमल खिलना नहीं चाहते व उनपर भ्रमर मंडराना नहीं चाहते। सारे ब्रज की दुखी गायें व गोप जंगल में मारे–मारे घूमते हैं, उन्हें अपने शरीर व घर की सुध–बुध नहीं है। यशोदा के प्राण प्यारे लाल व ललित कलाओं के कर्ता–धर्ता कृष्ण की रट आठों पहर गोपिकाएँ लगाये रहती हैं।

*ऊधो श्याम हमें ठग लीनों।।*
*हम अहीर जड़ मत बौराने हरि को नेक चीनों।*
*कोटिन कटु कहि खीझ खिझायौ आदर कबहुँ न कीनो।।*
*बन बन प्यादे पांव फिरावत छोह में उरमें आयौ।*
*छछिया भरें छाछ के काजहिं पहर पहर तरसायौ।।*
*थोरे ही अपराध यशोमति ऊखल बांध्यो जाय।*



*वाही रिस उपजाय मनहिं मन हरि ब्रज आवत नांय।।*
*कहि दीजौ अब बन न पठैहें ना ऊखल सों बाँधिहैं।*
*'विशद' फेर ब्रज आय रहौ हरि अब आदर तैं रखिहैं।।*

हे उद्धव! कृष्ण ने हमें चालाकी से ठग लिया है। हम मूढ़मति पागल अहीर जाति के ठहरे जिससे हम कृष्ण को थोड़ा सा भी पहचान न सके। हम लोगों ने हजारों बार चिढ़ते व चिढ़ाते हुए कठोर वचनों का प्रयोग उनके साथ कर उनका सम्मान बिलकुल नहीं किया। उनको नौकर बनाकर जंगल जंगल गायें चराने के लिए घुमाया। इतना ही नहीं थोड़े से दूध व दही के खातिर पहर पहर तरसाया। थोड़े से अपराध की शिकायत यशोदा से कहकर ओखली से बंधवाया, इसी कारण कृष्ण मन ही मन हम लोगों से गुस्सा हो गये हैं, वे मथुरा से ब्रज नहीं आते। हे उद्धव, तुम जाकर कृष्ण से कहना कि अब हम उन्हें न जंगल भेजेंगे, न ओखली से बंधवायेंगे। कवि विशद कहते हैं कि कृष्ण ब्रज पुनः आ जायें तो उन्हें सम्मान सहित रखेंगे।

*सजि तन नवल सिंगार राधिका चलिये वंशीबट पै।*
*सखि दीजै नहिं ध्यान भूलहूँ या बजमारी हटपै।।*
*हौं लखि भई चकोर चंद मुख मन उरझ्यो हरि लट पै।*
*कैसो कठिन हियो री तेरौ द्रवत न नागर नट पै।।*
*'विशद' लता कलिका अनुरागीं हरि मुख मंजु मुकट पै।*
*वनशी सोति होय सुख लूटत चलु झट यमुना तट पै।।*

राधा की सखियाँ राधिका से कहती हैं कि– हे राधिका! श्रृँगार करके यमुना किनारे स्थित कदम्ब के पेड़ पर विराजे कृष्ण के पास पुरानी गल्तियों को भुलाते हुए व हठ को त्यागते हुए चलो। मेरा चकोर रूप मन कृष्ण के चन्द्रमा रूपी मुख को देखने के लिए आतुर हो रहा है। तेरा हृदय कितना निष्ठुर है कि उस नागर नट (कृष्ण)

के लिए बिल्कुल नहीं पिघलता। कवि विशद कहते हैं कि कृष्ण के सुन्दर मुख पर जो मोर पंख का मुकुट सुशोभित है, उस सुशोभित श्याम के पास सौतन वंशी (बाँसुरी) सुख लूट रही है इसीलिए झटपट यमुना तट पर चलिये।

*नैन तुम हरि सँग क्यों न गए।*
*कहा काज रहियो फिर इत जब हरि दृग ओट भए।।*
*बिन ब्रज राज निरखि सूनो ब्रज–उपजत शूल नए।*
*परिहरि मोहन रूप सुधा निधि ताप वियोग तए।*
*जिहिं देखन लगि सृज्यो तुम्हैं बिधि सो तौ दूरि छए।*
*रहिबो बृथा विशद तुह्मरो बिन दरशन नंद जए।।*

विरहित गोपिकायें अपने नेत्रों से कहती हैं कि हे नयन! तुम कृष्ण के साथ ही क्यों न चले गये? तुम्हारा यहाँ क्या काम रहा ? जब कृष्ण ही ओझल हो गये हैं तो तुम किसको देखोगे। बिना कृष्ण को देखे ब्रज में अनेक नई पीड़ाएँ उपजती हैं। श्री कृष्ण के मनमोहन रूपी अमृत निधि को पिए बिना वियोग में तप रहे हैं। जिनको देखने के लिए ब्रह्मा ने तुम्हें सृजित किया, वे ही दूर हो गये हैं, तो तुम्हारा क्या काम है? अर्थात् यहाँ तुम्हारा रहना व्यर्थ है, क्योंकि कृष्ण के दर्शन नहीं हो पा रहे हैं।

*बरसत जलधर कारे।।*
*सीतल बहत समीर धीर चहुँ उड़ि उड़ि परत फुहारे।*
*जलकन चुवत दलन तें छिनु छिनु झरत मुकुत जनु प्यारे।।*
*संगम करत नीर मद माते मिलि सरितन नद नारे।*
*रसमय करत मेदिनी कौ हिय नेह भरे जलधारे।।*
*उपवन सुभग छटा दरसावत नव नव तरु हरियारे।*
*कूजत पिक चातक रस बस ह्वै नाँचत मोर नियारे।।*



*श्री गुपाल दरसन के काजै तरसत नैन हमारे।*
*या रितु सह्यो वियोग जात नहि द्रवहु 'विशद' बृज वारे।।*

पावस ऋतु में काले बादल बरस रहे हैं जिससे चारों दिशाओं में ठंडी–ठंडी हवा बह रही है व पानी के फुहारे उड़ रहे हैं। जल के कण फूलों व पत्तों पर क्षण–क्षण में गिरते व झरते हैं। जिन्हें देखना मन को प्रिय लगता है। नदियों व नालों में पानी अधिक आ जाने से सब एक दूसरे के साथ संगम करते हैं। पूरी धरती को प्रेम रूपी जल से युक्त बादल रसयुक्त कर देते हैं। वाटिकाओं की छवि मनोहारी हो जाती है, उसमें नये–नये पौधों हरे हो जाते हैं। मोर व चातक रस के सराबोर हो नाचते गाते हैं। कवि विशद कहते हैं कि ब्रज के निवासी कहते हैं कि गोपाल कृष्ण के दर्शनों हेतु हम सबके नेत्र तड़प रहे हैं। इस पावस ऋतु में उनका वियोग हमसे सहन नहीं होता।

*नयना रावरे रँग राते।।*
*खग मृग विटप बेलि अंकुर द्रुम स्याम रंग दरसाते।*
*पिय गुन श्रवन जोग साधन लगि कानन लौं बढ़ि जाते।।*
*पियत रहत सुचि मधुर रूप रस तबहुँ न नेक अघाते।।*
*तनु पानिप सफरी लौं बूढ़े तदपि न सजन सिराते।।*
*चन्द्रवदन निरखत चकोर सम परसन हित अकुलाते।*
*मिलन चहत उड़ि खंजरीट सम जुग पल पंख फुलाते।।*
*छाके रहत सुप्रेम माधुरी जोवत ताहि छकाते।*
*ये रिझवार 'विशद' लोचन दोउ रीझ रीझ ललचाते।।*

मेरे नेत्र सदा कृष्ण के रंग में रंगे रहते हैं। पशु–पक्षियों, पेड़–पौधों, अंकुर द्रुमों में हमें केवल कृष्ण के ही दर्शन होते हैं। मेरे प्रिय कृष्ण के गुणों को श्रवण करने के लिए जंगल तक चले जाते हैं। कृष्ण के मधुर पवित्र रूप रस को निरन्तर पीते रहते हैं लेकिन

थोड़े भी तृप्त नहीं होते हैं जिस प्रकार पानी के भीतर मछली दिनरात डूब कर तृप्त नहीं होती, उसी प्रकार मेरे नेत्र हैं। कृष्ण के चन्द्रमा के समान मुख को मेरी आँखें चकोर बनकर देखने के लिए व्याकुल रहती हैं। वे मिलन की चाहत में पतंगे के समान कुछ क्षण अपने पंखों को फुलाकर उड़ने की कोशिश भी करते हैं। ये कृष्ण के मधुर प्रेम में सराबोर रहने पर भी नहीं छकते हैं। कवि विशद कहते हैं कि दोनों नेत्र रीझ–रीझ कर कृष्ण के दर्शनों हेतु लालायित रहते हैं।

*हौं वारी नटवर गुपाल पै।*
*चितवनि तकनि मधुर मृदु मुरकनि,*
*विहँसि मिलनि अरु लटकि चाल पै।।*
*रूप सुधा प्यासी अँखियाँ दोउ,*
*उरझानी नव अलक जाल पै।*
*लहि अनुराग बसन्त लुभानी,*
*मति कोकिल मुरली रसाल पै।।*
*सुनि वीणा वाणी सारँग मन,*
*गिरत धनुष भृकुटी बिसाल पै।*
*पुनि पुनि 'विशद' सुभग बृज रज ह्वौ,*
*उड़ि परिये पग नन्दलाल पै।।*

गोपिका अपनी सखि से कह रही है कि मैं नटवर गोपाल पर न्यौछावर हूँ, उनका देखना, मन्द–मन्द मुस्कुराना, हँसकर मिलना व घूमकर चलना मुझे पसन्द है। उनके रूप रूपी अमृत पीने के लिए मेरी दोनों आँखें प्यासी हैं। अनुराग युक्त मधुर रसयुक्त बाँसुरी की तान सुनकर माँ वीणापाणि का मन भी चंचल होता है। अनेक नेत्रों की भृकुटियाँ जो कमान जैसी है उनका सदा सौन्दर्य दर्शनीय है। कवि विशद कहते हैं कि मैं बार–बार ब्रज क्षेत्र की रज (कण) बनने को तैयार हूँ क्योंकि उसपर नंद के लाल अर्थात् कृष्ण के पैर पड़ते रहेंगे।



*स्याम बिन योंहीं दिवस विहात।*
*खान पान अरु सयन भोग सुख सपनिहुँ नाहिँ सुहात।*
*चित चुभि गई साँवरी मूरति सो न दृगनि दरसात।।*
*विरह ज्वाल दहकीत उर अन्तर छिन पै छिन अधिकात।*
*रूप रसिक लालची दीन दृग विलखि विलखि रहिजात।।*
*मन चलि बस्यौ नन्द नन्दन ढिँग हम छूँछे पछितात।*
*'विशद' बिना गिरिवर धर प्यारे सोई दिन सोइ रात।।*

(उपर्युक्त सभी छंद सौजन्य से : श्री चंद्रभूषण श्रीवास्तव)

कृष्ण के बिना मुझे ये दिन अच्छे नहीं लगते। मुझे खान–पान, सोना आदि समस्त सुख स्वप्न में भी अच्छे नहीं लगते। मेरे मन में सांवरे (कृष्ण) की मूर्ति बस गई है जो नेत्रों से नहीं हटती। विरह की ज्वाला हृदय के भीतर लगातार जल रही है, जो क्षण–प्रतिक्षण व्याकुल होकर रह जाते हैं। मेरा मन नंद के नंदन अर्थात् कृष्ण के पास चलकर बस गया है, हम छूंछे (खाली) पछताते हैं। कवि विशद कहते हैं कि मुझे दिन व रात गिरिवर को धारण करने वाले प्रिय कृष्ण ही दिखाई देते हैं।

## महादेव चौबे 'अनन्त'

बुन्देली काव्य को अपनी असाधारण प्रतिभा से रचनात्मक सम्पन्नता देने वाले सपूतों में श्री महादेव चौबे 'अनन्त' का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। इनका जन्म छतरपुर शहर के आजाद रोड, स्थित सरानी गेट मोहल्ला में रहने वाले श्री भगवानदास चौबे के यहाँ 3 मार्च सन् 1901 को हुआ। इनका बचपन साधारण ब्राह्मण परिवार में बीता। आपने लाहौर यूनिवर्सिटी से इंटर पास किया तथा छतरपुर में इंस्पेक्टर ऑफ स्कूल नियुक्त हो गये। इसके बाद छतरपुर स्टेट के जिला शिक्षा अधिकारी बने। आप स्वतंत्रता संग्राम के सक्रिय योद्धा थे जिससे आपने सरकारी नौकरी त्याग दी। आप सदा प्रचार–प्रसार से बचते अपने को सीमित रखे रहे। आपने लाहौर यूनिवर्सिटी से बाद में साहित्य रत्न की उपाधि प्राप्त की।

आप आशु कवि थे। ये अपनी विलक्षण काव्य प्रतिभा से सैर, गारी, कीर्तन तथा फागों का लेखन करने में माहिर थे। आपने सैर फड़बाजी में परमानंद पाण्डेय दल के महत्त्वपूर्ण साथी थे। आपकी सैकड़ों रचनाएँ लोककंठों में अभी सुरक्षित है। आपके महत्वपूर्ण



योगदान को देखते हुए चेतना साहित्य परिषद् ने आपको सम्मानित किया। इनका देहावसान एक दिसम्बर सन् 1985 को हुआ।

### सैर

*दोहा –* *शीश धरें हैं गागरी ओज आगरी नार।*
*दोय भारन कटि लाचली सोचो हृदय विचार।।*

*सैर –* *भर ल्याई नीर सुन्दरी उठ बड़े भोर है।*
*तन खीन ओज उन्नत भरपूर जोर है।*
*सिर धार गगर आई निज भवन दोर है।*
*लचकत लंक खिसकत आंचर कौ छोर है।।टेक।।*
*झलकत है मदन छलकत गागर की कोर है,*
*नव नेह नयन ललकत ज्यों शशि चकोर है,*
*आगर उरोज गागर भारन विभोर है।*
*लचकत लंक खिसकत ..... ।।*

*लावनी :* *बोल रही अपने देवर सौं अधरन में मुस्कान भरें।*
*अइयो लला उतारो गागर कोनउ करकें हरें हरें।।*
*देख दृश्य लाला जी बोले तनक तौ भौजी धर धीरज।*
*गागर के इस सागर में अब खिल जाने दे नव नीरज।।*

*सैर :* *रंग गई अनंग रंगन तन पोर पोर है,*
*पुनि वारि की फुहारिन भई चोर वोर है,*
*नई दिपन दृगन दर्शी सरसी अथोर है।*
*लचकत लंक खिसकत ..... ।।*

*विधि कलाकार का ये नूतन निचोर है,*
*मनसिज कै मत्त सागर की या हिलोर है,*

*लीला 'अनंत' जग की निरखौ निहोर है।*
*लचकत लंक खिसकत ..... ।।*

(गायक – श्री स्वामी प्रसाद अग्रवाल)

यौवन की तेजस्विता से भरपूर नायिका सिर पर जल से भरा घट रखे हुए है। दो प्रकार के भार से उसकी कमर लचक रही है। इसपर विचार करें।

प्रातःकाल उठकर नव यौवना पानी भरकर ले आई। छरहरे तन की उस सुन्दरी को कान्तिपूर्ण समृद्धि पर उठते यौवन का प्रभाव है। सिर पर घड़ा रखकर वह अपने प्रासाद के द्वार पर आई। चलने में उसकी कमर के लचकने से उसके वक्षःस्थल पर पड़ा साड़ी (धोती) का छोर खिसक जाता है।

घड़े के किनारे से छलके जल के साथ ही अनंग की आभा भी झलक जाती है। नव नेह से व्यथित नेत्र ऐसे ललचाते हैं जैसे चन्द्रमा के दर्शन हेतु चकोर। गागर के भार से विह्वल पयोधर अधिक सुन्दर लग रहे हैं।

होठों में मुस्कुराहट भरके वह अपने देवर से कहती है कि हे लाला! यहाँ आकर मेरी गागर किसी तरह धीरे–धीरे उतार दीजिये। देवर ने दृश्य देखकर कहा – भाभी जी, थोड़ा धैर्य धारण कीजिये। अभी गागर के इस समुद्र में नया कमल खिल जाने दीजिये।

नायिका के तन का अंग–अंग कामदेव के नेह रस से रसवती हो गया, फिर पानी की फुहारन से सराबोर हो गई अब वह नवीन छवि के अथाह सरोवर की तरह आँखों को दिखाई देने लगी।

ईश्वर की कलात्मकता का यह नवीन सारतत्व है अथवा कामदेव के रसयुक्त समुद्र की तरंग है। कवि अनंत कहते हैं कि



संसार की यह लीला कृतज्ञ होकर देखिये।

## सैर

*दोहा –* *नारि सजीली नवीली खड़ी द्वार मझधार।*
*केश लमछरे की लटें छहरें लगत बयार।।*

*छंद –* *केश सटकारे ललित कारे निखारे हाल कें*
*लट गुच्छ लटके लमछरी दोउ ओर दोउन गाल के,*
*झूमतीं मनों चूमतीं उनमत उरोजन के शिखर*
*या स्वर्ण मठ पर बैठने को दो सापिनी आ रईं उतर।।*

*सैर –* *सटकारे केश कारे की लटें सलौनी।*
*मुख चंद्र पर लहरतीं सुखकंद दिपौनी।*
*रसियन के मन रिझावन है सुरम रिझौनी।।*
*ज्यो चन्द्र भाल झूमें दो व्याल बचौनी।।टेक।।*
*लहरान लगी लुर–लुर उर लगन लगौनी,*
*हों ओत प्रोत दर्शक हिय ओज उगौनी,*
*नई सजन गजन गरिमा की रचन रचौनी,*
*ज्यों चन्द्र भाल झूमें ..... ।।*
*हैं विस विहीन दोऊ पर निपट निरौनी,*
*जिय जंत्रि जाल बीच सुभग सुमन पिरौनी,*
*हिय हरन भरन भारन रति रंग रगौनी,*
*ज्यों चन्द्र भाल झूमें ..... ।।*
*हैं सुमतवान जन जो तिन्हें जुगत जतौनी,*
*जो रंग ढंग वाले उन्हें चलत मतौनी,*
*कहवें 'अनंत' बहुतन सुख साज सजौनी,*
*ज्यों चन्द्र भाल झूमें ..... ।।*

(गायक – श्री स्वामी प्रसाद अग्रवाल)

सुन्दर नव यौवना द्वार के बीच खड़ी है, उसके सिर के लम्बे बालों की केशपाश हवा के झोकों के लगने से छतर (बिखर) रही है।

तुरन्त के धोये हुए सुन्दर काले लम्बे बालों के लम्बे केशपाश दोनों कपोलों के दोनों ओर लटक रहे हैं। लहरातीं लटें ऐसी प्रतीत होती हैं मानो रसभाव युक्त कुचों के अग्र भाग का चुम्बन ले रही हों अथवा सोने के मठ पर बैठने को दो सर्पिणी नीचे उतर कर आ रहीं हो।

कोमल और लम्बे बालों की सुन्दर लटें मुखरूपी चन्द्रमा पर लहराती हुई सुखदायी और दीप्तिमान हो रही हैं। रसिकों के मन को आकर्षित करने के लिये रमणीय और मोहित करने वाली हैं। लगता है जैसे सर्प के दो छोटे बच्चे चन्द्रमा के माथे पर झूम रहे हों।

हृदय में प्रेम के लगाव को लगाने वाली वे लटें लहरातीं हुईं बार–बार आपस में एक दूसरे को छूने लगीं। हृदय में प्रकाश उत्पन्न करने वालीं इन लटों को देखकर दर्शकों के हृदय रस से सराबोर हो जाते हैं। नये प्रियतम के गौरवमय अनुराग को अनुरक्ति देने वाली हैं।

दोनों में किसी प्रकार का विष नहीं है मात्र दिखावा है। हृदय रूपी यांत्रिक झरोखे से मनोहर पुष्पों को गूंथने वाली है। हृदय के बोझ को मिटाकर रति रंग से हृदय को भरने वाली हैं।

जो बुद्धिमान लोग हैं उनके लिये ये युक्ति को बताने वाली हैं, सुमार्ग बताने वाली हैं। जो रंगीन स्वभाव वाले हैं उन्हें मतवाला बनाती है। कवि अनंत कहते हैं बहुतों को सुख–समृद्धि देने वाली हैं।

## सैर

*दोहा –* *सहज रसीली रस भरी युवति अनोखी नेक।*
*ताके गोल कपोल पर सोह श्याम तिल एक।।*



*सोरठा –* *सोह श्याम तिल एक वारिद जिन देख्यो कभउं।*
*कवि जन करत विवेक विधि की नई नवीनता।।*

*छंद –* *देख्यो कभउं जिन श्याम तिल वा गोल गोरे गाल पर।*
*ते स्वयं अनुभव कर सकहि बाके निराले हाल पर।।*
*फिर भी कछुक मैं भी कहत लघु बुद्धि के आधार से।*
*महंत जन गण छमहिगे भव्य भाव विचार से।।*

*सैर –* *छरहरे रूप रमणी मुख सहज सलौना।*
*सौन्दर्य और छबि कौ मनु भयउ मिलौना।*
*दायें कपोल शोभित है तिल एक लौना।*
*या अमल कमल विलसत अली बर कौ छौना।।टेक।।*

*जग माहिं पिरे बहुतक तिल कोलहु कोना,*
*इस तिल ने जगत पेरा फिर अचरज क्यों ना,*
*सुठि स्वर्ण मेरु पर है मणि नील निगौना,*
*या अमल कमल विलसत .....।।2।।*

*छंद –* *जिस ठौर लाखों निशाने नेह नजरों के गढ़े।*
*उस जगह यह चिन्ह काला क्यों न हो क्यों ना पड़े।।*
*रतिनाथ के सम्राज्य की यह चाल समझो तो नई।*
*क्या खूब अपने कोष पर पुखता मुहर यह कर दई।।*

*सैर –* *विधि जान नीक निपुनई कर दियो दिठौना,*
*ना दीठ लगे जासें ना जादू टौना,*
*रक्षक है रूप गढ़ कौ इक हफसी बौना,*
*या अमल कमल विलसत .....।।3।।*
*पर धन पै आय बैठो विष व्याल बछौना,*
*करबे सचेत सबकों बच जाव फसौना,*

*कहवें अनंत तिल है या लगन लगौना,*
*या अमल कमल विलसत ..... ।।4।।*

(गायक – श्री स्वामी प्रसाद अग्रवाल)

सरल नेह रस वाली यौवना विलक्षण गुणों से युक्त अच्छे स्वभाव की है, उसके गोरे कपोल पर एक काला तिल सुशोभित है।

एक काला तिल ऐसा सुशोभित है जैसा कभी किसी ने काला बादल (मेघ) देखा हो। विधाता की इस नवीन कृति पर कवि लोग विचार करते हैं।

जिसने कभी भी उस गोरे गाल पर काला तिल देखा होगा वे स्वयं उसकी अनूठी स्थिति का अनुभव कर सकेंगे। उस संबंध में मैं अपनी छोटी बुद्धि के आधार पर कुछ कह रहा हूँ। बड़े और विवेकी जन अपने हृदय की विशालता के भाव से मुझे क्षमा करेंगे।

दुबली–पतली फुरतीली देह वाली युवती के मुख पर सहज सौन्दर्य है। सौन्दर्य (सुन्दरता) और छवि (शरीर की सुन्दर बनावट) का मानों मिलन हो गया है। उसके दांये गाल के ऊपर एक सलौना तिल सुशोभित है। मानों पावन कमल के ऊपर भौरें का बच्चा क्रीड़ा कर रहा है।

संसार में अनेक (ढेरों) तिल कोल्हू के कोने में पिर गये (तिल से तेल निकालने हेतु कोल्हू में पेरा जाता है) फिर यदि इस तिल ने जगत को व्यथित किया तो आश्चर्य क्यों नहीं है? सुन्दर सुमेरू पर्वत पर नीलमणि के नग की तरह यह तिल शोभायमान है।

जिस जगह को लाखों लोगों के प्रेम की निगाहें अपना निशाना बना रहीं हों वहाँ पर यह काला चिन्ह क्यों नहीं होना चाहिए (अर्थात् नजर के प्रभाव से उसकी रक्षा हेतु डिठौने की तरह इसकी आवश्यकता है)?



कामदेव के साम्राज्य में एक नई नीति अपनाई गई है कि अपने सौन्दर्य के खजाने सुरक्षित करने के लिये एक मजबूत छाप लगा दी।

विधाता ने अधिक सौन्दर्य को समझ कर दिठौना लगा दिया ताकि न किसी की नजर लगे न जादू–टोने का प्रभाव पड़ सके। रूप के किले की रक्षा के लिये एक बौना हफ्सी नियुक्त कर दिया गया।

मानो दूसरे के खजाने पर विषैले सर्प का बच्चा आकर बैठ गया है अथवा सभी को सावधान करने के लिये बैठा है कि इससे बचिये, इसमें फँस मत जाना। कवि अनंत कहते हैं कि यह तिल है अथवा प्रेम सम्बंध स्थापित कराने वाला मनोरम कर्ता (विधाता) है।

## सैर

*दोहा –* *तरुनई की अरुनई झलक अंगन करै उदोत्त।*
*अंगन अंगन सें बढ़त दिन दूनी छवि होत।।*

*सैर –* *सत चरितवान पूरी उत्तम विचार है*
*अंगन अनंग आभा कौ नयो उभार है*
*बचपन विहाय तरुनई कौ प्रथम पार है*
*देवरा सें प्यार माने प्रीतम सें रार है।।टेक।।*
*सिंदुरई सुरंग सुमनन कौ गलैं हार है।*
*मुसकान मधुर मुख पर सुंदर श्रृंगार है।।*
*नयनन पै छई थिरता बयनन उदार है।।*
*देवरा सें प्यार माने प्रीतम..... ।। 2।।*

*लावनी –* *तरुनई कौ यह प्रथम चरन है*
*भरन लगत हिय में उल्लास।*
*हरन लगत है मन प्रियतम कौ*
*करन चहत है हास विलास।।*

*डरन लगत है तन तरुनी कौ*
*धरन लगत चतुराई चाल।*
*झरन लगत है सुमन सुमन से*
*गथन लगत है नूतन भाल।।*

सैर – *चतुरई के देत उत्तर अतुरई सम्हार है।*
*है सुनत गुनत ऊँहूँ कौ शब्द सार है।।*
*कछु सहम जात सुन कैं बात रहसदार है।।*
*देवरा से प्यार मानै प्रीतम..... ।। 3।।*

*साझहुँ सें सास सेवा की लगातार है।*
*धरकन बढ़न हिये की करतन उसार है।।*
*अपने 'अनंत' प्रियवर कौ कर अधार है।*
*देवरा से प्यार माने प्रीतम..... ।। 4।।*

(सौजन्य : श्री महेश देव चौबे)

यौवन के आगमन पर आई लालिमा ने शरीर के सभी अंगों को प्रकाशित कर दिया है अब दिन–प्रतिदिन प्रत्येक अंग की शोभा बढ़ती जाती है।

नायिका अच्छे चरित्र वाली है उसके आचार–विचार उत्तम हैं। उसके सभी अंगों में कामदेव का ओज नया उत्थान कर रहा है। उसने बचपन को छोड़ते हुए यौवन की पहली सीढ़ी पर कदम रखा है। वह अपने पति के छोटे भाई से प्यार मानती है, उसकी पतिदेव से लड़ाई है।

सिंदूर के गहरे रंग वाले पुष्पों का हार वह अपने गले में पहने हुए है। मधुर मुस्कान ही उसके चेहरे का सबसे सुन्दर श्रृँगार है। उसके नयनों में चंचलता नहीं है और बोली में उदारता आ गई है।



यह यौवन में प्रवेश का समय है। इस समय हृदय में उल्लास भरने लगता है। इस समय वह अपने प्रियतम का मन अपनी ओर आकृष्ट करती है, उसके साथ आमोद–प्रमोद करना चाहती है। तरुणाई के समय उसके शरीर में प्रविष्ट डर उसकी गति में चातुर्य ला देता है। उसके वचनों में फूल से झरने लगते हैं और वाणी चातुर्य सुन्दर भाल सा आकर्षक हो जाता है।

वह किसी भी बात का उत्तर बड़ी चतुरता से सम्हल कर देती है उसमें जल्दबाजी नहीं करती। किसी बात को बड़ी गंभीरता से सुनती और संक्षिप्त उत्तर हाँ–हाँ में देती है और किसी रहस्य की बात सुनकर डर सी जाती है।

सायंकाल से ही वह अपनी सास की नियमित सेवा करती है। वह घर का काम करते समय उसके हृदय की धड़कनें बढ़ जाती हैं। कवि अनंत जी कहते हैं कि अपने प्रियतम का आश्रय ले ले, यही उत्तम है।

# सिद्ध गोपाल सक्सेना 'सत्यकृष्ण'

कवि सिद्ध गोपाल सक्सेना का जन्म सन् 1901 में हमीरपुर जिले के ग्राम अकौना (राठ) में हुआ था। इनके पिता जी का नाम श्री राम प्रसाद सक्सेना था। इन्होंने हिन्दी व उर्दू मिडिल पास किया था। इसके बाद अंग्रेजी शासन में शिक्षक के पद पर नियुक्त हो गए थे। ये गणित के भी अच्छे ज्ञाता थे। इनका विवाह राठ के समीप स्थित ग्राम देवरा की शिवरानी देवी के साथ हुआ था। आप प्रधान अध्यापक के पद से सेवानिवृत्त हुए थे। इनका निधन सन् 1988 में हो गया है। आप प्रेमचन्द जी के सम्पर्क में रहे। प्रेमचन्द इनके इंस्पेक्टर ऑफ स्कूल रहे हैं। अंग्रेजों के खिलाफ लड़े जा रहे स्वतंत्रता संग्राम में आपने गोपनीय ढंग से भाग लिया। ये सरकारी नौकर होने के कारण 'सत्यकृष्ण' छद्म नाम से लिखते थे। दीवान शत्रुघन सिंह आदि स्वतंत्रता सेनानियों से इनका घनिष्ठ सम्बंध रहा। आपके तीन पुत्र हुए– रवीन्द्र बहादुर, बृजेन्द्र बहादुर तथा राजेन्द्र बहादुर, द्वितीय पुत्र श्री ब्रजेन्द्र बहादुर का स्वर्गवास हो गया है। आपके पौत्र अशोक कुमार, आनंद कुमार, अरुण कुमार तथा अवधेश कुमार हैं। इनके पौत्र डॉ. अशोक कुमार सक्सेना के सौजन्य से



इनकी रचनाओं की एक हस्तलिखित पांडुलिपि प्राप्त हुई है। उसमें से कुछ छन्दों को यहाँ उद्धृत किया गया है।

## कवित्त

*जगत को तमासो है भाई बहिन पुत्र नारि,*
*काका और बाबा या मामा और नाना है।*
*बहू और बेटी सब स्वारथ की पेटी है,*
*परत जब झपेटी सब झूठे होत माना है।।*
*रहते दम बातैं सब करते हैं झूठ मगर,*
*मरते ही घर से निकार देत आना है।*
*'सत्यकृष्ण' केवल सहायक हैं धर्म होत,*
*अन्त समय सबको अकेला पड़े जाना है।।*

संसार में भ्राता, भगिनी, पुत्र, स्त्री, काका, बाबा, मामा और नाना के रिश्ते मात्र दिखावे के हैं। बहू और बेटी के रिश्ते भी स्वार्थ के भंडार हैं, जब काल की मार पड़ती है तो सभी रिश्ते झूठे साबित होते हैं। शक्ति रहते सभी झूठी बातें करके मिथ्याभिमान करते हैं। जब मौत हो जाती है तो शरीर को घर से बाहर निकाल दिया जाता है। कवि सत्यकृष्ण कहते हैं कि मात्र धर्म ही सहायक बनता है और अन्तिम समय में सभी प्राणियों को अकेला ही प्रस्थान करना पड़ता है।

*जाहिर है जग में की प्रीत रीत होत बड़ी,*
*प्रीत वान बातैं अति भाषै मन माना है।*
*साथ नित्त खेलै सर डारकर फुलेलै और करे*
*बहु कुलेलैं तो झूठा बहलाना है।।*

*भरते हैं दम की दम देंगे हम दमके संग,*
*कढ़ते ही दम क्या बात का ठिकाना है।*
*'सत्यकृष्ण' केवल सहायक है धर्म होत,*
*अन्त समय सबको अकेला पड़े जाना है।।*

सभी लोग जानते हैं कि संसार में प्रेम की रीति ही बड़ी होती है। प्रेम करने वाले मनमोहक बातें करते हैं। सिर में सुगंधित तेल डालकर प्रतिदिन साथ खेल करते हैं तथा अनेक प्रकार के झूठे बहलावे करते रहते हैं। सभी यह दम भरते हैं कि हम साथ–साथ दमकेंगे किन्तु दम निकलते ही इनकी बात का कोई ठिकाना नहीं रहता है। कवि सत्य कृष्ण कहते हैं कि मात्र धर्म ही सहायक बनता है और अन्तिम समय में सभी प्राणियों को अकेला ही प्रस्थान करना पड़ता है।

*बचपन को खेल में गवांवत है बालक सब,*
*ज्वानी में लगत सबै मोह मदन चारी है।*
*याहीं सौं ऐंठ ऐंठ चलत है अजब चाल*
*तेरी सुध नेक नारि कोउ चित्त धारी है।।*
*वृद्ध भये माया में चित्त फँस जात नहीं*
*काहू कौ लखात कबै टूटै स्वांस तारी है।*
*'सत्यकृष्ण' कृष्ण चन्द्र तेरी फुलवारी में,*
*जान नापरत कछू परत कब तुषारी है।।*

सभी लोग बाल्यावस्था को खेलने में तथा युवावस्था को कामदेव के प्रभाव में आकर अजीब तरह की चालों में किसी नारी हेतु सजते–सँवरते रहते हैं। वृद्ध होते ही माया के मोह में मन फँस जाता है, तो किसी को लगता है कि अब श्वाँस टूटने वाली है। कवि सत्यकृष्ण कहते हैं कि हे कृष्ण! आपकी इस जीवनरूपी वाटिका में यह समझ में नहीं आता है कि इसमें कब तुषार पड़ता है अर्थात् जीवन कब खत्म होता है?



*मरत नर कैसे और कहाँ जात बाके प्राण*
*कौन सी मारग से जीव यह पधारी है।*
*पैदा होत बालक कहो कैसे यह देह बनी*
*काहू की गोरी और काहू की कारी है।।*
*जान न परत कछू स्वामी कौ अनौखो खेल,*
*तार सो टूटत तनक होत ना अबारी है।*
*'सत्यकृष्ण' कृष्ण चन्द्र तेरी फुलवारी के भेद नहीं*
*जाने जात बलिहारी है।।*

मृत्यु होने पर आदमी कैसे और कहाँ जाता है? उसके प्राण किस मार्ग से जाते हैं? जन्म होने पर बालक कहा जाता है। किसी का काला और किसी का गौर वर्ण शरीर कैसे बनता है? स्वामी का यह अद्‌भुत खेल है, जो समझ में नहीं आता है। अन्त समय में बिना विलम्ब किए तार सा टूट जाता है। कवि सत्यकृष्ण कहते हैं कि हे कृष्ण! आपकी जीवन रूपी वाटिका का रहस्य नहीं समझ में आता है।

*समर में अड़े हैं शान्ति धारण करे हैं नहीं जेल में*
*डरे हैं वीर देश हिन्द वाले हैं।*
*आराम सब बिसारे निज भ्रात गण सुधारे औ*
*सहे दुख सारे जे देश भक्त प्यारे हैं।।*
*'सत्यकृष्ण' मंत्र पढ़े सब हैं स्वतंत्रता को,*
*होंगे स्वतंत्र ये प्रतिज्ञा हिये धारे हैं।*
*किये हैं संगठन और प्रीति अति आपस में,*
*पियें प्रेम प्याले सब हुये मतवाले हैं।।*

युद्ध में संघर्षरत हैं, शांति को ग्रहण किये हैं, जेल में भय नहीं खाते हैं – ये बहादुर देश हिन्दुस्तान के स्वतंत्रता सेनानी है। इन्होंने विश्राम का परित्याग कर, अपने भाई–बंधुओं को सुधार कर, स्वयं दुखों को सहा है – ये हमारे प्रिय देश भक्त हैं। कवि सत्यकृष्ण

कहते हैं कि ये सभी स्वतंत्रता का मंत्र ग्रहण कर भारत को स्वतंत्र कराने हेतु प्रतिज्ञाबद्ध हैं। ये आपसी सामंजस्य, प्रेम के साथ संगठन को चाहते हैं। प्रेम रूपी सुरा का प्याला पाकर सभी मस्त हैं।

*माता के प्यारे औ दुलारे हैं भारत के*
*आरत के हरैया हिन्दोस्तान वाले हैं।*
*धर्म के धरैया परोपकार के करैया*
*दीन दुःख के हरैया और उत्तम लतवाले हैं।।*
*'सत्यकृष्ण' योग साध ईश्वर के ध्यान राख*
*मोक्ष प्राप्त करके उत्तम गत वाले हैं।*
*आन पर मरैया निज मर्याद के रखैया हैं*
*वे पियें प्रेम के प्याले सदा रहत मतवाले हैं।।*

ये हिन्दुस्तान के निवासी अपनी माँ के प्रिय और भारत का कष्ट हरण करने वाले हैं। धर्म को धारणकर, परोपकार को करने, दूसरों के दुखों का हरण करके उत्तम आदतों वाले हैं। कवि सत्यकृष्ण कहते हैं कि योग की साधना से, ईश्वर को याद करके ये मोक्ष प्राप्त करने वाले उत्तम कोटि के व्यक्ति हैं। मर्यादाओं की रक्षा हेतु, स्वाभिमान हेतु मरने वाले ये प्रेम रूपी सुरा का प्याला पीकर सभी मस्त हैं।

*साज रस आलैं में बना कै सेज चन्दन की,*
*पुष्प पंकज बिछाकै नीर झारी लै सींचिये।*
*परदा लगा कै खस खस कै भराकै हौज*
*पिचकै लगा कै इत्र किवड़ा कंछ दीजिये।।*
*होत बाला के अंग कोक ढंग से अनंग*
*प्रकट मैन वाण मार नार वीर कर लीजिये।*
*काम कला कुशलि कोमल 'सत्यकृष्ण' होय,*
*नैनू से सुकुमार नार विधि से रति कीजिये।।*



रस युक्त चंदन की शैय्या को सजा उसपर कमल पुष्पों का बिछौना कर ठंडा पानी सिंचित करके, खस–खस के परदा लगाकर, हौज के पानी में केवड़ा की सुगंध डालकर उसको छिड़क देना चाहिए। नायिका के अंग–प्रत्यंगों से काम की आभा प्रकट होती है। कामदेव का तीर मारकर ही उस नायिका के दुख का हरण करके वीर कहलाइये। कवि सत्यकृष्ण कहते हैं कि जो नायिका नवनीत के समान सुकोमल, काम कला में प्रवीण हो उससे ही रतिक्रिया करना चाहिए।

*सोलह श्रृंगार साज बारह आभूषण तन मन में*
*मनोज की उमंग को मरोरै ना।*
*चन्द्र सो प्रकाश करें काम को विकास सेज,*
*कर से निज कंचुकी के बंधन को खोलै ना।*
*हाव भाव चितवन कटाक्ष मृग नैनी सी बैनी*
*कोकिलान सी पै माननी सी बोलै ना।*
*'सत्यकृष्ण' प्राप्त होत पूर्ण रस नायक को*
*रीति रस रंगन में नेत्र अंग डोलै ना।।*

जो नायिका सोलह श्रृँगार करके शरीर पर बारह प्रकार के आभूषणों को धारण करके अपने शरीर व मन को काम की उमंग से दबाये ना, उसके मुख से चन्द्रमा के समान प्रकाश फूटकर काम को शैय्या पर विकसित करे और स्वयं अपने हाथों से वह कंचुकी के बंधन न खोले। उसकी भाव–भंगिमायें, तिरछे ढंग से देखने की कलाओं में प्रवीण, मृगनयनी, जिसकी वाणी कोयलों जैसी मीठी हो किन्तु वह कुछ वचन न बोले। कवि सत्यकृष्ण कहते हैं कि ऐसी नायिका से रति करने पर ही नायक पूर्ण आनंद की प्राप्ति होती है तथा नायिका आनंद में डूबकर आँखों को बन्द कर लेती है।

*अमृत धर तारा ईश शिव के ब्राजत शीश,*
*दधि सुत है तौ भी गरल ही कौ भैया तू।*

*शीतल है एक एक चन्द्रिका की किर्ण तेरी,*
*तौ भी तो लगाती है विरही को घुन्हैया तू।।*
*'सत्यकृष्ण' कृष्ण चन्द्र उभयकर्म चन्द्रमन्द,*
*या सौ याहि लेने की ठान मत धुन्हैया तू।*
*शान्ति तप्तकारी उजयारी विष प्यारी अरी,*
*काहे को खिझावे बृज चन्द्र जुन्हैया तू।।*

विरहित नायिका चन्द्रमा से कहती है कि तू अमृत धारण करने वाला तारा है, शिव के शीश पर विराजता है, दधि सुत है फिर भी तू मुझे विष का भाई लग रहा है। तेरी ज्योत्स्ना की एक–एक किरण सभी को शीतलता प्रदान करती है किन्तु मुझ विरहिन को आग लगाती है। कवि सत्यकृष्ण कहते हैं कि तू कृष्ण की ही तरह दोनों तरह के कर्मों वाला है इसलिए प्राण लेने की धुन मत ठान। सखी कहती है कि हे ब्रज के चन्द्रकृष्ण! मुझे क्यों परेशान करते हो ? यह ज्योत्सना तो शांतिदायी, उष्णताप्रदायी, उज्ज्वलतामुक्त विषयुक्त है।



## पंडित कृष्ण दास

राजाश्रय में रहकर भी अपनी सशक्त लेखनी से जनता के दुख दर्दों की राजा को लगातार सूचना देने वाले संवेदनशील जनोन्मुखी एवं निर्भीक कवियों की परम्परा में पंडित कृष्ण कवि का नाम अगाध श्रद्धा से लिया जाता है। आपका जन्म विक्रम संवत् 1964 माघ कृष्ण 13 तदनुसार 12 जनवरी सन् 1907 शुक्रवार को ग्राम वमनी (छतरपुर) में हुआ था। आपके पिता पंडित काशी प्रसाद और माता का नाम राजदुलारी था। माता–पिता गरीब कुल के होने के कारण करीब एक वर्ष की उम्र से आपके नाना मानसिंह पिपरिया (पन्ना) ले आये वहीं आपका लालन पालन हुआ जब आपकी आयु तीन वर्ष थी तब पिपरिया में आये संतों श्री लंगड़दास जी अयोध्या एवं स्वामी जी सुदर्शनदास जी वृन्दावन की सेवा के वास्ते नाना ने नियुक्त किया ये क्रम सात वर्ष तक चला। विक्रम संवत् 1963 के फाल्गुन में श्री स्वामी दामोदर दास जी महाराज वृन्दावन वासी से गोपाल मंत्र दिलाया। विक्रम संवत् 1971 में पन्द्रह वर्ष की आयु में श्री मारुतिनंदन जी के चरित्र की महिमा का प्रणयन किया। सात वर्ष की अल्पायु में संवत् 1973 में आपका विवाह श्याम कुँवरि से हुआ।

12 वर्ष की अल्पायु में संवत् 1976 में आपने अंबिकास्त्रोत

नामक पहली काव्य रचना की, सोलह वर्ष की आयु में आपने चित्रकूट की पैदल यात्रा की और लौटने पर पन्ना में मझले महाराजा श्री राघवेन्द्र सिंह जू देव से भेंट की, तभी से आप पन्ना दरबार में रहे। पन्ना नरेश ने उनकी काव्य प्रतिभा पर प्रसन्न होकर आम दरबार लगवाकर खड़ी ताजीम प्रदान की और ग्राम झरकुआ (पन्ना) की दो सहस्त्र आय की जमीन देकर दाहिनी बैठक बख्शी। मझले महाराज ने अपना सच्चा सुहृद बनाकर ग्राम रजपुरा की जमीन तथा पन्ना दरबार में आपको राज्यकवि की उपाधि से सम्मान दिया।

विक्रम संवत् 1991 वैशाख शुक्ल पंचमी भृगुवार को स्वामी परमानंद जी अयोध्यावासी ने युगल मंत्र दिया। गुरुदेव ने आपका नाम रामदूत शरण दिया एवं अयोध्या के सभी संतों ने आपको कविमणि उपाधि से विभूषित किया।

आपके जीवन काल में नाना वेदनाएँ आयी। विक्रम संवत् 2020 में महेन्द्र महाराज श्री यादवेन्द्र सिंह जू देव के साकेत गमनोपरान्त पन्ना से आप विलग हो गये और तभी से आपके भाग्य का पन्ना पलट गया।

आपने राज्य कवि रहते हुए और बाद में भी अनेक काव्य रचनाएँ की। प्रकाशित ग्रन्थों में श्री हनुमंत चरितामृत जिसमें श्री हनुमानजी के जीवन चरित्र का 11 हजार छन्दों में वर्णन है। बुन्देलखण्ड का इतिहास 24 हजार छन्दों में रचा है जो गद्य–पद्य समाहित 12 खण्डों में विभाजित है। जिनमें तीन खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं।

पहला खण्ड देवकुल आर्य चरितामृत (ओरछा खण्ड) है जिसके अन्तर्गत बुन्देलखण्ड के सूर्यवंशों के ऐतिहासिक तथ्यों का अनुशोधन एवं संकलन करके बुन्देलखण्ड एवं तत्सम्बन्धी भू–भागों का निरन्तर भ्रमण एवं अथक श्रम करके सूर्य वंशान्तर्गत गहरवार बुन्देला वंशावली



का पुराणकाल से लेकर आधुनिक खोजपूर्ण चक्र बनाया गया है।

बुन्देलखण्ड के इतिहास के दूसरे खण्ड भागवत धर्म चरितामृत (पन्ना खण्ड) में पन्ना राज्य के इतिहास को सप्रमाण प्रस्तुत किया गया है। तीसरा खण्ड वीर चरितामृत है इसमें महाराजा छत्रसाल एवं उसके पिता राव चंपतराय के जीवन के सभी पहलुओं पर विस्तार से प्रामाणिक वर्णन है। बुन्देलखण्ड के इतिहास के बारह में से इन तीन खण्ड के अतिरिक्त बुन्देलखण्ड के कवि नामक ग्रंथ प्रकाशित हुआ है जिसमें बुन्देलखण्ड के सभी प्रमुख कवियों का जीवन परिचय एवं उसकी काव्यशैली व रचनाओं का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त श्री हनुमंत कृपा षोडशी नामक पुस्तक भी प्रकाशित है। जिसमें सोलह छन्दों में श्री हनुमान जी की स्तुति है। समस्या पूर्ति में अद्वितीय रचनायें कर पुरस्कार प्राप्त किये।

इन प्रकाशित ग्रन्थों के अतिरिक्त आपने 181 अन्य ग्रन्थ भी लिखे हैं जो अर्थाभाव के कारण प्रकाशित नहीं हो पाये हैं। इनमें कहावत मंजरी, गीत विनोद, संत चरितामृत, भक्त चरितामृत, तुलसी चरितामृत, लोक गीत मंगल, वीर सती, भक्त माल, वैष्णव जन की कसौटी आदि प्रमुख है।

क्षीण नेत्र ज्योति एवं मधुमेह से ग्रसित पंडित कृष्ण कवि का 90 वर्ष की आयु में 19 मई सन् 1997 को उनके गृह ग्राम झरकुआ (कुदरा) जिला पन्ना में हृदय गति अवरुद्ध हो जाने के कारण निधन हो गया।

## दंडक छंद

*जाँचें हम वाकें, जिन मुनि की रखाई यज्ञ,*
*जाँचें हम वाके जिन, मुनी नारि तारी है।*

*जाँचें हम उनें जिन, जनक प्रण पूर्ण कीन्हों,*
*जाँचें हम उनके करी सौरी शुभकारी हैं।।*
*जाँचें हम उनैं जिन भानु सुत भूप कियो,*
*कीन्हों पति लँक अति दीन भयहारी है।*
*कहै कवि 'कृष्ण' नर मूढन को जांचें कहा,*
*जाँचें हम बाकें जोन पालें सृष्टि सारी है।।*

हम उनको परखें जिन्होंने मुनियों की यज्ञशाला की रक्षा की तथा गौतम मुनि की पत्नी का उद्धार किया है। हम उनको परखें जिन्होंने राजा जनक का प्रण पूर्ण किया एवं शबरी की कुटिया पहुँचकर शुभ कर्म किया। हम उनको परखें जिन्होंने सूर्यपुत्र को राजा बनाया तथा विभीषण जैसे निरीह को भयमुक्त कर लंकापति बनाया। कृष्ण कवि कहते हैं कि हम मूर्ख मनुष्यों को क्या परखें? हम तो उन्हीं को परखेंगे जो समस्त सृष्टि के पालनकर्ता हैं।

*राजन के राजा महाराजन के महाराज,*
*साहन के शाह बात ऐन के लखैया हौ।*
*देवन के देव सर्व सेवन के महासेव,*
*धर्मिन के धर्म कर्म, कर्म के रखैया हौ।।*
*कृष्ण कवि वीरन के वीर धीर धीरन के,*
*परम कृपालु दीन दास के सहैया हौ।*
*भानु कुल तिलक सुजान वरदायक हौ,*
*भानु कुल भानु सो हमारे रघुरैया हौ।।*
*तेरे राज्य रामचन्द्र पाइये अनेक सुख्ख,*
*तेरे राज्य रामचन्द्र आनन्द विसाहिये।*
*तेरे राज्य रामचन्द्र सिद्धि रिद्धि कोटि मिलै,*
*तेरे राज्य रामचन्द्र सर्व सुख दाहिये।।*

आप राजाओं और महाराजाओं में श्रेष्ठ, शाहों के शाह आप



अंतर्यामी हो सब कुछ देखते हैं। आप देव के भी देव, सेवितों के महासेव, सभी धर्म–कर्म की रक्षा करने वाले हैं। कृष्ण कवि कहते हैं कि आप वीरों के वीर, धीरों के धीर तथा गरीबों की सहायता करने वाले परम कृपालु हैं। आप सूर्यकुलमणि, सद्‌गुणों से युक्त वर देने वाले, सूर्यवंश के सूर्य रामचन्द्र हो। हे रामचन्द्र जी! तुम्हारे राज्य में सुख व आनन्द सभी पाते हैं। तुम्हारे राज्य में सहस्त्र गुना समृद्धता है तथा तुम्हारा राज्य सभी सुखों से सम्पन्न है।

*तेरे राज्य रामचन्द्र, सकल सुतंत्र जीव,*
*कृष्ण कवि मुक्ति मुक्त युक्त शीस वाहिये।*
*भान कुल भान प्यारे अवध नृपाल राम,*
*उमर दराज महाराज तेरी चाहिये।।*
*हौं तौ मन्द पापी तुम पावन परम पूरि,*
*सन्मुख भये ते पाप पीनता कहाँ रही।*
*हौं तौ अति मूरख सु अज्ञनाथ बोध हीन,*
*तेरे गुण गाये फिर हीनता कहाँ रही।।*
*मंगल करन तुय सरन सु कृष्णदीन,*
*रावरे सरन में मलीनता कहाँ रही।*
*जाँच्यौ दीन बन्धु जगदीस ईस राम भद्र,*
*रावरो कहाय नाथ दीनता कहाँ रही।।*

हे रामचन्द्र जी! तुम्हारे राज्य में समस्त जीव स्वतंत्र जीवन जीते हैं। कृष्ण कवि कहते हैं कि आपके राज्य में सभी युक्ति से भयमुक्त शीश झुकाते हैं। सूर्यकुल के रवि, अवधपति प्रियराम आपकी दीर्घायु की कामना करता हूँ। मैं तो अति मंद बुद्धि और पापी हूँ आप पवित्रता से युक्त हो अर्थात् आपके सामने आने से मेरे समस्त पाप खत्म हो जाते हैं। मैं तो अत्यधिक मूर्ख, अज्ञानी बोधहीन हूँ किन्तु आपके गुण गाने से मेरी हीनता खत्म हो जाती है। आप जैसे शुभ करने वाले की शरण में दीन कृष्णकवि आ गया है तो मेरी मलीनता

अब कहाँ रही? सारे सृष्टि के वन्दनीय, दीनों के भाई राम आपको मैंने परख लिया है आप हमारे नाथ और मैं सेवक तो अब दीनता कहाँ रहीं?

### घनाक्षरी

*जा दिन तें प्राण नाथ, बिछुरे हे महावीर,*
*ता दिन तें मैंने मुख अन्न जल दीन्हों नाँहि।*
*आय के सुरेश फल सुधा सो पवाय गये,*
*सोचो दिन रैन नैन नीर धार टूटे नांहि।।*
*कृष्ण कवि नैन ओट टूटो धौ सनेह हाय!*
*छाँड़ी सुधि मेरी तातें धीर उरो रहै नांहि।*
*भाग्यहीन दुखनी अनाथ जग मोसी कौन,*
*कौन अपराध प्रभु मोरी सुध लीनी नाँहि।।*

जानकी हनुमन्त से अशोक वाटिका में कह रही है कि हे महावीर हनुमान! जिस दिन से प्राणों के स्वामी (राम) से विलग हुए हैं, उसी दिन से मैंने मुख में अन्न व जल नहीं दिया है। इन्द्र ने आकर के लगता है अमृत पिला दिया है जिससे जीवित हूँ। प्राणनाथ राम का सोच (विचार) करने से दिनरात नेत्रों से आँसुओं की धारा खत्म नहीं होती है। कृष्ण कवि कहते हैं कि नेत्रों के ओझल होने से स्नेह और भी पक्का हुआ है, उन्होंने मेरी सुधि छोड़ दी लेकिन मेरा धैर्य डिगा नहीं। मुझसे ज्यादा अभागिन, दुखी व असहाय इस संसार में कौन होगा? जिसने प्रभु का साथ छोड़ा। प्रभु श्रीराम ने किस अपराध की सजा देकर मेरी सुधि (खबर) नहीं ली है।

समस्या–*संत न हौंहि जटान धरें, अबलान तजें नहिं साधु कहाये।*
*राग तजें भव द्वैष तजें नहिं, अंगन अंग विभूति रमाये।।*
*त्यों कबि कृष्ण भये वकता, सकती नहीं आवत अंग तपाये*
*रंगनिरंजन त्यों मन हैं बस, वैष्णव होत–कवाव के खाये।।1।।*



सिर पर लम्बे बालों को धारण कर लेने से कोई संत नहीं बन जाता, केवल नारी को त्यागने से कोई साधु नहीं कहलाता। संसार में राग और द्वेष को मात्र त्यागने से अथवा शरीर के सभी अंगों में राख लिपटा लेने से कोई साधु नहीं बनता। कृष्ण कवि कहते हैं कि केवल हठ योग से शरीर के अंगों को कसने से शक्ति नहीं आती। सतरंगी मन को वश में रखकर कबाब (पक्षी मांस से बना व्यंजन) के खाने वाले भी वैष्णव होते हैं।

पूर्ति –*काम कबूतर तामस तीतर, ज्ञान गुलेलिन मार गिराये।*
*सत्य छुरी दमनीर में धोय सो, प्रेम के पात्र में जाये चढ़ाये।।*
*त्यों कबि कृष्ण सनेह कौ घीव, सुयोग की अग्नि जराय बनाये।*
*थाल परोस धरे बिसवास कौ, बैष्णव होत कवाव के खाये।।2।।*

कृष्ण कवि कहते हैं कि कामभाव रूपी कबूतर एवं क्रोध रूपी तीतर (एक पक्षी) को ज्ञान रूपी गुलेल (पक्षी मारने का स्थानीय अस्त्र) से मारकर उसे सत्य रूपी धुरी से काटकर संकल्प रूपी नीर में धोकर, प्रेम रूपी बर्तन में स्नेह रूपी घी डालकर योग की अग्नि में जलाकर पकाते हैं। विश्वास रूपी थाली में परोस कर ऐसे कबाब को खाने वाले ही वैष्णव कहलाते हैं।

*अब तौ भारत भूमि में, भो स्वतंत्र सब साज,*
*मन–मन के राजा सबै, साजत साज कुसाज।*
*साजत साज कुसाज, लक्ष पैसन पै सब कौ,*
*भे स्वारथ के मीत, बिगोयो सत पथ सब कौ।।*
*अनाचार पथ भ्रष्ट रहिव, नहिं कतहूँ तब तौ,*
*झीकां झपटी करत भयऊ, नर हिंसक अब तौ।*
*दिन दुपरे डांके परत, लूटत प्रजन तमाम,*
*नीचे तैं ऊपर तलक, करता बढ़े गुलाम।।*
*करता बढ़े गुलाम, हाय अब कैसो कीजे,*

*जेई प्रहरी तिहि चोर, बिनय कित हाय करीजे।*
*जात लाज कवि 'कृष्ण', दीन जन कैसे उबरे,*
*धन दारादिक छीन, देत डांके दिन दुपरे।।*
*जग आजादी हेत भै, दुस्साहस सब काज,*
*भारत वीर अनेक भे, बल अनेक सिरताज।*
*बल अनेक सिरताज, ब्रिटिश शासन ठुकरायो,*
*प्राणदान दै धन्य, आपनों देस बचायो।।*
*बांध एकता सूत्र शान्ति पथ, सब बिधि सादी,*
*समझौ भारत वीर मिलि, केहि बिधि आजादी।*
*आजादी के मिलत ही, संस्था भयीं अनेक,*
*गुटबंदी घर–घर भयीं, फूट छूट अविवेक।।*
*फूट छूट अविवेक, भयो सब सासन गुन्डा,*
*करत लूट दिन रैन, जहां तहं हिंसक गुंडा।*
*धरिव ताक में न्याय, 'कृष्ण' कवि पहरी खादी,*
*लंपट चुगल चटोर, चलाकिन हित आजादी।।*
*सतधारी पीछे किये, आगें आये कूर,*
*मर्यादा प्राचीन हन, करी सभ्यता चूर।।*
*करी सभ्यता चूर, बिकट व्यभिचार बढ़ायौ,*
*जन किये बिहाल, जाल चहुँ ओर बिछायौ।*
*हा! को राखे लाज, 'कृष्ण' कवि बिन गिरधारी,*
*नेता राकस बढ़े, किये पीछे सतधारी।।*

अब भारत भूमि में सब कुछ स्वतंत्र हो गया है, सभी अपने–अपने मन के राजा हो गलत मार्गों पर चल रहे हैं। सभी लोगों का लक्ष्य अब पैसा हो गया है। सत्य पथ से भ्रष्ट हो सभी स्वार्थी हो गए हैं।

अत्याचार का बोलबाला हो सभी मार्ग भटककर हिंसक हो आपसी नोच–घसोट में संलग्न है। अब भरी दुपहरी में डकैती पड़ती है, प्रजा को विविध रूपों से लूटा जा रहा है। निचले स्तर से उच्च



स्तर तक गुलामों (चाटुकारों) की संख्या बढ़ गई है। जो रखवाले हैं, वे ही चोर बनकर लूट रहे हैं। अतः ऐसी स्थिति में क्या किया जाये? किसके पास जाकर अपनी विनय सुनाई जाए। कवि कृष्ण कहते हैं कि सभी निर्लज्ज हो गए हैं। दीनों की कौन मदद करे? उनका धन और स्त्रियाँ आदि छीनकर अब दिन में ही डकैती पड़ रही है।

संसार में आजादी के लिये अनेक दुस्साहसी कार्य किये गये। भारत में अनेक वीरों का जन्म हुआ और वे संसार में शिरोमणि रहे। उन्होंने ब्रिटिश शासन से मुकाबला किया और अपने प्राणों को न्यौछावर करके अपने देश को बचाया। वे धन्य हैं उन्होंने देश को एकता के सूत्र में बाँध शांति पथ पर सरल ढंग से चलाने का प्रयत्न किया। भारत के नौजवानों इस तथ्य को समझिए कि हमें स्वतंत्रता आसानी से नहीं, बल्कि लम्बे संघर्ष से मिली है। स्वतंत्रता के प्राप्त होते ही इस देश में विभिन्न संस्थाओं का जन्म हो गया, घर–घर में गुट बन गए और हम अविवेकी रूप से टुकड़ों में विभाजित हो गए।

इस अविवेकी फूट के कारण ही शासनतंत्र पर गुण्डा (अपराधी) हावी होकर दिन–रात हिंसक हो प्रजा को लूट रहे हैं। कृष्ण कवि कहते हैं कि न्याय को ताक में रखकर चालाक व गुण्डों ने खादी पहन ली है। अर्थात् आजादी का लाभ चुगलखोरों, चोरों और चालाकों को ही मिल रहा है।

सत्य के मार्ग पर चलने वालों को पीछे धकेल कर क्रूर (दुष्ट) आगे आकर सभ्यता को विनष्ट कर सारी मर्यादाओं को ध्वस्त कर रहे हैं।

अत्यधिक व्यभिचार बढ़ाकर आम नागरिकों को परेशान कर रखा है। इन्होंने अपने जाल, समाज में सभी ओर बिछा दिये हैं। कृष्ण कवि कहते हैं कि हे गिरधारी! अब इस देश की लाज कौन रखेगा? नेता रूपी राक्षस बढ़ गए हैं और सत्यधारी पीछे हो गए हैं।

प्रार्थना – *कहैं प्रीति नहिं घटत हिये की, अधिकहिं परिव अंदेसौ।*
*पाती लिखत बनत ना कैसऊँ, कहत न बनत संदेसौ।।*
*हृदय हेर हारिस सब विध सौं, पन्थ न रँचक सूझै।*
*थाक्यौ इन्द्रिन कौ बल सिंगरौ, बात न कोऊ बूझै।।*
*श्रीमान् गुणनिधि सब जांनहुँ, यथा वेदना छाई।*
*मो कँह उचित कहा कीवो अब, दीजे पन्थ गहाई।।*

हे भगवन्! कह देने से हृदय की प्रीति नहीं घटती है बल्कि बढ़ती ही है। मैं अनेक शंकाओं से ग्रस्त हूँ। न पत्र किसी प्रकार लिखते बन रहा है। और न संदेश कहते बन रहा है। मेरा हृदय सब तरह से बाट देखकर हार गया है, मुझे कोई तनिक भी रास्ता नहीं सूझ रहा है। मेरी समस्त इन्द्रियाँ शिथिल हो गई हैं जिससे कोई बात समझ नहीं आती है। आप गुणों के भण्डार हो और अंतर्यामी हो सब जानते हो कि मुझे कितनी वेदना है? मेरे लिए अब उचित क्या है? मैं अब क्या करूँ? आप सही मार्ग पर चलने हेतु प्रेरित कीजिए।

दोहा– *सठ सेवक–राजा कृपण, दुष्ट तीय अज्ञखान।*
*कपटी मीतिहिं छाड़िये, चारहुं सूल समान।।*
*चारहुं सूल समान, काल के यहै संगाती।*
*निरउपाय दुख दीह, रैन दिन जारत छाती।।*
*रहहु सजग कवि 'कृष्ण', करत यह सदा अकाजा।*
*सब सूलन के मूल, तजिय सठ कृपणी राजा।।*
*होत छनक में तुष्ट पुनि, रुष्ट छनक में होय।*
*रुष्ट तुष्ट गति एक सी, मति पांहन जिम जोय।।*
*मति पांहन जिम जोय, तजो सेवा इनकेरी,*
*इनते बचत सुजान, जानिये सब बिधि बैरी।।*
*अकल हीन बुध हीन, 'कृष्ण' कवि रोस तनक में,*
*स्वान वृत्ति डुलत, घरन–घर छनक छनक में।।*



मूर्ख नौकर, कंजूस राजा, अज्ञान की भंडार दुष्टा नारी तथा कपटी मित्र इन चारों को तत्काल कष्टकारी समझकर छोड़ देना चाहिए। इन चारों के रहने से मृत्यु पास रहती है तथा बिना कारण दुख के कारक बनकर दिवस–रात्रि मन (हृदय) को जलाते (बेचैन करते) रहते हैं। कवि कृष्ण कहते हैं कि अकर्मी मूर्ख तथा कंजूस राजा को भी त्याग देना चाहिए क्योंकि यह सभी कष्टों की जड़ होता है। एक क्षण में प्रसन्न व एक क्षण में क्रोधित हो इनकी गति एक समान रहती है। इनकी बुद्धि पत्थर समान होती है। इनकी (राजा) सेवा तत्काल त्याग देना चाहिये इनसे चतुर व्यक्ति सदा बचते रहते हैं इन्हें सब तरह से शत्रु मानना चाहिए। कृष्ण कवि कहते हैं कि प्रज्ञा व बुद्धिहीन ये लोग कुत्ते के स्वभाव समान हों क्षण–क्षण में अनेक घरों में घूमते हैं।

## पटवारी दशक

*मण्डलीक मणि भूपति, चक्रवर्ती सिरताज।*
*तिलतिल धरती के नृपति पटवारी महाराज।।*
*पटवारी महाराज भूमि के भूप लुटेरे।*
*ऊपर मालिक राम, नीचे पटवारी हेरे।।*
*जगत सतावन यही, सही जम के अवतारी।*
*जिअन मरन इन हाथ, भूम राजा पटवारी।।*

मण्डलीकों में श्रेष्ठ चक्रवर्ती राजाओं में शिरोमणि और थोड़ी सी भी जगह के तुम स्वामी हो। तुम भूमि को लूटने वाले तुम राज लुटेरे हो। स्वर्ग में भगवान और धरती पर पटवारी ही प्रभावी है। संसार को कष्ट देने वाले यह यमदूत के अवतार हैं। धरती राजा पटवारी के हाथों व्यक्ति का जीवन–मरण है।

*राजन के संग चलत हैं सेन सुभट हथयार।*
*पटवारी के बगल में कागज कलम तयार।।*

*कागज कलम तयार, कोटगढ़ छिन में टोरे।*
*नकसा करें तयार, छोट बड़ सबै निहोरें।।*
*जगत नचावत नाच, बने सीधे सरकारी।*
*भू अति क्रमण दिखाय, प्रजा लूटत पटवारी।।*

राजाओं के साथ जिस तरह सेनापति अस्त्र–शस्त्र लेकर चलते हैं उसी तरह पटवारी के पास कलम और कागज तैयार रहता है। इन कागज–कलम से किलों–परकोटों का क्षण भर में तोड़ देते हैं और नकसा तैयार करके छोटे–बड़े सबको देख लेते हैं। सीध ो–सादे सरकारी कर्मचारी के रूप में ये संसार को नाच नचाते हैं। भू–अतिक्रमण दर्शाकर कभी भी प्रजा को लूटना उनके हाथ में रहता है।

*विधना हू जानत नहीं, इनकी चाल कराल।*
*कागज कखयायें फिरत, चतुर चोर के लाल।।*
*चतुर चोर के लाल, बड़े गलकट्टा सोई।*
*बापहि छोड़त नहिं, बेल हिंसा की बोई।।*
*गन मसीन बम बिषम, खतौनी खसरा भारी।*
*चूसत जनता रुधिर, ताल दै दै पटवारी।।*

इनके क्रियाकलापों को ब्रह्मा भी नहीं जानता, ये चोर पुत्र कागज–पत्र बगल में दबाये घूमते गला काटने में निपुण हैं। ये अपने पिता को भी नहीं छोड़ते। इनकी क्रियायें हिंसा को जन्म देती हैं। इनके खसरा–खतौनी मसीन–गन और कठिन बंब की तरह विषम प्रभावी है। पटवारी चुनौती के साथ जनता का खून चूसता है।

*पुराचीन तें आज लग, मारीची कौ साज।*
*दुख्ख मूल यह भूमि में, पटवारी कौ राज।।*
*पटवारी कौ राज, ढाल बस्ता कखयावैं।।*
*नोंकदार ले कलम मर्मथल काट खसावैं।।*



*गांव खेत अरु गैल, सु तिल–तिल छिड़िया बारी।*
*तित अतिक्रमण दिखाय, डसत पग पग पटवारी।।*

प्राचीन काल से आज तक पटवारी का राज्य धोखेबाजी और दुख की जड़ है। ये बगल में बस्ता दबाये घूमते हैं और नोंकदार कलम से महत्वपूर्ण जमीन के भाग को काटकर कागज में खिसका देते हैं। गाँव, खेत, मार्ग, गली आदि स्थलों पर अतिक्रमण दिखाना और जनता को काटना पटवारी के स्वभाव में है।

*दे चछमां जब मेंड़ पर, हेरत चारों ओर।*
*लख किसान थर थर कपत, यह बंसी की डोर।।*
*यह बंसी की डोर, नीर की मीन निकारैं।*
*व्याकुल विकल किसान, फिरत शासन के द्वारैं।*
*जेते राजा रंक, दीन जनता युग चारी।*
*नवग्रह दसा पिसाच, प्रजह चूसत पटवारी।।*

आँखों में चस्मा लगाकर पटवारी जब खेत की मेंड़ पर खड़े होकर चारों तरफ देखकर निरीक्षण करता है तो किसान ऐसे काँप जाता है जैसे वंशी डालकर मछली पकड़ने वाले से मछली डरती है। पटवारी से परेशान होकर किसान शासन के द्वार पर (कोट–कचहरी) घूमता–फिरता है। नवग्रहों की दशा से जैसे लोग परेशान होते हैं उसी प्रकार सामर्थवान से लेकर गरीब व्यक्ति का शोषण भी पटवारी चारों युगों में करता है।

*मारीची विद्या सकल, इन्द्रजीत कौ जाल।*
*जे मारें जानें न कोऊ, इनकी कला कराल।।*
*इनकी कला कराल, यथा खाटन खटकीरा।*
*चूसत रुधिर परात, खाट कौ पकरत सीरा।।*
*चुगल चटोर चलाक, सूझ इनकी अनयारी।*
*देखत भूली करत, छली ग्रामी पटवारी।।*

जिस प्रकार संपूर्ण राक्षसी विद्या तथा इंद्रजाल द्वारा मारे जाने पर कोई इनकी कला को नहीं समझ पाता अर्थात् इन दोनों के द्वारा बड़ी ही कुशलता से मारा जाता है, इसी प्रकार जिस तरह खाट में छिपे खटमल चालाकी के साथ व्यक्ति का ढेर सारा रक्त चूसकर पुनः खाट की ओट में छिप जाते हैं वैसे ही पटवारी भी लोगों को नुकसान पहुँचाकर इतनी चालाकी से अलग हो जाता है कि कोई उसकी चाल को नहीं समझ पाता है। ये पटवारी अत्यंत ही चालाक, लोभी व चुगलखोर प्रवृत्ति के होते हैं इनकी बुद्धि अत्यंत पैनी होती है और ये जानबूझकर भूल करते हुए ग्रामवासियों के साथ छल करते हैं।

*मसक डसे तें होत है, जग मलेरिया रोग।*
*भूम रोग इनतें बढ़त, भोगत घर घर लोग।।*
*भोगत घर घर लोग, अहै यह कलम कसाई।*
*इनतै बचवौ कठिन, यही सासन के साई।।*
*सब करतालें आड़, खतौनी मांगत न्यारी।*
*नहिं बूझत कोउ बात, जगत करता पटवारी।।*

जिस प्रकार मच्छर के काटने से सारा संसार मलेरिया रोग से ग्रस्त हो जाता है वैसे ही पटवारी के द्वारा नुकसान पहुँचाने से भूमि संबंधी परेशानी का भयंकर रोग हो जाता है। जिसे घर–घर के लोग सहते हैं और ये कलम रूपी तलवार के कसाई है। जिनसे बचना अत्यंत कठिन है। यह साम्राज्य के लिए कसाई के समान है जो लगातार उसे नुकसान पहुँचाते रहते हैं। ये विभिन्न हथकंडों के माध्यम से खतौनी मांगते रहते हैं और कोई उनसे कुछ पूछता भी नहीं जिससे ये अपनी मनमानी करते रहते हैं।

*राज रोग ग्रह की दशा, सर्प डसें बच जाय।*
*पटवारी की कलम से, बचत न रंच दिखाय।।*



*बचत न रंच दिखाय, होय चह भूप भिखारी।*
*ऐसी ओझल चोट, परिया की अनयारी।।*
*रोम रोम बिंध जात, विकल विलखत नरनारी।*
*इनतें बचवौ कठिन, महां घातक पटवारी।।*

विभिन्न प्रकार के बड़े–बड़े रोगों, ग्रहों की दशाओं, यहाँ तक कि सर्प के डसने पर भी व्यक्ति की जान बच सकती है किन्तु पटवारी की कलम के द्वारा किए गए अप्रत्यक्ष वार से बचने की नाम मात्र की गुंजाइश नहीं रहती। वह निकृष्ट ऐसी अदृश्य व तीखी चोट करता है कि व्यक्ति का रोम–रोम बिंध जाता है और स्त्री–पुरुष विकल होकर बिलखते हैं किन्तु इन पटवारियों से बचना अत्यंत कठिन है, ये अत्यंत घातक होते हैं।

*को उबरिब यह जाल तें, सासक समुझित नांय।*
*लेत सहारौ कलम कौ, हाकिम पर पर जांय।।*
*हाकिम पर पर जांय, सकें नहिं आँख उघारी।*
*हे प्रभु दीन दयाल, बचावहु कष्ट अपारी।।*
*कहत 'कृष्णकवि' सत्य, सुनों सिगरे नर नारी।*
*इनकी लीला अगम, भूमि मालिक पटवारी।।*

पटवारी के जाल से कौन बच सकता है, इसे शासक ही जानते हैं वह कलम का आश्रय लेकर अधिकारी को भी झुका लेता है। अधिकारी झुक जाता है और आँख भी नहीं खोलता अर्थात् सत्य को देखने का प्रयास भी नहीं करता। हे परमपिता परमात्मा! दीनों पर दया करने वाले, मुझे इस कष्ट से बचा लीजिये। कृष्ण कवि कहते हैं कि सभी नर–नारी यह बात सुन लो कि भूमि का स्वामी पटवारी है और उसकी लीला अपरंपार है।

*काल परै हुलकी परै, मरा परै बच जाय।*
*पटवारी की कलम तें, बचत न कोऊ दिखाय।।*

*बचत न कौऊ दिखाय, बाप के सगे न होई।*
*भर भादों की गाज, परै इनपै प्रभु सोई।*
*करिया मुख हो जाय, अंत में होत खुबारी।*
*सबही तें छल करत, बनें फिरत पटवारी।।*

यम की मार से अथवा महामारी के प्रकोप से व्यक्ति मरकर भी भले जीवित हो जाय किन्तु पटवारी की कलम से कोई नहीं बचता दिखाई देता है। पटवारी अपने सगे पिता को भी नहीं छोड़ता। हे प्रभु! भाद्रपद के माह में इन पर बिजली गिर जाय तो अच्छा। हे ईश्वर! इसे यहाँ से भगा दें, इसका अन्त निश्चित ही खराब है। यह पटवारी सदैव सबसे कपट का व्यवहार करता है।

*जसोदा हरी पालने झुलावै।*
*मन झूलत लख लाल मधुर छबि, निरख निरख बल जावै।*
*को झूलत अरु कौन झुलावत, महामोद सरसावै।।*
*इकटक चकित चित्त, चित झूलत मन मोदित सुख पावै।*
*श्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी, चित कंचनहिं कसावैं।*
*मधुर हास लालन कौ लख कर, भूल अपुन पौ जावैं।*
*ठग सी रही 'कृष्णकवि' जसुदा, परा प्रेम दरसावै।।*

(उपर्युक्त सभी छंद सौजन्य से : आनन्द शर्मा)

यशोदा जी भगवान श्रीकृष्ण को पालने में लिटाकर झुला रहीं है। अपने पुत्र की कोमल कान्ति को देखकर उनका मन भी झूलने लगता है। वह बार–बार निहारते हुए अपने लाल पर बलिहारी होती है। झूले में कौन झूल रहा है? (ब्रह्म का भाव) और कौन झुला रहा? यह सोचते ही यशोदा जी का मन अखंड आनंद के सरस भाव में आवेशित हो जाता है। विस्मित मन से अपलक श्रीकृष्ण को देख रही हैं, उनका अन्तःकरण झूल रहा है, प्रसन्न मन से वह सुख का आनंद ले रही हैं। श्रीकृष्ण का सांवला रूप पवित्र सुन्दर कषपट्टी (सोना



परखने का काला पत्थर) है जिससे वह अपने मन रूपी सोने को परख रही हैं। अपने लाल (श्रीकृष्ण) की मधुर मुस्कान को देखकर वह अपने आपको भी भूल जाती हैं। कृष्ण कवि कहते हैं कि यशोदा जी चकित (भौचक्की) दिखाई दे रही हैं, वह ब्रह्माण्ड में मग्न दिख रही हैं।

# डॉ. मदन गोपाल शुक्ला 'मदन अली'

आपका जन्म दिसम्बर 1908 में छतरपुर में हुआ। आपके पिताश्री का नाम पं. परमानंद जी है। पं. परमानंद इनके जन्म के बाद ही संन्यासी हो गये थे। छः माह के बाद माता जी ने भी शरीर छोड़ दिया था। अतः लालन–पालन प्रारंभ में नाना–नानी के घर (नौगाँव के अग्निहोत्री परिवार) में हुआ। 7–8 वर्ष की आयु के बाद अपनी नानी की बहिन के पास रहे।

आपकी शिक्षा–दीक्षा छतरपुर में ही हुई। अध्यापक के पद पर नियुक्ति हो जाने पर महाराजपुर, राजनगर और लौड़ी में क्रमशः कार्यरत रहे। डॉ. सेन के सान्निध्य में आने पर कम्पाउण्डर की ट्रेनिंग की और कम्पाउण्डर के पद पर नियुक्ति पा ली किन्तु वह भी छोड़ दी और अपना स्वयं का चिकित्सा कार्य प्रारंभ किया, जिसमें पर्याप्त यश प्राप्त किया।

आपको साहित्य के प्रति रुचि प्रारंभ से ही रही। छतरपुर में सैर–गायन के अखाड़े होते थे। आप उसमें कवि के रूप में प्रतिष्ठित थे। आप पं. परमानंद पाण्डे के पक्ष वाले थे। विषय के अनुकूल तुरन्त



रचना करने की क्षमता आपमें थी। श्रृँगार के अतिरिक्त आपने हनुमान जी के 'चरित्र–वर्णन' की सैरें भी लिखीं हैं। बाद में आपकी रुचि भक्ति भावना से अधिक जुड़ गई और आपने विनय–पद और चेतावनी के पदों की रचना की। आप सखी सम्प्रदाय के उपासक थे। अतः आपने अपना उपनाम 'मदन अली' निश्चित कर लिया था। बाद की रचनाओं में यही उपनाम आया है। आपने 2 फरवरी 2005 को शरीर छोड़ दिया है।

**प्रकाशित रचना – भावनार्चन**

अप्रकाशित रचना – 100 छंद उनके पुत्र श्री जयजयराम शुक्ल के पास सुरक्षित हैं। इसके अतिरिक्त बहुत से कवित्त, सैरें आदि फुटकर रचनायें गायकों के बस्तों अथवा लोक कंठ में सुरक्षित हैं।

*सुरतिया विसर न पावै मोर।*
*निशि वासर पद पद्यन में रति यही विनय कर जोर।*
*प्रभु सर्वज्ञ समर्थ सभी विधि मैं मति कौ अति थोर।।*
*शरणागत सुख सुनि गुनि, प्रमुदित थकि आयो तुम दोर।*
*मदन अली प्रभु त्राहि पुकारत तकि तकि करुना कोर।।*

हे प्रभु! मेरी सुध भूल न जाना। दिन–रात चरण कमलों में मेरा मन लगा रहे– यही मेरी प्रार्थना है। आप सब कुछ जानते हो और सभी प्रकार समर्थ हो जबकि मेरी बुद्धि बहुत कम है। शरण में पहुँचने के आनंद जानकर और समझकर मैं प्रसन्न हुआ तभी हारकर आपके द्वार पर आया हूँ। आपकी करुण–कृपा की आशा करते हुए मदन कवि कहते हैं कि– हे प्रभु! मेरी रक्षा करो।

*मन क्यों सावधान नहीं होते।*
*तुमको हम समुझाय बुढ़ाये तऊ खात रये गोते।*
*नादानी न करो संग में नहि पड़ जैहौ थोते।।*
*क्षण भंगुर सब काम जगत के समझ गये यदि होते।*
*मदन अली प्रभु शरण नाम के बन जाते तुम गोते।।*

हे मन! तू सचेत क्यों नहीं हो रहा है? तुम्हें समझाते हुए मेरी उम्र बीत गई, मैं वृद्धावस्था को प्राप्त हो गया हूँ फिर भी तुम संसार सागर में धोखा खा रहे हो। अब बेसमझी अपने साथ न करो अन्यथा खाली पड़ जाओगे। संसार के सभी काम कुछ क्षणों के हैं' यह बात यदि तुम्हारी समझ आ गई होती तो मदन कवि कहते हैं कि तुम प्रभु के नाम की शरण के आनंद सागर में डुबकी लगा रहे होते।

## सैर

*दोहा–* *नीके कें बैनी बना, कर कजरारे नैन।*
*निर्मल दर्पन हाथ लै, निरख भरत हिय चैन।।*

*सोरठा –* *निरख भरत हिय चैन 'मदन', प्रभा युत गौर तन।*
*नबल नागरी ऐन सज श्रृंगारत निज बदन।।*

*छंद –* *निज बदन पर सजि सारि सुन्दर स्याम रंग मन भावनी।*
*नीके उरोजन कसत कंचुकि बहुरि बहुरि फसावनी।*
*नग जरित ऐरन श्रवन सजि दे बिन्दु भाल रिझावनी।*
*नोने नितंबन पर पहिन करधनी ललित लुभावनी।।*
*नीरज से कोमल करन कंकण मुंदरि आद सुहावनी।*
*नग जरित गर गुलुबंद हंसुलि जंजीर मोति गुथावनी।*
*नख लाल यावक पदन भूषन ललित दुति दरसावनी।*
*नहि कहत शोभा बनत मनु ऊषा ढपी निशि भावनी।।*

*सैर –* *निज केलि भवन सजय्यौ गई छैल मन छलन,*
*नायक प्रवीण स्वागत हित उठि मिल्यो गलन,*



*निःशंक अंक अंगन दोउ भरत चुल बुलन,*
*नहिं देत छुवन छाती क्यों छैल छल बलन।।1।। टेक।।*
*नहिं बनत कहत हाव भाव पलंग तक चलन,*
*नहिं गज गति कर समसर वह चाल अल बलन,*
*नीके कपोल चूंमत नहि नहि कहत झलन,*
*नहिं देत छुवन छाती..... ।।2।।*
*नागरि समेत मुदित बैठि पलंग लस ललन,*
*नहिं तृप्ति हिये बांही गल मेलि हिल मिलन,*
*नहिं बिलम लगी लोटत पर्यंक तल बलन,*
*नहिं देत छुवन छाती..... ।।3।।*
*नय नाहि चूंम नागर कर गई कुच दलन,*
*ना गहो उरज प्रिय पिय कह प्रेम युत मलन,*
*नायक सुहेत गुन कर भर भाव हिय भलन,*
*नहिं देत छुवन छाती..... ।।4।।*
*नोखो सुस्वाद अधरामृत लेत कल बलन,*
*नाना किलोल केलि करत कोक कल कलन,*
*नजरत निमग्न आनंद अध खुले चख दलन,*
*नहिं देत छुवन छाती..... ।।5।।*

(गायक – श्री जानकी प्रसाद खरया)

अच्छी तरह से बालों की चोटी बनाकर नायिका आँखों में काजल लगाती है फिर स्वच्छ दर्पण हाथ में लेकर अपना चेहरा देखती है और मन में सुख पाती है।

नव यौवना अपना मुँह दर्पन में देखकर सुखी होती है और आभायुक्त गौर वर्ण के सुन्दर शरीर को श्रृँगार करके खूब सजाती है।

वह अपने तन पर मनचाही सुन्दर काले रंग की सारी सजाती

है (पहिनती है)। अपने कुचों को चोली में अच्छी तरह कसने के लिये बार–बार बांधती है। रत्न से जड़ा हुआ ऐरन (कर्णफूल अथवा कान का आभूषण) कान में पहनती है, माथे पर मनमोहक बिन्दी रखती है और सुडौल नितम्बों पर मनोहर रिझावनी करधनी पहनती है।

कमल से कोमल हाथों में कंकण और मुंदरी आदि सुशोभित है। गले में रत्न जड़ित गुलबंद (गले का एक गहना), हंसली (खंगौरिया, गले का आभूषण) और मोती पिरोकर बनी जंजीर शोभा पा रही है। लाल नाखूनों का आभूषणों से ढका सा होने के कारण मनोहर चमक की शोभा का वर्णन करते नहीं बनता ऐसा लगता है मानो विभावरी के बीतने पर शेष छाया ऊषा पर आच्छादित हो।

अपने क्रीड़ा–भवन में नायक के मन को छलने के लिये इस तरह सजी हुई चतुर नायिका स्वागत के लिये उठी और नायक के गले लग गई। निडर मन से दोनों एक दूसरे को अपनी बाहों में चंचलता से भर लेते हैं। क्या कारण है कि वह नायक को धोखे से भी अपनी छाती (स्तन) को नहीं छूने देती?

पलंग तक पहुँचने के भावों की विविधता का वर्णन नहीं करते बनता, वह चाल ऐसी मद भरी थी कि हाथी की गति भी बराबरी नहीं कर सकती। वह अच्छी तरह से गालों का चुम्बन लेती है और बीच–बीच में रति क्रीड़ा के लिये बार–बार मना भी करती जाती है।

प्रियतम को झुकाकर नायिका ने चूम लिया और चतुराई से छाती को दबवा भी लिया, फिर नेह सहित प्रियतम से उन्हें न पकड़ने का आग्रह करती है। नायक हितकर विचार करते हुए भाव विभोर हो जाता है।

अधरामृत के रसपान का अनोखा आस्वादन वह विविध मुद्राओं से करती है। अनेक प्रकार से मन में उमंग भरे हुए कोक–युक्तियों



सहित काम–क्रीड़ा कर रही है। फिर अर्ध निमीलित आँखों से नायक की आनंदमग्न मुद्रा को देख भी रही है।

## सैर

*दोहा –* *नवल नागिरी आगरी 'मदन' माधुरी ऐन।*
*नाह चाह कर राह में निकस चली रस लेन।।*

*सोरठा –* *निकस चली रस लेन काम बिबस वह कामिनी।*
*नभ दिनकर कर ऐन प्रखर दोष हरि सन सनी।।*

*छंद –* *नीक मग तट तटसु छाहन तर चली तट तरु बरन।*
*निर्मल सरित वर बहत कल कल नार हिय आनंद भरन।।*
*नख सिख सुभावन अंग अंग अनंग मय है त्रिसित मन।*
*नहिं बिलम कर तट पर उतर कर करत मनसा जल पियन।।*

*सैर –* *नीको क्या नीर निर्मल कल कल कहो मगन,*
*नब कर कर कर साफ चह्यो नीर ज्यों पियन,*
*नेगर कर मुख अंजुलि त्यों चकित चौकि मन,*
*ना पिये नीर डर डर भर भर के अंजुलिन।।1।। टेक।।*
*नैना विशाल लाल भाल बिन्दु भ्रू लसन,*
*नाहों मीन हिरन खंजन कंज इन्दु धनु करन,*
*नहिं गुणत लखत छाया यों कहत महिन मन,*
*ना पिये नीर डर डर..... ।।2।।*
*नासा कपोल बोल लोल अधर दुति दसन,*
*नत शुक पिक झुक सेब बिम्बा नार बीज गन,*
*नहि धरत धीर हिय में छिन छिन लगी कहिन,*
*ना पिये नीर डर डर..... ।।3।।*
*नीको मुखारबिन्दु इंदु चिबुक बिन्दु धरन,*
*निशिकर न होय सुत युत च्युत लखत मम करन,*

*नीरज पै या मधुकर सज गजब गुजारन,*
*ना पिये नीर डर डार..... ।।4।।*

(गायक– श्री जानकी प्रसाद खरया)

अधिकाधिक माधुर्य गुण से युक्त एक नव यौवना रस पान की आकांक्षा लिये प्रेमी की चाह में रास्ते पर निकल पड़ी है।

उस समय आकाश में सिंह राशि के सूर्य की अति प्रखरता (तीव्रता) होते हुए भी वह सुन्दरी काम के वशीभूत होकर रस की इच्छा से बाहर निकल कर चल पड़ी।

वह नदी के किनारे के उत्तम वृक्षों की छाया के सहारे अच्छे मार्ग से चली जा रही है। श्रेष्ठ नदी का स्वच्छ जल अव्यक्त मधुर ध्वनि के साथ बहता हुआ उस नायिका के हृदय को आनंदित कर रहा है। नख से शिख तक अर्थात् ऊपर से नीचे तक के उसके सभी मनोरम अंगों में कामरस झलक रहा था किन्तु मन में रस की प्यास थी। वह वहाँ नदी तट पर रुकते हुए नीचे उतरकर जल पीने की इच्छा नहीं करती।

कितना अच्छा स्वच्छ जल संगीतमयी ध्वनि से बहता हुआ मन को आनंदित कर रहा है। नायिका ने जैसे ही झुककर पानी को हाथ से हिलाकर साफ करते हुए पीने की इच्छा की और अंजली मुख के पास लाई वैसे ही उसका मन आश्चर्य से चौंक गया। वह अंजली बार–बार भरती है किन्तु डर के कारण जल नहीं पीती।

मछली, मृग, खंजन और कमल के लक्षण गुणों से कहीं अधिक उसके विशाल नेत्रों की विलक्षणता है। माथे पर बिन्दी चन्द्रमा से और भौहों की वक्रता धनुष से भी अधिक सुन्दर लग रही है। गुणियों का मन इन उपमाओं को छोटा पाता है।

नायिका की नाक के बांकपन को देख तोता, बोली की मिठास



सुनकर कोयल, कपोलों की लालिमा के समक्ष सेव, अधरों की लाली के सामने बिंब फल और दंत पंक्ति की आभा के सामने अनार के बीज लज्जित होते हैं। उसके हृदय में अब धैर्य नहीं रुक रहा, ऐसा वह प्रतिक्षण कहने लगी है।

चन्द्रमा के समान सुन्दर आनन की ठोड़ी पर रखा बिंदु (गोल काला टीका) को देख भ्रम होता है कि कहीं अपने पुत्र बुध के साथ शशि तो नहीं है अथवा कमल के ऊपर भ्रमर सजा हुआ है जो देखने वालों पर गजब ढा रहा है।

## सैर

*दोहा –* *केलि खेलि रंगरेलि कर हेलि मेलि अंग अंग।*
*छरे छबीले छैल दोऊ सोबत भरे उमंग।।*

*सोरठा –* *सोबत भरे उमंग रंग महिल रंग रस रसे।*
*नीद भंग इक संग लागे करन किलोलि पुनि।।*

*सैर –* *पुनि पुनि लगाय हिय सों हिये उजर उठीली।*
*लिपटत ललित लता सी रस रसिक रसीली।*
*चुम्बित कपोल गोल लोल लसन हँसीली।*

*टेक –* *देती न अधर रस बस क्यों छैल छबीली।।*
*सोलह सिंगार सुंदर कंचुकी कसीली।*
*बारह आभूषणन युत पर्यंक सजीली।*
*नायक प्रवीन प्यारो प्रिय प्रीति रमीली।*
*देती न अधर रस बस..... ।।2।।*
*सकुचन कुचन कुचेलन कर भाव भरीली।*
*नाना सुकोक फंदन फरफंद फसीली।*
*लिपटन उठन सुबैठन झुक झूम लसीली।*
*देती न अधर रस बस ..... ।।3।।*

*दोऊ ओर मदन जोर जंग भोंरनसीली।*
*मनमानी कर दोउन पिय लखी उजेली।*
*उठ चले पीय गुनि मिसु तिय रंग रंगीली।*
*देती न अधर रस बस .....।।4।।*

(सौजन्य : श्री जयजयराम शुक्ला)

छरहरे सुन्दर शरीर वाले नायक–नायिका आमोद–प्रमोद और कामकेलि का रस लेने के उपरान्त अंग–अंग का आलिंगन किये हुए आल्हादित मन से सोये हुए हैं।

जब दोनों (नायक–नायिका) मन में उमंग लिये सो रहे थे तभी रंग महल में आमोद–प्रमोद का रंग बरसने लगा जिससे दोनों की एक साथ नींद खुल गई। वे पुनः आनंद–विहार करने लगे।

हृदय में यौवन की उमंग भरे हुए नव यौवना नायक को बार–बार छाती से चिपकाती है। कामरस से युक्त सुन्दर लता सी वह नायक से लिपट जाती है। गोल–गोल चंचल शोभायुक्त गालों का हँसकर चुम्बन देती है। फिर वह नव यौवना केवल अधर–रस का पान नायक को क्यों नहीं करने देती?

वह सोलह श्रृँगार किये है, सुन्दर चोली कसी हुई है और बारहों आभूषणों से सजी वह पलंग पर बैठी है। नायक को प्रेम करती है और उसे प्रेम रस में डुबा लेने में प्रवीण है।

कुचमर्दन की केलि में संकोच सहित मोहक भावों से भर जाती है। रतिशास्त्र की विविध कलाओं के क्रियान्वयन में निपुण सुन्दरी नायक के संग आलिंगन के साथ ही अनंक आसनों में केलि करती है।

नायक एवं नायिका दोनों के मन में मदन की उमंग है और इनकी क्रीड़ायें एक चक्र में चल रहीं हैं। मन की चाह दोनों ने पूरी



कर ली तभी प्रियतम ने प्रातःकाल का प्रकाश होते देखा। कुछ विचार के साथ आनंद की अनुरागिनी प्रिया से कुछ बहाना करके उठकर चल देता है।

## सैर

*दोहा –* *भाल इंदु बिच बिन्दु दे बीरी रुचिर रचाय।*
*दर्पण में शशि मुख निरख निरख हिये हरषाय।।*

*सोरठा –* *निरख हिये हरषाय चहूं दिश चौंक चितै चितै।*
*अंग अंग छबि छहराय ''मदन'' सुयोवन नित नयो।।*

*सैर –* *नित नयो बनाय यौवन मन मोरौ मथतीं।*
*मथतीं क्यों हाव भावन क्यों चावन ढुरतीं।*
*ढुरतीं तौ ढुरौ बिलकुल क्यों मनसा करतीं।*
*करतीं क्यों बात रस की क्यों बेबस करतीं।। टेक।।*
*करतीं क्यों यार ऐसो क्यों मुसका परतीं।*
*परतीं क्यों प्रेम फंदन फिर नाहक डरतीं।*
*डरती क्यों सकुच लाजन क्यों हिम्मत करतीं।*
*करतीं क्यों बात रस की.....।। 2।।*
*करतीं क्यों यार धोकौ दे दिल को हरतीं।*
*हरतीं क्यों इस तरह सें दिल विरथा लड़तीं।*
*लड़तीं क्यों नैन सैनन सों घायल करतीं।*
*करती क्यों बात रस की.....।। 3।।*
*करतीं क्यों रोस रस में क्यों रुख्या परतीं।*
*परती क्यों प्रेम पथ में जब पथिकन डरतीं।*
*डरतीं सनेह भरतीं मिसु देखो करतीं।*
*करती क्यों बात रस की.....।। 4।।*

(गायक–श्री जानकी प्रसाद खरया की मूल पाण्डुलिपि से)

चन्द्रमा के समान माथे पर बिंदी लगाकर और मिस्सी रचाकर

नायिका दर्पण में अपना चंद्रमुख देख–देखकर प्रसन्न होती है।

दर्पण में मुख की शोभा देखकर हृदय में हर्षित होती है और चारों ओर देख–देखकर वह किसी भय के कारण काँप जाती है। नित्य नवीन यौवन वाली उस नायिका के अंग–अंग से मानो शोभा चारों ओर फैल रही है।

नित्य नये यौवन से युक्त सुंदरी मेरे मन का मंथन करती है। हाव–भाव से मन का मंथन कर अनुराग भरे भावों से क्यों अनुरक्त होती हो? अनुरक्त होना है तो भले हो जाओ किन्तु मन से कामना क्यों करती हो और प्रेम–रस की बात करके मुझे बिवस क्यों कर देती हो? धोखा देकर तुम प्रेमी के दिल का क्यों हरण कर लेती हो? क्यों व्यर्थ में दिल को लड़ाती हो? दिल लड़ाने के साथ ही नयनों के इशारों से प्रेमी को क्यों घायल करती हो? ऐसा क्यों करती हो? देखते ही क्यों मुस्करा देती हो? प्रेम के जाल में क्यों जानकर फंसती हो? और बाद में डरती क्यों हो? क्यों डरती हो? फिर संकोच और लज्जा के साथ क्यों साहस करती हो?

प्रेम रस के बीच क्रोध क्यों करती हो और कभी–कभी तुम्हारे व्यवहार में रूखापन क्यों आ जाता है? तुम जब पथिकों से डरती हो फिर प्रेम के मार्ग में क्यों आती हो? डरती भी हो, हृदय में प्रेम भी रखती हो और किसी न किसी बहाने प्रेम भरी आँखों से देखा भी करती हो।

## सैर

*दोहा –* *नवल नारि रंग रस भरी सजि सिंगार सुख दैन।*
*नायक युत पर्यंक पर लोटत लूटत चैन।।*

*सोरठा –* *नाहिन कछु संकोच नहिं डर ''मदन'' बिलास तन।*
*नाहिन कछु रिस लोच नहिं नहिं कहत स्वभाव सन।।*



*सैर –* *नभ शशि प्रकास पूरन तन रहन देय ना।*
*निशि अर्ध भौंन आंगन दोउ और कोउ ना।।*
*नेगर सटाय अम्बुज मुख मिलन देय ना।*
*नीके के कपोलन मुख क्यों लगन देय ना।।टेक।।*
*नीके लगाय हिय पिय सुख सेय हेय ना।*
*नौने मदन निरोने दोउ मलत मैल ना।*
*नाना सुहाव भावन युत चितै कहै ना।*
*नीके के कपोलन मुख..... ।।2।।*
*नीबी के खोल बोलत बहिलोल बोल ना।*
*नाना किलोल केलि कलित हेलि खेल ना।।*
*निर्मल बयरि बसंती चैन लैन देय ना।।*
*नीके के कपोलन मुख क्यों..... ।।3।।*
*न डरत देन चुम्बन रस अधर भेद ना।*
*निरशंक दशन नोकन मुद भरत करत ना।*
*नागरि परम सयानी कल परन देय ना।*
*नीके के कपोलन मुख क्यों..... ।।4।।*

(उपर्युक्त सभी सैर गायक श्री जानकी प्रसाद खरया
के पुत्र श्री रामशरण खरया के सौजन्य से)

आनंद सम्मोहिता नव यौवना सुखदायी श्रृँगार करके आनंद लेने हेतु नायक के साथ पलंग पर लेटी है।

उसके मन में कोई संकोच नहीं है, दैहिक सुख भोग का भी उसे डर नहीं है, रोष के आँसू भी नहीं है, केवल स्वभाववश 'नहि'–'नहि' कह रही है।

आकाश के चन्द्रमा का प्रकाश पूरी देह पर नहीं पड़ने दे रही, आधी रात्रि के इस समय में भवन के आँगन में उन दोनों के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है फिर भी वह पास ले जाकर अपने मुख

कमल को मिलने नहीं देती और अच्छी तरह से गालों को मुख से क्यों लगने नहीं देती ?

प्रियतम को अच्छी तरह हृदय से लगाकर सुख भोग करने में उसे कोई लज्जा नहीं है, दोनों कुचों का मर्दन कराने में उसे कोई मालिन्य नहीं है। विविध मधुर भावों से युक्त वह देखती है परन्तु कहती कुछ नहीं।

नीवी (कमर के वस्त्र बांधने की डोरी) को खोलते समय वह पहेली की तरह कुछ बोल बोलती है। विविध आनंददायी क्रीड़ाओं सहित आलिंगन करती है किन्तु पावन–स्वच्छ बसंती पवन सुख नहीं लेने देती।

अधरों से अधरों को मिलाने और चुम्बन–रस का पान कराने में वह नहीं डरती, संशय विहीन मन से दाँतों की नुकीली नोकों से दबाकर वह हर्षित होती है, फिर नाहीं करती है। नायिका बहुत चतुर है वह नायक को चैन नहीं लेने देती।



## रामनाथ गुप्त 'हरिदेव'

साहित्य के इस मौन साधक का जन्म हरपालपुर निवासी श्री गजाधर लाल गुप्त के घर 3 जनवरी 1909 को हुआ था। यद्यपि पिता व्यापारी थे किन्तु काव्य–सृजन का गुण वंशानुक्रम से इनके यहाँ चला आ रहा था, फलतः हरिदेव जी को भी बीज रूप में प्राप्त हुआ। आपने काव्य–दीक्षा भगवद्भक्त भी बिन्दु जी से ली थी। छतरपुर में आपका विवाह तुलसी बाई से हुआ जिनसे आपके घर एक पुत्र और दो पुत्रियों ने जन्म लिया। हाई स्कूल की शिक्षा पूरी करने के बाद आपने शासकीय सेवा में पदार्पण किया। सन् 1944 से 1948 तक आप मजिस्ट्रेट के रीडर रहे किन्तु, स्वतंत्र प्रकृति का व्यक्तित्व भला समय–सीमाओं में बंधकर कहाँ रह सकता है ? अतः उन्हें राज्य सेवा त्यागनी पड़ी। तत्पश्चात् व्यवसाय की ओर उन्मुख हुए किन्तु काव्य–सृजन की लगन ने उन्हें और कहीं उलझने नहीं दिया। बस, काव्य ही उनका जीवन था। युवावस्था में तो उनकी सक्रियता देखते ही बनती थी; काव्य–गोष्ठियों की सूची खुद ही घुमाना और फर्स बिछवाने से लेकर सारी व्यवस्था अपने हाथ में लिये रहना– इन कार्यक्रमों की जैसे वे धुरी थे। सारा जीवन काव्य के

लिए समर्पित कर दिया था हरिदेव जी ने। म.प्र. शासन ने इस वयोवृद्ध साहित्यकार को सम्मानार्थ सौ रुपये प्रतिमाह आर्थिक सहायता प्रदान की थी। यह सहायता रुपये 200/– में परिणित होकर उनके जीवन की अंतिम घड़ियों तक चलती रहीं।

मंचीय हलचल से दूर एकान्त में बैठकर हरिदेव जी ने साहित्य–सृजन किया। पारिवारिक कारणवश जब वह हरपालपुर छोड़कर छतरपुर आ गये तो उन्हें यहाँ अच्छा साहित्यिक वातावरण मिला। बुन्देलखण्ड में उन दिनों प्रचलित फड़बाजी अर्थात् साहित्यिक प्रतिद्वन्द्विताओं का छतरपुर में भी पर्याप्त प्रभाव था। साहित्यिक दृष्टि से छतरपुर में दो दल प्रमुख थे – पं. गंगाधर व्यास दल और पं. परमानन्द पाण्डे दल। हरिदेव जी व्यास दल से सम्बद्ध हो गये और इस दल के प्रमुख पं. राजाराम शुक्ल 'रत्नेश', रामदास दर्जी और नत्थू रंगरेज की प्रेरणा से 'सैर' रचना करने लगे। अतः साहित्यिक प्रतिस्पर्धा के कारण भी बहुत कुछ लिखा। वृद्धावस्था के दिनों में भी लिखने और सुनाने–सुनने का शौक बराबर बना रहा।

हरिदेव जी ने खड़ी बोली और बुन्देली में रचनायें लिखीं है। साहित्य में प्रचलित बृजभाषा में भी उनकी रचनायें हैं किन्तु वे स्वयं भी उसे बुन्देली कहा करते थे। उनकी रचनायें इस प्रकार हैं –

1. प्रबन्ध काव्य – दुर्गावती
2. मुक्तक काव्य – करवाल किरण, बुन्देलखण्ड बावनी, रस बिन्दु, राष्ट्र पताका
3. काव्य संग्रह – मन के मीत, सैर–सौरभ

इसके अतिरिक्त बहुत सी स्फुट रचनायें हैं जिनमें कुछ सुकवि, राष्ट्रधर्म, तुलसीदल आदि में प्रकाशित हुई हैं। 'करवाल किरण' विन्ध्य प्रदेश शासन द्वारा सन् 1953 में पुरस्कृत की गई थी।



अनूठी काव्य प्रतिभा के लिए आपको उपाधि तथा पुरस्कारों से अनेक बार सम्मानित किया गया। सर्वप्रथम सन् 1946 में अयोध्या से आपको 'काव्य भूषण' की उपाधि प्राप्त हुई। सन् 1947 में तुलसी समिति हरपालपुर ने 'स्वर्ण पदक' एवं सन् 1949 ई. में नारायण मण्डल, हरपालपुर ने 'रजत पदक' से आभूषित कर सम्मानित किया। सन् 1953 ई. में विन्ध्य प्रदेश शासन ने आपके मुक्तक काव्य 'करवाल किरण' को पुरस्कृत कर आपको प्रान्तीय सम्मान से विभूषित किया।

## चौकड़ियाँ

*रोजउँ दोरे हो कड़ जातीं, घूँघट में मुस्कातीं।*
*मुर मुर तकत तिरीछे नैनन सैनन तीर चलातीं।*
*जानी जात नहीं अन्तस की मुख सें कछू न कातीं।*
*दुबिधा छोड़ एक रंग राखौ रहौ न सीरीं तातीं।*

सुन्दरी नित्य ही घूँघट में मुस्कराते हुए यहाँ से निकल जाती हैं। तिरछे नेत्रों से मुड़–मुड़कर देखती हैं, संकेतों के बाणों से प्रहार भी करती हैं। हृदय की बात तो समझ में आती नहीं है और मुख से कुछ बोलती नहीं है। नायक आग्रह करता है कि चित्त की अस्थिरता छोड़कर एक भाव बना लो, कभी ठंडी कभी गर्म अर्थात् क्रोध से रुष्ट हो जाना, कभी नेह से प्रसन्न हो जाना छोड़ दो।

*गोरी की चन्दा सी मुइयां, बनै देखतन गुँइयाँ।*
*गालन ऊपर मुस्कातन में, पर पर जातीं कुँइयाँ।*
*मधुर महीन सरस बानी लौं जैसैं बोलै टुँइयाँ।*
*तकत तिरीछी लगत बान सी, ऊसई भौंह धनुइँयाँ।*
*कवि 'हरिदेव' उरज लडुवन पै मानौ धरीं मकुइयाँ।।*

सुन्दरी का मुँह चन्द्रमा के समान है इसे देखते ही बनता है अर्थात् इसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। यह बहुत मन्द रूप में हँसती है तो गालों के ऊपर गोल छोटे कूप की तरह गड्ढे बन जाते जो सौन्दर्य को और बढ़ा देते हैं। माधुर्य और कोमलता से पूर्ण पतली–सी वाणी में उसका बोलना ऐसा लगता है जैसे टुइयां (छोटी जाति का सुग्गा) बोल रही हो। उनका तिरछा देखना (कनखियों से देखना) बाज की तरह प्रभावी होता है। इसमें उनकी भौहें धनुष की तरह सहयोगी बन जाती हैं। कवि हरिदेव कहते हैं कि उनके पुष्ट स्तन ऐसे लगते हैं जैसे लड्डुओं पर मकुइयां का फल रखा हो।

## गणेश वंदना

*जाकौ नाम लेत बैरी विघन बिलाय जात,*
*आय जात तोष हिय, हरन कलेश कौ।*
*ऋषि सिद्धि वारौ बुद्धि वारौ त्यों प्रसिद्धि बारौ,*
*सकल समृद्धि वारौ सहज सुदेश कौ।।*
*राज मुख वारौ वर अस्त्र–शस्त्र वारौ धीर,*
*शौर्य चन्द्र वारौ 'हरिदेव' वीर वेष कौ।*
*हम तौ बुन्देलखण्ड विरद बखानो तौऊ,*
*सब कोउ कहै गौरी सुवन गणेश कौ।।*

जिसका नाम स्मरण करते ही विघ्न रूपी शत्रु नष्ट हो जाते हैं। हृदय में संतुष्टि होती है। वे कष्ट को दूर करने वाले हैं उनकी ऐसी ख्याति है कि वे ऋद्धि–सिद्धि और बुद्धि के स्वामी है। वे सभी प्रकार के ऐश्वर्य के स्वामी और उपयुक्त स्थान उन्हें सहज ही में प्राप्त हैं। हाथी के मुख वाले और अस्त्र–शस्त्र धारण करने वाले हैं। वीरत्व की मूर्ति और शौर्यवान गणेश जी के सिर पर चन्द्रमा सुशोभित है। कवि कहता है कि मैंने तो बुन्देलखण्ड के यश का गान किया है जबकि सभी लोग इसे गौरी पुत्र गणेश जी की वंदना मानते हैं।



## विन्ध्य की धना

*माथें शीश फूल सोहैं कानन करन फूल*
*अंबर अतूल सुख मूल रंगना के हैं।*
*कवि 'हरिदेव' कंठ लल्लरी विचौली हरा,*
*भुजन बजुल्ला बरा कर ककना के हैं।*
*छीन कटि कर्धनी नितंबन सँवारी छवि,*
*गति मतवारी कुच कुंभ ऊ घना के हैं।*
*विन्ध्य की धना के पग परत हनाके पारैं*
*लोकन सनाके जे झनाके पैजना के हैं।।*

बुन्देली नायिका के श्रृँगार वर्णन में आभूषणों का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि नायिका के माथे पर शीशफूल (माथे का आभूषण) और कानों में कर्णफूल (कानों का आभूषण) शोभा पा रहे हैं। वस्त्र अनुपम सुखकारी और नेह में बांधने वाला है। कवि हरिदेव कहते हैं कि गले में लल्लरी और बिचौली, भुजाओं में बजुल्ला और बना तथा हाथों में ककना शोभायमान है। पतली कमर में करधनी (कमर में पहिनने का लड़ीदार सूत) नितंग के ऊपर सुशोभित है। चाल में उन्मत्तता और स्तन कलश के समान पुष्ट हैं विन्ध्य भूमि की इस नायिका के धीरे से भी यदि धरती पर पग पड़ते हैं तो पैजना की झनझनाहट से खलबली मच जाती है।

*मिलि नर नारी सब करकैं बियारी बैठे,*
*आन के अथारी झांझ ढुलक समारी है।*
*फाग बिलवारी राई रावला दिवारी सैर,*
*आला आदि गाबैं औ मनावैं मोद भारी है।।*
*भूषन बसन साजै घुंघरू पगन बाजै,*
*शीत कर रैन रागै नाचै नचनारी है।।*
*कवि 'हरिदेव' या बुन्देलखण्ड वैभव पै,*
*इन्द्रपुरी सारी कोटि कोटि बलिहारी है।।*

सभी पुरुष और स्त्रियाँ रात्रि का भोजन करके अथाई पर आकर बैठ जाते हैं फिर झांझें और ढोलक (एक प्रकार के वाद्य) बजाने वाले आकर अपने–अपने वाद्य सम्हाल लेते हैं। यहाँ समय–समय पर फाग, बिलवारी, राई, रावला, दिवारी, सैर और आल्हा आदि गाये जाते हैं। आभूषण और सुन्दर वस्त्र तथा पैरों में 'घुँघरू' सजाकर रात्रि की ठंडक में नर्तकी नृत्य करती हैं। कवि हरिदेव कहते हैं कि बुन्देलखण्ड के वैभव को देखकर करोड़ों इन्द्रपुरी निछावर होती है।

### युगल चरण वंदना

*जौ लों भव्य भूतल पै व्योम कौ वितान रहै,*
*जौ लों व्योम बीच चारु चन्द्रमा करै विलास।*
*जौ लों चारु चन्द्रमा में षोड़स कला हैं, जौलें,*
*षोड़स कला में राजै छवि को ललित हास।।*
*जौ लों हास मध्य 'हरिदेव' शीतलाई शुचि,*
*जौ लों शीतलाई कल कुमुद करै विकास।*
*तौ लों भय भंजन श्री राधिका–गुपाल जू के,*
*चरन सरोजन कौ हिय में रहै निवास।।*

(उपर्युक्त छंद सौजन्य से : श्री प्रवीण गुप्त)

विशाल धरती के ऊपर जब तक आकाश का विस्तार रहे, आकाश के बीच जब तक चन्द्रमा सुख–भोग करे, जब चन्द्रमा में सोलह कलायें विद्यमान रहें, इन सोलह कलाओं में जब तक शोभा की मनोहर मुस्कान सुशोभित होती रहे, इस मुस्कान के बीच पवित्र शीतलता बनी रहे और इसी शीतलता के साथ जब तक कोमल कमल विकसित होता रहे तब तक कवि हरिदेव कहते हैं कि भय को समाप्त करने वाले राधा–कृष्ण के चरण कमलों का मेरे हृदय निवास बना रहे।



## लला पुजारी

लला पुजारी का पूरा नाम राम लला था। आप मूलतः मल्लपुरा ग्राम जिला छतरपुर के निवासी थे। यह ग्राम धमौरा के पास स्थित है। आपका जन्म ब्राह्मण कुल में लगभग सन् 1910 ई. में हुआ था। आप आजीवन अविवाहित रहे। आपके एक बहिन थी, उसका विवाह नौगांव–लुगासी के बीच अजनर के पास स्थित इन्द्राटा ग्राम में हुआ था। राजनगर जिला छतरपुर के एक मंदिर में पुजारी के रूप में नियुक्त होने के कारण लोग इन्हें लला पुजारी ही कहते थे।

छतरपुर के साहित्यक अखाड़ों में दो दल सक्रिय थे – पं. गंगाधर व्यास पार्टी और पं. परमानन्द पाण्डे पार्टी। गुरु परमानन्द पाण्डे पार्टी को आशु कवि की तलाश थी। लला पुजारी की जानकारी मिलने पर श्री भगवानदास कुशवाहा और श्री रामाधीन मिस्त्री राजनगर गये। लला पुजारी मंदिर में ठाकुर जी की पूजा के अतिरिक्त राजनगर में सोनी समाज और ढीमर समाज के दो कीर्तन मंडल का संचालन भी करते थे और उनके लिये कीर्तन भी लिखते थे। कुशवाहा जी और मिस्त्री जी की अनुनय–विनय स्वीकार कर मंदिर की व्यवस्था अन्य व्यक्ति को सौंपने के उपरान्त संवत् 1980 के

लगभग छतरपुर आ गये और पाण्डे जी के दल के लिये काव्य रचनायें करने लगे।

आपका शरीर हृष्ट–पुष्ट था। सिर पर बाल नहीं रखते थे अर्थात् घुटा हुआ सिर। लगभग पाँच फुट लम्बाई और श्याम वर्ण शरीर वाले हँस स्वभाव के थे। साधु वेश में साधारण रहन–सहन, सफेद धोती–कुर्ता और कभी–कभी भगवा वस्त्र धारण कर लेते थे। छतरपुर में आने पर गल्ला मण्डी में स्थित महावीर जी के मंदिर की पूजा सौंप दी गई थी। दस वर्ष छतरपुर में रहने के बाद लगभग 80 वर्ष की उम्र में अपनी बहिन के पास इन्द्राटा चले गये थे। वहीं पर लगभग 1990 में इन्होंने शरीर त्यागा था।

लला पुजारी ने कीर्तन, गारी, फागें, ख्याल, सैरें बहुत लिखीं। केवल 72 गारियों का एक संग्रह प्रकाशित हुआ था। शेष रचनायें गायकों के कंठ में सुरक्षित हैं अथवा बस्तों में बंधी हैं। आशु कवि थे, प्रतिस्पर्धा में बहुत लिखा किन्तु एक जगह संग्रहित न होने के कारण आज भी शोध और संग्रह की आवश्यकता है।

उपरोक्त जानकारी श्री भगवान दास कुशवाहा, सभापति कुशवाहा समाज सरानी गेट, छतरपुर से प्राप्त हुई है।

## सैर

*दोहा –* *बरछी दाव कटार हू छुरी तीर तलवार।*
*इन हथयारन से प्रबल होत नैन की धार।।*

*सैर –* *भरके त्रिपट दुनाली हिय जाकर मारी,*
*कै मरै भये घायल कै सुरत बिसारी*
*करके कटाक्ष घाव करत मार दुधारी*
*मन मृगन हेतु मनहु ये नैन सिकारी।। टेक।।*
*नैनन सें मुनी नारद ने मारी हारी,*



*नैनन के द्वार शंकर जी जुगत विचारी,*
*होकर कें कुपित कामदेव काया जारी,*
*मन मृगन हेतु..... ।। 2।।*

*लावनी –* *झारें जिहिर उतरैं नहीं ऐसे विकट ये ब्याल है।*
*हथयार सें बच जाय पर नैना समझ लो काल हैं।।*
*नर और मुन्नी विवुधान पर नित रहत करत कमाल हैं।*
*हर भांत अनुपम ये जुगल वाला के नैन विसाल हैं।*

*सैर –* *काहू को होत इनसें सुख अपरंपारी*
*मतवारन की दशा नहीं जात उनारी,*
*खो प्राण देत कोऊ करत ऐसी यारी,*

*मन मृगन हेतु..... ।। 3।।*
*गुण तीन प्रबल इनमें ये जानो भारी,*
*विधि ने अपार शक्ती दै इनको डारी,*
*रहियों इन्हें सम्हारे कहें लला पुजारी,*
*मन मृगन हेतु..... ।। 4।।*

युवती के नैनों का पैनापन बरछी, दाव, कटार, छूरी, तीर और तलवार आदि अस्त्र–शस्त्रों से भी अधिक होता है।

भाव भरे तिरछे दोनों नेत्रों से रमणी जिसके भी हृदय पर प्रहार करती है तो या तो वह मर गया या घायल हो गया अथवा बेहोश हो गया। तिरछी चितवन से वह बड़ा तीखा घाव करती है। मन रूपी मृग के लिये ये नयन मानों शिकारी हैं।

इन नयनों से नारद मुनि भी हार गये थे। नयनों के प्रभाव से बचने हेतु शंकर जी ने युक्ति विचारकर क्रोधित हुए और कामदेव के शरीर को जला दिया था।

ये ऐसे भयंकर सर्प हैं कि इनका विष झारने से नहीं उतरता।

अस्त्र–शस्त्र की मार से व्यक्ति भले ही बचे किन्तु ये नयन तो साक्षात् काल का रूप हैं। मानव, मुनि और देवों पर नित्य ही प्रभावी रहकर चमत्कार पूर्ण कार्य करते हैं। सब प्रकार से उत्कृष्ट (अनोखे) नवयौवना के ये दोनों नयन भव्य और सुन्दर हैं।

ये किसी–किसी को असीम सुख देने वाले होते हैं। मदान्ध लोगों की हालत वर्णन नहीं की जा सकती। कुछ लोग तो ऐसा प्रेम करते हैं कि प्राण तक दे देते हैं।

इन नयनों के तीन प्रबल गुण हैं। विधाता ने इनको असीम शक्ति प्रदान की है। इसलिये लला कवि कहते हैं कि इनसे सम्हल के रहना।

**ख्याल**

*टेक –* *मन मोहन की कीसें कहिये रोज रोज की हैरानी।*
*ब्रज में बसवो कठिन है भयो नन्दसुत नओ दानी।।*

*छंद –* *बली बड़े बातन के जानो जादू सौ कर देत छली,*
*वे खूबउ सें लड़बो जानत कड़वो मुस्किल भयो गली,*
*जबरईं पकर लेत जां पावै गलबहियां भर लेत भली,*
*कां लौ सइये सोचत रइये येसी जा अनरीत चली,*

*उड़ान –* *जान न देवै मन हर लेवै बोल बोल मीठी बानी।।*
*ब्रज में बसवो कठिन है भयो नन्द सुत नओ दानी।।1।।*

*छंद –* *बरजोर दधि छुड़ा लेत है कहै मजा आबै खातन,*
*कछू रोस उर में आवत है कछू मजा उनकी बातन,*
*सजनी री मोय लाज लगत है सकल बात उनकी कातन,*
*मैं गई हार रहत न पकरें छुटक जात मोरे हातन,*

*उड़ान –* *करवें चाल ग्वाल बालन संग कर करकें सैना कानी।।*
*ब्रज में बसबो कठिन है.....।।2।।*



*छंद –* *कंचुकी फार हार टोडारी, चूम कपोल करत मन की*
*ज्वानी में जाने का करनें यह हालत बालापन की*
*कबहउं मिलत अकेलौ बन में कबहउं सैन लयें लरकन की*
*नहीं सुनैया ब्रज में कोऊ कठिन बात जा उलझन की*

*उड़ान –* *कंस राजा खां जाय सुनैबी यही बात मन में ठानी।*
*ब्रज में बसवो कठिन है.....।।3।।*

मनमोहन की शिकायत भला किससे की जाय, यह तो प्रतिदिन की कठिनाई (दिक्कत) बन गई है। नन्दलाल जी का पुत्र नई तरह का कर उगाहने वाला बन गया है।

चतुराई से ऊँची–ऊँची बातें करने में बहुत ही निपुण है जिससे वह सब जादू–सा कर देता है, बस में कर लेता है। लड़ना भी उनको बहुत अच्छे से आता है। रास्ते से निकलना कठिन हो गया है। जहाँ भी मिल जाय, बलपूर्वक पकड़ लेता है और गले में हाथ डालकर चिपका लेता है। मैं सोचती हूँ इस अनैतिक व्यवहार की चलन को कैसे सहन किया जाय ?

मिल जाने पर जाने नहीं देता और मीठी–मीठी बातों से मन को भी मोह लेता है।

बलपूर्वक (जबरदस्ती) दही छुड़ा लेता है और कहता है इसे खाने में बहुत आनंद आ रहा है। कुछ तो मन में क्रोध आने लगता है और उसकी चतुराई भरी बातों में आनंद भी आने लगता है। हे सखी! उसकी सभी बातें बताने में तो मुझे लज्जा आती है (शर्म लगती है)। मैं यदि उसे पकड़ने का प्रयास करती हूँ तो हार जाती हूँ वह मेरे हाथों से छूटकर दूर पहुँच जाता है।

फिर अपने ग्वाल सखाओं के साथ संकेत में कुछ कहकर नई चाल चलने लगता है।

मेरी चोली फाड़ डाली, हार तोड़ दिया और गालों को चूम–चूम कर अपने मन की कर लेता है। अभी बचपन में जब यह हाल है तब युवावस्था में न मालूम क्या करेगा? कभी वन में अकेले मिल जाता है, कभी–कभी अपने सखाओं की सेना सहित मिलता है। इस ब्रज में इस बात को सुनने–समझने वाला कोई नहीं है, यही सबसे बड़ी चिन्ता है। मैंने निश्चय कर लिया है कि राजा कंस को जाकर यह बात सुनाऊँगी।

**सैर**

*दोहा –* *दे दिया होय उस्ताज में जो पिंगल का ग्यान है।*
*नाम नायका हर्षयुत कर दीजेगा ब्यान।।*

*सैर –* *सुबरन शरीर जाकौ पति पद नित ध्यावै।*
*अनुपम निकाई तन की लख रति लजावै।*
*रति सों सनेह रहवै पति आनंद पावै*
*नायका खोल बोल कान काहे दावै।। 1।।*
*कुन्दन समान सोहै सुकुमार दिखावै,*
*तन सौं सुवाय आवै दृग सजल सुहावै*
*है करत सूक्ष्म भोजन अति रोस जनावै,*
*नायका खोल बोल..... ।। 2।।*
*भूलत ना एक छिन पति पद मन में ध्यावै,*
*नित ललित वचन बोलै सुमन सुमन झरावै,*
*निश वासर पति पद मुद अनुराग बढ़ावै,*
*नायका खोल बोल..... ।। 3।।*
*खुश रहत मन हमेशा नीत निश दिन चावै,*
*जानै कुकर्म नाही कर्म सुन्दर भावै,*
*शुभ सैर लला कोविध रच नित नई गावै,*
*नायका खोल बोल..... ।। 4।।*

यदि आपके गुरु ने पिंगल का ज्ञान कराया हो तो प्रसन्नतापूर्वक



यहाँ वर्णित प्रसंग में नायिका का नाम बताइये।

सोने के समान कांतिमय देह वाली यौवना नित्य अपने पति के चरणों का ध्यान करती है। उसके तन का सौन्दर्य अनूठा जैसे देखकर रति को भी हीनता लगने लगती है। कामक्रीड़ा की चाह रहते वह पति संसर्ग पा लेती है। प्रश्न को क्यों नहीं सुनना चाहते? इस नायिका का स्पष्ट विवरण दीजिये।

कंचन–सी शोभा वाली वह कोमलांगी दिखाई देती है। उसकी देह से सुगंध आती है और आँखें जलयुक्त सुशोभित हैं। बहुत कम भोजन करने वाली और क्रोध दर्शाने वाली है। पति के चरणों का निरंतर ध्यान करती है। एक क्षण के लिये भी भूलती नहीं।

सदैव मनोहर वचन बोलती है, लगता है जैसे पुष्प झर रहे हों। दिन–रात पति के चरणों में आसक्ति बढ़ाती है।

सदैव प्रसन्न रहती है, नीतियुक्त आचरण चाहती है, बुरे कर्मों को जानती नहीं, उत्तम कार्य ही उसे अच्छे लगते हैं। कवि लला कहते हैं कि मैं कल्याणकारी सैर रचकर नित्य गाता हूँ।

**सैर**

*दोहा –* *आली वारी वैयस मम पिया गये परदेश।*
*भावै सूनी सेज ना निश दिन रहत अंदेश।।*

*सोरठा –* *भेजो नहीं संदेश ना पाती प्रेसित करी।*
*तासो खेद हमेश पिय वियोग आंसत अमित।।*

*सैर –* *मुरझाने ये उरोज ज्यो सरोजन लाली।*
*मैं रही कमल बदनी अब पर गई काली।।*
*भावै ना प्राण प्यारे बिन सिजिया खाली।*
*वारी वियस विदेश वसत बालम आली।।टेक।।*

*किम धरौं धीर बाण अतन मारत चाली।*
*रह बाग किम सुरिछित नहीं जिसका माली।।*
*मैं घर की बड़ी लोक लाज तासों पाली।*
*वारी वियस विदेश वसत बालम आली।।2।।*

*लावनी –* *मैं तलफत जिम मीन नीर बिन भई सिर्फ चैंया मैयां।*
*गहलेई ना बैयां चले गये वे वैयश हमारी लरकैयां।।*
*कियै पठाऊँ को जाय लिवावन उन्हें खबर मोरी नैयां।*
*मैं परूं पैयां कहूं सखीरी मिलवा दो मोरे सैयां।।*

*सैर –* *मालूम होत कोई उतै सौत रिझाली।*
*मन भली भांत भर गओ सोई प्रीत बड़ाली।।*
*हो गये अपन वाके वा अपनी बनाली।*
*वारी वियस विदेश वसत बालम आली।।3।।*
*चिन्ता अपार नगरी के लोग फदाली।*
*मोहि देखदेख हंसवै नित दै दै ताली।।*
*मिलवा दो लला प्रीतम मोहि बिछुरन साली।।*
*वारी वियस विदेश वसत बालम आली।।4।।*

हे सखी! मेरी अभी छोटी उम्र है और प्रियतम विदेश चले गये हैं। सूनी सेज अच्छी नहीं लगती और दिन–रात डर लगा रहता है।

प्रियतम ने न तो कोई संदेश दिया है और न कोई पत्र भेजा इसलिये दुख सदैव बना रहता है और प्रियतम का वियोग हृदय को शालता है।

जिस प्रकार कमलों के मुरझाने पर लालिमा कम हो जाती है वैसे ही मेरे कुचों का हाल हो गया है। मेरा शरीर कमल के समान सुन्दर था किन्तु अब शरीर काला हो गया है। प्रियतम के न होने पर खाली सेज अच्छी नहीं लगती। हे सखी! मेरी उम्र अभी कम है और



प्रियतम विदेश जाकर बस गये हैं।

मैं किस प्रकार धैर्य धारण करूँ। दुष्ट कामदेव अपने बाणों से मुझे घायल करता है। जिस बगीचे का माली उपस्थित न हो उसकी सुरक्षा कैसे हो सकती है ? मैं घर में बड़ी होने के कारण लोकमर्यादा से बंधी हुयी हूँ।

मैं उस मछली की तरह तड़फ रही हूँ, जो बिना पानी के घूम–घूम कर प्राण दे रही हो। इस छोटी उम्र में उन्होंने मेरा हाथ न थामकर विदेश को प्रस्थान कर दिया। संभवतः उन्हें मेरी याद नहीं है, मैं उनको लाने के लिए किसको भेजूँ? मेरे कहने से भला कौन जायेगा? हे सखी! मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ किसी प्रकार मेरे प्रियतम को मिलवा दो।

ऐसा अनुमान है कि किसी सौतन ने उन्हें मोहित कर लिया है और प्रियतम के मन को भी बहुत अच्छी लगी, इससे उन्होंने प्रेम बढ़ा लिया है। इससे प्रियतम उसके हो गये और उसे अपना बना लिया।

मुझे इस बात की चिन्ता है कि शहर के लोग बहुत दंदी–फंदी होते हैं। लोग मुझे देखकर ताली बजाते हैं और हँसी करते हैं। लला कवि कहते हैं कि वह सखि से विनय करती है कि मुझे किसी प्रकार मेरे प्रियतम से मिलवा दो।

*दोहा–* *देख घटा घनश्याम की पहुँच अटा पर बाल।*
*विनय करत करजोर कर और नवावत भाल।।*

*सोरठा–* *और नवावत भाल प्रीतम मम परदेश में।*
*तासें हूँ बेहाल कछु सहाय तुमहूँ करौ।।*

*सैर –* *तुम चले जाव जहां बसत प्राण प्यारे।*
*उनसों संदेश कहौ काये जुलम गुजारे*

*पाहौ न सुयस ब्रजबालन सुरत विसारे*
*घनश्याम जाव जहां पर घनश्याम हमारे।।टेक।।*

*ब्रज कोप कियो जब तुम उन गिरवर धारे।*
*उत जाय कोप करियो डट शाम सकारे।।*
*गिरवर न उतै करहैं का नन्ददुलारे।*
*घनश्याम जाव जहां पर घनश्याम हमारे।।2।।*

*लावनी –* *सानयाव के पास जाय तुम हाथ जोर उनसों कैयो।*
*जैसें बनें उन्हें संग ल्याकर दरसन हमें करा जैयो।।*
*तुम्हरी कही न माने तो तुम अपने मन की कर लैयो।*
*मूसल धार नीर बरसाकर मधुपुर सिंधु बहा दैयो।।*

*सैर –* *दीजो बहाय मधुपुर हम होंय सुखारे।*
*सब बालन के नैनन इत बहत पनारे।।*
*कल पल को नहीं बरसें हम वरसें हारे।*
*घनश्याम जाव जहां पर घनश्याम हमारे।।3।।*
*जुर मिलो जाय दोऊ जने कारे कारे।*
*कारे से हम हैं हारे सब मजा बिगारे।।*
*ब्रजराज दरस हेतु लला सैर उचारे।*
*घनश्याम जाव जहां पर घनश्याम हमारे।।4।।*

बादलों की शोभा देखकर महल की ऊपरी छत पर पहुँचकर उनसे हाथ जोड़कर विनय करती है और सम्मान में सिर झुकाती है।

वह सिर नवाकर बादलों से कहती है कि मेरे पति विदेश में हैं इसलिए मैं बहुत दुखी हूँ, ऐसी स्थिति में तुम मेरी कुछ सहायता करो।

जहाँ मेरे प्रियतम रहते हैं, वहाँ पर जाकर तुम उनसे मेरा संदेश देकर पूँछना कि उन्होंने ऐसा अत्याचार क्यों किया? उनसे



कहना कि ब्रजबालाओं की सुध भूलकर तुम यश प्राप्त नहीं कर सकते। हे घनश्याम (बादल)! तुम वहाँ जाओ जहाँ हमारे घनश्याम (श्रीकृष्ण) हैं और हमारा संदेश उन्हें सुनाओ।

जब तुमने ब्रज पर कोप करके मूसलाधार वर्षा की थी तब श्रीकृष्ण ने गोवर्धन पर्वत धारण कर ब्रज की रक्षा की थी। उधर जाकर अब तुम उसी प्रकार का सुबह शाम नित्य कोप करना, वहाँ गोवर्धन पर्वत तो है नहीं, फिर देखें नन्दलाल (श्रीकृष्ण) क्या करते हैं? अर्थात् वहाँ की रक्षा कैसे करते हैं?

अपने साथी के पास जाकर उनसे हाथ जोड़कर हमारी विनती कहना और जिस प्रकार भी बन सके अपने साथ लाकर हमें दर्शन करा दो। यदि वह तुम्हारी बात न माने तो तुम अपने मन की करना और घनघोर वर्षा करके मथुरा बहाकर समुद्र में डुबा देना।

तुम मथुरा को बहा देना तो हम बहुत सुखी हो जावेंगे। यहाँ सब ब्रजबालाओं की आँखों से नित्य अश्रु की धारायें बह रही हैं। एक क्षण को भी चैन नहीं मिलता, नेत्रों से नीर बह रहा है, हम प्रियतम से हार मान चुके हैं।

तुम दोनों एक ही रंग के अर्थात् दोनों काले रंग के हो इसलिए जाकर एक दूसरे से मिलन कर लो। काले (श्रीकृष्ण) ने हमारा आनंद नष्ट कर दिया है। अतः हम तो उनसे हार मान चुके हैं। ब्रजराज श्रीकृष्ण के दर्शन  पाने के लिए लला कवि कहते हैं कि यह सैर लिखी है।

## कालिका प्रसाद भट्ट 'कमलेश'

श्री कालिका प्रसाद जी 'कमलेश' का जन्म तत्कालीन रियासत बिजावर जो वर्तमान में जिला छतरपुर (म.प्र.) की तहसील है, में हुआ था उन्हीं के शब्दों में –

*संवत् उन्नीस सौ उनत्तर के कातिक में,*
*कृष्णपक्ष चौथ तिथि तुला के दिनेश है।*
*रात दस बजे शुभ गुरुवार भयौ जन्म,*
*नीको बुंदेलखंड बिजावर सुदेश है।*
*छोटइ से रंगो मन श्याम भक्ति भावना में,*
*काव्य बृज भाषा बीच झूमत हमेश है।*
*बुद्धि जो हमारी सतसंग से सम्हारी नित्य,*
*सुकवि बिहारी जी के भ्राता 'कमलेश' है।।*

कवि कमलेश जी महाकवि बिहारी जी बिजावर के सहोदर लघु भ्राता व शिष्य है। महाकवि बिहारी जी की समाधि बिजावर जटाशंकर रोड पर है जहाँ अमावस्या व पूर्णमासी के दिन हजारों दर्शक श्रद्धालुजन दर्शनार्थ पहुँचते हैं, इन्हीं महाकवि बिहारी से काव्य



शिक्षा व सत्संग प्राप्त कर 'कमलेश जी' ने हजारों गीत घनाक्षरी, सवैया छन्दों की रचना की, जो बुन्देलखंड में काफी लोकप्रिय है। आप राज्य सेवा में भी कार्यरत थे। स्वतंत्रता के पश्चात् कमलेशजी का स्थानान्तरण छतरपुर हो गया। जहाँ आपने बिहारी संकीर्तन मंडल की स्थापना करके महाकवि बिहारी जी को मंडल के गुरुपद पर आसीन कर स्वयं संचालन किया। इस प्रकार दिन भर शासकीय कार्य के अतिरिक्त रात में 11 बजे तक कीर्तन मंडल का कार्य इनका नित्य नियम बन गया था। बिहारी जी के अन्य शिष्य श्री हरगोविन्द जी भी आपके साथ ही रहते थे। आपको बिहारी जयन्ती के अवसर पर बुन्देलखंड के प्रमुख साहित्यकारों व कवियों की उपस्थिति में आपकी रचना 'जय किसान' पर प्रशस्ति पत्र एवं पारितोषक प्रदान किया गया।

### सवैया (वियोगनी)

*घोरहि देत घना घन ये, सुनकें हम चोंक के आज डरे हैं।*
*चातक बोल कुबोल लगो, हिय घाव अनेकन ऐन करे है।।*
*को 'कमलेश' संभार करै, अब मेंन मरोर सें जात मरे हैं।*
*कैसौ करें घर माह रहें, पिय खेत पैजा ढवुवा में परे हैं।।*

सघन मेघ भयंकर गर्जना कर रहे हैं जिसे सुनकर हमारा शरीर भय से हिल गया। चातक का बोलना भी बुरा लग रहा है। इन सबने हृदय को पीड़ा दी है। अब कामदेव की पीड़ा से मेरा बुरा हाल हो रहा है इससे मुझे कौन बचा सकता है ? मैं किस प्रकार घर में चैन से रह सकूँगी क्योंकि प्रियतम खेत पर बनी झोपड़ी में जाकर लेट गये है।

## दादरा

*सुनों मेरी गुइया अब का करिये।*
*श्याम घटा घन घोर लखकें मन मेरो अति डरिये।।*
*पिव पिव बोल पपीहा सुनकें धीर कौन विधि धरिये।*
*मो विरहिन अबला के ऊपर ये सब पेंड़ें परिये।।*
*प्रीतम बसें खेत ढबुवा में दुख कैसें यह हरिये।*
*मेंन वान 'कमलेश' चलावै बिना मौत के मरिये।।*

हे सखी! बताइये क्या किया जाए ? इस समय भयंकर काले मेघों को देखकर मुझे बहुत डर लग रहा है। चातक के पिव–पिव के बोल सुनकर मेरा मन कैसे धैर्य धारण करे? मुझ विरहिणी स्त्री पर इतनी सभी विपत्तियाँ आ पड़ी हैं। प्रियतम खेत पर बनी झोपड़ी में सो गये अब मेरा यह कष्ट कैसे दूर हो सकेगा? कामदेव अपने बाणों के प्रहार से घायल कर रहा है, लगता है मृत्यु समय के पूर्व ही मरना पड़ेगा।

## कवित्त

*लोकन के लोक पति नंद के अजर मांह,*
*लीला तो कमाल करें माया मोह जाल पे।*
*झंगुली है पीत अंग कर में जड़ाऊ चूरा,*
*कंठ बीच शोभा दुति मोतिन की माल पै।।*
*कहें 'कमलेश' चाल नीकी है अनोखी शिशु,*
*नाचें पितबिम्ब देख नीके सुरताल पै।*
*श्यामलो सलोना नोंना जशुदा को छोना यह,*
*दोना के बचावे ये डिठोना लगो भाल पै।।*

तीनों लोकों के स्वामी नन्द के आँगन में माया से मोहित कर बाल लीला कर रहे हैं। शरीर पर पीले रंग का झबला, हाथ में जड़े हुए चूरा (हाथ में पहनने के चूड़ी के आकार का आभूषण) और गले



में आभायुक्त मोतियों की माला शोभा दे रही है। कवि कमलेश कहते हैं कि अनुपम शिशु का आँगन में चलना अच्छा लग रहा है। वे अपनी छाया देखकर तालबद्ध स्वर में उत्तम नाच कर रहे हैं। यशोदा जी ने इस सांवले सुन्दर पुत्र को नजर–दीठ से बचाने के लिये माथे पर काला डिठौना लगाया है।

## दोहा

*अजर बीच श्री नंद के, खेलत है नंदलाल।*
*दोना बचनें के लिये, दियो दिठोना भाल।।*

श्री नन्द बाबा के आँगन में श्रीकृष्ण जी खेल रहे हैं उन्हें नजर–दीठ से बचाने के लिये माथे पर दिठौना लगा दिया गया है।

## सवैया (संजोगनी)

*श्याम घटा की छटा नभ में, अटा चड़ पेख के नाहि डरैं हो।*
*पी पिव बोल पपीहा भले, मिल जाय तो याहि को कंठ लगै हों।।*
*खेत से आ 'कमलेश' पिया, रतिराज कौ आज मजा हम लै हों।*
*प्रेम से नेंन की सेंन चला, सुख चेंन सें ऐन ही रेंन वितैहों।।*

आकाश में काली बदली की शोभा छत के ऊपरी भाग पर चढ़कर प्रसन्नता से देखूँगी, मुझे अब डर नहीं लगेगा। पिव–पिव बोलता हुआ चातक अच्छा लगता है यदि वह मिल जाये तो मैं उसे गले लगा लूँगी। प्रियतम आज खेत से घर आ गये हैं। अब में कामक्रीड़ा का आनंद लूँगी। नेह भरे नयनों की चंचलता आज सार्थक होगी। आनंद और शांति से अच्छी तरह आज रात्रि व्यतीत करूँगी।

## कवित्त (शरद पूर्णमासी)

*आश्वन की पूनें लख गोपी मन दूनें भये,*
*आई सज साज वस्त्र भूषण नवीनों है।*

*संग में सहेली के उमंग भरी राधा चली,*
*प्यारे प्रेम भाव पेख वांह गल दीनों है।।*
*कहें 'कमलेश' आय नेह में प्रमोद बनें,*
*सनी श्याम रंग सवै आज श्याम चीनों है।*
*एक एक सखी साथ एक एक श्याम नचैं,*
*शरद जुन्हैया में कन्हैया रास कीनों है।।*

अश्विन माह (क्वांर का महीना) की पूर्णिमा को देखकर गोपी (ग्वालिनी) के मन का उत्साह दो गुना हो गया। वह आज नवीन वस्त्र और आभूषणों से सज गई। अन्य सखियों को साथ लेकर उत्साह सहित राधा जी चल पड़ीं, स्नेह के भाव को देखकर एक दूसरे के गले में बाहें डाले हुए हैं। कवि कमलेश कहते हैं कि स्नेहासिक्त सभी सखियाँ प्रमोदवन में आ गईं, सभी ने आज श्याम सुन्दर के स्वरूप को जाना और श्याम रंग में सराबोर हो गईं। श्री कृष्ण ने जितनी सखियाँ थीं उतने ही रूप बना लिये, एक–एक सखी के साथ एक–एक कृष्ण नाच रहे हैं। शरद पूर्णिमा की चाँदनी में इस प्रकार श्रीकृष्ण ने रास लीला सम्पन्न की।

### सवैया

*आज गई जमुना जल कों, नहि संग में कोइ रहै सखियां।*
*आय अचानक श्याम वहां, सिर धार मयूरन की पंखियां।।*
*प्रेम करो 'कमलेश' लला, कबहू नहि ऐसौ अलि लखियां।*
*मोय नही सुख सोंह सखी, जब दोय सें चार भई अखियां।।*

मैं आज यमुना नदी में जल भरने गई थी, मेरे साथ में कोई सखी नहीं थी। सिर पर मोर पंख धारण किये हुए श्रीकृष्ण अचानक वहाँ आ गये। हे सखी! श्याम लला ने ऐसा प्रेम किया जैसा मैंने नहीं देखा था। मैं सौगंध खाकर तुमसे बताती हूँ कि जब दो से चार आँखें हुई तो मेरी अचेत अवस्था हो गई थी।



## लक्ष्मी प्रसाद शुक्ल 'वत्स'

कवि लक्ष्मी प्रसाद शुक्ल 'वत्स' का जन्म बैकुण्ठ चतुर्थी विक्रमी संवत् 1972 तदनुसार 16 नवम्बर सन् 1915 ई. को तत्कालीन समथर राज्य के ग्राम सेसा में पंडित रघुवीर सहाय शुक्ल के घर हुआ। आपने अर्थशास्त्र तथा भूगोल विषय में एम.ए. तथा एल.टी. तक शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद समथर राज्य में अध्यापक नियुक्त हुए। कुछ दिनों अध्यापकीय करने के बाद वहीं तहसीलदार बनाये गए। समथर नरेश द्वारा 'राजकवि' का पद देकर सम्मानित किया गया। समथर राज्य के उत्तरप्रदेश में विलीन होने पर सीपरी बाजार, झाँसी के सरस्वती इण्टर कालेज में प्रवक्ता बने तथा उप प्रधानाचार्य होकर 30 जून 1978 को सेवा निवृत्त हुए।

वत्स जी बचपन से ही कवितायें लिखने लगे थे। इन्होंने बुन्देली तथा खड़ी बोली में कवितायें लिखीं। सन् 1936 से आपने अखिल भारतीय कवि सम्मेलनों में कविता पाठ किया। आकाशवाणी लखनऊ तथा छतरपुर से कई बार काव्य पाठ किया। आपको तत्कालीन छतरपुर, पन्ना, बिजावर, मैहर आदि राज्यों द्वारा सम्मानित किया गया तदन्तर बुन्देलखण्ड शोध संस्थान व बुन्देलखण्ड साहित्य

कला परिषद् द्वारा सम्मानित किया गया।

आपकी बुन्देली कविताओं के संग्रह 'बुन्देली' तथा 'खण्ड बुन्देला' एवं खड़ी बोली के काव्य संग्रह 'श्यामसुधा' तथा 'राम महिमा' प्रकाशित हैं। इन्होंने अपनी कविताओं में बुन्देलखण्ड के ग्रामीण अंचलों के अभावग्रस्त जीवन का चित्रण मुहावरेदार भाषा में किया है। आपका परलोकगमन 22 सितम्बर 1998 को हुआ। इनके तीन पुत्र माधुरीशरण, हरशरण तथा महावीरशरण झाँसी में निवास करते हैं। संझले पुत्र हरशरण पिता की साहित्यिक धरोहर को सहेजने का प्रयास कर रहे हैं।

## चौकड़ियाँ

*नावचार को घूँघट डारें, पौर दुआरौ झारें।*
*नोंनी लग रइं न्योरीं न्योरीं, टरकत आवें द्वारें।।*
*ऐरो सुन चौंकी हिन्नी–सीं, रै गइं निगा पसारें।*
*हमें देख मुस्का गइं, चट फिर दैलइं दोउ किवारें।।*

नायिका नाममात्र के लिए सिर पर घूँघट डालकर (केवल दिखाने के लिये घूँघट के नाम पर सिर पर धोती डाले हुए) बाहरी बैठक का कमरा और दरवाजे की सफाई (झाड़ू लगा) कर रही हैं। झुके–झुके धीरे–धीरे द्वार की ओर लाती हुई वह बहुत सुन्दर लग रही है। किसी ध्वनि की भनक से वह हरिणी (मृग की मादा) के समान चौंक कर आँखें फैलाये हुए देखने लगती है। नायक कहता है कि वह मुझे देखकर मुस्करा देती है (मंदहास कर देती है) और तुरन्त दोनों किवाड़ (फाटक) बंद कर लेती है।

*कंठा कठुला हिय में हूलें, मिचकिन झूला झूलें।*
*जैसी जैसी पैग बढ़त जयँ, तैसीं तैसीं फूलें।।*



*झोंका लगो सटक गइ सारी, ओढ़ न पायँ दुकूलें।*
*डुलें गेंद से भरे जुबनवाँ, चढ़ी सरग पै ऊलें।।*

नायिका झूला के पैग बढ़ाकर झूल रही है उसके गले का कठुला (माला की तरह गोल गले का आभूषण) हृदय में टीस उत्पन्न कर रहा है। क्रमशः बढ़ाते हुए पैगों से झूले की उछाल बढ़ती है और उसी क्रम में हवा के भरने से फूलती–सी जाती है तभी हवा का एक झोंका लगने से साड़ी सरक जाती है और सारी का छोर ढंक नहीं पाती जिससे दोनों स्तन गेंद की तरह तने हुए हिल रहे हैं और वह ऊँचाई की उछाल में प्रसन्न हो रही है।

*चढ़ गइं नदी कगारें गुइयाँ, खाबें टोर मकुइयाँ।*
*खटा चीपरौ स्वाद मिलै, मुस्का जय मीठी मुइयाँ।।*
*रिरको पाँव, लुड़क गइं, उरझीं रै गइं रूख डरैयाँ।*
*की रडुवा के भाग्गन बच गइं, आज मरत सें टुइयाँ।।*

मकुइयां (छोटा काला जंगली फल जो कटीली झाड़ी पर लगता है। तोड़कर खाने की इच्छा से नायिका नदी के ऊँचे किनारे (टीले) पर चढ़ गई। खट्टा–कसैला सा मकुइयां के रस का स्वाद मिले और माधुर्यपूर्ण चेहरे पर मुस्कान आ जाय। तभी पाँव फिसल गया और वह गिर गई किन्तु पेड़ों की डालों में उलझ जाने के कारण नीचे गिरने से बच गई। कवि कहता है कि वह नायिका किस रडुआ (अविवाहित अधिक उम्र का पुरुष) के भाग्य से इस दुर्घटना में भी मरते–मरते बच गई?

*बखरी में स्यों मूड़ उगारें, बैठीं बार समारें।*
*टाँगन पै तखता देखत जँय, रुच–रुच पटियाँ पारें।।*
*गोलइं लटें लचें लमछारीं, ज्यों तीखें तरवारें।*
*की कौ आज करेजो काटन, कों कररइं सिंगारें।।*

नायिका आँगन में पूरा सिर खोले बैठी हुई अपने बालों की सम्हाल कर रही है। अपने पैर फैला कर शीशा रखकर उसमें देखते हुए कंघी से बालों की मांग आदि बड़े मनोयोग से बना रही है। गोल, लम्बी, चिकनी और लहरातीं बालों की लटें लगती है मानो धारदार तलवारें हों। कवि कहता है कि नायिका आज किसका कलेजा काटने को यह श्रृँगार कर रही है?

*पाँवन भओ महाउर भारूँ, डग मग बढ़ें अगारूँ।*
*कोर कजर दे जियरा ले लओ, बचो कहा जो बारूँ।*
*ऐसी नोंनी निगत देखतइ जावें लगे पिछारूँ।*
*ऐसी धना जो मिल जायँ, राजइं राई नोंन उतारूँ।।*

नायिका इतनी कोमल है कि महावर लग जाने से ही उसके पैरों में भार बढ़ गया। आगे चलने में उसके पैर डगमगाने लगे हैं। उसकी आँखों के कटीले काजल ने मेरा हृदय ही ले लिया, अब मेरे पास कुछ नहीं बचा, मैं उस पर क्या निछावर कर दूँ ? उसकी सुन्दर चाल देखकर लगता है कि पीछे–पीछे चला जाय। नायक कहता है कि ऐसी सुन्दरी मिल जाय तो नित्य नजर उतारकर सुरक्षित रखूँ।

*चुप्पइं–चुप्पइं बढ़ें अंगारूं, चौकत जयँ भै भारूँ।*
*भओ झुलपटो कितै चल दइं जे, चोरन की उनहारूँ।।*
*आगें बढ़ती जाँय, मुरक कें हेरत जाँय पिछारूँ।*
*लयें टुइयाँ सी जान कहा करबे पै भइं उतारूँ।।*

धीरे–धीरे चुपचाप आगे बढ़ती जाती हैं भय के कारण बीच–बीच में चौंकती भी है। सायंकाल का अंधेरा होने लगा है वह चोरों के समान कहाँ जा रही है? आगे चलते हुए पलटकर पीछे की ओर देख लेती है। कोमलांगी प्रिय प्राणों वाली अब क्या करने का निश्चय कर चुकी है?



*चाँउर सदां पुरानो ल्यावे, चुरतन में सैलावे।*
*पउवा भर की खीर रँधै, सींकन टठिया भर जावे।।*
*गुर की डार डिंगरिया जो बिन दाँतन हू कौ खावे।*
*दस दिन माँह सेठ सी ताकी तोंद पसरतइ आवे।।*

चावल सदैव पुराना ही लेना चाहिये जो पकाने पर बहुत हो जाता है। एक पाव की खीर पकाने पर कई थालियाँ भर जाती हैं। यदि उसमें गुड़ के टुकड़े करके डाल दिये जाय तो बिना दांतों वाला व्यक्ति भी खा लेता है। ऐसी खीर खाने वाले का दस दिन में ही सेठ की तरह पेट बड़ा होता चला जाता है।

*नँदनन्दन देख कें ग्वाल हंसें,*
*हँस गोपियाँ नाचें झला के झला।*
*यह देख उमा से उमेश कहें,*
*अब को कहि है तुमसें अबला।।*
*विधि को जो विधान सो मेटती हो,*
*अबला तुम जानतीं ऐसी कला।*
*जसुदा ने तौ रात में जाइ लली,*
*पर भोर बना दियो देखो लला।।*

नन्द के पुत्र श्री कृष्ण के दर्शन करके सभी ग्वाल–बाल हँस रहे हैं। हँसते हुए गोपियाँ झुँड के झुँड होकर नाच रही हैं। यह सब आनंद देखकर शिवजी पार्वती जी से कहते हैं कि नारियों को अब अबला कौन कह सकता है ? तुम सभी नारियों को विधाता (ब्रह्मा) के विधान को मिटाने की युक्ति भी आती है। रात्रि में यशोदा जी ने पुत्री को जन्म दिया था किन्तु प्रातः होते ही उसे पुत्र बना दिया।

*चोरी करी दधि माखन की,*
*घर में घुसकें घटफोरी करी है।*
*मैं भरके जल ज्योंही चली मग,*

*छेड़ त्योंही बरजोरी करी है।।*
*कैसें जसोदा रहों तोरे गाँव,*
*कि कान्ह ने ऐसी छिछोरी करी है।*
*घाल गुलेल को फोर दी गागर,*
*गैल गली हँस होरी करी है।।*

ग्वालिन कहती है कि कृष्ण के घर में प्रवेश करके दही और मक्खन की चोरी की और घड़े आदि बर्तन भी तोड़ डाले। मैं जल भरकर जैसे ही रास्ते में चली कि तभी कृष्ण ने मेरे साथ छेड़–छाड़ की और जबरदस्ती की। हे यशोदा! मैं तेरे गाँव में भला कैसे रह सकूँगी? तेरा पुत्र कन्हैया ऐसी ओछी करतूतें करता है। एक दिन गुलेल (तिकोनी लकड़ी में बंधी रबड़ से बना पत्थर मारने का एक उपकरण) से पत्थर मारकर मेरी गागर तोड़ दी और मार्ग में हंसी–ठिठोली का होली जैसा व्यौहार करता है।

*सुमन सुगंध संग झूला की झकोर देख,*
*मधु मकरन्द प्यास जागी भृंग भृंग में।*
*मनु मुग्ध होके गोपियाँ भी गीत गाने लगीं,*
*माधुरी मधुर मुस्काई नृग नृग में।।*
*जुगल किशोर छवि देख मुग्ध हुए जीव,*
*थिर हुयी चपल चितौन मृग मृग में।*
*सौम्यता के रूप श्याम श्यामा संग झूलैयों कि,*
*झूला की झकोर झूम झूले दृग दृग में।।*

फूलों की सुगंध के साथ झूले की लहर देखकर अमृत से पुष्प–रस के लिये भौरों के मन में प्यास जागृत हो गई है। गोपियाँ मानो मोहित होकर गीतों का गान करने लगी और जन जन में कोमल माधुर्य मुस्करा उठा। राधा–कृष्ण की शोभा को देखकर जीवधारी मोहित हो गये। हिरनों की चंचल चितवन स्थिर हो गई।



सौम्यता के स्वरूप राधा–कृष्ण के झूलने पर झूले की लहरान प्रत्येक दर्शक की आँखों में झूलने लगी।

*मोह लिया मन मोहन ने सखि,*
*मेरौ छली से यों पालो पड़ो है।*
*कैसे कलंक से हाय बचूँ,*
*कुलकान को लूटबे को ही खड़ो है।*
*पाछें फिरौं ऊ माखन चोर के,*
*जो हँस हेर के चित्त चढ़ो है।*
*हेरत सहज चुरा लओ चित्त,*
*कि माखन चोर हिये में अड़ो है।*

हे सखि! मनमोहन कृष्ण जैसे धोखेबाज (कपटी) से संयोगवश मिलना हुआ और उसने मेरे मन को मोहित कर लिया है। कुल की मर्यादा को लूटने के लिये कृष्ण खड़ा हुआ है। मैं कैसे इस बदनामी से अपने को बचाऊँ? जिस माखनचोर ने मुस्कान के साथ देखकर हृदय में स्थान बना लिया उसके पीछे–पीछे मैं घूम रही हूँ। उस कृष्ण ने सहजता से देखकर ही मन को चुरा लिया है वही माखनचोर हृदय में बस गया है।

*चोरों की भाँति ही जन्म लियो,*
*हरि चोरी से नन्द किशोर बने हैं।*
*चोरी करी मधु माखन की,*
*दधि चोरी से ही सहजोर बने हैं।*
*चोरी ही चोरी छिछोर हुये यों,*
*कि चीर चुरा रसखोर बने हैं।*
*भोरी सी राधिका यों भरमाइ,*
*कि चित्त चुरा चितचोर बने हैं।।*

श्रीकृष्ण ने चोरों की तरह ही कारागार में जन्म लिया और

चोरी से ही वे नन्द बाबा के घर आकर उनके पुत्र बन गये। उन्होंने मधुर मक्खन को गोपियों के घर से चुराया और दही की चोरी करके ही वे बलवान बन गये। बार–बार चोरी करने से वे ओछे बन गये और गोपियों के वस्त्र चुराने पर रसग्राही बन गये। भोली भाली राधिका को धोखा देकर उसके मन की चोरी करके चितचोर बन गये।

*गोरी गोरी गोपियों के चमकें यों चन्द्र मुख,*
*चाँदनी ज्यों चैंत की चमकती दिगन्त है।*
*केशव के कंज के समान श्याम अंग पर,*
*राधिका की दृष्टि भृंग बन विलसंत है।।*
*राधिका गोपियों के संग रास रचा नाचें कान्ह,*
*मुरली की धुन कोकिला सी किलकन्त है।*
*पतझर होगा कहीं किन्तु रास रंग भरे,*
*यमुना के तीर पै बसन्त ही बसन्त है।।*

गोरे रंग की सुन्दर गोपियों के चन्द्रमुख ऐसे चमक रहे हैं जैसे चैत्र माह में चाँदनी सभी दिशाओं में प्रकाश फैलाती है। कृष्ण के कमल के समान सांवले शरीर पर राधिका जी की दृष्टि भौंरा बनकर विलास कर रही है। राधा और गोपियों के साथ कृष्ण रास लीला करते हुए नाच रहे हैं, उनकी मुरली की ध्वनि कोयल के समान किलकारी भर रही है। पतझड़ की ऋतु का प्रभाव अन्य स्थान पर संभव है किन्तु रासलीला स्थल यमुना नदी के किनारे बसंत ही बिखरा हुआ है।

*आज गुपाल ने खेली ज्यों फाग,*
*अनोखी त्यों चाल चली छल छंद की।*
*मूठ गुलाल की मारी ज्यों ही,*
*डारी दीठ में दीठ त्यों प्रेम के फंद की।।*
*मैं तो यों हाल विहाल हुयी,*



*कि रही सुध देह न गेह अलिन्द की।।*
*हूल सी लागी वो धूल गुलाल की,*
*तीर सी लागी वो दीठ गुविन्द की।।*

श्रीकृष्ण ने आज फाग के खेल में धोखेबाजी की एक विलक्षण युक्ति का प्रयोग किया, जैसे ही गुलाल मुट्ठी में भरकर मेरे ऊपर फेंकी उसी के साथ नजर से नजर मिलाई और प्रेम का जाल डाल दिया। मैं व्याकुल हो गई, मुझे अपने शरीर का भी होश नहीं रहा और यह भी भूल गई कि मैं घर के बाहर खड़ी हूँ। वह गुलाल की धूल मुझे भाले सी लगी और गोविन्द की नजर तो तीर की तरह हृदय में चोट कर गई।

*खेलत फाग अनहोनी भयी सखी,*
*रंग सुरंग यों कान्ह बिखेरो।*
*ओंचक मारी जो मूठ गुलाल की,*
*तीखे नैनन त्यों हँस हेरो।।*
*साँवरे लाल को साँवरो रूप,*
*वो देखत हाय भयो चित चेरो।*
*लाल जो कैसो गुलाल हतो,*
*जाने साँवर रँगो मन मेरो।।*

श्री कृष्ण के फाग खेलते हुए एक अनहोनी घटना (जैसी कभी पहले घटित नहीं हुयी) घट गई। श्री कृष्ण ने लाल रंग डाल दिया फिर अचानक मुट्ठी में गुलाल भरकर मार दी फिर आँखें पास में लाकर मुस्काते हुए मुझे देखा, काले कन्हैया के सलोने रूप को देखते ही मेरा मन उनका दास बन गया। हे कृष्ण! यह कैसी गुलाल थी जिसने लाल की जगह मेरा मन सांवले रंग में रंग दिया।

*गैयाँ चरावत रये वन में,*
*रणनीति कौ पाठ न नेक विचारो।*

*रास रचावत रये यमुना तट,*
*अस्म कला पै भी ध्यान न धारो।।*
*कौन सौ दूध जसोदा पिवाओ,*
*ओ राधे ने कौन सौ मंत्र उचारो।*
*कंज करों से ही कृष्ण कन्हैया ने,*
*काल सो कंस कढ़ोर के मारो।।*

श्रीकृष्ण बचपन से वन में जाकर गायों को चराते रहे, उन्होंने कभी युद्ध की नीति–रीति का अध्ययन नहीं किया। यमुना नदी के किनारे गोपियों संग रास क्रीड़ा करते रहे, कभी अस्त्र–शस्त्र के प्रयोग का कौशल नहीं सीखा। फिर यशोदा माता के दूध में ऐसी क्या विशेषता थी अथवा राधिका जी ने ऐसा कौन सा मंत्र श्री कृष्ण को सिखा दिया कि काल के समान बलवान कंस को उन्होंने घसीट–घसीट कर मार डाला।

*ज्यों ही सुनी श्याम लौटे नहीं,*
*गिरी गाज सी त्यों जसुदा जननी पै।*
*मीन बिना जल ज्यों तड़पें,*
*ब्रज गोपियाँ यों तड़पे तटनी पै।।*
*प्राण से कान्ह को यों लै गयो,*
*मनु व्रज गिरो ब्रज की अवनी पै।*
*क्रूर से क्रूर भी देखे परन्तु,*
*अक्रूर सौ क्रूर न देखो कहूँ पै।।*

यशोदा जी ने जैसे ही सुना कि श्रीकृष्ण वापिस नहीं आये उनपर बिजली सी गिर गई और जल के अभाव में जैसे मछली तड़पती है वैसे ही ब्रज की गोपियाँ नदी पर बैठी वियोग की दशा में छटपटा रही हैं। प्राणों से प्रिय कृष्ण को अक्रूर मानो ब्रज की धरा पर वज्रपात कर दिया गया हो। कठोर से कठोर व्यक्तियों को देखा है



परन्तु अक्रूर की तरह का कठोर हृदय वाला कोई नहीं है।

*श्याम वियोगिनी राधा फिरै,*
*मनु कुंज कछार की भाँबरी हो गयी।*
*आह कराह करे ध्वनि यों,*
*मनु श्याम के ओंठ की बाँसुरी हो गयी।।*
*अश्रु की धार झरे दृग यों,*
*मनु श्याम घटा वन बाँवरी हो गयी।*
*काजल नैन कौ ऐसो बहो,*
*वह श्याम समान ही साँवरी हो गयी।।*

श्री कृष्ण के वियोग में राधा यमुना के तट पर, गलियों में अथवा वन की लता वृक्षों से घिरे स्थानों पर ऐसे चक्कर लगा रहीं जैसे वहाँ के भँवर में फंस गई हो। मुँह के कराहने की ध्वनि ऐसी लगती है कि मानो श्री कृष्ण के होठों पर रखी वंशी बन गई हो। आँखों से आँसुओं की ऐसी धार बह रही है मानो काली घटा बनकर वह पागल हो गई है। आंखों का काजल इस तरह बह गया वह सांवले कृष्ण की तरह ही काली हो गई।

*सुन कोयल कूक उमंग उठी,*
*रसिकों में किलोल कौ दौर भयो है।*
*लतिकायें रसाल से जा लिपटीं,*
*मंजरी पै मिलिन्द कौ झौंर भयो है।*
*तितली सुमनों सँग नाच उठी,*
*रसरंग भरो हर ठौर भयो है।*
*ऋतु राज के आवत ही प्यार जगो,*
*पल में जग और कौ और भयो है।*

कोयल का कूकना सुनकर रसिक जनों के मन में उत्साह आ गया और काम–क्रीड़ायें चलने लगीं। लतायें रसयुक्त वृक्षों से लिपट

गई। मंजरी के ऊपर भौरों के झुंड दिखने लगे हैं। तितलियाँ फूलों के साथ नाचने लगी है और सभी स्थानों पर आनंद की उमंग आ गई। ऋतुराज बसंत के आते ही नेह की जागृति हो गई और सारा संसार क्षण भर में बदल कर नवीन बन गया।

*राम लला लेने को ही कुँअर गणेश रानी,*
*अवध में आयीं रामनौमी की बधाई में।*
*मैया सरयू ने दिये बाल रूप राम उन्हें,*
*लेके राम आयी वह मधु अँगनाइ में।।*
*बाल राम अवध में न देख सके शिवजी तो,*
*कहा यों भुसुण्ड चलो बेतवा अथाइ में।*
*बनो है बुन्देलखण्ड अब तो अवध जहाँ,*
*राम लला खेलें ओरछा की अमराई में।।*

(हरशरण शुक्ला, झाँसी के सौजन्य से)

रामचन्द्र जी को लेने के लिये महारानी गणेश कुँवरि राम नवमी को राम जन्म के उत्सव में अयोध्या आईं। सरयू माता ने उन्हें बालरूप राम दिये जिन्हें लेकर वह ओरछा आ गईं। शिवजी ने बालरूप श्रीराम को अयोध्या में न पाया तो कागभुसुण्ड जी से कहने लगे कि बेतवा के किनारे पर स्थित ओरछा चलो अब बुन्देलखण्ड का यह ओरछा अयोध्या बन गया है। वहाँ की अमराई में रामलला अपनी क्रीड़ायें कर रहे हैं।



## ठाकुर हरनारायण सिंह 'यार'

प्रकृति के सुरम्य परिवेश में स्थित अजयगढ़ जिला पन्ना में ठाकुर हरनारायण सिंह यार का जन्म आश्विन विजयादशमी सम्वत् 1973 को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री बृजलाल सिंह एवं माता का नाम श्रीमती रामदुलारी बाई था। माताजी भक्ति भावना से ओत–प्रोत हो रामचरित मानस का सदैव भाव विभोर होकर पाठ करती थीं, जिससे इसका प्रभाव श्री हरनारायण सिंह 'यार' पर बाल्यकाल से ही पड़ा। इनकी शिक्षा श्री दुर्गा प्रसाद ओझा की पाठशाला में हुई। यद्यपि श्री हरनारायण सिंह की शिक्षा नवमीं तक हो पाई थी किन्तु स्वाध्याय व सत्संग के कारण आपने अपने व्यक्तित्व का विकास किया। महाराज पुण्य प्रताप सिंह के प्रभाव तथा जन्मजात प्रतिभा के कारण आपको अजयगढ़ राज्य के विद्युत विभाग में सुपरवाइजर के पद पर नियुक्त किया गया। आगे चलकर आप इंजीनियर बने एवं दतिया ग्वालियर तथा सतना के पावर हाउस को योग्यतापूर्वक संचालित किया। सन 1962 में हृदयाघात से पीड़ित होने के कारण स्वेच्छा से पद निवृत्त हुए।

श्री ठाकुर हरनारायण सिंह जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। वे

मूर्तिकला, चित्रकला, फोटोग्राफी तथा काव्य सर्जना में विशेष रुचि रखते थे। वे विज्ञान के प्रति भी जिज्ञासु रहकर अनुसंधान करते रहते थे। उन्होंने सन् 1938 में गोबर गैस का निर्माण कर अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा का प्रदर्शन किया था। आप सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्र में भी सक्रिय रहे। आपने सरपंच ग्राम पंचायत अजयगढ़, कांग्रेस के ब्लाक अध्यक्ष, नगरपालिका उपाध्यक्ष तथा नेहरू बाल मन्दिर के व्यवस्थापक के रूप में सराहनीय कार्य किया।

इनकी कृतियों में 'अजायबघर', 'अटकन–चटकन' तथा 'सुदामा के श्याम' स्थानीय स्तर पर प्रकाशित हैं। इसके अलावा स्फुट रचनायें अप्रकाशित हैं।

## कवित्त

*मोर और पपीहा चिचयाबें बरसावें जल,*
*गुस्सा सी चढ़त 'यार' इनकी ई बोली पै।*
*बरसै जब पानी, छानी छप्पर चुचवानी सब,*
*कुरता तक भींज गओ टपका चुओ चोली पै।।*
*टपरा के खपरा हैं ऊपर गिरे घुर–घुरके,*
*नौंनौ ना लगो मोय दइ की ठिठोली पै।*
*कूरा मकरजारौ सब ऊपर गिरो कारौ–कारौ,*
*होरी सी खेल गओ मोरी खटोली पै।।*

कवि यार कहते हैं कि मोर व पपीहा चिचिया कर (बुरी तरह आवाज कर) रहे हैं और जल बरस रहा है, इनकी बोली से गुस्सा सी चढ़ती है। लेकिन जब अधिक वर्षा होती है तब छप्पर चूने (टपकने) लगता है। इतना ही नहीं छप्पर चूने पर कुरता भीग जाता है और प्रिया की चोली पर पानी टपकता है। झोपड़ी की खपरैल घुल–घुल



कर गिर रही है। मुझे ईश्वर की यह हँसी ठीक नहीं लगती है। कूड़ा, करकट, मकड़जाल सब काला–काला कचड़ा ऊपर गिरता है। यह बादल की वर्षा मेरी चारपाई पर होली सी खेल कर भाग गया है।

*देख कें चुनाव 'यार' अचरज आनन्द होत,*
*दुलहिन एक कुरसी, बरात सात दूल्हा की।*
*वाहन उपवाहन अफवाहन की धूम मची,*
*नेतन की बानी बनी, नामी रमतूला की।।*
*जीत भई जी की तीकी सबली बरात भई,*
*हर्ष औ उलास बीच बरसा भइ फूलन की।*
*हारे प्रत्याशी के साथी भगे छोड़–छोड़,*
*होरी सी जरी राख रह गइ बरूलन की।।*

कवि यार ने चुनाव को देखकर कहा है कि मुझे आश्चर्य और आनन्द होता है कि एक सत्ता रूपी दुल्हन को प्राप्त करने हेतु सात दूल्हे अपने बारातियों के साथ प्रयास करते हैं। इस समय वाहनों की भीड़ तथा अफवाहों की धूम मचती है। नेता की वाणी रमतूला जैसी होती है। जीतने वाले के साथ सब जुट जाते हैं, हर्ष व उल्लास छा जाता है। हारे प्रत्याशी के साथी उसका साथ छोड़–छोड़ कर भाग जाते हैं। जैसे होरी जलने के पश्चात् केवल बरूलों (गोबर से निर्मित) की राख ही शेष बचती है वैसी स्थिति हारे प्रत्याशियों की होती है।

*कोऊ ना दिखइया ना सुनइया गरीबन की,*
*सबरे दुकानदार धौंकें मनमानी है।*
*पानी मिलो दूध मिल जात तो गनीमत ती,*
*अब तौ है मिलन लगो दूध मिलो पानी है।।*
*चाय हम पिवाते और खबाते कछू ऊपर सें,*
*पै चक्कर जौ पर गओ 'यार' शक्कर बढ़ानी है।*

*परी मंहगाई आमदानी कछू रही नइयाँ,*
*सेवा में अपुन की जौ एक गड़ई पानी है।।*

गरीबों की रक्षा व दुःख देखने वाला कोई नहीं है। सब दुकानदार अपनी मनमानी कर रहे हैं। पानी मिला दूध मिल जाता था, सो गनीमत थी परन्तु अब तो दूध मिला पानी मिलने लगा है। मित्र हम आपको चाय भी पिलाते और कुछ (नमकीन, बिस्कुट) खिलाते, परन्तु शक्कर का चक्कर आ गया हैं कि शक्कर खत्म हो गई है। मंहगाई के अनुपात में आय वृद्धि नहीं हुई है। इसलिए अब आपकी सेवा में यह एक लोटा पानी ही उपस्थित है।

*कलि किलकानों विलखानों बिलानों सुख,*
*सत्य सरम्यानों शील सुमति सिरानों हैं।*
*गरब गरूर गरम्यानों गरीबन पै,*
*कुटिल कुपूतन कुकृत्य ठान ठानों है।।*
*सुजन सयाने पुराने सब पीत भये,*
*मूंढ़न पै बैरी बसन्त बरयानों है।*
*स्वारथ के सपनें में अपनें पराये भये,*
*मानों ना मानों 'यार' बिगरो जमानों है।।*

कलयुग प्रसन्न हो रहा है जिसमें सुख दुखी होकर विलुप्त हो गया है इसीलिए सत्य, शील, सुमति सब सरमा कर समाप्त हो गये हैं। गरीबों पर गर्वित धनपतियों ने कुटिलता पूर्ण कुकृत्य करने की ठान ली है। सभी अच्छे लोग पुराने पड़कर समाज की मुख्य धारा से अलग हो गये हैं। मूर्खों पर बसंत विराजमान है। स्वास्थ्य की इस दुनिया में अपने सब पराये बन अपना प्रभाव दिखा रहे हैं। यार कवि कहते हैं कि आप मानें या न मानें जमाना बिगड़ गया है।

*मन खाँ मरोर 'यार' रसना बा टोर डारौ,*
*सपनेहु में सुरत करावै जौन खीर की।*



*माछीं भिनकातीं श्रम बिन्दु टपकातीं जातीं,*
*मुड़री पै कुड़री धरे है फटे चीर की।।*
*ग्राहक के द्वार पै उघार मूड़ हेरैं जुँवा,*
*नखन दबाय चटकारें बिना पीर की।*
*खोर–खोर जाय दूध बेंचे कर बोर–बोर,*
*छी–छीं कर देतीं, छाँछ छोकरी अहीर की।।*

कवि यार कहते हैं कि मन को नियंत्रित कर मैं जीभ को भी प्रताड़ित करूँगा जो कभी भी खीर खाने की बात को सपने में भी याद दिलाये। मक्खियों को भिनकाती पसीने की बूंदों को टपकाती, सिर पर फटे कपड़ों की कुन्डी रखे वह दूध बेचने जाती हैं। ग्राहक के दरवाजे पर सिर को उघाड़कर जुँआ (जूँ) ढूंढ़ने लगती है। गली–गली में जाकर उंगलियों को डुबो–डुबोकर वह दूध बेच रही है। वह अहीर की बेटी इसी तरह मठा व दूध छी–छी कर (मक्खियों को भगाकर) दे रही है।

*हम तौं भये बूढ़े सब देखत सब जानत हौ,*
*बची जान दमड़ी भर चमड़ी उधेरौ ना।*
*कविता सुनाने ती सुना चुके हँसा चुके,*
*सुनीं 'यार' बेर–बेर हम खाँ अब घेरौ ना।।*
*जो कछु खबानें–पिवानें सो लाव इतै,*
*जान देउ घर खाँ अब बिरथाँ हमें पेरौ ना।*
*झट्ट पट्ट उठकें झड़ाकें सें काम करौ,*
*बैठे बिलइया से टुकुर मुकुर हेरौ ना।।*

कवि यार कहते हैं कि आप जानते हैं कि हम बूढ़े हो गये हैं। अब शरीर में थोड़ी सी जान बची है, चमड़ी है, उसकी चमड़ी न उधेड़ो। मुझे जितनी कविता सुनानी थी वह सुना चुके तथा जितना हँसाना था हँसा चुके। हमको बार–बार न घेरो। जो कुछ

खिलाना–पिलाना हो तो इसे इधर लाओ। अब मुझे घर जाने दो, व्यर्थ में परेशान न करो। तत्काल उठकर त्वरित गति से काम करो तथा बिल्ली जैसे टुकुर–मुकुर निगाह गड़ाकर मत तको।

*आमन की बौरन में नीम की निबौरिन में,*
*औरन की घौंरन में बिखरो बसन्त है।*
*सड़क छाप भौंरन में साँप और नौरन में,*
*मंत्रिन के दौरान में भारत स्वतन्त्र है।*
*मद के मतवारिन में नये कट वारन में,*
*नेतन के नारन में आदि है न अंत है।*
*लूट पाट हत्या में लालच लौलत्या में,*
*'यार' यहाँ मिथ्या में बीधो गणतंत्र है।*

आम के बौरों, नीम की निबौरियों में तथा औरों की घौरन (फलों का गुच्छ) में बसन्त बिखरा है। सड़क छाप भौंरे, साँप और नेवले और मंत्रियों के दौरे स्वतंत्र भारत में हो रहे हैं। इस सत्ता के मद में नेताओं के नारों का कोई आदि व अंत नहीं है। यह प्रजातंत्र में लूटपाट, हत्या, लालच जैसे मिथ्या जाल में उलझ गया है।

*देख बऊ द्वारे में कल्लू कौ होत व्याव,*
*दमक रही दमर–दमर बिजली खूब लिस कें।*
*अबई और आजइँ करा दे तैं मोरौ व्याब,*
*दद्दा सें मनवाँ ले चहै जौन मिस कें।।*
*तेल और रेंहन कौ उपटनौ लगा दे मोय,*
*दौरिया में भरो धरो अबइँ आओ पिसकें।*
*चार ठौ डिठौला लगा दे आज काजर के,*
*खूब मोय सपरा दे, खपरा सें घिसकें।।*

पौत्र अपनी दादी से कह रहा है कि देख दादी दरवाजे में कल्लू का विवाह हो रहा है, बिजली दमक–दमक कर जग को



चमत्कृत कर रही है। हे दादी! मेरी शादी भी तुम आज और अभी करा दो। पिता को विवाह के लिए किसी बहाने से मना करके स्वीकृति दिला दो। तेल व बेसन का उपटन लगा दो। दौरिया (बाँस का वर्तन) में भरा रखा है अभी पिसकर आया है। चार ठिठौला काजल के लगा दो, खूब मुझे खपरा से घिसकर नहला दो ताकि मैं गोरा निकल आऊँ।

## चौकड़ियाँ

*कैसे आ गये 'यार' जमाने, रहे न कछू ठिकाने।*
*कागज के चल रहे रुपैया, मिलत मुठी भर दाने।*
*नित नये रोज विलोरा डारत मुखिया और सयाने।*
*जनता के मुड़इ के ऊपर, सब कौआ मँड़राने।*
*'हरनारायण' रह गई थोरी, तुम खाँ प्रभू निभाने।।*

यार कवि कहते हैं कि जमाना बदल गया है इसका कुछ ठिकाना नहीं रहा है। कागज के रुपयों में अब मुट्ठी भर दाने मिलते हैं। इसमें भी गाँव के मुखिया व सयाने कर्ज लेने के लिए अड़चन डालते हैं। जनता के ऊपर सब कौआ (सत्ताधारी, पूँजीपति) मंडरा रहे हैं। हरनारायण कवि कहते हैं कि हे प्रभु! तुम्हें ही सब निभाना है।

*कैसउ जी रये हैं रो गाकें, भटा गकरियाँ खाकें।*
*पहरें फिरियत फटो पिछौरा, केंसउ कें तन ढाँके।।*
*भ्रष्टाचारी बड़े स्वाद सें, खारये हमें चबाकें।*
*यारन की बे धरम नीत नें, धर दओ 'यार' नसा कें।।*

गरीब लोग भटा–गकरियाँ खाकर जैसे–तैसे विवशता भरा जीवन जी रहे हैं। फटे कपड़े पहनकर तन को ढके हुए हैं। भ्रष्टाचारी, तानाशाही बड़े स्वाद से गरीबों को चबाकर खा रहे हैं।

यार कवि कहते हैं कि उनकी बेधरम नीति से निम्न वर्ग को बर्बाद कर रख दिया है।

*यारो जग हो रओ दीवानौ, जाय न कछू बखानौ।*
*बाहर सें हैं भव्य देवता, भीतर बैठो दानौ।।*
*दूध जलेबी अपने लानें, सब खाँ सरो अथानौ।*
*भ्याने 'यार' होय चहे जैसौ, आज मसक कें छानौ।।*

दोस्तों, जग दीवाना हो गया है जिसका कुछ बखान नहीं किया जा सकता है। बाहर से भव्य देवता की भाँति है, पर अंदर से पापी दानव बैठा है। दूध जलेबी अपने लिये है और दूसरों के लिए सड़ा–अचार बताते हैं। आज यार कवि कहना चाहते हैं कि मसककर खूब खाओ–पियो, भविष्य देखा जायेगा।

*रजुआ अजब तुम्हारे साखे, लखत करेजौ कांखे।*
*पिचके गाल खाल सूखी सी, लाल ओंठ रँग राखे।।*
*पहरें फिरतीं सरो सुतन्ना, कढ़ी पसुरियाँ पाखे।*
*'यार' पार कैसें लग पाहौ, रहौ तना तन ढाँके।।*

यार कवि कहते हैं कि रजुआ (नायिका) तुम्हारे शौक भी अनोखे हैं। हृदय दुख से पीड़ित हो तड़फ रहा है। गाल पिचके, खाल सूखी सी है कि ओंठों को लाल रंग से रंगा है। सड़ा सुतन्ना (घाघरा) पहने घूम रही हो। जिससे ढाँचे की हड्डियाँ दिख रही हैं। यार कवि कहते हैं किस तरह जीवन व्यतीत कर पाओगी अपने इस शरीर को थोड़ा ढँक कर रखो।

*होरी आई कौन रँग घोलें, अब की–की जय बोलें।*
*मंहगाई मरघट लौ पहुँची, मनमानी सब तोलें।।*
*छूंछे हंड़न की पेंदी में डौवा डगमग डोलें।*
*ऊपर कौआ तरें चुखरवा, मसकउँ–मसकउँ कोलें।।*



*कारौ–कारौ न्यारौ जौ मुँह, 'यार' कहें अब घोलें।।*

होली आ गई है, कौन सा रंग घोलें और किसकी–किसकी जय बोलें। मंहगाई मरघट तक पहुँच गई है, सब मनमानी कर रहे हैं। खाली हड़ियों (खाने बनाने का मिट्टी का बर्तन) की पेंदी में कौवा डगमग डोल रहा है। ऊपर कौआ तथा नीचे चूहा शान्त–चुपचाप शोषण कर रहे हैं। कवि कहते हैं कि इस अन्यायी व्यवस्था का मुँह काला हो इसको किसमें धोकर साफ करें।

*ऐसी फैला दई दौ भाँती, रहो न कोउ सँगाती।*
*नेता अब दूल्हा बन बैठे, चमचा बनें बराती।*
*सीधीं मिलीं दार दरबे खाँ, हैं जनता की छाती।*
*सबरन हरिजन भेद बढ़ा दओं दै–दै ठकुर सुहाती।*
*इनने 'यार' लड़ा दओ सब खाँ, घर–घर बब्बा नाती।*

यार कवि कहते हैं कि इस प्रकार का भेदभाव फैला दिया है कि उसका कोई साथी नहीं रहा है। नेता सत्ता रूपी दूल्हा बन बैठे हैं। बराती (दूल्हे के चमचे) चमचा बन बैठे हैं इनको जनता की छाती पर ही दाल दलने को मिली है। इन नेताओं ने जाति–पाति का इतना भेद बढ़ा दिया है और घर–घर में दादा व पौत्र में द्वेष, लड़ाई पैदा कर दी है।

## सवैया

*सब 'यार' लखें अपनौ अपनौ, कोउ ओरौ बनें कोउ गाज बनें हैं।*
*बटेर कि टेर खाँ कौंन सुनें, जबरे–जबरे अब बाज बनें हैं।।*
*राज गये अरु ताज गये, महराज गये यमराज बनें हैं।*
*रूप छिपाय लुटेरे बढ़े, अब लाखन कोढ़ की खाज बनें हैं।।*

यार कवि कहते हैं कि सब व्यक्ति अपने–अपने में हैं, और कुछ व्यक्ति ओला एवं कुछ व्यक्ति गाज बन बैठे हैं। बटेर की आवाज को

कौन सुनें? जबरदस्त व शक्तिशाली बाज यहाँ बने हैं। पुराने जमाने के राज चले गये हैं, महराजा चले गये हैं, अब तो यमराज बचे हैं। अपना रूप छिपाकर लुटेरे बढ़ गये हैं, वे लाखों रुपये की जायजाद हड़पकर गरीबों हेतु कोढ़ में खाज बन गये हैं।

*अब देत अजान–अजान फिरै, कछु भेद कुरान कौ जान न पावैं।*
*खेद है पण्डित वेद पुराण को, स्वारथ सॉन लबेद बनावै।।*
*खुल कें खल खेल रहे हैं प्रचण्ड, सुदेश अखण्ड के खण्ड बनावै।*
*सत्य के सार को 'यार' भुलाय कें, पाप पाखण्ड पहार बनाबै।।*

अब अजान (प्रातः की नमाज) से अपरिचित अजान दे रहे हैं अर्थात् जिन्हें कुरान का अर्थ पता नहीं वे कुरान पढ़ा रहे हैं। दुख से कहना पड़ता है कि पण्डित जिन्हे वेद व पुरान का ज्ञान नहीं है, वे स्वार्थ हेतु इसकी व्याख्या कर रहे हैं। दुष्ट अपना खेल खुलकर खेल रहे हैं। प्रचण्ड, सुदेश, अखण्ड भारत को खण्डित बना रहे हैं। यार कवि कहते हैं कि सत्य के सार को भुला दिया गया है। पाप–पाखण्ड का पहाड़ निर्मित हो गया है।

*गणना न रही है गुणी जन की, अब मानत न कोउ बूढ़ो सयानौ।*
*काहू कि कोऊ सुनइया है नाहिं, रुपैया कौ खेल बढ़ो मनमानौ।।*
*न कूत परै कपटी करतूत, 'यार' भयो है अकूत जमानौ।*
*ऊपर सें मुसकात दिखात है, भीतर–भीतर राहु समानौ।।*

अब वर्तमान में गुणी जन की गणना नहीं है। अब बूढ़े सयाने का भेद खत्म हो गया है। यहाँ कोई किसी की नहीं सुन रहा है। पैसों का खेल मनमाना बढ़ गया है। कपटी करतूतों से जमाना भर गया है, ऊपर से मुस्कान दिखाई देती है। आदमी की जिन्दगी में मुस्कान तो है पर वास्तविक रूप से मुस्कान नहीं रही है।



## पंडित प्रमोद कवि

छतरपुर जिले के ग्राम बमनी में फाल्गुन शुक्ल पक्ष पंचमी संवत् 1974 को पंडित प्रमोद कवि का जन्म हुआ। इनके पिता जी का नाम श्री चतुर्भुज शर्मा तथा माता का नाम श्रीमती राधिका रानी शर्मा था। इनका मूल नाम बहादुर शर्मा है, लेकिन 'प्रमोद' नाम से कविता लिखने के कारण यही प्रसिद्ध हो गया। आपने साधारण शिक्षा प्राप्त कर बिजावर स्टेट के राजकवि बिहारी भट्ट का शिष्यत्व ग्रहण किया। उनके मार्गदर्शन में आपकी काव्य सर्जना में निखार ला दिया। इनके प्रकाशित ग्रंथों में 'प्रमोद पुष्पांजलि', 'बुन्देलखण्ड गरिमा' तथा 'बुन्देली चौकड़िया शतक' प्रमुख हैं। अभी गीता ग्रंथावली, मानस मंजरी, सामयिक चरित्रावली तथा चित्त चेतावनी रचनाएँ अप्रकाशित हैं। इनको अनेक बुन्देली के मंचों पर सम्मानित किया गया। बुन्देली विकास संस्थान, बसारी ने आपकी सुदीर्घ बुन्देली काव्य सेवा हेतु 2003 में सम्मानित किया।

### चौकड़ियाँ

*बेंदा दँय माथे पै न्यारौ, नैन कजलवा कारौ।*
*दांतन लसै पांन की लाली नथनी कौ नग न्यारौ।*

*हँसतन परें कपोलन गड़का जब घूँघट पट टारौ।*
*हरत 'प्रमोद' हरेकन के मन हार हजारन वारौ।।*

इस छंद में नायक अपनी नायिका के बारे में बताता है कि उसके माथे पर जो बड़ी बिंदी लगी हुई है वह बहुत ही अलग ढंग की है और आँखों में लगा काजल उसकी शोभा बढ़ाता है। पान खाने के कारण उसके होंठ ऐसे लगते हैं जैसे मानो किसी ने उनपर लाली लगा दी हो एवं उसकी नथुनी का जो नग है वह भी सभी से अलग है, सुन्दर है, आगे कवि कहते हैं कि नायक कहता है कि जब मैंने उसके मुख से घूँघट हटाया तो उसके हँसने के कारण गालों पर हल्के–हल्के गड्ढे पड़ते थे और उसका हजारों रुपयों का हार तो हरेक के मन का हरण करता है।

*अबना लगै मायकौ नोंनों, पिया करा लेव गोंनों।*
*ज्वाँनी ओज उरोंज रोज ये उमछा रय हैं दोनों।*
*मैं दिन रात लुकाँय फिरत हों लोभी जैसौ सोंनों।*
*व्यंजन त्याग 'प्रमोद' काय हम खइये साग अलौनों।।*

एक पत्नी अपने पति को संदेश भेजती हुई कहती है कि अब मुझे मायका में अच्छा नहीं लगता इसलिए जल्दी से द्विरागमन करा लो ताकि मैं तुम्हारे पास आ सकूँ। जवानी और शरीर के अंगों का उभार प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। हमेशा मुझे इन सभी को ऐसे छुपाये रहना पड़ता है जैसे कोई लोभी सोना को छिपाये रहता है। आगे का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि नायिका कहती है कि मैं व्यंजनों के त्याग के बिना नमक की सब्जी क्येां खाऊँगी, अर्थात् मुझे आप जैसे पतिदेव मिले हैं तो दूसरों की तरफ क्यों देखूँ?

*नैयाँ निधि नारी सी पावन, काम कलेस नसावन।*
*सौंप शरीर देत स्वाँमी को प्रेम–पियूस पिलावन।*



*अँग–अंग सें सगौ संग है जैसौ चोली दाबन।*
*प्राण 'प्रमोद' बसें नारी में लगे हैं वैद्य बतावन।।*

कवि नीतिपरक बातें बताते हुए कहते हैं कि नारी के समान पावन कोई नहीं है वह काम व विपत्तियों को समाप्त करने वाली है। वह (नारी) अपने पति को तन समर्पित करके प्रेमरूपी अमृत पिलाती है, उसके प्रत्येक अंग का आपस में सगा संबंध है जैसा चोली दामन का साथ रहता है। कवि प्रमोद जी आगे कहते हैं कि प्राचीन ज्ञानियों, वैद्यों ने यह बताया है कि नर के प्राण नारी में ही बसते हैं।

*छाई बन बागन पियराई, सखि बसन्त ऋतु आई।*
*अभ्यन मोरन भोंरन की फिर बजन लगी शहनाई।*
*फूले कुन्द कुसुम चहुँ ओरन मनसिज सेंन सजाई।*
*ऐसे में का जान पिया ने प्रांण प्रिया बिसराई।*
*अति विनोद मय कीर कोकिला देत 'प्रमोद' बधाई।।*

बसन्त ऋतु के आगमन पर नायिका अपनी सखी से मनोभावों को व्यक्त करती हुई कहती है कि हे सखी! बसन्त ऋतु के आने के कारण धरती में चहुँओर पीलापन छा गया है। फिर से बागों में मयूरों एवं भौरों का संगीत गुँजायमान हो रहा है। अनेक प्रकार के फूल चारों तरफ खिलने से ऐसा लगता है मानो कामदेव ने अपनी सेना सजाई हो। पर हे सखी! ऐसे समय में प्रियजन ने क्या समझकर मुझे भूला दिया है ? अर्थात् मिलन के लिए वह ऋतु सबसे उपयुक्त मानी गयी है। तो फिर क्यों पतिदेव ने मेरा ध्यान अपने मन से हटा दिया है, कवि कहते हैं ? कि कोयल अपनी मधुर आवाज में सभी को इस ऋतु की बधाई दे रही है।

*ऊधौ प्रेम पन्थ अति पावन, जगत कलेश नसावन।*
*हम जाने कैं तुम आये हौ नीकी सीख सिखावन।*

*तुम तौ निपट स्वार्थी लगे योग विराग पढ़ावन।*
*प्यास 'प्रमोद' ओस की बूँदन ब्रज की आये बुझावन।।*

जब उद्धव गोपियों को ज्ञान के बारे में बताते हैं तो गोपियाँ कहती हैं कि हे उद्धव! यह जो प्रेम का मार्ग है वह अति पवित्र है, इससे जगत् के समस्त दुःख दर्द समाप्त हो जाते हैं। अरे! हम तो समझ रहे थे कि तुम हम सभी को अच्छी बात बताने आए होगे लेकिन तुम तो बिलकुल स्वार्थी निकले जो हमें ज्ञान (विराग) का पाठ पढ़ाने आये हो। आगे कवि प्रमोद कहते हैं– गोपियाँ कहती हैं कि उद्धव तुम ब्रजवासियों की प्यास को ओंस की बूँद से बुझाने आये हो, जो असंभव है।

*अपनी करी कौंन सै कइये, की खां का समझाइये।*
*मन की बिरह व्यथा की ऊधौ की खाँ कथा सुनइये।*
*नंद नंदन बिन कौंन हमारौ कीलौ बृज में रइये।*
*बन्शीधर 'प्रमोद' नटबर कौ किये उलहनों दइये।*

इस पद में गोपियाँ कहती हैं कि अपना किया हुआ काम किससे कहें और किसको क्या समझाएँ ? हे उद्धव! हम अपने मन की व्यथा की कहानी किसको सुनाएँ ? अर्थात् जो सुनने वाला था वही यहाँ पर नहीं है, नंद के नंदन् अर्थात् श्री कृष्ण के जाने के बाद इस ब्रज में हमारा और कोई नहीं रह गया है। कवि कहते हैं वंशीध ार नटनागर कृष्ण का उलाहना अब किसे दें?

*अबना पिता के पेट समानें, देश पिया के जानें।*
*जन्मी पलीं गोद में जीसें कछु ना मतलब रानें।*
*हिलमिल लेव सहेली जानें को काँ लगत ठिकानें।*
*जी भर भेंट 'प्रमोद' लेव री मिलबी कबै कुजानें।*

नायिका अपनी सहेलियों से बिछुड़ने से पहले अच्छी तरह



मिल लेना चाहती है और कहती है कि अब बाबुल के घर में रहने को नहीं मिलना है क्योंकि अब पति के घर जाना पड़ेगा। जिसके यहाँ जन्म हुआ, पाल–पोसकर बड़ा किया उन्हीं से अब कोई मतलब नहीं रह जाना है। आखिरी बार सभी आपस में मिल लें, पता नहीं किस जगह जाना पड़ जाये? आगे कवि प्रमोद कहते हैं कि दिल खोलकर भेंट करलें भविष्य में कौन जानें मिलना हो कि ना हो ?

# पं. मोतीलाल पाण्डे 'दिनेश'

कवि पं. मोतीलाल पाण्डे 'दिनेश' का जन्म जिला छतरपुर की बड़ामलहरा तहसील के सेंधपा ग्राम में सन् 1920 में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री कुन्टाई पाण्डे था, ये गाँधीवाद से प्रभावित थे। इनके पूर्वजों ने 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय हिस्सा लिया था। ये मूलतः झाँसी जिले के ग्राम बार के निवासी थे। बाद में सेंधपा में आकर बस गए थे। उन्होंने हिन्दी व उर्दू की मिडिल परीक्षा पास की तथा बाद में मैट्रिक पास किया। इन्होनें बिजावर स्टेट में मुसद्दी, पेशकार, कैशियर, कस्टम आफीसर तथा अध्यापक के पदों पर काम किया। पेशकार के रूप में पन्ना जिले की करैया तहसील में भी पदस्थ रहे। प्रारंभ से ही कवितायें लिखने में रुचि रही। दीवान से अनबन होने पर उन्होंने तत्कालीन बिजावर स्टेट की नौकरी छोड़कर आजादी की लड़ाई में सक्रिय भागीदारी की। इन्होंने प्रजा मण्डल तथा कांग्रेस को स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई में माध्यम बनाया। देश के आजाद होने के बाद बिजावर में हरिजन आश्रम की स्थापना की तथा वहीं पर शिक्षक के रूप में काम करते हुए आश्रम अधीक्षक से सेवा निवृत्त हुए। इनकी एक प्रबंध काव्य कृति 'सुदामा चरित' अप्रकाशित है। इसके अतिरिक्त फुटकर छन्द भी लिखे हैं।



इनके पुत्र पं. देवकीनन्दन पाण्डेय अप्रकाशित साहित्य को प्रकाशित कराने का प्रयत्न कर रहे हैं। इनका देहावसान धनतेरस के दिन अक्टूबर माह में सन् 1992 को हुआ।

### भारती वन्दना

*शुभ्र नवनीत सौ पुनीत पंख वाला हंस,*
*तापै मृदु मूर्ति मैया शारदा बिराजी हैं।*
*एक कर कंज में सरस स्वर पुंज वीणा,*
*दूजै कर कंज मंजु मुक्ता माल राजी है।*
*तृतीय चतुर्थ कर मध्य पुष्प पुस्तक है,*
*ज्ञानि की है खानि अति सुषमा सुसाजी है।*
*श्वेत वरवस्त्र दिव्य अंगन 'दिनेश' सजैं,*
*लखकैं उदोत कोट चन्द्र ज्योति लाजी है।।*

(सौजन्य : श्री देवकीनन्दन पाण्डेय)

शुभ्र नवनीत के पावन पंखों वाले हंस पर सौम्यता की साक्षात् मूर्ति माँ सरस्वती विराजमान हैं। वे एक हाथ में मधुर स्वर निनादित करने वाली वीणा को तथा दूसरे हाथ में मोतियों की माल लिए हैं। तीसरे व चौथे हाथ में क्रमशः फूल व किताब लिए हैं। आप ज्ञान की भण्डार, सौन्दर्य की देवी है। श्वेत वस्त्रों में माँ के अंग प्रकाशमान हो रहे हैं। कवि दिनेश कहते हैं कि सरस्वती के दिव्य आलोक के समक्ष हजारों चन्द्रमाओं की ज्योत्सना लज्जित हो जाएगी।

### कालिका वन्दना

*कंपत है भूमि, भानु कंपत गराज सुन*
*देख वक्र चक्र शक्र हू की शान टूटती।*

*भीषण विशाल विकराल वेश कालका कौ*
*लख कै कराल काल हू की जान छूटती।।*
*प्रबल प्रचंड चंडिका कौ दण्ड छूटत ही*
*दण्डियों घमंडियों की यह मुंडी फूटती।*
*ऐसी बलखान अम्ब करत बिलंब कैसौ,*
*आज मोरे बैरी कौ करेजौ क्यों न कूटती।।*

(सौजन्य : श्री देवकीनन्दन पाण्डेय)

सूर्य व पृथ्वी आपको देखकर काँपते हैं। आपके तिरछे चक्र को देखकर देवराज इन्द्र की शान फीकी पड़ती है। कालिका देवी का भीषण और भयावह वेश है जिसे देखकर कठिन कष्टदायी काल की भी जान जाती है। बलशाली श्रेष्ठिका चंडिका देवी का दण्ड प्रहार होते ही दण्ड देने वाले अन्यायी शासकों व गर्वोन्मत्तों का सिर फूटता है। कवि विनय करता है कि हे माता! आप उपर्युक्त बलों की आगार हो फिर यह देरी क्यों? मेरे शत्रुओं का वध क्यों नहीं करती हो?

## सुदामा चरित के कुछ छंद

### कवित्त

*छोटी सी लंगोटी फटी कटि में लसी है एक,*
*जीर्ण शीर्ण वस्त्र देत तनु पै दिखाई है।*
*छीन हीन गात दीन दुखित मलीन मुख,*
*बिन पद त्राण फटी पायनु बिवाई है।।*
*द्वार पै खड़ियो है एक निबल दरिद्र द्विज,*
*भाखत हमारी द्वारिकेश सौ मिताई है।*
*दर्श हेतु आयौ है बतायौ है सुदामा नाम,*
*दीनानाथ मोरे हांथ खबर जनाई है।।*

(सौजन्य : श्री देवकीनन्दन पाण्डेय)



फटी हुई छोटी सी लंगोटी कमर में लगाये, फटे पुराने वस्त्र पहने, कृशकाय, दुखित व श्रीहीन मुखवाला जिसके पैरों में जूता व चप्पल नहीं है, द्वार पर एक गरीब ब्राह्मण खड़ा है। जो कह रहा है कि द्वारकाधीश से मेरी मित्रता है। वह अपना नाम सुदामा बताते हुए कहते हैं कि आपके दर्शनों हेतु वह आया है। हे दीनों के स्वामी! उसने मेरे द्वारा यह सन्देश भिजवाया है।

*सुनत सुदामा नाम जागी है पुनीत प्रीत,*
*लागी रचै सुरति अतीत के सुमित्र कौ।*
*पुलकि शरीर नैन नेह नीर छायौ मंजु,*
*दौर द्वार आयकैं विलोक्यो दीन मित्र कौ।।*
*धायकैं लिपट लागे रंग अंक जाय श्याम,*
*शशि निज नाय चूम्यो पायनु पवित्र कौ।*
*नाम लै सराहै लगे देव द्विज भूरि भाग्य,*
*सुमन प्रवाहै लगै निरखु चरित्र कौ।।*

सुदामा का नाम सुनते ही कृष्ण के मन में पवित्र प्रेम जाग गया तथा वे अतीत के उन क्षणों में खो गये जो सुदामा मित्र के साथ बीते थे। पुलकित हो नेत्रों में खुशी के आँसू आ गये ऐसी स्थिति में उन्होंने दौड़कर दरवाजे पर आकर अपने निर्धन मित्र को देखा और उसको छाती से लगाकर लिपट गए। उस ब्राह्मण के पवित्र पैरों को शीश झुकाकर चूम लिया। ऐसा दृश्य देखकर देवता सुदामा का नाम लेकर उसके भाग्य की सराहना करते हुए पुष्पवर्षा करने लगे।

*बसन बिहीन होत देखि छोटी पोटली को*
*काँख में रहे हैं दाब बिप्र सकुचाय कें।*
*लख घनश्याम तबै पूँछन लगे कै मित्र,*
*भाभी का पठायो आप राख्यौ का दुराय कें।*
*मौन दुखी दीन को संकोच सिन्धु डूबो जान,*

*आतुर गही सो गाँठ खोली है छुड़ाय कें।*
*तन्दुल निहार एक मुट्ठी में निकार हर्ष लीन्हें,*
*मुख डार औ सराहै लगे खायँ कें।।*

(सौजन्य : श्री देवकीनन्दन पाण्डेय)

सुदामा पोटली को वस्त्रहीन होने के भय से अपनी काँख में संकोच के साथ दबाये रहे। उस पोटली पर दृष्टि पड़ते ही कृष्ण ने पूछा कि मित्र मेरे लिए जो भाभी ने भेजा है उसे आप छिपा रहे हैं। इस पर सुदामा दुखी मन से मौन साध कर रह गए। ऐसी स्थिति में सुदामा को देखकर कृष्ण ने व्याकुल होकर वह पोटली छीन उसकी गांठ खोल ली। पोटली में चावलों को देखकर प्रसन्नतापूर्वक एक मुट्ठी चावल उसमें से हाथ में ले लिए एवं उसमें से कुछ चावल मुँह में डालकर खाते हुए उनकी सराहना करने लगे।

*सुन्दर असन निज मातु भौन पाए, खाए,*
*दध, नवनीत दूध मिश्री गोपि ग्रामा के।*
*रुक्मिणी हू ने बिबिध व्यंजन जिमाए और*
*पाए हैं सदा ही से बनाए सत्यभामा के।*
*भोजन सुमंजु में जहाँ और तहाँ कीन्हे किन्तु,*
*ऐसे न सुहाए हैं रचाये काऊ बामा के।*
*जैसे स्वादु पुंज आज भाभी के पठाए पाए*
*खाँयें मोहि भाए ल्याए तंदुल सुदामा के।*

(सौजन्य : श्री देवकीनन्दन पाण्डेय)

अभी तक मैंने यशोदा माता के घर सुन्दर आसनों पर विराजकर सुस्वादु भोजन किए, ब्रज की ग्वालिनों से दही, दूध व माखन खाया। रुक्मणी व सत्यभामा ने भी विविध स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर खिलाये हैं। यहाँ–वहाँ निमंत्रणों में विविध स्वाद के भोजन किए किन्तु किसी



भी स्त्री ने इतना सुस्वादु भोजन पकाकर नहीं कराया जितने स्वादिष्ट ये भाभी (सुदामा पत्नी) के भेजे चावल हैं। मुझे सुदामा द्वारा लाये गए ये चावल बहुत स्वादिष्ट लगे हैं।

## विनय के कवित्त

*औगुन भरोहौं पुंज पातकी खरो हौं महां,*
*माया में परो हौ सो कहानी क्या सुनाऊँ मैं।*
*अधम गवाँर हूँ न एक हू अधार स्वामी,*
*कैसे कें अपार भव सिंधुपार जाऊँ मैं।*
*जो पै नाथ आप ही घृणात मों अनाथ से तों,*
*कौन द्वार दीनानाथ दीनता दिखाऊँ मैं।*
*आप ही बताएँ और कौन ठौर जाऊँ देखें,*
*आप सो दयालु दीन बन्धु कहाँ पाऊँ मैं।*

(सौजन्य : श्री देवकीनन्दन पाण्डेय)

मैं अवगुणों से भरा, पापों का समूह और माया से ग्रस्त हूँ। मैं अपनी क्या कहानी सुनाऊँ? मैं गाँव का रहने वाला अधम हूँ, मेरे जीवन में हे स्वामी! आप ही हैं। इस कठिन भवसागर रूपी जीवन से मैं कैसे बिना आपके पार हो सकता हूँ ? यदि हे स्वामी! आप ही हमसे घृणा करते हो तो मैं अनाथ किसके दरवाजे पर जाकर अपनी दीनता की विनती सुनाऊँ? अब आप ही बताइये कि मैं किसके यहाँ जाकर अपनी प्रार्थना सुनायूँ। मैं आप जैसा दया का भण्डार और गरीबों का हितकारी कहाँ पाऊँ?

*चन्द्र बिना जैसे न चकोर को सुहावै भोर,*
*जैसे मोर बूंदन की मेह नेह खासा है।*
*जल के अधीन जैसे मीन हैं बिचारी दीन,*
*जैसे सदा चातिक को स्वाति भी पिपासा है।*

*दीप शिखा पै ज्यों आन बारते पतंगे प्रान,*
*जैसे अन्ध को हमेश चक्षु अभिलाषा है।*
*तैसे ही दिनेश कों बृजेश प्रभु प्यारे आप,*
*दीन की दया के धाम आप ही लौ आशा है।*

(सौजन्य : श्री देवकीनन्दन पाण्डेय)

जिस प्रकार चकोर को चन्द्रमा बिना सुबह अच्छी नहीं लगती है। मयूरों के समूह को बादलों से स्नेह है। मछली अपना जीवन सदा पानी में ही पाती है तथा चातक स्वाति नक्षत्र की बूँद हेतु प्यासा रहता है। दीपक की लौ पर पतंगा अपना जीवन समर्पित कर देता है। अन्धे को सदा नेत्रों की चाह रहती है वैसे ही मुझ कवि दिनेश को ब्रजराज कृष्ण आप से ही आशा है। आप दीनों पर दया करने वाले हो, मुझ दीन पर भी दया कीजिए।

*दीन प्रतिपालक दयालु नाम जैसो तैसो,*
*दीन पक्ष रक्ष देव दास को उबारिए।*
*माँगूँ दीन व्हैं कें दान कीजिए दया प्रदान,*
*दास अनुमान प्रभो, भव दुख टारिए।*
*देखिए न मेरी ओर मैं हूँ चाकरी कौ चोर,*
*वृत की निहोर स्वामी नाम अनुसारिए।*
*राखिए बृजेश मों 'दिनेश', दुखिया की लाज,*
*जीवन जहाज कौ सुमार्ग निर्धारिए।।*

(सौजन्य : श्री देवकीनन्दन पाण्डेय)

आप दीनों के पालक, दयालुता के भण्डार हो इसलिए इस दीन दास को भी कष्टों से उबारिये। मैं दीन होकर आपसे दया की भिक्षा माँगता हूँ, हे! प्रभो, मेरे कष्टों को समाप्त कीजिए। मेरी ओर देखते मत रहिए, मैं तो दास हूँ। मेरे कष्टों के समूह को देख उनका



परिहार कर अपने नाम को सार्थक कीजिए। जिस प्रकार ब्रजराज कृष्ण आपने दुखियों की लाज रखी उसी प्रकार मुझ दिनेश के जीवन रूपी जहाज को सही मार्ग पर चलने हेतु प्रेरित कीजिए।

## सवैया

*तारत आए अनेकन पातकी जाति की ओरन ध्यान धरो हैं*
*व्याध अजामिल गौतम गेहनी कौ, अघमार अपार हरौ है।*
*दिन, दिनेश, परो प्रभु पायन, पाप भरो त्रै ताप जरों है।*
*तारिए या दुतकारिए स्वामिन, पास में आस कै आन डरो है।*

(सौजन्य : श्री देवकीनन्दन पाण्डेय)

आप जिस प्रकार विभिन्न पापियों का उद्धार करते आए हैं, उसी प्रकार मुझे भी सद्गति प्रदान करें। आपने व्याध, अजामिल, गौतम पत्नी अहिल्या आदि के कष्टों को दूर किया उसी प्रकार इस दिनेश कवि जो पापी हो आपके पैरों में पड़ा है, का तारण करिये। हे स्वामी! आप शीघ्रता कर मुझे मुक्ति दीजिए, मैं इसी आशा में पड़ा हूँ।

# महाराजा भवानी सिंह 'प्रेमी'

महाराजा भवानी सिंह जू देव का जन्म छतरपुर रियासत में 17 अगस्त सन् 1921 को हुआ। आपके पितामह राजर्षि महाराजा विश्वनाथ सिंह जू देव बड़े प्रकाण्ड विद्वान थे। आपके पुस्तकालय में बड़ी दुर्लभ साहित्यिक पुस्तकों का संग्रह रहा है। बाबू गुलाब राय उनके निजी सचिव थे। मिश्र बंधु श्री श्याम बिहारी तथा सुखदेव बिहारी ने मिश्रबंधु विनोद यहीं लिखा। इस तरह के वातावरण में बड़े हुए महाराजा भवानी सिंह जू देव पर प्रभाव पड़ा और वे भी रचनायें लिखने लगे। आपने विभिन्न राग–रागनियों पर आधारित 'प्रेमी' के नाम से कवितायें रचीं है। जिनका एक संकलन 'वैतरणी' के नाम से प्रकाशित है। आपकी शिक्षा डेली कॉलेज, इन्दौर में हुई। आपका जीवन बहुत कठिनाइयों भरा रहा है। आपके पितामह राजर्षि महाराजा विश्वनाथ सिंह जू देव सन् 1932 में स्वर्गवासी हुए। जब महाराजा भवानी सिंह जू देव की आयु 24 वर्ष थी तभी परम प्रिय पत्नी महारानी लक्ष्मण कुँवरि स्वर्गवासी हो गईं। सन् 1963 में आपकी माता आदरणीया राजामाता नारायण कुँवरि का स्वर्गवास हो गया। इतना ही नहीं इनके पुत्र युवराज बलवंत सिंह का स्वर्गवास 1990 में



हो गया। इन तमाम घटनाओं से महाराजा भवानीसिंह जू देव का जीवन योगी की भाँति हो गया है। वर्तमान में पुत्रवधू व नाती–नातिन के साथ साधुतुल्य जीवन जी रहे हैं।

## कवित्त

*मिथला के दर्शन करत हों श्रीराम जी के,*
*गोपी हों बृज की कोउ धोखो मत खाइयौ।*
*प्रियतम से मोरी जा विनती रहत 'प्रेमी'*
*भूल मत जैयो मेरे नेह को निबाहियौ।।*
*पार्वती–शंकर सम इष्ट नाहिं दूजो कोउ,*
*माता साकी में भैद कोउ जनि बताइयौ।*
*बिनती है मोरी एक सुनियो गणेश मात,*
*वारुणी व भंग दोउ प्रेम से पिवाइयौ।।*

मैं सीता और राम के दर्शन नित्य करता हूँ। मैं ब्रज की गोपिका हूँ, कोई धोखे में मत पड़ना। प्रियतम कृष्ण से यह मेरी प्रार्थना है कि मेरे प्रेम का निर्वाह करना, मुझे भूल मत जाना। पार्वती और शंकर जी जैसा अन्य कोई इष्ट देव नहीं होता है। कोई यदि जानता हो कि माता और साथी में भेद होता है तो मुझे बताये। हे गणेशमाता पार्वती जी! मेरी प्रार्थना है कि मुझे सुरा व भंग दोनों का सेवन कराना।

## दादरा

*आज सुने मृदु बैन, अंखियन सैन में। आज.....*
*जब से सुने इन कानन बैना,*
*जब से देखे नैनन नैना,*

*भूल गए दिन रैन, अँखियन सैन में। आज.....*
*बंधी प्रेम की डोर पीत है,*
*प्रेम लगन की एक रीत है,*
*बस गई सूरत ऐन, अँखियन सैन में। आज.....*
*प्रेम छिपाना ही होता है,*
*प्रेम दिखाने से सोता है,*
*प्रेमी को सुख चैन, अँखियन सैन में। आज.....*
*प्रेमी की है जीत निराली,*
*प्रेम बाग का प्रेमी माली,*
*साकी की है दैन, अँखियन सैन मैं।*
*आज सुने मृदु बैन, अँखियन सैन में।।*

आँखों के संकेतों में आज कोमल वचनों को सुना। जब से इन कानों ने वचनों को सुना और आँखों ने आँखों को देखा तभी से रात–दिन भूल गये। प्रेम की लगन लग गई इस लगन का एक ही नियम है कि चेहरे की सुन्दरता ह्रदय में समा गई है। प्रेम गुप्त रखना पड़ता है क्योंकि प्रेम के प्रदर्शन से उसमें सुप्तावस्था आ जाती है। प्रेम करने वाले को ही सुख–शांति मिलती है। प्रेमी की जीत में एक अनोखापन होता है, प्रेम रूपी बगीचे की सुरक्षा और सिंचन भी माली के रूप में प्रेमी ही करता है। प्रेम का यह आनंद साकी का दिया हुआ है। आँखों के संकेतों में आज कोमल वचनों को सुनने पर ही प्रेम की यह आनंदित प्रक्रिया हुई।

## कवित्त

*जैसे हम सुने ऐसे देखे रघुराज आज,*
*ऐसी ही कृपा सदा हम पर बनी रहै।*
*धनुष–बाण हाथ लिये, माथे मोर मुकुट,*
*शत्रु संघारने को तेज तीर अनी रहै।।*



*झूँटी अब साँची करौ नैक तो दिखाय परौ,*
*प्रीति पुरानी तामें नितनइ घनी रहै।*
*ऐ हो रघुराज तोसों माँगवो हमारो एक,*
*प्रेमी जा रसना तव प्रेम में सनी रहै।।*

जिस प्रकार हमने सुना था वैसे ही रूप में आज हमें दर्शन हुए अब आगे भी इसी प्रकार की कृपा बनाये रहें। हाथ में धनुष–बाण ध ाारण किये हुए और माथे पर मोर पंख का मुकुट सुशोभित है। शत्रुओं का संहार करने के लिये आपके बाण की नोंक सदैव तेज बनी रहे। कृपया झूठ को सत्य में बदल दो, एक झलक दर्शन दे दो। प्रारब्ध के स्नेह में अब प्रतिदिन नवीनता और प्रगाढ़ता आ जाए। हे रघुनाथ! आपसे केवल एक ही बात माँगता हूँ, यह मेरी जिह्वा (जीभ) आपके प्रेम–रस में ही सराबोर रहे।

*रसिक जवान छैल झोरन गुलाल लिये*
*रँगे अंग रंगन सों प्रेमी मगवारौ है।*
*सावन सलोने संग जैसे कजलिया तैसें,*
*प्रेम रंग प्रेमी पै चढ़यौ अति न्यारौ है।।*
*खोरन बिच ठाढ़ीं अलबेली अबीर लेंय,*
*एकें एक सैन करैं आयौ मतवारो है।*
*आयौ शुभ फागुन संग लायो है फाग प्रिया,*
*कीन्हौं है सराबोर फागुन फगवारौ है।।*

नेहासिक्त सुन्दर नायक अपनी थैलियों गुलाल लिये रंग से सराबोर प्रेम की चाह लिये आ रहा है। जिस प्रकार सुहावने सावन के साथ रस भरी कजलियां होती है वैसे ही नेह का रंग प्रेमी पर प्रभावी है। गली के बीच में अनुपम गुणवाली सखियां खड़ी हैं और संकेतों से एक दूसरे को बताती है कि मदमस्त नायक आ रहा है। कल्याणकारी फागुन अपनी प्रियतमा फाग के साथ आया है और

उसने चारों दिशाओं में वासंती छटा बिखेर कर सबको आनंद से भरपूर कर दिया है।

## दादरा

*कासें कहूँ मोरी गुइयाँ, निहारत नैना लगेरी।*
*जमना के नीर तीर बंशी बजावै, बैठ कदमवां की छैयाँ–निहारत.*
*प्रेमी बछवा जहाँ–तहाँ बैठे, रांभत श्यामा गैयाँ–निहारत...*
*जात रही जल जमुना भरन को, आ पकरी मोरी बैयाँ–निहारत.*
*दूध दही को दान मगावें, लै लैं नाम कन्हैया–निहारत...*
*ऐसो हठीलो छैल न देखो, मो मन लेत बलैयाँ–निहारत नैना लगेरी,*
*कासें कहूँ मोरी गुइयाँ, निहारत नैना लगेरी।*

हे सखी! उन्हें देखते ही मेरे मन में उनके लिये प्रेम हो गया और मैं प्रेम में बंध गई। यमुना के किनारे कदंब के पेड़ की छाया में बैठकर श्रीकृष्ण बाँसुरी बजा रहे थे। प्रेम में आसक्त बछड़े बैठे आनंदित थे और श्यामा गायें अपनी बोली में प्रसन्नता दिखा रही हैं। मैं यमुना से जल भरने जा रही थी तभी श्रीकृष्ण ने मेरा हाथ पकड़ लिया। श्रीकृष्ण नाम से पुकार कर दूध–दही का दान माँगते हैं। इतना दुराग्रह करने वाला मैंने अन्य कोई छैला नहीं देखा, मेरा मन उनके लिये मंगल कामनायें करता है। मैं किसे बताऊँ कि उन्हें देखते ही मुझे प्रेम हो गया था।

## रसिया

*इतनी देर लगाई हो कान्हा प्यारे, – इतनी.....*
*जबकी मैं ठाढ़ी घाट यमुना पै हेरों बाट,*
*अबलों न आए कन्हाई*
*प्यारे–इतनी देर लगाई हो कान्ह प्यारे, – इतनी.....*
*गौएँ बच्छा ग्वाल–बाल, निकसे हैं भोर भए,*



*गोरी लिएँ घट हाथ, घाट घाट को चलीं,*
*प्रेमी झुँड मोरन के ठुमक नाचत आवें,*
*कैसी प्रेम सगाई प्यारे – इतनी.....*
*सखीं मिल एकें एक सैन करे मोकों देख,*
*लटक मटक घट भर इठला चलीं,*
*यमुना लहर पल पल में किलोल करें,*
*मानो हँसे हँसाई प्यारे– इतनी.....*
*मंद मंद पवन झकोरे अंग चूम चले,*
*भौंरा देख कमल कली हू मुस्का चली,*
*उए भान किरण कदम्ब बीच शोभा प्यारी,*
*बंशी मधुर सुनाई प्यारे–इतनी....*
*जब से सुनी है बंशी चैन न परत जिय,*
*हेरी बार बार झाँकी मोहनी पे ना मिली,*
*करो न निराश मोकुं दरस दिखाव देव,*
*कैसी करी रसाई प्यारे –*
*इतनी देर लगाई हो कान्हा प्यारे – इतनी.....*

हे कृष्ण! मैं यमुना के किनारे कितनी देर से खड़ी प्रतीक्षा कर रही हूँ तुम अब यहाँ नहीं आये, इतना अधिक विलंब कर दिया है।

प्रातः होने पर गाय और उनके बछड़ों को साथ लेकर ग्वाल बाल वन की ओर निकले। रूपवती स्त्रियाँ हाथ में घड़ा लेकर पानी लेने घाटों की ओर चल पड़ीं। मोरों की प्रेम में आनंदित जोड़ियाँ ठसक भरी चाल में चलती है और नाचती आ रही हैं। यह प्रेम का कैसा आनंद है ?

सखियाँ मिलकर संकेत में अपनी बात कहती हैं और कलश भरकर झुकती, लचकतीं और इठलातीं हुई चल देती हैं। यमुना की लहरों में प्रति क्षण तरंगें उठ रही हैं मानों वह भी इनके हँसने में

सम्मिलित हो रही है।

मंद मंद गति से चलती पवन के झोंके लगता है जैसे नायिका के अंगों का चुम्बन करती जाती हो। भ्रमर को देखकर कली ने भी मुस्कान भर ली। उगते हुए सूर्य की किरणें कदंब की डालियों के बीच से निकलते हुए मनोरम शोभा बिखेर रही है। इसी समय श्रीकृष्ण ने बंसी की मधुर ध्वनि सुना दी अर्थात् श्रीकृष्ण की बांसुरी बजने लगी।

जब से बंशी की ध्वनि सुनी तब से मेरे मन को शान्ति नहीं है। मैंने बार–बार देखा किन्तु उस मोहनी रूप के दर्शन नहीं हुए। हे स्वामी! आपने यह क्या किया? इतनी देर लगा दी, मेरी आशा न तोड़िये मुझे दर्शन अवश्य दीजिये।



## पं. रामकृपालु मिश्र

पं. रामकृपालु मिश्र का जन्म मार्गशीष कृष्ण प्रतिपदा संवत् 1982 (तदानुसार सन् 1925) को प्रातः ग्यारह बजे छतरपुर (म.प्र.) के एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ था। आपके पिता पं. हरिश्चन्द्र मिश्र कर्मकाण्ड विशेषज्ञ के रूप जाने जाते थे। पांडित्य वृत्ति ही उनके जीवन यापन का साधन था। आपकी माता जी श्रीमती बेटी बाई कुशल गृहिणी और धार्मिक आचार–विचार की थी।

मिश्र जी की प्रारंभिक शिक्षा–दीक्षा छतरपुर में ही हुई। प्रथमा की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद आपने जयपुर से ज्योतिष में उपाध्याय की उपाधि प्राप्त की थी। साहित्य में आपकी रुचि प्रारंभ से रही। विद्यार्थी जीवन में ही काव्य रचनायें करने लगे थे। हिन्दी के साथ–साथ आप संस्कृत में भी सफलतापूर्वक काव्य रचना करते हैं।

मिश्र जी स्वभाव से सहज, सरल हैं। आपको प्रारंभ से ही धोती–कुर्ता और जाकिट पहिनावा प्रिय लगता है।

रचनायें –

1. शक्ति स्त्रोत एवं जानकी अष्टक (श्री सीताष्टकम् सहित)

(टीका – शास्त्री पं. बंशीधर व्यास, छतरपुर) प्रकाशन 1993

2. श्री रामगीता (पद्य भावानुवाद) अप्रकाशित
3. देव्यपराध क्षमापन स्रोत (सरल हिन्दी पद्य भावानुवाद) अप्रकाशित
4. श्री नैमिषारण्य षोडशी स्तुतिः (1989 में प्रकाशित)
5. माँ तुम क्या नहीं हो (सवैया किरीटी 1998 में प्रकाशित)
6. स्फुट–कवित्त, सवैया, सैर, ख्याल, पद, फागें, गजलें आदि

आपने नगर पालिका छतरपुर एवं में 28 फरवरी 1958 से 30 अक्टूबर 1983 तक लेखापाल के पद पर कार्य किया। आपका अभिनन्दन, अन्नपूर्णा रामलीला समिति, नगर पालिका छतरपुर, डी.ए. बी. इन्टर कालेज बांदा की साहित्य परिषद द्वारा किया गया। आपको विश्व धरोहर सप्ताह में कालिंजर महोत्सव, बांदा में भी 1991 को सम्मानित किया गया।

## सैर (कीर दूत – नायिका विरहनी)

दोहा – *कील खोलकर कीर को, बाहर लिया निकार।*
*केवल आशा तव मुझे, कहूँ आत्म उद्‌गार।।*

सोरठा – *कहूँ आत्म उदगार, मम इच्छा पूरी करो।*
*पड़ी नाव मझदार, प्रिय नाविक साहिव बिना।।*

सैर – *कर पैज यही सांची साजन कौ पठैहौं।*
*कल लहौं नहीं पल भर ना विलम लगैहों।*
*स्वीकार पत्र बिन ना आ आस्य दिखैहों।*
*उड़ जाओ कीर हरो पीर खीर खवैहों।।टेक।।*

सैर – *कर परस वदन मलमल कर तोय अन्हैहों।*
*तव सुभग गात चन्दन चर्चित हू करैहों।*



*आभरण वस्त्र मँगा मँगा तोय सजैहौं।।*
*उड़ जाओ कीर ..... ।।*

सैर – *बुलवा सुनार चंचू सुठि स्वर्ण मढ़ैहों।*
*रुच रजत पात्र पिंजरा तामें सौं रचैहों।*
*मखमल के बिछा बिस्तर मशनंद डरैहों।।*
*उड़ जाओ कीर ..... ।।*
*मन भाय जोई तोकूं मैं सोई चुगैहो।।*
*पाती के सहित लैकैं छाती से लगै हों।।*
*विरहाग्नि व्यथित हृदय मिश्र धीर धरैहों।*
*उड़ जाओ कीर..... ।।*

(लेखक की पाण्डुलिपि से)

नायिका ने पिंजड़े की कील खोली और तोते को बाहर निकाल लिया, फिर बोली – मैं अपने हृदय का भाव व्यक्त कर रही हूँ कि मुझे अब केवल तुम्हारी आशा है।

मैं अपने हृदय की बात कहती हूँ, तुम मेरी इच्छा पूरी करो। बिना पिया रूपी खिवैया (नाव चलाने वाले के) के मेरी नाव बीच धारा में पड़ी है। आज यही सत्य प्रण करके मैं आपके प्रियतम को संदेश भेजूँगा, मुझे क्षणभर भी चैन नहीं है। मैं तनिक भी देर नहीं लगाऊँगा। पत्र स्वीकार कराये बिना मैं लौट कर मुँह नहीं दिखाऊँगा। (यह सुनकर नायिका कहती है) हे कीर! तुम उड़कर जाओ, मेरी पीड़ा का शमन करो, मैं तुम्हें खीर खिलाउँगी।

(जब तुम संदेश लेकर लौटोगे) मैं अपने हाथों से मलकर स्नान कराउँगी। तुम्हारी सुन्दर देह पर चंदन का लेपन करूँगी। आभूषण और वस्त्र मँगाकर मैं तुम्हें सजाउँगी।

स्वर्णकार को बुलवाकर तुम्हारी सुन्दर चोंच को सोने से मंडित कराउंगी। चांदी के पिंजरे में चांदी पात्रों को सुन्दर ढंग से रखूँगी। मखमल बिछौना डालकर सुन्दर तकिया रखूँगी।

तुम्हें जो कुछ अच्छा लगेगा मैं वही तुझे चुनने (भोजन) के लिये दूँगी। वापिसी पर, पत्र सहित तुझे अपनी छाती (हृदय) से लगाउँगी। मिश्र जी कहते हैं कि विरह की अग्नि से पीड़ित हृदय को कुछ धैर्य रखा पाउँगी।

**सैर (कीरदूत – कीर का उत्तर)**

*दोहा –* *पीर भरी जब ही सुनी राधा गिरा गंभीर।*
*सोवत जागा वीर रस मानो कीर शरीर।।*

*सोरठा –* *मानो कीर शरीर फरफराय पंखा तुरत।*
*होकर निपट अधीर जाने की जल्दी करत।।*

*सैर –* *गणपति गिरीश गिरजा गुरु चरण मानाऊँ।*
*निर्विघ्न कार्य सिद्धि अर्थ सबको ध्याऊं।*
*आशीष उचार आज्ञा दे शीश नवाऊँ।*
*धर दूत वेश पिया देश जल्दी जाऊँ।।टेक।।*
*मैं जाऊँ वेग मग में न वेर लगाऊँ।*
*पायन पलोट विरह व्यथा कथा सुनाऊँ।*
*आहें जरूर आहें सुन तोय बताऊँ।।*
*घर दूत वेश पिया वेश.....।।*
*कर काज नोन पानी की आज भँजाऊँ।*
*सुक नाम नहीं सजनी सुख जो न दिवाऊँ।*
*मैं कीर नहीं जोपै ना पीर घटाऊं।।*
*धर दूत वेश पिया वेश.....।।*
*पत आये पत रैहै नहीं प्राण गमाऊँ।*
*तब काज सौंप जीवन जग सुयश कमाऊँ।*



*दोउ हाथ मिश्र मोदक मुद लेकर खाऊँ।।*
*धर दूत वेश पिया वेश.....।।*

(मूल पाण्डुलिपि से)

तोते ने जब राधिका जी की पीड़ा से भरी बात को सुना तो उसके शरीर में मानो सोया हुआ वीर रस जाग उठा अर्थात् वीरता का भाव जागृत हो गया।

तोते ने तुरंत अपने पंख फड़फड़ाये (मानो वीर रस जाग गया) और बिना धैर्य धारण किये तुरन्त जाने की जल्दी करने लगा।

तोता बोला– मैं गणेश जी शंकर जी और अपने गुरुजी के चरणों की वंदना करता हूँ और निर्विघ्न कार्य संपादन हेतु सबका स्मरण करता हूँ। मैं आपको भी सिर नवाता हूँ मुझे आशीर्वाद और जाने की आज्ञा दीजिये। ताकि संदेश वाहक का रूप रखकर आपके प्रियतम के देश को तुरन्त प्रस्थान करूँ।

मैं तीव्रता से जाउँगा और मार्ग में बिलकुल भी विलम्ब नहीं करूँगा। मैं वहाँ पहुँचकर उनके चरणों को पकड़कर आपकी विरह वेदना की गाथा उन्हें सुनाउँगा। मैं तुमसे निश्चित रूप से कहता हूँ कि वे तुम्हारी आहों की बात सुनकर अवश्य आयेंगे।

मैं आपका यह कार्य सम्पन्न करके आपके नमक से उऋण (ऋण मुक्त) हो जाउँगा। हे सजनी। मेरा नाम सुक नहीं यदि मैं तुम्हें मिलन का सुख न दिला सका। (पुनः कहता है) मेरा नाम कीर नहीं जो आपकी पीड़ा को कम न कर सकूँ।

पत्र आवेगा और प्रण पूरा होगा अन्यथा मैं अपने प्राण त्याग दूँगा। आपके काम के लिये जीवन अर्पित करके मैं यश प्राप्त करूँगा।

मेरे दोनों हाथों में लड्डू है, प्रसन्नता से इनका पान करूँगा। (अर्थात् कार्य कर दूँगा तो यश मिलेगा, नहीं पूरा कर सका तो प्राण देकर यश प्राप्त करूँगा–दोनों हाथों में लड्डू है।)

## सैर (प्रभाती नायिका)

*दोहा –* *गुरु गिरीश गिरिजा सुवन, पाद पदम् सिर नाय।*
*सुगम प्रभाती नायका, वर्णन करूं बनाय।।*

*सैर –* *हो रहा व्योम शुभ्र पईं पीरीं फारत।*
*लख प्रातकाल अरुण चूड़ शब्द पुकारत।*
*नायका और नायक दोउ फाटक टारत।*
*झारत दुवार मानों हँस जादू डारत।।टेक।।*
*डारत हू कड़ी घूँघट पट सुघर सुधारत।*
*धारत है हाथ कटि पै कटि–बसन समारत।*
*मारत है मंत्र गुन गुन ज्यों मस्ती झारत।।*
*झारत दुवार.....।।*
*दारत दरार चित्त चित्त होश विसारत।*
*सारत न कछू साफ और मन उलझारत।।*
*झारत दुवार.....।।*
*डारत उठाय भूमि पटक बारा मारत।*
*मारत है फेर खिड़की की ओर निहारत।*
*हारत न 'मिश्र' नायक कौ मन सुलझारत।*
*झारत दुवार मनों.....।।*

(मूल पाण्डुलिपि में)

गुरु भगवान शंकर और गिरिजा नंदन गणेश जी के चरण कमलों को सिर नवाकर प्रभाती नायिका का वर्णन कर रहा हूँ।



आकाश उजला–सा होने लगा, पूर्व दिशा में पौ फटने लगी। प्रातः होने पर मुर्गा की बांग सुनाई देने लगे, तभी नायक और नायिका अपने–अपने किवाड़ खोलते हैं। नायिका द्वार झारते हुए मुस्कराती हुई मानो जादू कर रही है। सुन्दरी अपना घूँघट–पट सम्हालते और घूँघट डालते हुए बाहर निकलती है। कमर पर हाथ रखकर अपनी कमर का वस्त्र सम्हालती है। वह कुछ गुनगुना रही है मानों नायक को मंत्र मारकर उसकी मस्ती को झार रही हो।

जब वह तिरछी नजर से देखती है तो नायक को बरछी सी लगती है। हाव–भाव में ही चित्त को ऐसा चीर देती है कि नायक का चित्त विचलित हो जाता है। वह मुँह से स्पष्ट कुछ नहीं बोलती बल्कि मन में उलझन पैदा कर देती है।

भूमि पर बारा (झाड़ू) गिरा कर उठाती है और उसे पुनः भूमि पर मारती है फिर खिड़की की ओर देखती है (संकेत है कि रात्रि के जब बारह बज जायं तभी आना मैं यह खिड़की खोल दूँगी)। इस तरह वह हारती नहीं बल्कि नायक के मन को सुलझा देती है।

## सैर

*दोहा –* *आतप भयो अवाई पै, भो बसंत कौ गौन।*
*विरह भवूकन सौं जरत, नई नार इक भौन।।*

*सोरठा –* *नई नार इक भोन, सांझ होत पति आपरे।*
*लगीं वतकहीं हौन, हियैं प्रीति मुख वैन कटु।।*

*सैर –* *भावरें पार ल्याये करे ऊसई साके।*
*होती के सुक्ख जाने ना चार दिना के।*
*परदेश कर कमाई काय धर दवो ल्याके।*
*विरथां बसंत कंत अंत दवो विताके।।टेक।।*
*इतके न रये उतके ना काऊ जंगाके।*

*मुकते कलेश सैं के रये गम्मैं खाकें।*
*पाखान हियो पाती ना दई पठाकें।।*
*विरथा बसंत..... ।।*
*बैरी बसंत बगरो बगमेल मचाके।*
*कोइलिया कान फोरे दै कूकू ठाके।*
*सर करो मार मार मार सरसौं आके।।*
*विरथा बसंत..... ।।*
*दिन दौरे द्वार रात रात झांके झांके।*
*दई नें हू दई विछुरन दई दवो मिलाके।*
*कर छमा 'मिश्र' रहो प्रेम प्यालौ प्याके।*
*विरथां बसंत कंत अंत दवो विताके।।*

(मूल पाण्डुलिपि से)

ग्रीष्म ऋतु आने को हुई और बसंत प्रस्थान हो गया, विरह की ज्वाला में एक युवती घर में जल रही है।

एक नव यौवना विरहावस्था में घर में है तभी सायंकाल होने पर प्रियतम आ गये। तब बातें होने लगीं, हृदय में प्रेम है किन्तु मुख से कटु वचन निकल रहे हैं।

तुम सात भांवरे पार के (विधिवत् विवाह करके) व्यर्थ में साके किये (साके का अर्थ बुन्देली में ऐसे काम से लेते हैं जहाँ कर्ता वह काम अपनी कीर्ति बढ़ाने के लिए करता है।) तुम्हारे साथ विवाह होने का सुख मुझे चार दिन भी (कुछ ही दिन) नहीं मिल सका। विदेश से धनार्जन करके लाने की क्या आवश्यकता थी (अर्थात् क्या उपयोगिता थी)? हे प्रियतम! आखिर तुमने व्यर्थ में बसंत वहीं व्यतीत कर दिया।

तुम्हारी प्रतीक्षा में न तो यहां सुख मिला न अन्य किसी जगह



रह सके। बहुत से कष्टों को सहकर धीरज रखे रहे। तुम्हारा हृदय पत्थर का है, तुमने एक पत्र भी नहीं भेजा।

बसंत शत्रुता के भाव से अपने साथियों सहित यहाँ आकर फैल गया। कोयल कू–कू की कठोर ध्वनि से कान फोड़े दे रही थी। कामदेव ने सरसों मार–मार कर विजय प्राप्त कर ली।

दिन में बार–बार द्वार पर जाकर और रात में झाँक–झाँक कर मैंने तुम्हारी प्रतीक्षा की। नायक कहता है कि विधाता ने ही हम दोनों को अलग कर दिया था आज उसी विधाता ने हम लोगों का मिलन करा दिया। इसलिये भूल को क्षमा करके प्रेम का प्याला पिलाओ।

## सैर

*दोहा –* *कहत कामिनी पथिक सौ कहौ जात केहि देश।*
*कई भांत कर कर विनय कहौ पियै संदेश।।*

*सैर –* *कई वरस दरश बिना गये कान्ह कुँवर की।*
*कीनी कुचाल लाल जाल फसे कुवर की।*
*कर मन्त्र–जाप उलटा कुलटा ने कुतर की।*
*कैसें कटै कुजात रात कुसुमाकर की।।टेक।।*
*कुंजन दुकूल कालीदह जमुन कगर की।*
*कर करकैं खवर कई बार रोक डगर की।*
*कर पकर करत रास हास काम विसर की।।*
*कैसें कटै..... ।।*
*कैयक सँदेश कहकैं कई हालत घर की।*
*कर लई कड़ी छाती ना तनक कसर की।*
*ना काम करैं कैसे हो गुजर वसर की।।*
*कैसें कटै..... ।।*
*कह चरन कमल पड़कैं विनय संपुट कर की।*

*कई भूल करौ माफ करो नेह नजर की।*
*काके चोअंग कहे 'मिश्र' कविता कर की।।*
*कैसें कटै..... ।।*

(मूल पाण्डुलिपि से)

एक सुन्दर युवती यात्री से कहती है कि तुम किस देश को जा रहे हो? फिर अनेक तरह से विनती करते हुए कहती है कि मेरे प्रियतम को यह संदेश दे देना।

कन्हैया के दर्शन बिना कई वर्ष बीत गये हैं। कुबरी ने कुत्सित आचरण करके श्रीकृष्ण को अपने जाल में फंसा लिया है। अब बसंत की यह अधम रात्रि कैसे बीतेगी ?

वह बार–बार स्मरण करती है कि कुंजन में फैली मखमली सुरम्य स्थान की, काली दह की लीला की, यमुना के किनारों की जहाँ हाथ पकड़ के कन्हैया रास रचाते थे और इस हास–विलास में कामुक–भावों के नष्ट होने की।

वह कहती है कि मैंने अनेक संदेश भेजकर इस घर के समाचार कहे हैं लेकिन उन्होंने हृदय कठोर कर लिया है, थोड़ी भी गुंजाइश नहीं छोड़ी। कुछ भी कार्य नहीं कर पा रहे कि भला कैसे दिन कटेंगे?

दोनों हाथ जोड़कर और चरन कमलों में माथा रख के कहते हैं कि उनसे कहना कि मेरी भूल को क्षमा करके मेरी ओर प्रेम की नजर करो। कवि मिश्र कहते हैं कि मैंने यह 'क' के चौअंग की यह कविता कही है।

## सैर

*दोहा –* *कर झारी कांधे वसन, कर नीवी उकसाय।*
*सपर सरोवर शशिमुखी सकुच निकस घर जाय।।*



*सैर :* *सुचि गौर अंग श्याम रंग सारी विकसी।*
*श्रीफल उरोज आभा आभा ते अधिक सी।*
*झूमत मलिंद वृंद देख जावै जक सी।*
*शशिमुखि सपर सकुच सरोवर सें निकसी।।टेक।।*
*अलकन पै बिन्दु झलकन बिन बुन्द दमक सी।*
*नीबी उठाय चलत चाल करि सावक सी।।*
*नैनन हंसाय कछु लजाय जाय उझक सी।*
*शशिमुखी सपर ..... ।।*
*मुसकाय नेक बाल बचन बोलै पिक सी।*
*मुख मोर जहाँ हेरत तहं होत चमक सी।।*
*देखत अनूप रूप नरन मनहिं कसक सी।*
*शशिमुखी सपर ..... ।।*
*झारी की लेन ऐन देन मार मसक सी।*
*घुंघरूँ पायजेबन की झनक भनक–सी।।*
*सुन ''मिश्र'' शब्द मेधा जनु जाय विलग सी।*
*शशिमुखी सपर ..... ।।*

(मूल पाण्डुलिपि से)

चन्द्रमा के समान सुन्दर मुखवाली नायिका सरोवर (जलाशय) में स्नान करके निकली और एक हाथ में लोटा लिये, कंधे पर वस्त्र रखे तथा एक हाथ से सारी की तिन्नी पकड़कर उठाये हुए संकोच में सिमटी–सी घर जा रही है।

वह सुन्दर पावन गोरे शरीर पर काले रंग की सारी पहने हुए है। श्रीफल के समान सुन्दर उभरे उरोजों का सौन्दर्य सुन्दरता से भी अधिक सुन्दर है। उसके बदन से निकलती सुगंध से आकर्षित हो भौरों के झुंड उसके चारों ओर चक्कर काटने लगते हैं जिससे वह डर सी जाती है। चन्द्रमुखी सरोवर से स्नान करके संकोच सहित बाहर

निकलती है।

बालों की लटों पर पानी की बूंदों की झिलमिलाहट है और बिना बूंदों वाली लटें अलग चमक रही हैं। धोती की तिन्नी हाथ से पकड़कर उठाये हुए हाथी के बच्चे के समान चल रही है। आँखों से कभी हँस लेती है, कभी उसे लज्जा आ जाती है, कभी चौंक जाती है।

वह बाला थोड़ा हँसकर कोयल से मीठे वचन बोलती है। मुँह घुमाकर जिस तरफ देखती है तो उधर एक प्रकाश सा फैल जाता है। उसका अनुपम सौंदर्य देखकर मनुष्यों के मन में एक चुभन सी होती है।

जलपात्र लेकर चलते समय के कलात्मक सौंदर्य को देखकर और पैरों के अलंकरण की घुँघरुओं की झनझनाती मधुर ध्वनि से लोगों के मन को बाहर व्यक्त न कर सकने वाली कामुक चोट लगती है। कवि मिश्र जी कहते हैं कि ऐसे में धैर्य व्यक्ति से दूर चला जाता है।



## रामनारायण श्रीवास्तव 'श्याम'

श्री रामनारायण श्रीवास्तव 'श्याम' का जन्म ललितपुर जिले की तहसील महरौनी के ग्राम बछरई में 1 जुलाई सन् 1925 को हुआ था। इनके पिता जी का नाम श्री भगवान दास श्रीवास्तव माता जी का नाम श्रीमती नन्नी दुलैया था। इन्होंने हिन्दी–उर्दू मिडिल पास करके बाद में हाई स्कूल उत्तीर्ण किया। इसके बाद साहित्य मार्तण्ड की उपाधि अर्जित की। इनकी रुचि बाल्यावस्था से ही साहित्य व ध र्म के प्रति रही। इन्होंने 'श्याम मुक्तावली', 'बुन्देली शब्द–संग्रह', 'गीता गायन', 'मानस मर्म टीका', 'गीता गरिमा', 'गुन्चये गजल' तथा 'श्याम सुधारस' ग्रंथों का प्रकाशन किया है। जिसमें अन्तिम दो प्रकाशित हैं। शेष अप्रकाशित हैं।

*बैठीं सुगर सिंगार सज रईं, बाँकी बनक बनै रईं।*
*सिरके बार समार सलौने, इतर फुलेल लगै रईं।*
*माथें बीज मांग में सेंदुर, टिकली डोर बँधै रईं।*
*दै आड़िया लाल बिन्दी सँग दोउ भोंह मिलै लईं।*
*नजर नें लगै लगायँ डठूला कौड़ीलै सरमैं रईं।*

सुघड़ नायिका श्रृँगार करके अपने आपको सजा रही है। सुगंधित तेल–लगाकर के सिर बालों की सज्जा कर रही है। माथे पर बिंदी तथा माँग (बालों के बीच) में सिन्दूर लगा लिया है। माथे पर बिंदी के नीचे एक आड़ी बिंदी लगा ली है जिससे दोनों भौंहें मिल गई है। कुदृष्टि से बचाने हेतु काजल का डिठूला (वक्राकार चिन्ह) लगाकर स्वयं अपना सौन्दर्य देखकर शरमा (लज्जित) गई है।

*सपरत सुरत होत पठला की, मंदिर सड़क सुहावै।*
*पले पुसे खेले जी घर में, कारे कोस लखाबै।*
*सुध आ जात हरे खेतन की, हिलकी भर रो आवै।*
*छूटे गांव ठाँव पुरवारे, कोउ नें आन बुलावै।*
*रै वै कितउँ 'श्याम' मन नित्तउँ जा जा मई मड़रावै।*

कवि को स्नान करते हुए अपने बाल्यावस्था की स्मृति हो आती है। वह कहता है कि बचपन में पठला (पत्थर पर प्रवाहित नीर का झरना) पर नहाते थे। वहाँ से जो सुंदर सड़क मंदिर जाती थी उसकी याद आती है। उस घर की याद आती है जहाँ हमारा पालन पोषण हुआ। घर से दूर तक की प्राकृतिक सुषमा हम देख सकते थे। हरे–भरे खेतों की याद आने पर रोना आ जाता है। वे ग्रामवासी छूट गए हैं। अब यहाँ कोई बुलाने वाला नहीं है। श्याम कहते हैं कि मैं कहीं भी रहूँ किन्तु मेरा मन बार–बार वहीं पहुँचता है।

*झूठे जग की झूठी बातें, इनमें ने भरमा तें।*
*जे सब सम्बन्धी स्वारथ के, नातौ अमर बनातें।*
*मनसा देई पाई जतनन सें, विरथां रऔ गमातें।*
*बिगरी 'श्याम' बनत है जिनसें, उनसें लगन लगातें।*

इस मिथ्या संसार की मिथ्या बातों में तू मत भ्रमित हो। ये सभी सगे सम्बन्धी स्वार्थ हेतु सम्बन्ध बनाते हैं। तूने मनुष्य का शरीर बड़े प्रयत्नों से प्राप्त किया है, इसे तू व्यर्थ में मत खो दे। कवि श्याम



कहते हैं कि जो बिगड़ी हुई बात को बनाते हैं, उनसे तू नेह जोड़।

*सबसें नै कें चलवौ नोनों, लख हौनों अन हौनों।*
*पर धन–हरत करत पर पीरा, कर रऔ ठगा ठगौनों।*
*लोक और परलोक बिगर जैय, फिर रै जानें रौनों।*
*भज हरि 'श्याम' काम कर जग में, सौ नौनें कौ नौनों।*

सबसे अच्छा झुककर चलना होता है अर्थात् लाभ–हानि को देखते हुए तू विनम्रता से जीवन जी। तू दूसरे के धन का अपहरण करके ठगी करता है जिससे लोगों को पीड़ा पहुँचती है। इससे लोक और परलोक दोनों में गति बिगड़ जाएगी और तू अलोना (स्वादहीन) रह जाएगा। कवि श्याम कहते हैं कि इस संसार में सर्वाधिक सुन्दर हरि का नाम है जिसे तू ले।

*काये ई जग में भरमानों, जानत बनों अजानों।*
*छीजत वैस सूख रऔ विरछा, बिन दिन सार सुकानों।*
*झोंका लगत गिरै धरनी पै, छूटै ठिया ठिकानों।*
*कोरऔ अमर आन धरती पै, बिरथाँ गरब गुमानों।*

तू क्यों इस संसार में जानते हुए अनजाना बनकर भ्रमित हो रहा है। उम्र के घटने से जीवन वृक्ष सूख रहा है जिसका सार निरन्तर शुष्क हो रहा है। जिससे काल रूपी हवा का झोंका लगते ही यह धरती पर गिरकर नष्ट हो जाएगा तथा उसका स्थल छूट जाएगा। इस धरा पर किसे अमरता मिली है? तू व्यर्थ में क्यों घमण्ड करता है?

*ई माटी कौ मोल नें जानें, माटी मोल बिकाने।*
*माटी करत ऊजरौ वासन, ऊ विन मैले रानें।*
*माटी सें माटी कड़ जैऐ, माटी डरी दिखानें।*
*जब जब होत व्याव हम देखे, पैलऊँ भए मटयानें।*

मिट्टी की उपयोगिता बताते हुए कवि कहता है कि यह मिट्टी अनमोल है, इसका मूल्य तू नहीं जानता है। मिट्टी ही बर्तनों को उज्जवलता प्रदान करती है उसके बिना गंदगी दूर नहीं हो सकती। यदि मिट्टी से मिट्टी निकल जाएगी तो इस शरीर को भी मिट्टी में पड़ा दिखना है। जब कभी भी विवाह जैसा शुभ संस्कार भी होता है तो उसमें भी पहले मटयाना (मिट्टी खोदकर लाना) का संस्कार सम्पन्न होता है।

*दिन बीत गऔ, रै गऔ थोरौ, नातौ प्रीतम सें जोरौ।*
*तीन प्रहर दिन बातन बीते, छरछरात चौथौ छोरौ।*
*साँझें आयें लिवउवा पिउके, करलै जैएँ बरजोरौ।*
*धर लौ ध्यान अमर चरनन कौ, ई घर की ममता टोरौ।*
*रँग लौ ''श्याम'' रामरँग चोखौ, जीरन बसन चलो कोरौ।*

दिवस व्यतीत हो चुका है थोड़ा सा शेष रह गया है। अब प्रीतम (ईश्वर) से तू रिश्ता जोड़ ले। दिन के तीन प्रहर (जीवन की तीन अवस्थायें – बालपन, जवानी तथा प्रौढ़) बीत गये हैं और चौथा क्रमशः जल्दी बीतने वाला है। संध्या होते ही प्रियतम के लिवाने वाले आ जाएंगे और तुझे जबरदस्ती ले भी जाएंगे। अतः इस गृह से ममत्व समाप्त करके अमर चरणों का ध्यान कर। कवि श्याम कहते हैं कि रामरंग ही खरा है उसमें ही अपना कोरा वस्त्र रंग ले।

## चेतावनी (गारी)

*अपनों अपनों तौलों जू, नई भऔ जौलों गौनों जू।*
*जौ दिन जौ पंछी उड़ जैयै, धरनी ढाँचौ डरौ दिखैयै।*
*बांस कांस पै सो उत जैये, छूट जैये जे अटा अटारी।*
*बीच मसानें सौनों जू नई भओ जौलों गौनों जू।।*
*नारी देरी लौ पौचै यै, बेटा अगिनि दानकर दैयै।*



*पुरजन पंचलकड़ी दै दैये, नोनें बुरये करम सब जानें।*
*लेखौ जोखौ होनौं जू, नई भओ जौलौ गौनों जू।।*
*पाप कपट कर माया जोरी, धन पराये से भरी तिजोरी।*
*दया धरम तज बनों करोरी, एक टका सिरहाने जानें।*
*छूटै चाँदी सोनों जू नई भओ जोलों गौनों जू।।*
*लख चौरा सी भरमत आऔ जौ नरतन जतनन सें पाऔ।*
*नौनौ औसर श्याम गमाऔ, तीन छोर बातन में बीते।*
*बीतत चौथौ कोनो जू नई भऔ जौलों गौनों जू।।*
*अबलों माया मोह ने टोरौ, झूठे जग सें नातौ जोरौ।*
*जान जान कें बनरऔ भोरौ, अजहू चेत बनालै।*
*बिगरी, सूकौ जात सुकौनों जू, नई भऔ जौलों गौनों जू।।*

(सौजन्य : डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी)

हमारा–तुम्हारा रिश्ता तभी तक है जब तक गौना (ससुराल गमन) नहीं हुआ है। जिस दिन भी यह जीव रूपी पंछी शरीर रूपी घर से उड़ जाएगा उसी दिन यह ढाँचा गिर जाएगा। इसको बाँस और काँस से निर्मित ठटरी (शव को ढोने हेतु बनाये जाने वाला ढाँचा) पर रख दिया जाएगा और ये अटा, अटारी छूट जाएंगे। इसके बाद श्मशान में जाकर ही शयन करना है।

पत्नी मात्र दरवाजे की देहरी तक जाकर विदा कर देगी तथा पुत्र अग्नि को दान कर देगा। नगरवासी पंच लकड़ियों के माध्यम से उसे जला देंगे। अच्छे और बुरे सभी कर्म चले जाएंगे। इनका लेखा–जोखा (हिसाब) भी वहीं होगा।

छल, प्रपंच तथा पाप से दूसरों के हिस्से का धन एकत्र कर उसे तिजोरी में भर लिया। दया तथा धर्म को त्यागकर तू करोड़पति बन गया किन्तु साथ में सिरहाने एक टका (मुद्रा की लघुत्तम इकाई) ही रखा जाएगा। सभी चाँदी व सोना यहीं छूट जाएगा।

चौरासी यौनियों में भ्रमण के उपरान्त तूने यह नर तन प्राप्त किया है। यह सुअवसर तूने गँवा दिया है और तीन अवस्थायें व्यर्थ की बातों में खो दी हैं। अब चौथी व अंतिम अवस्था भी बीती जा रही है।

तूने अभी तक माया से मोह नहीं तोड़ा है और इस मिथ्या जगत् से रिश्ता जोड़कर बैठा है। तू जानते हुए भी अनजान बन रहा है, अभी भी समय है तू चेत जा। बिगड़ी हुई बात बन जाएगी अन्यथा तेरे सुकर्मों सूखे जाते हैं।



# गोपाल दास रूसिया

श्री गोपालदास रूसिया का जन्म 22 नवम्बर 1927 ई. को हरपालपुर कस्बे के एक वैश्य परिवार में हुआ। इनके पिताजी का नाम श्री मथुरा प्रसाद रूसिया था। इनका रुझान साहित्य व संस्कृति के प्रति बाल्यावस्था से ही रहा। इनकी प्राथमिक शिक्षा हरपालपुर कस्बे में ही हुई। ये धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं। इन्होंने आजादी की लड़ाई में भी सक्रिय भागीदारी की है। इन्होंने अध्यक्ष, न्याय पंचायत, मंत्री जिला, सचिव जिला पंचायत परिषद आदि पदों पर सक्रियता से कार्य किया है। इन्होंने हरपालपुर में नारायण आश्रम से जुड़कर अनेक साहित्यिक व सांस्कृतिक कार्यक्रमों का संचालन किया। आपको लेखन की प्रेरणा श्री शिवरतन दिहुलिया से मिली। उनके मार्गदर्शन में ही आपने छन्द लिखे। 'नीचट बोल बुन्देली के' एक काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ है।

## चौकड़ियाँ

*चिठिया मिली बड़े भुनसारे, खोलत मोय किबारे।*
*पंखा होते उड़ भग जाती, जल्दी पास तुम्हारे।।*

*एक दिना की छुट्टी लेकर, तुम आ जाओ सकारे।*
*रोज 'गुपाल' काम है रानें, चैन न तुम बिन प्यारे।।*

अपने प्रिय की आस लगाए बैठी नायिका को जब प्रिय का पत्र मिलता है तो नायिका अपनी मनोदशा को व्यक्त करती है कि आज तड़के दरवाजे खोलते ही मुझे प्रियतम की चिट्ठी मिली है, अगर मेरे पास पक्षियों की भाँति पंख होते तो मैं उड़कर तुम्हारे पास आ जाती। अर्थात् मेरा तुम्हारे पास आ पाना बहुत ही मुश्किल है इसलिए तुम ही एक दिन की छुट्टी लेकर आओ, कल ही आ जाओ। आगे कवि गोपाल कहते हैं कि नायिका कहती है– हे प्यारे! काम–काज तो हरदिन बने रहते हैं और आगे भी बने रहेंगे लेकिन तुम्हारे बिना मेरी दशा क्या है ? शायद इसका आभास तुम्हें न हो। यहाँ एक पल के लिए भी चैन नहीं है।

*होरी कढ़ी जात है कोरी, नईं खबर लई मोरी।*
*घर होती तो नोनों लगतो, मिल लेते छुप चोरी।*
*आँख बचा सबकी आँखन सें, मुसका लेते थोरी।*
*कहत 'गुपाल' पढ़त ही चिठिया, चिठिया दइयो गोरी।।*

इस छंद में, जब नायक नायिका को चिट्ठी भेजता है तो उसमें अपनी विरह की दशा को बताता है इस बार की होली खाली जा रही है क्योंकि तुमने मेरी कोई खबर ही नहीं ली है, अर्थात् लगता है कि इस साल की होली में तुमने मुझे भुला दिया है इसीलिए यह होली बिना खेले हुए जा रही है। अगर तुम घर (मायके) में होती तो अच्छा लगता और चोरी–चोरी ही सही लेकिन दोनों मिलकर होली खेलते, सभी लोगों की आँखों से अपनी नजरों को बचाकर थोड़ा हँस लेते। आगे कवि गोपाल कहते हैं कि नायक कहता है कि हे गोरी! तुम मेरी चिट्ठी पढ़ते ही इसका जवाब लिखकर पाती अवश्य भेजना।



*दुर की लटकन लगे प्यारी, अंखियां है कजरारी।*
*झुमका झूम रहे गालन पे, धुतिया पैरें कारी।।*
*लाँगा नुगरो चोली कसकें, चाल चले लटकारी।*
*सुरत बिसार 'गुपाल' मोह बस, सुध बुध भूले सारी।।*

कवि गोपाल कहते हैं कि नायक अपनी नायिका की हर अदा पर आसक्त है और कहता है कि तुम्हारे द्वारा आभूषण की लटकन प्रिय लगती है और काजल युक्त तुम्हारी काली आँखें देखता हूँ तो अच्छी लगती है। तुमने जो झुमका पहन रखे हैं वे गालों पर आ करके झूले की भाँति हिल–डुल रहे हैं और तुम्हारे गोरे रंग में काली साड़ी का मेल तो अद्वितीय है। आगे कवि कहते हैं कि लँहगा को पहनकर चोली कस करके जब तुम हिरनी जैसी चाल चलती हो तो अपनी सुध–बुध तो भूलते ही हैं साथ ही साथ और सब कुछ भूलकर तुम्हारे मोहपाश में बँध जाते हैं।

*कंगना बंगलिया कर धारे, पटिया दोऊ सभारें।*
*बिंदिया ऊपर बेंदी सोहे, काजर कोर निकारे।।*
*नाक नथुनिया कानन झुमका, पहिन कछोटा मारें।*
*तिल देखत गुपाल गोरी को, सुध बुध सबई बिसारें।।*

इस छंद में नायक नायिका के श्रृँगार का वर्णन करता हूआ कहता है कि उसने अपने हाथों में बंगाली कँगन पहन रखे हैं और अच्छी तरह से दोनों चोटी (बालों की) बनाई है। बिंदिया के ऊपर जो एक छोटी सी बिंदी होती है और आँखों में लगा काजल उसके रूप–सौन्दर्य को बढ़ा रहा है। नाक में नथुनी और कानों में झुमका पहनकर कछौंटा मारकर धोती पहने है। आगे कवि गोपाल कहते हैं कि नायिका के गालों पर जो तिल है, उसे देखकर सभी लोग अपनी सुध–बुध खो बैठते हैं अर्थात् उन्हें यह होश तक नहीं रहा है कि वे कहाँ और किस दशा में हैं ?

*जा है गमई गांव की रानी, मोरी निछल स्यानी।*
*अपने राजा के बल निंधड़क, होके यह दीवानी।।*
*मार कछोटा फैंटा कस के, चले चाल मरदानी।*
*दई 'गुपाल' देश के हित में, अपनी हसत जबानी।।*

नायक अपनी नायिका से निष्कपट, निःस्वार्थ भाव को प्रकट करता है और कहता है कि यह जो मेरी निश्छल प्रेयसी है वह गाँव की रानी है, अपने पति के बल पर, बिना किसी भय के वह दीवानी घूमती है। वह कछौटा मारकर धोती पहनती है। वह मर्दों वाली चाल चलती है, कवि गोपाल कहते हैं कि उसने (नायिका ने) जो सबसे बड़ा पुण्य का कार्य है वह उसने सब माया मोह के बंधन को छोड़ते हुए, हँसते–हँसते अपनी जवानी को देशभक्ति में न्यौछावर कर दी है।

*बेंदा चन्दा जैसो चमकत, सूरज माफक दमकत।*
*कारे केश भाल के ऊपर उचक उचक कर बमकत।।*
*नथनी को नग जुगनू जैसो, हीरा माफिक दमकत।*
*कमर गुपाल लचीली ऐसी, बिन फरकाये फरकत।।*

इस छंद में नायिका जिन–जिन चीजों से अपना श्रृँगार करती है उसका नायक वर्णन करता हुआ कहता है कि उसकी बिंदिया चन्द्रमा के जैसी चमकती है और जो उसका दमकना है वह सूर्य की भाँति है। माथे के ऊपर काले–काले बाल इतने मुलायम हैं कि उछल–कूदकर बढ़ते जा रहे हैं, नाक में जो नथुनी है उसका नग आकार में तो जुगनू के बराबर है परन्तु उसका तेज हीरे की भाँति है। आगे वर्णन करते हुए कवि कहता है कि उसकी कमर तो ऐसी है कि बिना हिलाए ही वह फरकती है।

*चुटिया दोऊ कंदन पर डारे, नागिन सी फुफकारें।*
*भोंहें बनी नुकीली ऐसी, ज्यों होबे तरबारें।।*



*तीखे नयनन से सैनन में, लगा लगा फटकारें।*
*बिना अस्त्र घायल गुपाल कर, तड़पा तड़पा मारें।।*

प्रियतम अपनी प्रेयसी के बारे में बताता है कि वह जब अपने कंधों पर दोनों चोटियाँ डालकर चलती है तो वे ऐसी लगती है मानो नागिन फुँफकार रही हों क्योंकि चलने के कारण वे ऊपर नीचे होने लगती हैं। उसकी भौंहें तलवार की भाँति नुकीली (पैनी) है और अपनी तिरछी आँखों से सभी को घायल कर रही हैं। आगे वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि अन्य लोग तो शस्त्रों से घायल करते हैं लेकिन उसके घायल करने का अंदाज विचित्र है क्योंकि वह बिना किसी अस्त्र–शस्त्र के घायल करके तड़पा–तड़पा कर मारती है।

*नोनी लगे तुम्हारी मुइयां, हंसत परे गड़कुइयां।*
*बिंदिया लाल मसो गालन को, लगबे बेर मकुइयां।।*
*सदा बोलती टुइयां जैसी, मोरी चतुर मुनइयां।*
*कजरा देख गुपाल भूल गये, सुध बुध सारी गुइयां।।*

नायक–नायिका के रूप–सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहता है कि हे प्रेयसी! तुम्हारा मुख देखने में बहुत ही अच्छा लगता है और जब तुम हँसती हो तो हँसने के कारण तुम्हारे गालों पर छोटे से गड्ढे हो जाते हैं जो मुख शोभा को बढ़ा देते हैं। तुम्हारे गालों पर जो लाल रंग का मस्सा है वह बेर मकुइयाँ की भाँति है। मेरे मन को भाने वाली चतुर नायिका सदैव ही टुइंयाँ (तोते) जैसी बोलती है। आगे कवि कहता है कि उसके आँखों में लगे काजल को देखकर होश–हवाश खो बैठा हैं।

## किशोरी लाल जैन 'किशोर'

किशोरी लाल जैन 'किशोर' का जन्म 5 दिसम्बर सन् 1927 को छतरपुर जिले के दूरस्थ अँचल में स्थित बकस्वाहा में हुआ। इनके पिता का नाम श्री मानिक चन्द्र जैन था। ये चार भाइयों में सबसे बड़े थे। इनकी बचपन से ही साहित्य के प्रति रुचि रही। रचनायें किशोरावस्था से ही लिखना प्रारंभ कर दिया था। उसी समय इन्होंने अपना उपनाम 'किशोर' रखा। इनका जीवन आर्थिक अभाव ग्रस्तता से पीड़ित रहा। इन्होंने ईमानदारी, न्याय व सत्य की डगर त्यागकर रकम कमाने की कभी नहीं सोची। इनका विवाह श्रीमती कौशिल्या देवी के साथ हुआ। आपने आजादी की लड़ाई में हिस्सेदारी के साथ आजाद भारत में पंच, सरपंच तथा न्याय पंचायत सदस्य के रूप में काम किया। बकस्वाहा में हायर सेकेण्डरी स्कूल खुलने पर शिक्षकों के अभाव में स्वेच्छा से शैक्षणिक कार्य भी किया।

इन्होंने जयदयाल गोइन्दका की गद्य गीता का पद्यानुवाद किया। जिसकी भूमिका हिन्दी के विद्वान डॉ. भागीरथ मिश्र ने लिखी। इसके अलावा आचार्य विनोवा भावे की हिन्दी गीता का पद्यानुवाद, गाँधी जी की हिन्दी गीता का पद्यानुवाद भी किया



'देहाती' खण्डकाव्य, महाराजा छत्रसाल नाटक आदि रचनाओं के अतिरिक्त करीब डेढ़ सौ बुन्देली रचनायें लिखीं। सभी रचनायें अप्रकाशित हैं।

*का समाज की कानें भैया, करे सबई से नेता फैल।*
*जैसे राजा पिरजा तैसई, दोऊ बिगारें अपनी गैल।।*
*राम राज कौ सपनौ सो गव, सबके मन में पसरो मैल।*
*सेवा देश, नाम की रैगई, काम सवन के बने उछैल।।*
*कडुआ कार विदेशी पल रय, चल रय ओई बैटरी सैल।।*

इस समाज का क्या कहा जाये, भाई? सभी नेतृत्व इस समय असफल हो रहा है। यथा राजा तथा प्रजा को सार्थक करते हुए दोनों बनी अच्छी परम्पराओं को ध्वस्त कर रहे हैं। अब रामराज्य का स्वप्न समाप्त हो गया है और सभी के हृदय में मैल (असत् वृत्तियाँ) फैल गया है। राष्ट्र सेवा नाम मात्र की रह गई है, सभी लोग नीच कृत्यों में संलग्न हो रहे हैं। विदेशी ऋण लेकर देश को पाल रहे हैं।

*जाँ ताँ नय इसकूल खुल रय, तैं पढ़ाई आ रई कम काम।*
*रो रय भरवे पेट पढ़इया, शंख ढपोली गुरु बदनाम।*
*सुदरत चरित नई लरकन कौ, गुरु चेला सम दोऊ तमाम।*
*बेरुजगारी दैय दोंदरा, हैं अजगर के दाता राम।।*
*टंटे बढ़रय करें उपद्रव, सिंगारन सें सज रय चाम।*
*बन्न बन्न के भोजन चानें, तन अजगर कौ जप रव नाम।।*

ज्यों–ज्यों यहाँ–वहाँ नए विद्यालय खुल रहे हैं त्यों–त्यों पढ़ाई कम महत्व की हो रही है। पढ़कर निकलने वाले युवा पेट भर खाने को परेशान हो रहे हैं। ढपोली शंख की तरह आज के गुरु हो गए हैं। लड़कों के चरित्र में सुधार नहीं दिखाई देता है। गुरु शिष्य दोनों

समान हैं। बेरोजगारी सभी को परेशान कर रही है जिस प्रकार अजगर के दाता राम होते हैं वैसे ही लोग भोजन हेतु परजीवी हो गये हैं। लड़ाई झगड़े बढ़ रहे हैं तथा शरीर को विभिन्न श्रृँगार प्रसाधनों से सजा रहे हैं। इन अजगर रूपी युवाओं को विविध प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन भी चाहिए हैं।



## पं. जैतराम धमैनियाँ 'जैत'

उत्तरप्रदेश के झाँसी जनपद के मऊरानीपुर नगर में स्वर्गीय पं. बल्देव प्रसाद धमैनियाँ के घर उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सरजूबाई के गर्भ से 1 अगस्त सन् 1928 को जिस बालक ने जन्म लिया वह बुन्देली का सशक्त कवि जैतराम धमैनियाँ 'जैत' है। आपके बारे में कहा जाता है कि अल्पायु से ही आप काव्य सृजन करने लगे थे। कक्षा चौथी में पढ़ते हुए लगभग बारह वर्ष की आयु से आप कविताएँ रच रहे हैं। आपने वनीक्यूर मिडिल स्कूल सर्टिफिकेट परीक्षा उत्तीर्ण करते हुए उर्दू तथा हिन्दी में मिडिल पास किया। आपका विवाह सोना देवी के साथ हुआ। आपके चार पुत्र तथा दो पुत्रियाँ हैं। आपकी पत्नी का देहावसान 1980 को हो गया है। आपके प्रेरणास्रोत पं. गंगाधर व्यास, घासीराम व्यास तथा घनश्याम दास पाण्डेय रहे हैं। आप रानीपुर के पास स्थित जैत माता के भक्त हैं। आपकी पत्नी ने भी प्रेरणा का कार्य किया है।

इन्होंने सैकड़ों छन्दों की रचना की है किन्तु लिपिबद्ध नहीं किया। इनको सभी छन्द स्मरण हैं। इनके कई छन्द लोक में

प्रचलित हैं। आज वृद्धावस्था में होते हुए भी उनमें उत्साह तथा रचनाओं के प्रति लगाव विद्यमान है।

## कवित्त (पावस)

*सिंधु मांह मुक्ता स्वाति बिंदु के बनावे सदा,*
*हंसन चुनाावे भलो भूतल कौ भेदी है।*
*'जैत' गरुड़गामी के बाहन के भोजनार्थ,*
*व्याल प्रगटावे दिव्य वसुधा कुरेदी है।।*
*नंदी गण भोले कौ देखकें कुटुम्ब बहु,*
*हरी हरी घास चरवे की छूट दे दी है।*
*मानौ त्रिदेवन के वाहन कों चरावे हेतु,*
*राजा ऋतुराज कौ पावस बरेदी है।।*

(सौजन्य – श्री वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक', मऊरानीपुर)

समुद्र में स्वाति बूंद से सदैव मोती बनाता है और उन मोतियों को हंसों को चुगने के लिये देता है। वह धरातल का भेद जानने वाला है। जैत कवि कहते हैं कि भगवान विष्णु के वाहन गरुड़ के भोजन हेतु सर्पों को प्रकट करने के लिये अलौकिक धरती को खुरचा (ऊपरी पर्त को हटाना) है। भोले शंकर के वाहन नंदीगण ने बड़े परिवार (कुल) के लिये हरा चारा खाने (चरने) के लिये स्वतन्त्रता दे दी है। ऐसा प्रतीत होता है कि तीनों देवों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) के वाहनों को राजा ऋतुराज (बसंत) का पावस बरेदी (चौपाये चराने वाला) बना हुआ है।

*वारिधि वरिष्ठ पुत्र वारिद तिहारौ नाम,*
*मानसून वाले मानसूनता लिए रहौ।*



*सिंधुसुत इन्दु यहाँ डारत सुधा के बुंद,*
*पानीदार पानी जौ अपनौ पिं यें रहौ।।*
*'जैत कवि' आए हौ दुखाऔ ना किसी कौ दिल,*
*विश्व प्रतिपाल छूट इतनी दियें रहौ।*
*जैसें रामकृष्ण चन्द्र नाम कौ लियें हैं साथ,*
*मेरे नभचन्द्र कौ उजारौ कियें रहौ।।*

(सौजन्य – श्री वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक', मऊरानीपुर)

तुम समुद्र के श्रेष्ठ पुत्र हो तुम्हारा नाम बादल है। तुम मानसून लाने वाले हो, अतः उस अस्मिता को बनाये रखो। समुद्र का पुत्र चन्द्रमा यहाँ अमृत की बूँदें डालता है किन्तु आत्माभिमानी अपने पानी से ही संतुष्ट रहता है। जैत कवि कहते हैं कि तुम यहाँ आये हो किसी को पीड़ा न दो। समस्त जगत के पालन–पोषण करने वाले हो तुम इतनी छूट दिये रहना कि जिस प्रकार राम कृष्ण चन्द्र के नाम का साथ लिये अर्थात् आश्रय लिये हैं तो मेरे आकाश के चन्द्रमा का प्रकाश करते रहना।

*सुनकें मरोरदार मोरनी के तीखे बोल,*
*चटुल चकोरी के पंख फरकन लगे।*
*पूरवी दिशा सें जो सांवले उठे थे घन,*
*'जैत' शशि आनन की ओर सरकन लगे।।*
*उपमा में कहौं कौन जैखो विलोको हृदय,*
*उलटे क्रम शुक्ल पक्ष नैन परखन लगे।*
*चन्द्र गगनांगन में मेघों की मची धूम,*
*श्याम अभिराम घनश्याम बरसन लगे।।*

(सौजन्य – श्री वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक', मऊरानीपुर)

मोरनी की उमंग भरी चटकीली बोली सुनकर चकोरी के पंखों

में फड़फड़ाहट आ गई अर्थात् उत्साह आ गया। पूर्व की दिशा में जो काले–काले बादल घिरे थे वे चन्द्रमुख की ओर खिसकने लगे। कवि कहता है कि जैसा दृश्य मैंने देखा है उसकी कौन–सी उपमा दूँ। शुक्ल पक्ष का चन्द्रमा विपरीत क्रम में चलता दिखा अर्थात् चन्द्रमा बढ़ने के स्थान पर घटने लगा, उसे मेघों ने आच्छादित कर लिया और आकाश रूपी आँगन में मेघों के समूह घिर आये। सुन्दर श्यामलता छा गई और बादलों से पानी बरसने लगा। यहाँ कवि भक्ति के भाव में श्री कृष्ण और राधिका जी के मिलन की अभिव्यक्ति करना चाहता है।

*दिल में अंदेसो न संदेसो मिलो बूँदन सें,*
*देख कें बादर लाल मोरन मती भई।*
*दीन प्रति पालक पुकारें और पुछारें करें,*
*पाकें घनश्याम नाम कैसी गति भई।।*
*'जैत' कवि रोको बहु वरजो इसारन सें,*
*पंखन उठाय न एक जती भई।*
*मेरे जान अम्बर अखाड़े में युद्ध माह,*
*मेघ गए जूझ कैंधों दामिनी सती भई।।*

(सौजन्य – श्री वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक', मऊरानीपुर)

मन में कोई संदेह नहीं है, बूंदों ने यह संदेश दिया है। बादलों को लाल देखकर मन के विचारों में बदलाव आया। जिन्हें सब दीन प्रतिपालक कहते और आदर देते हैं और घनश्याम जैसा सम्मानजनक नाम पाया है। उसकी कैसी गति हो गई? जैत कवि कहते हैं कि संकेतों से बहुत रोका गया किन्तु किसी का भी प्रयास सफल नहीं हुआ, आकाश के अखाड़े में युद्ध हुआ जिसमें मेघ मारे गये और बिजली सती हो गई।



## बुन्देली गरिमा

*हिन्दी हिन्द हिन्दुओं की रक्षक रही जो सदा,*
*भक्षक कुरीतियों की उपमा उजेली में।*
*और सब प्रांतन की भिन्न भिन्न भाषा भली,*
*दुहरी रसधारा इस भाषा अकेली में।।*
*'जैत' बीरता में वीर रस की पताका लिये,*
*सुभग श्रृंगार श्रेष्ठ बांचो अलबेली में।*
*चन्द्र सौ प्रकाश सुधा सिंधु सौ मिठास भरो,*
*विकास पुण्य प्रेम कौ भाषा बुंदेली कौ।।*

(सौजन्य – श्री वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक', मऊरानीपुर)

भारत और भारतीय जनों के रक्षार्थ जिस प्रकार बुन्देली सपूतों का योगदान स्मरणीय है वैसे ही बुन्देली भाषा हिन्दी के लिये सहयोगिनी रही है। बुन्देली कुरीतियों को समाप्त कर अनुपम प्रकाश देने वाली है। अन्य प्रान्तों की सभी भाषायें अपने आप में निश्चित उत्तम है किन्तु दुहरी रसधार बहाने वाली यह अकेली भाषा है। जैत कवि कहते हैं जहाँ वीरत्व के भाव की आवश्यकता है वहाँ वीर रस की पताका फहराने में सबसे आगे है और जहाँ श्रृँगारिक भावों के अनुपम आनंद की बात है वहाँ सुखद श्रृँगार रस का साहित्य पढ़ने को उपलब्ध है जिसमें अमृत सागर की मधुरता, चन्द्रमा की तरह शीतल प्रकाश विद्यमान है और सुकृत सनेह का विकसित रूप विद्यमान है।

*मृदुल महान शब्द यमक श्लेष भरे,*
*अर्थ में अनोखे लगें भाव उर आनिये।*
*मुहरा सो मंजु–मंजु कंज सम जामें 'जैत',*
*ढेर के सुढेर मिलें मन के बखानिये।।*
*गंगाधर, काली कवि, ईसुरी, बिहारी, व्यास,*

*माहुर, घनश्याम के सुछन्द पहचानिये।*
*प्यारी बुंदेली बृज भाषा की सहेली सखी,*
*रस की अलबेली के रसीले छन्द छानिये।।*

कोमल और सर्वश्रेष्ठ शब्दों में यमक और श्लेष की कलात्मकता से अर्थ में अनुपम भाव का आनंद हृदय को मिलता है। मनोहर लक्ष्य से बुन्देली के साहित्य में सुन्दर कमलों की तरह विविध भावों से भरी रचनायें करना सहज है। यहाँ गंगाधर, काली कवि, ईसुरी, बिहारी, व्यास, माहोर और घनश्याम कवियों की उत्तम रचनाओं को समझिये। प्रिय लगने वाली बुन्देली ब्रज भाषा की आत्मीय सखी है। इसकी अनोखी रसयुक्त सजधज से रचित मधुर रस भरे छन्दों का आनंद सभी को लेना चाहिए।

*ब्रन्दा रख वृन्द पाय बृन्दावन नाम परो,*
*राम भक्त तुलसी यहाँ हुलसी अकेली के।*
*गोवर्धन वर्धन निर्धन कों देवें धन,*
*कामद हर्षवर्धन जीवन पहेली के।।*
*'जैत' दोऊ क्षेत्रन की एक राशि भाषा भली,*
*दोऊअन के आपस में भाव हैं सहेली के।*
*बृज में भक्ति भाव भर मंदिर सुहावें,*
*तो बसुधा बुंदेल पर किले हैं बुन्देली के।।*

वहाँ तुलसी के पौधों का समूह में होने के कारण वृन्दावन नामकरण हुआ, यहाँ बुन्देलखण्ड में अकेली हुलसी के घर रामभक्त तुलसी ने जन्म लिया। वहाँ गोवर्धन पर्वत निर्धनों को धनवान बना देते हैं यहाँ कामदगिरि पर्वत जीवन की सभी उलझनों को सुलझाकर आनंद देने वाले हैं। जैत कवि कहते हैं कि ब्रज और बुन्देलखण्ड के क्षेत्रों की भाषा में एक सा रस समाहित है और दोनों भावों में मित्रता है; वे एक दूसरे की सहेली हैं। ब्रज में भक्ति भावों की उमंग से भरपूर मंदिर है तो बुन्देलखण्ड में वीरता के प्रतीक किले बने हुए हैं।



*दर्शन करिबे की प्रबल उत्कण्ठा देख,*
*असीमित कों सीमित रूप धरने परो।*
*भक्त को भी भगवान की प्रतिष्ठा में, निष्ठा से,*
*अनन्य भक्ति साधन कौ भाव भरने परो।।*
*'जैत' कवि बुन्देलखण्ड क्षेत्र कौ है सन्त धन्य,*
*कलियुग में दो धरी त्रेता करनै परो।।*
*भाषा बुंदेली कौ केवल एक दोहा सुन,*
*बृज के बृजराज खों राम बनने परो।।*

(सौजन्य – श्री वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक')

दर्शन करने की प्रबल उत्सुकता को देखकर सीमाओं से परे; निर्गुण निराकार ईश्वर को सीमित (साकार) रूप धारण करना पड़ा और भक्त को भी प्रभु की प्रतिष्ठा में साधनारत श्रद्धा से अनन्य भक्ति भाव से अर्चना करनी पड़ी। जैत कवि कहते हैं इस बुन्देल भूमि के संत पुरुष धन्य हैं जिनकी आराधना से कलियुग में भी दो घड़ी के लिये त्रेतायुग आ गया। बुन्देली भाषा के मात्र एक दोहे को सुनने पर ब्रज के श्री कृष्ण भगवान को श्री राम का रूप धारण करना पड़ा।

*विरहा वृतन्त कौ भओ अन्त, आ गये कन्त बोली गोरी।*
*सब त्याग तंत्र, बस मूलमंत्र, करहौं बसन्त पूजा तोरी।।*
*कोयल दय ताप, रत पिय मिलाप, विरहन की ताप मैटत आये।*
*सांसी है छाप, तैरो प्रताप, ऋतुपति हैं आप, सुख उपजाये।।*
*किसलय दुकूल, मख उठे फूल, डारन के सूत्र हैं सरमाये।*
*वायु में झूल, करते अबेल, अब तक जेल में दुख पाये।।*
*अलियों के संग, भर–भर उमंग, रस रंग लुटा खेले होरी।*
*सब त्याग तंत्र, बस मूल मंत्र, करहौं बसन्त पूजा तोरी।।*

सुन्दरी नायिका कहती है कि प्रियतम आ गये हैं अब विरह की चर्चा शान्त हो गई। सभी तन्त्रों को छोड़कर बस एक ही मूल मंत्र

शेष है कि हे ऋतुराज बसंत! तेरी पूजा करूँगी। जो कोयल कष्ट दे रही थी अब प्रिय के मिलन पर वह संताप समाप्त हो चुका है। हे ऋतुपति बसंत, तेरी कृपा से सचमुच आनंद के दिन आ गये। पौधों ने कोपलों के सुन्दर वस्त्रों को पहना हैं, फूलों के झुंड खिल गये हैं और वृक्षों के लटकते सूत्र मानो लज्जा से झुक रहे हैं। हवा में झूलते हुए अठखेलियाँ कर रहे हैं जो अभी तक कारागार में बंद थे उन्हें स्वतंत्रता मिल गई है। भ्रमरों के साथ उत्साहित होकर आनंद रस की वर्षा करते हुए होली खेल रहे हैं। सभी तन्त्रों को छोड़कर बस एक ही मूल मंत्र शेष है कि हे ऋतुराज बसंत! तेरी पूजा करूँगी।

*फागुन के का गुन बखानें हम कौन कौन,*
*भौन भौन लागे हौन, दृश्य नए होरी पै।*
*कोउ लयै हजारा कोउ फुहारा लिए हांथन में,*
*फेंकत गुलाल लाल चन्द्रमुखी गोरी पै।।*
*'जैत' कवि नागर गागर में सागर भर,*
*कलम पिचकारी तै काव्य कला मोरी पै।*
*कवि बना श्याम और शब्द ग्वाल बाल बगे,*
*फाग खेलबे के हेतु कल्पना किशोरी पैं।*

कवि कहता है कि मैं फागुन (बसंत) के किन–किन गुणों का वर्णन करूँ। प्रातः होते ही होली खेलने के नये दृश्य दिखाई देने लगे। कोई हजारा (पौधे सींचने का पात्र) हाथ में लेकर आ गया तो कोई फुहारा लिये हुए हैं। चन्द्रमा से मुखवाली सुन्दरी पर गुलाल फेंकी जा रही है। जैत कवि कहते हैं कि कवि श्रेष्ठ ने गागर में सागर भरने के लिए भाव को लेकर कलम रूपी पिचकारी से कलात्मक काव्य का सृजन प्रारंभ कर दिया। इसमें कवि स्वयं श्रीकृष्ण बन गया और उसकी प्रयुक्त शब्दावली ग्वालबाल सखा बन गये। अब फाग खेलने के लिए कल्पना रूपी किशोरी जी (राधिका जी) बन गईं।



# गुलजारी लाल गुप्त 'लाल'

कवि गुलजारी लाल गुप्त 'लाल' का जन्म भिण्ड जिले के आलमपुर में 3 मार्च सन् 1930 को हुआ। इनके पिता का नाम श्री भगवान दास गुप्त था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा आलमपुर में ही हुई। आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन से प्रथमा की परीक्षा उत्तीर्ण की है। इनका स्वभाव बचपन से ही धार्मिक है। ये काव्य में बाल्यावस्था से रुचि रखते रहे हैं। इन्होंने निम्न कृतियों का प्रणयन किया जो सभी अप्रकाशित हैं –

1. गोरी हारै जावे, 2. बुन्देली बूँदें, 3. नये स्वर, 4. दोहा दरबार, 5. रामजन्म। इनकी रचनायें विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं, साथ ही आकाशवाणी भोपाल व ग्वालियर से प्रसारित होती रही हैं। आपको विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं ने सम्मानित भी किया है।

*जात समाज में लाज प्रभो वृजराज हरो मम संकट भारी।*
*दीनदयाल दरो दुख दीरघ दुष्ट दुशासन खैंचत सारी।।*

*कान पुकार परी न करी कछु देर बढ़ायौ है चीर मुरारी।*
*अम्बर के अम्बार लगे पर सारी घटी न घटी गुलजारी।।*

द्रोपदी विनय करते हुए कहती है कि हे प्रभु! ब्रजराज कृष्ण समाज में मेरी लज्जा का सम्मान छिना जा रहा है, आप इस संकट का हरण कीजिए। दीनों पर दया करने वाले, दुशासन मेरी साड़ी को खींच रहा है, आप इस महान् दुखद क्षण का दलन कीजिए। कानों में पुकार के स्वर पहुँचते ही मुरारी कृष्ण ने बिना विलम्ब किए साड़ी का वस्त्र बढ़ा दिया जिससे खींची गई साड़ी के वस्त्र का ढेर लग गया लेकिन साड़ी नहीं समाप्त हुई।

*दीनबंधु दीनानाथ लखन समेत सिय,*
*बिरहत विपिन आये अत्रि जू के अँगना।*
*आश्रम पधारे राम अत्रि ब्रम्हानंद लयौ,*
*दंड जिमि पौढ़े पग मोहि लाचौ अँगना।।*
*कहैं मुनि हाथ जोर विनती मैं काह करौं,*
*नाथ के चरित्र कह सकत भुजंग ना।*
*पतिव्रत धर्म के महान भेद–भाव मर्म,*
*सीता कों सुनावैं धन्य अत्रि जू के अँगना।।*

दीनों के बंधु व स्वामी श्री राम लक्ष्मण व सीता सहित वन भ्रमण करते हुए मुनि अत्रि के आश्रम में पधारे। राम के आश्रम में पधारने पर अत्रि ने ब्रह्मानंद पाकर उनका स्वागत किया। मुनि अत्रि ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि मैं स्वामी के चरित्र का क्या वर्णन करूँ ? यह वर्णन तो शेषनाग भी सहस्त्र मुखों से नहीं कर सकते। मुनि अत्रि की पत्नी अनुसुइया सीता जी को पतिव्रत धर्म के महत्व को बता रही हैं।

*कारे छवि बारे घुँघरारे गभुआरे केश,*
*आनन लुनाई लख मार हार मानी है।*



*दुई–दो रद सोहैं मन मोहैं मुनीषन के,*
*भौंहैं विशाल जनु कमान काम तानी है।।*
*अंग पै अनंग कोटि वारी हजार बार,*
*को कवि छवि कहै शारदा हू लजानी है।*
*मोहनी अनुपम विलोकी छवि राघव की,*
*'लाल' गुलजारी मम अखियाँ सिरानी हैं।।*

कृष्ण की छवि का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि श्यामवर्ण के शिशु रूप में छोटे–छोटे घुँघराले बालों वाले मुख की लावण्यता देखकर सौन्दर्यदेव काम भी पराजित हैं। मुख में दो–दो दाँत हैं, धनुष के समान विशाल भौंहैं ऐसी हैं जैसी कामदेव ने स्वयं धनुष उठाया हो, ऐसे सौन्दर्य को देखकर मुनियों के मन में प्रसन्नता हो रही है। प्रत्येक अंग में हजारों गुना सौन्दर्य परिलक्षित है। इस सौन्दर्य का वर्णन तो ज्ञानदेवी शारदा भी नहीं कर सकतीं। ऐसी मनमोहक अनुपम छवि को राम में देखकर कवि गुलजारी की आँखों को शांति मिलती है।

*सोहत हाथ में रंग भरी पिचकारी औ काँधे अबीर की झोरी।*
*मोहन ग्वालन संग इतै उत राधिका हीय उमंग न थोरी।।*
*डारें गुलाल सुता वृषभानु की होरी के रंग रची शुचि जोरी।*
*आज मची वृज–बीथिन में वृषभानु लली बृजराज की होरी।।*

हाथ में रंग की पिचकारी ले तथा कंधे पर अबीर की झोली डालकर कृष्ण ग्वालों के साथ तथा राधा अपनी सखियों के साथ हृदय में उल्लास से परिपूरित होली खेल रही है। वृषभानु की पुत्री राधिका गुलाल डाल होली के रंग में रंगी है। आज ब्रज की गलियों में वृषभानु सुता राधा व ब्रजराज कृष्ण की होली हो रही है।

*गुजरि का मद में रई भूल, तेरौ दिन में सब मान नसैहौं।*
*फोर दऊँ दधि की मटकी, रस–गोरस गैलन में बगरैहौं।।*

*देहु सखी सबरीं दधि–दान, दिये बिन दान में जान न दैहौं।*
*राजी सें देहु तौ राजी रहौं, गुलजारी नहीं बरजोरी छिनैहौं।।*

ग्वालिन तू किस घमण्ड में भूली है ? मैं क्षण भर में तेरा घमण्ड समाप्त कर दूँगा। दही की मटकी को फोड़कर इस गोरस को गलियों में फैला दूँगा। तुम सभी सखियों सहित मुझे दही दान दो अन्यथा बिना दान दिये मैं तुम्हें आने नहीं दूँगा। यदि सहमति से दोगी तो प्रसन्नतापूर्वक जाओगी अन्यथा मैं जबरदस्ती छीनकर ले लूँगा।

*मोहिं बतावत कारे सखी, फिर कारे तऊ तुमरे मन भाये।*
*चैन परै तुमकों ललिता नहिं, नेकु बिना हमरे लख पाये।।*
*कारे कहान लगीं 'गुलजारी' जबै कहवे की तुवै मन आये।*
*कारे अबै कह जानी ग्वालिन, पर कारे के छौंके भटा नहिं खाये।।*

श्रीकृष्ण ललिता सखी से कह रहे हैं कि तेरी सखी राधा मुझे काला बनाती है किन्तु काले (कृष्ण) ही उसके मन को भाये हैं। ललिता तुमको भी क्षण भर देखे बिना मुझे देखे चैन (शांति) नहीं मिलता। गुलजारी कवि कहते हैं कि काले कहते हुए भी उन्हें (राधा) काले ही मन भाये। काले कहकर जब ग्वालिन जाने लगी तो उन्होंने व्यंग्यपूर्वक कहा कि तुमने अपने काले (कृष्ण) के हाथों बनाया गया भटा का साग नहीं खाया।

*ऐ हो वृजराज नेक कीजै कृपा की कोर,*
*लाँच–घूँस पूतना कुघातिनी संहारिये।*
*नाथ, नाथ दीजै गरु काली नाग शोषण कौ,*
*अनाचार, दुराचार कंस कौं पछारिये।।*
*आसुरी प्रवृत्ति गरु ग्राह कौं पराजित कर,*
*धर्म–कर्म गजपति की विपति विदारिये।*
*दानवीय संस्कृति के प्रबल दुशासन से,*
*मानवीय संस्कृति की द्रोपदी उबारिये।।*



हे ब्रजराज कृष्ण! थोड़ी सी कृपा करके वर्तमान में रिश्वत रूपी दुष्टा पूतना का संहार कीजिए। स्वामी! शोषण रूपी कालिया को नाथ (नियंत्रित) दीजिए और अन्याय व अनाचार रूपी कंस का वध कीजिए। राक्षसी प्रवृत्ति रूपी मगर को हराकर धर्म–कर्म रूपी गज (हाथी) को विपत्ति से मुक्ति दिलाइये। दानवी (पश्चिमी) संस्कृति रूपी सक्षम बलशाली दुशासन से मानवी (भारतीय) संस्कृति रूपी द्रोपदी की लाज बचाइये।

# डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त 'प्रसाद'

बुन्देली लोक संस्कृति के अध्येता व कवि डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त 'प्रसाद' का जन्म 1 जनवरी 1931 ई. को महोबा नगर में श्री पूरन लाल गुप्ता के घर माँ श्रीमती रामकुँवरि देवी की कोख से हुआ। इनकी प्रारंभिक शिक्षा महोबा में ही हुई। उच्च शिक्षा में एम.ए. अंग्रेजी आगरा विश्वविद्यालय से, एम.ए. हिन्दी एवं पी–एच.डी. सागर विश्वविद्यालय से तथा बी.एड. लखनऊ विश्वविद्यालय से किया। 1945 से रचनायें लिखना प्रारंभ किया। इन्होंने लेखन कविताओं से प्रारंभ किया किन्तु बाद में 'आल्हा' उपन्यास व अनेक कहानियाँ लिखीं।

आपने वृन्दावन लाल वर्मा की अध्यक्षता में चलने वाली अखिल भारतीय संस्था 'ईसुरी परिषद्' के 1958 से 1964 तक मंत्री के रूप में कार्य किया तथा 1970 से 1976 तक राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त स्मारक संस्था, चिरगाँव के महामंत्री रहे। आपने 1981 में बुन्देलखण्ड साहित्य अकादमी की स्थापना कर 'मामुलिया' का प्रकाशन किया, जिसके माध्यम से बुन्देली लोक साहित्य व संस्कृति को राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने में मदद मिली। आपने अनेक संस्थाओं में विभिन्न



पदों पर रहते हुए सक्रियता से काम कर उन्हें नईं ऊँचाईयों तक पहुँचाया।

इनका विवाह श्रीमती मृदुला गुप्ता के साथ हुआ। इनके चार पुत्र व तीन पुत्रियाँ हैं। आपको विभिन्न संस्थाओं से अनेक पुरस्कार व सम्मान मिले। जिनमें 1987 में उ.प्र. हिन्दी संस्थान लखनऊ का मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार, 1993 में गुंजन कला सदन–जबलपुर द्वारा 'लोक साहित्य सम्मान', 1994 में बघेली विकास परिषद, तिवनी रीवा द्वारा 'लोक भाषा सम्मान' तथा 1996 में म.प्र. लेखक संघ भोपाल द्वारा 'अक्षर आदित्य' सम्मान प्रमुख है। आपकी दर्जनों पुस्तकें प्रकाशित हैं जिनमें 'बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास', 'आल्हा', 'बुन्देली फागकाव्य : एक मूल्यांकन', 'आल्हाखण्ड : शोध व समीक्षा', 'लोककवि ईसुरी और उनका साहित्य', 'मध्यदेशीय लोक संस्कृति', 'बुन्देली लोक संस्कृति' तथा 'चौपड़' कहानी संग्रह महत्वपूर्ण हैं। डॉ. गुप्त का देहावसान 11 मई 2003 को हुआ।

## चौकड़ियाँ

*भोरईं झुक आओ अंदयारौ, कीकौ पर गओ पारो।*
*सूरज ऊबत गान दब रओ, चंदा कौ का चारो।*
*चारऊ कोदन हर छन बदरो, लौंका धरत अंगारो।*
*बोंड़िन की खिलबे की बेरां, झोंकन बाग बिगारो।*
*का हूहै परसाद देस कौ, सबनें डाँकौ डारो।।*

प्रातःकाल से ही अंधेरा छा गया, किसकी चौकी लग गई अर्थात् किस व्यक्ति के हाथ रक्षा का प्रबन्ध आ गया कि परिस्थितियाँ प्रारंभ से ही विपरीत होने लगीं। सूर्योदय के समय से ही सूर्य पर ग्रहण लग गया, अब चन्द्रमा के लिये क्या उपाय है ? चारों दिशाओं

में बादल छा गये, बिजली का चमकना ऐसा लगता है जैसे तोप घालने के लिये अंगार रख रही हो। कलियों के खिलने का समय है, हवा और पानी के झोंकों ने बगीचे को खराब कर दिया। कवि प्रसाद ने अपने देश की दशा को लक्ष्य करते हुए उक्त भाव की अभिव्यक्ति की और अंत में चिंता व्यक्त की कि सभी डाका डालने लगे हैं, फिर देश का भविष्य क्या होगा?

*इतनी कई मान गैलारे, हम तौ करत इसारे।*
*ई गैलन के रखवारन नें, कइयक डाँके डारे।*
*गैलन की मरजाद लूट कें, घर के घैला पारे।*
*नाको बेंड़ो इनखाँ नइयाँ, मुलकन खेत उजारे।*
*कात प्रसाद इतईं सें मुरकौ, जो कउं बस न तुमारे।।*

हे राहगीर! हम संकेत में कुछ बात कर रहे हैं इसे मान लो। इस मार्ग में रक्षा के लिए नियुक्त लोगों ने अनेक डांके डाले हैं। मार्ग की मर्यादा को नष्ट करके अपना स्वार्थ पूरा किया। इनके लिये किसी प्रकार की रुकावट बाधित नहीं करती, इन्होंने अनेक खेतों को उजाड़ दिया। कवि प्रसाद कहते हैं कि यदि तुम उनका सामना करने में समर्थ नहीं हो तो यहीं वापिस लौट जाओ।

*ऐसी प्रलै घटा घैरानी, पानी पानी पानी।*
*पानी पै असवार मौत हो, चऊँ कोद उमड़ानी।*
*लहर लगायै जित जित मौड़ै, उत उत भीड़ बिलानी।*
*भौरे भखबे को बाउत मौं, लाखन जीभ कुरानी।।*
*घरी भरे में सागर उमड़ों, कछू न बची निसानी।*
*खड़े प्रसाद आज मनु ढूंड़त, कुरसी कऊं हिरानी।*

बादलों ने घिरकर ऐसी मूसलाधार वर्षा की कि प्रलय के समान स्थिति बन गई, सब जगह पानी ही पानी दिखाई दे रहा है। ऐसा लगता है कि पानी रूपी घोड़े पर सवारी करके मौत चारों ओर छा



गई है। वह लगाम को तानकर जिस ओर मोड़ देती हैं वहीं पर भीड़ समाप्त हो जाती है। भौंर को खाने के लिये भालू पैदा हो गया है उसकी लाखों जिह्वायें अंकुरित हो गई हैं। क्षण भर के लिए सागर ने उमंग ली और संसार का नामोनिशान मिट गया। कवि प्रसाद कहते हैं कि आज मनु अपनी खोई हुई कुर्सी खोज रहा है।

*ऐसी छत्रसाल ने ठानी, कैबे रई कहानी।*
*चुगलन मुगलन सीख सिखा कें, कर दओ पानी पानी।*
*लै लै सीसन की बखसिस सी, नचत मौत मस्तानी।*
*हिन्दुन की मरजाद बचा कैं, धरमपुरी पैचानी।*
*कीरति के बिरवा कै कै कें, कबिन रीत सनमानी।*
*कात प्रसाद ऐई गुन गाकैं, धन्न हो गई बानी।*

महाराज छत्रसाल ने दृढ़ निश्चय करके मुगलों और उनके सहयोगियों को परास्त करके उनकी शान को ऐसा मिटाया कि आज वह इतिहास में अमर हो गये। राजा से बख्शीस के रूप में मुंडों को पा कर मौत भी मस्त होकर नाचती है। हिन्दुओं की मर्यादा को सुरक्षित करके धर्म की ध्वजा को फहराया। 'कीरत के विरवा' कह करके कवियों का सम्मान किया है। कवि प्रसाद उन्हीं छत्रसाल के गुणों का बखान करके अपनी वाणी को धन्य मानता है।

*उनसें मिलबे की जब ठानी, रै रै बरसो पानी।*
*पैलें लुको रओ कउँ बादर, छापामार सेनानी।*
*लहर पटोर देखतई बैरी, जरभुन के रिस मानी।*
*लोंका के लूकन मैं बर गई, सौतन आँख जुड़ाई।*
*कात प्रसाद मनईं मन छिद रई, बूदें भौत पिरानी।।*

उनसे मिलने के लिये जब भी निश्चय किया तभी रुक–रुक कर पानी बरसने लगा। छापामार युद्ध में निपुण सैनिक की तरह पहले बादल छिपा रहा, और मिलने में रुकावट लाने के लिए बरस

पड़ा। लहर–पटोर (धारीदार रेशमी वस्त्र) में सजा देखकर क्रोधित मन से इस दुश्मन ने बैर मान लिया। बिजली के गिरने से वह समाप्त हो गई और सौत की आंखें ठंडी हो गईं। कवि प्रसाद कहते हैं वे अवरोधक बूंदें मन में ऐसी चुभ गईं कि जिन्होंने बहुत तकलीफ दी।

*तिरछी सैन चला दई कोरन, गुरां गुरां की फोरन।*
*नैन नचाय भोंय कर बाँकी, पलकन चोरी चोरन।*
*तुरतईं गड़ गई नुकई चित्त में हरां हरा बिसघोरन।*
*रै रै सालै मुंदी चोट सी, जतनन करौ करोरन।*
*कात प्रसाद सुआ पालो जौ, बिन पिंजरा बिन डोरन।*

नायिका ने तिरछे नेत्रों से ऐसा देखा कि शरीर का अंग–अंग पीड़ित हो गया। पलकों से नजर को चुराते हुए भौहों के बाँकपन के सहारे नयनों को नचाकर किया गया प्रहार मन पर इतना शीघ्र प्रभावी होता है कि विषैले बाण की नोंक की तरह चुभकर धीरे–धीरे उसका विष पूरे शरीर में फैलता है। रुक रुक कर भीतरी चोट (मौदी चोट) की तरह दुखता है। इसके निवारणार्थ हजारों उपाय किए किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। कवि प्रसाद कहते हैं कि बिना पिंजरा और बिना डोरी के इस दुख को तोते की तरह पाल लिया है।

*ककरा परे पैजना झनकैं, पाँव परें जब हन कैं।*
*घुँघटा में नैना मटकत रत, हांतन चुरियां खनकैं।*
*ठसकन चलतन जतन सकुचतन, छनछन नग नग ठनकैं।*
*अंगन अंगन रास हो रओ, काम देखतन रुनकैं।*
*कात प्रसाद कसाइन के मन, मंतक मंतक ठिनकैं।*

नायिका के पग जब जमीन पर जोर से पड़ते हैं तो कंकड़ डले हुए पैजना (पैरों का एक गोल पोला वजनी आभूषण) झंकार करते हैं। उनके घूँघट के भीतर नयन नाचते रहते हैं और हाँथों की



चूड़ियाँ खनकती रहती हैं। नायिका की चाल (गति) में अनोखी ठसक, चेहरे में सप्रयास संकोच और प्रतिक्षण पुष्ट अंगों की गति में मांसलता की ठनक से लगता है कि उसके प्रत्येक अंग में रास क्रीड़ा चल रही है जिसे देखकर कामदेव का मन भी मचल जाता है। कवि प्रसाद कहते हैं कि दुष्ट लोगों के मन चुपके–चुपके रूठ रहे हैं।

*जौ फागुन इतनौ बौरानौ, घर घर देत उरानौ।*
*घर घर फेरी देत भोर सों, मलयानिल गर्रानौ।*
*मउवा आत कोंचयाने जे, कोंचत जीउ परानौ।*
*बिरछन के आखर सों मारन, मंत्र फिरत मंडरानौ।*
*कात प्रसाद अबईं जा दुरगत, कल कौ कौन ठिकानौ।*

फागुन (बसंत के प्रारंभिक दिन) इतना पागल हो गया है कि प्रति घर में उलाहना देता घूम रहा है। प्रातःकाल से ही घर–घर की परिक्रमा करता है, सुगंधित पवन मदमस्त है। फूलता हुआ महुआ का वृक्ष मन को कचोटने लगा है। वृक्षों पर फागुन (बसंत) का प्रभाव हुआ है, उससे वे मंत्रों के अक्षरों की तरह प्रभावी होकर छा गये हैं। कवि प्रसाद कहते हैं कि जब अभी प्रारंभ में ऐसी खराब स्थिति बन रही है तो आगे आने वाले समय में क्या होगा। यह निश्चित नहीं कहा जा सकता।

*रीत गई अब मन की गगरी, अब लौं भरी भरी।*
*बीत गई बातें पैला की, सोसत घरी घरी।*
*ऊसई लगत रात के पारैं, जैंसे गाज गिरी।*
*बिरछा भीतर सुआ झुलस गओ, मैना तड़प गिरी।*
*खाली घरिया सी तरसत रत, नैनन की पुतरी।*
*कात प्रसाद ओई मन देइया, जानै का बिगरी।।*

नैराश्य से व्यथित कवि कहता है कि मन की गागर जो अब तक भरी हुई थी अब खाली हो गई है। अर्थात् मन का उल्लास

समाप्त हो गया और नीरसता का खालीपन आ गया है। पहले जैसे आनंद भरी बातें अब नहीं रहीं, यही चिन्ता मन घर कर गई हैं। रात्रि के एकान्त पहर में लगने लगता है कि जैसे बिजली गिर गई हो अर्थात् विपत्ति के आगमन का आभास होता है। इस बिजली के गिरने से वृक्ष के भीतर सुरक्षित तोता अधजला हो गया और मैना भी उसकी तपन से तड़प कर गिर गई अर्थात् यह ऐसी विपत्ति आई कि मन और आत्मा दोनों प्रभावित हो गये। खाली घरिया (कच्चे मकान के छप्पर पर छाने वाले मिट्टी के बने अर्द्ध चन्द्राकार उपकरण) की तरह आँख की पुतली पानी के लिये लालायित रहती है। अर्थात् आँखों के आँसू भी सूख चुके हैं। कवि प्रसाद कहते हैं कि अनजाने में मुझसे क्या भूल हो गई?

*ऐसी ऐंठी धूप जिठानी, करी खूब मनमानी।*
*सिकड़ी सी बैठी रई कौनें, छाया की देवरानी।*
*देवर बिरछा ठाड़े देखें, ओंठन बात समानी*
*गरम जेठ रूठे से रै गए, गिराहार पी पानी।*
*कात प्रसाद अबई जा दुरगत, कल की कीनै जानी।।*

गर्मी की प्रखरता का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि धूप रूपी जेठानी (पति के बड़े भाई की पत्नी) ने अपनी ऐसी ठसक दिखाई और छाया रूपी देवरानी पर मनमाने अन्याय किये कि वह एक कोने में सिमटी हुई बैठी रही। देवर एक वृक्ष सा धूप के इन कार्यों को खड़े देखते रहते हैं उनके मुँह की बात होंठों के बाहर नहीं निकलती। ओज (प्रकाश) रूपी क्रुद्ध जेठ अप्रसन्न हो गये किन्तु पानी का सा घूँट पीकर चुप रह गये। कवि प्रसाद कहते हैं कि जब अभी यह हाल है तो भविष्य में क्या दुर्दशा होगी ?

*ऐसी पिचकारी की घालन, कितै सीक लई लालन।*
*कऊँ खां नैन कऊँ खां हेरन, सदे हांत की चालन।*



*हिरनी सी ठांड़ी रई देखत, फंसी रूप की जालन।*
*बरकी भौत भुमा कें करया, हांत लगा लओ गालन।*
*कात प्रसाद रंग रस भींजी, कर डारी बेहालन।*

हे कृष्ण! तुमने पिचकारी चलाने की यह कला कहाँ से सीखी है ? कहीं पर तुम्हारी आँखें रहती हैं और किसी अन्य जगह देखते हो फिर इतने सधे हुए हाथों से पिचकारी चलाकर मनचाही जगह रंग की धार सटीक मारते हो। मैं हिरनी की तरह तुम्हारे रूप सौन्दर्य के जाल में उलझकर खड़ी रह गई तभी तुमने पिचकारी चला दी। मैंने गालों पर हाथ लगाकर और करहाई घुमाकर बहुत बचने का प्रयास किया किन्तु बच न सकी। कवि प्रसाद कहते हैं कि गोपी रंग में भीग गई और प्रेम में सराबोर होकर व्याकुल हो गई।

*ई फागुन का फागें गाबें, अपने गाल बजाबें*
*अब ना रये बे सुमन सुमन से, भौंरा फिर–फिर जाबें।*
*औरई हवा बै रई रै रै, कोइलिया का पाबें।*
*रीत गयी मन की पिचकारी, रसरंग काँसें लाबें।*
*कात प्रसाद सबई रंग बदरंग, जे बसंत ना भाबें।*

नैराश्य से व्यथित कवि कहता है कि इस फागुन (बसंत) में कैसे फाग गाइये ? मन में उमंग नहीं है अतः केवल गाल बजाने की तरह लगता है। अब पुष्पों में वह पहले जैसा न सौन्दर्य है न रस है भ्रमर इनके पास आते हैं और बिना रस पान किये लौट जाते हैं। हवा भी अब रुक–रुक कर दूसरी तरह की बह रही है, कोयल को अब गाने के लिये क्या उत्साह मिलेगा? मन का आनंद–रस खाली हो चुका है अब प्रेम का रंग कहाँ लाया जा सकता? कवि प्रसाद कहते हैं कि सभी भद्दे हो चुके हैं अर्थात् सभी उत्सव आनंद रहित हो चुके हैं इस मन को अब बसंत भी अच्छा नहीं लगता।

*ई बगिया बसंत ना आबै, माली–मन पछताबै।*
*कोइल डारन–डारन ढूँकै, झूँकै चैन न पाबै।*
*खिलतीं बेरां कली सूक रईं, भँवरा फिरै भिन्नाबै।*
*जिउरा छिन–छिन आबै जाबै, रोकत पै ना राबै।*
*कात प्रसाद बैद कोउ मिलबै, मूर सजीबन लाबै।*

इस वाटिका में बसंत का आगमन नहीं होता जिससे माली का मन बहुत खिन्न हो जाता है। कोयल प्रत्येक डाल पर आकर झांकती है और चली जाती है, वह झूकती (ठिठकती) है किन्तु उसे सुख नहीं मिलता। जब पुष्प के खिलने का समय था तभी कली सूख गई, भ्रमर झुँझलाया हुआ घूम रहा है। मन प्रतिक्षण भटक रहा है, मन में स्थिरता नहीं है। मन को कितना ही रोको किन्तु वह रुकता नहीं अस्थिर हो चुका है। कवि प्रसाद कहते हैं कि कोई चतुर वैद्य (चिकित्सक) मिल जाए और वह संजीवन बूटी लाकर इस रोगी मन का उपचार कर दे।

*अब कछु लगत न मन खाँ नीकौ, सब रंग फीकौ–फीकौ।*
*त्रिबिध समीर कूक कोइल की, भरत उजास न जी को।*
*कुंजन में अंगरा झूलत रत, काटत सुर बंसी कौं*
*सोसन सूक नवल तन हो गओ, चालन घुनी पिसी कौ।*
*झूँकत रात प्रसाद रात दिन, लेंय आसरौ कीकौ।*

अब कुछ अच्छा नहीं लगता सभी आनंद रसहीन हो गये हैं। तीनों गुणों (शीतल, मंद, सुगंध) से युक्त पवन और कोयल के मीठे बोल भी मन में प्रकाश नहीं भरते। कुंज स्थलों पर अंगारों की तरह तपन है और वंशी की मधुर ध्वनि भी बुरी लगती है। यह सुन्दर युवा शरीर सोच के कारण घुन लगे गेहूँ के आटे के चोकर की तरह सूक गया है। कवि प्रसाद कहते हैं कि दिन–रात मन में अस्थिरता बनी रहती है कि किसका आश्रय लिया जाय?



*फागुन आउन की सुनकें गुन कें, कछु जोर जताउन लागी।*
*कोंपन की चरचा कर चोंपन, रंग सुरंग बताउन लागी।*
*फूलन हेर मनई मुस्कात सुर बौर कौ, झौर दिखाउन लागी।*
*भीतर जात न बाहर जात न, बात बतात लजाउन लागी।*

नायिका बसंत के आगमन की बात सुनकर और मन में कुछ विचार करने पर उसके मन में सुखदायक मनोवेग हिलोरें लेने लगा। वह वृक्षों में नई कोपलों की कोमलता, सुन्दरता, सुडौलता और लालिमा आदि की बातें बड़ी मुग्धता से करने लगी। पुष्पों को देखकर वह मन ही मन मुस्कराती हैं और आम की बौर के गुच्छों को दूसरों को दिखाती हैं। उसकी मानसिक स्थिति विलक्षण हो गई है, न वह बाहर जाती है और न अन्दर जाती है। बात करते–करते अपने आप उसमें लज्जा के भाव आ जाते हैं।

*सोसत काल की घात अघात न, सौंह करै बिसरै न बिसारै।*
*माखन मोर सनेहन जोर, फिरै मटकी मटकी न संभारै।*
*मटकी अटकी कर नैनन माँह, जड़ी सी खड़ी न धरै न उतारै।*
*स्याम छुओ छींको न छुयै, छिन लाज मुयै छिन नाथ निहारै।*

नायिका कल की चोट (प्रहार) के आनंद को याद करते हुए तृप्त नहीं होती। वह सौगंध करती है कि वह क्रीड़ा भुलाने से भी नहीं भूलती। नवनीत तो निकाल लिया है, स्नेह की प्रबलता बढ़ गई है वह नाचते हुए इधर–उधर घूमती है पर नवनीत भरी मटकी (गागर) सम्हाल नहीं पा रही। गागर हाथ और आँखों के बीच फँस गई है। वह किसी आकृति के अनुरूप गढ़ी हुई आकृति की तरह जड़ीभूत सी खड़ी रह गई है। वह मटकी को न सींके पर रखती है और न नीचे उतार कर रखती है। वह श्री कृष्ण के हाथ से छुआ हुआ छींका नहीं छूती, किसी क्षण वह लज्जा से गड़ी जा रही है तो दूसरे क्षण वह श्रीकृष्ण को देखकर आनंदित होती है।

## कवित्त

*रहँट की घरियाँ जैसी अँखियाँ भरीं भरीं,*
*घरीं–घरीं डोल रईं जैसी दिमानी सीं।*
*लड्डुआ जैसो मौं लगत भरो–भरो ऊपर सें,*
*भीतर सें बानी ज्यों चासनी चिमानी सी।*
*हराँ–हराँ पाँव धरत बेतवा सी बाँकी गति,*
*खनक पैजना की बनक बहूरानी सी।*
*तन–मन मोहत प्रसाद गोरी गोंडवाने की,*
*महक महुआ सी ठसक ठकुरानी सी।।*

प्रतिक्षण पागल–सी चलायमान आँखें रहट (कुयें से पानी सींचने का एक यंत्र) की घरियों की तरह भरी हुई सी दिखती हैं। ऊपर से उनका मुख लड्डू की तरह सुन्दर है और वाणी में चाशनी (आँच पर चढ़ाकर गाढ़ा और लसीला किया हुआ चीनी या मिसरी का रस) का मौन मिठास है। धीरे–धीरे रखे जा रहे उसके कदमों की गति बेतवा का बांकपन है। धरती पैर रखते ही पैजना खनकते हैं, उसकी सज–धज (सजावट) बहूरानी की तरह है। कवि प्रसाद कहते हैं कि ठकुरानी की शान और महुआ की सुगंध वाली उस गौंड़वाने की सुन्दरी के तन और मन दोनों ने मोहित कर लिया है।

*एक कोद कारे मतवारे मदवारे मेघ,*
*झूमत झुकत झूल झोंकन झरत जात।*
*दूजी ओर दमकत दामिनी सु मानिनी सी,*
*मोर मोर अंगन अनंग सौ रसत जात।*
*कहत 'प्रसाद' दोनों चतुर खिलाड़ी जुरे,*
*खेलत खिलत खेल आनंद भरत जात।*
*मानो घात ताक ताक नभ केलि थल बीच,*
*साँवरे घिरत जात राधिका दुरत जात।।*

(उपर्युक्त सभी छन्द सौजन्य से : श्री प्रवीण गुप्त)



एक तरफ काले हर्ष से उन्मत्त, बादल घूमते हुए कभी ऊपर कभी नीचे की ओर झूले में झूलते हुए झोंके खाते और पानी की बौछार डालते जाते हैं। दूसरी ओर गर्व करने वाली अथवा मान करने वाली नायिका की तरह चमकती हुई बिजली के मुड़ते हुए अंगों में अनंग प्रेम में अनुरक्त होता जाता है। कवि प्रसाद कहते हैं कि दोनों ही इस क्रीड़ा के कुशल खिलाड़ी हैं, पुलकित होकर क्रीड़ा कर रहे हैं और आनंदित हो रहे हैं। ऐसा लगता है कि मानों आकाश में क्रीड़ा स्थल के बीच अपना–अपना दांव देखते हुए श्री कृष्ण आवृत्त होते जाते हैं और राधिका जी छिपती जाती हैं।

# शिवसहाय दीक्षित

कवि श्री शिवसहाय दीक्षित का जन्म ग्राम पठा तहसील महरौनी जिला ललितपुर उत्तरप्रदेश में विक्रम संवत् 1988 के आश्विन मास की शुक्ल चतुर्थी गुरुवार तदनुसार 15 अक्टूबर 1931 को पिता श्री जानकी प्रसाद व माता श्रीमती सीतादेवी के घर हुआ था। पिता जी तत्कालीन ओरछा राज्य टीकमगढ़ में सेवारत थे। श्री दीक्षित की शिक्षा–दीक्षा टीकमगढ़ में हुई। शिक्षा के उपरान्त आपने मध्यप्रदेश के राजस्व विभाग में राजस्व निरीक्षक के पद से सरकारी नौकरी प्रारंभ की तथा पदोन्नतियाँ पाते हुए डिप्टी कलेक्टर के पद से सेवानिवृत्त हुए। आपको काव्य लिखने का शौक बचपन से ही रहा। आपकी एक काव्य कृति 'ज्ञान चन्द्रिका' प्रकाशित है। इसके अलावा बुन्देली की रचनायें अप्रकाशित हैं।

## पावस पावनी

*जेठ कौ महीना जात उतरो उलायतौ,*
*परन लगे दोंगरे न दाँद गम्म खात है।*



*पसीना सों तरबतर सपर जात नारी नर,*
*खाडू खाद खपरा को समय कड़ो जात है।।*
*भऔ आगमन अषाढ़ कौ, काम डरौ पहाड़ सौ,*
*घिरन लागे बादल अब आ गइ बरसात है।।*
*घाम और छाँव की लुका छिपी होंन लगी*
*बीच बीच बूँदन बौछार पर जात है।।1।।*

ज्येष्ठ का मास शीघ्रता से समाप्त हो रहा है और प्रथम वर्षा होने लगी है जिससे परेशानियाँ बढ़ रही हैं। ग्रीष्म के प्रभाव से समस्त स्त्री–पुरुष स्वेद से नहा जाते हैं। खाडू (छप्पर की झाड़ियाँ) व खपरैल का समय के साथ खेत में खाद डालने का समय भी बीता जा रहा है। काले मेघ घिरने लगे हैं, आषाढ़ महीना का आगमन हो गया है, बड़े–बड़े पहाड़ से काम शेष है। धूप और छाया के मध्य लुका–छिपी का खेल प्रारंभ हो गया है और समयान्तर से पानी की बौछारें भी आ जाती हैं।

*लड़ैयँन कौ ब्याव होत लड़ेर में उछाह होत,*
*बदरा भऔ घाम अब नहीं सहो जात है।*
*परन लगो पानी कछू घरी न जाय जानी,*
*सब बौनी कौ काम डरो जी अकबकात है।*
*हरभरी किसानन में निकर गये हारन में,*
*समरत जौ काम कैसें कठिनई दिखात है।*
*मेह में बयार में किसान डरो हार में,*
*हार नहिं मानत हर हाँकत ही जात है।।2।।*

धूप निकले में वर्षा होने पर बुन्देलखण्ड में इसे सियार का विवाह होना कहते हैं, कवि कहता है कि धूप में वर्षा हो रही है जिससे छोटे–छोटे बच्चों का समूह प्रसन्नता से कह रहे हैं कि सियारों का ब्याह हो रहा है। बादलों के बीच निकलने वाली धूप की

गर्मी असहनीय हो रही है। पानी का बरसना प्रारंभ हो गया है, बुआई का काम शेष है जिससे हृदय घबड़ा रहा है। हवा व पानी के बीच किसान खेतों में पड़ा है, वह बिना पराजय स्वीकार किए सतत हल जोतता ही जाता है।

*घुमड़ आये बादर जे, पसर गये चादर से*
*लागो अँधियारौ न घामों दिखात है।*
*ठन्डी पुरवाई लहर चलन लगी सरर सरर,*
*बड़ी बड़ी बूँदन जौ पानी सर्रात है।।*
*दौर दौर रूखन के दुबीचें दुबक जात,*
*गैलारो मोंगौ सौ वेवश लखात है।*
*हवा के झकोरा सों झला परत करौं जब,*
*छर्रौं सौ माथे पै चोट कर जात है।।3।।*

चारों दिशाओं से बादल घिरकर चादर जैसे फैल गये हैं। अन्धकार छा गया है, धूप अदृश्य हो गई है। पूर्वी हवायें सर–सराकर चलने लगी हैं और इसी के साथ बड़ी–बड़ी बूँदों के साथ वर्षा प्रारंभ हो गई है। किसान दौड़–दौड़कर वृक्षों के तनों के मध्य छिप जाते हैं। राहगीर मूक और विवश जा रहे हैं। हवा के प्रखर वेग के साथ जब पानी का झला (तेज वर्षा) गिरता है तो उसकी चोट माथे पर गोली के छर्रों जैसी लगती है।

*आई धरती पै हरयारी, औ कुरा गये खेत क्यारी,*
*आ गई लगार कछू नदियँन में पानी की।*
*कोयल की भई बिदाई मोरा की घरी आई,*
*मोरनी के आगें नच दुहाइ देत ज्वानी की।।*
*बगुलन की पाँत उड़त बादर सों होड़ करत,*
*तपन सब हिरानी है ग्रीषम मनमानी की।।*
*धरती कौ ताप हरत, शीतल बयार चलत,*
*कीरत बखानत मनु पावस महारानी की।। 4।।*



धरती में हरियाली छा गई है। खेत व क्यारियों में अंकुरण हो गया है। नदियों में पानी का प्रवाह प्रारंभ हो गया है। कोयल की विदाई हो गई है, मोरा (नर मोर) की घड़ी आ गई है, वह मोरनी के समक्ष नृत्य कर अपनी युवावस्था की दुहाई दे रहा है। वकों की पंक्तियाँ बादलों से प्रतिस्पर्धा करके उड़ रही हैं। ग्रीष्म की समस्त तपन विलुप्त हो गई है। धरती का ताप हरण हेतु शीतल वायु ऐसी प्रवाहित हो रही है मानो महारानी वर्षा ऋतु की कीर्ति का वर्णन कर रही हो।

*कड़ गऔ अषाढ़ आई सावन बहार,*
*अब रात रात दिन दिन भर पानी अर्रात है।*
*नदी और नारे मिल एक भये सारे सो,*
*पानी ही पानी देखो सोंसर सर्रात है।।*
*पानी सों ऊब भई खेती सब डूब गई,*
*नींदा तो देखौ जौ कैसौ गर्रात है।*
*बादर तौ खोलो राम दिखा परै तनक घाम,*
*रात दिन किसान बस येई बर्रात है।। 5।।*

आषाढ़ के व्यतीत होने पर श्रावण मास की बहार आने से अब दिन–रात भारी वर्षा हो रही है। नदी और नाले सब मिलकर एक से हो गए हैं। पानी के सभी समतल प्रवाहित हो रहे हैं। अब पानी से लोग ऊब (उकता) गये हैं। खेती डूब गई है। नींदा (व्यर्थ पौधे) अत्यधिक तेजी से खेतों में बढ़ रहा है। किसान अब रात दिन बस यही कह रहे हैं कि हे राम! अब वर्षा बन्द कर धूप निकालिये।

*ताल में तलैयँन में नदिया औ नारन में,*
*भाटे में भरकन में पानी ही पानी है।*
*भूँखे पशु पंछी सब, पानी तो करें गजब,*
*कैसी होय दइया जा बरसा सरसानी है।।*

*आवागमन रुक गऔ काम सब अटक रऔ,*
*घर में छिके बैठे हैं भारी हैरानी है।*
*हेर रही बहिन बाट नदियँन के छिके घाट,*
*भइया की आशा में बहिना भुलानी है।। 6।।*

तालाबों, पोखरों, नदियों, नालों, खाली खेतों तथा गड्ढों में पानी ही पानी दृष्टव्य होता है। पशु–पक्षी सभी भूखे हैं। वर्षा के कारण पानी गजब ढा रहा है। सारा आवागमन अवरुद्ध हो गया है, सारे काम रुक गए हैं। सभी घर में मजबूरन बैठे हैं जिससे परेशानी हो रही है। नदियों के घाटों में बाढ़ आ जाने से ससुराल में बहनें अपने भाइयों की राह देख रही हैं, उन्हें लगता है कि भाइयों ने उन्हें भुला दिया है।

*ढूँक रहे दोरन में छपरी औ, पौरन में,*
*बैठे ठलुआई में सबरे बतियात हैं।*
*धार नहीं टूटत है घर में तूवा फूटत है,*
*पानी के पौरा नहिं गलियँन समात हैं।।*
*चरत रहे हार में सब ढोर बँधे सार में,*
*ठाँड़े है भूखे इक पूरा कों ललात है।*
*गसो ऐंन बादर, नहिं खुलत दिखात जा झर,*
*बिटिया के लिवौआ अब कैसे कें जात हैं।। 7।।*

लोग दरवाजों में, बरामदों और बाहर के कक्षों में झाँककर वर्षा देखते हैं। बिना काम के बैठे सभी लोग बातों में व्यस्त हैं। पानी की धारा नहीं टूटती है, घरों में तुवा (दीवालों का पानी रिसाव) फूट रहे हैं। पानी के पौरा (सतत् प्रवाह) गलियों में समाते नहीं है। मवेशी जंगल चरने नहीं जा पाते हैं, अपने–अपने स्थानों पर बँधे हुए हैं। सभी मवेशी भूखे हैं वे घास के एक पूरा (घास को बाँधकर बनाया गया छोटा गट्ठा) को तरस रहे है। बादल घने छा गये हैं जो अब



खुलते नहीं दिखते हैं। बिटिया को लिवाने को अब कैसे जा सकेंगे?

*बीत गऔ सावन है भादों भयावन यह*
*गर्जन सुन बादर की जियरा थर्रात है।*
*तड़कत तड़ाक, तड़ित दँदक जात चलत पथिक,*
*चकाचोंध ऐसी कि आँख मुँद जात है।।*
*गड़गड़ात बदरा सब हड़बड़ात ठिठक जात,*
*तड़तड़ात जहाँ कहुँ गाज गिर जात है।*
*मूसर सी धार ऐंसी झर कौ सम्हार नहिं,*
*पानी कौ पसार सब ओर दर्शात है।। 8।।*

श्रावण बीत गया और भयावह भाद्रपद आ गया है जिसमें बादल की गर्जना सुनकर हृदय थर्रा रहा है। अचानक बिजली के चमकने से राहगीर चौंक जाते हैं तथा बिजली के प्रकाश से आँखें चौंधिया जाती हैं। जैसे ही बादल गरजते हैं सभी हड़बड़ाकर रुक जाते हैं। तड़तड़ाहट की ध्वनि के साथ कहीं पर वज्रपात होता है। मूसलाधार वर्षा से पानी ही पानी चारों ओर दिखाई देता है।

*करौं जब बरस जात उरियन में नहिं समात,*
*सबरौ घर चुचा जात बिदी कठिन बात है।*
*घर सों नहिं कड़ो जात, चौपट भई फसल जात,*
*कछु उपाय नहिं सुझात मुश्किल दिखात है।।*
*घटा कारी उमेड़ जात एक भये दिवस रात,*
*सूरज अब नहिं दिखात भारी बरसात है।*
*सिमट रहौ जल अपार नदी नार धार पार*
*मानहु जल निधि अपार बढ़ौ चलो जात है।।9।।*

जब अधिक पानी बरस जाता है तो उरौतियों (छप्पर में खपरैल की मध्य की नलिकाओं) में नहीं समा पाता और घर की छप्पर से चूने लगता है जिससे दिक्कत होती है। वर्षा के कारण घर

से निकलने पर परेशानी होती है जिससे फसलें बर्बाद हो रही हैं। कोई उपाय नहीं सूझता, जिससे मुसीबतें बढ़ती ही जाती हैं। काली घटाओं के घिरने से दिन और रात्रि का भेद समाप्त हो गया है। अपार जलराशि नदी–नालों में प्रवाहित हो रही है जिसे देखकर लगता है कि मानों समुद्र ही अपनी अपार जलनिधि के साथ बढ़ा हुआ चला आ रहा है।

*भादों अब बीत गऔ बादर हू रीत गऔ,*
*क्वाँर लगें रुई कैसे ढेर दिखलात हैं।*
*गैल कछू सूख चली, फैली हरयाई भली*
*घास पूस लता पेड़ कैसे हरियात है।।*
*उड़त फिरत चुनत चरत चरेरू कल्लोल करत,*
*भाँति भाँति बोल बोल बाँके चेंचात हैं।।*
*फसलें फल फूल रहीं खेतन में झूम रहीं,*
*देखत किसान इन्हें मन में इठलात हैं।। 10।।*

भाद्रपद के व्यतीत हो जाने पर बादल भी खाली हो जाते हैं और आश्विन के लगते ही बादल रुई के ढेरों जैसे दिखाई देते हैं। रास्ते सूखने लगते हैं, घास, लताओं, वृक्षों पर हरियाली छाने से चारों ओर हरा भरा दिखाई देता है। पक्षी गण यहाँ–वहाँ उड़कर किलोल करते हुए चुग रहे हैं। विविध प्रकार के पक्षियों की मनोहारी चहचहाहट सुनाई देती है। फसलों में फूल व फल आ जाते हैं जिससे वे खेतों में झूमती हैं जिन्हें देखकर किसान का मन प्रसन्नता से इठला उठता है।

*नभ में उड़ात मेघ, कारे और सेत सेत,*
*नील परिधान पै छींट से लखात हैं।*
*भादों की याद करत गरजत कहुँ बरस परत,*
*बूढ़े भये हाथी ज्यों भ्रमत हहरात हैं।।*



*शरद की अबाई जान बरसा कर रही पयान,*
*रीत रऔ आसमान खंजन उड़ात हैं।*
*'शिव सहाय' जानी यह रितुवन की रानी है,*
*पावस बिन रितुपति कहु कैसें सुहात हैं।।11।।*

आसमान में श्वेत व श्याम बादल उड़ते हुए ऐसे दिखाई देते हैं जैसे नीले वस्त्र पर छपाई कर दी गई हो। बादल को भाद्रपद की स्मृति आने पर वे कहीं पर गरजते हुए बरस भी जाते हैं। जिस प्रकार बूढ़ा हाथी घूमता है वही हाल बादलों का है। शरद का आगमन समझकर वर्षा प्रस्थान करती है। खाली आसमान में खंजन पक्षी उड़ने लगते हैं। कवि शिवसहाय कहते हैं कि पावस ऋतुओं की रानी है, इसके बिना ऋतुराज बसन्त कैसे अच्छा लग सकता है ?

# हर प्रसाद गुप्त 'हरिहर'

श्री हरप्रसाद गुप्त 'हरिहर' का जन्म विक्रम सम्वत 1988 के वैशाख मास की जानकी नवमी के दिन मध्य प्रदेश के जिला छतरपुर के ग्राम, लखनगुवां में हुआ। आपकी माता श्रीमती राजदुलारी 'मन्नू' एवं पिता श्री आशाराम जी गुप्ता थे। पिता जी एक सदाचारी एवं शिक्षित सज्जन थे। श्री हरिहर का बाल्यकाल ग्रामीण वातावरण में व्यतीत हुआ। आपकी घर में ही प्रारम्भिक शिक्षा प्रारम्भ हुई। तेरह वर्ष की आयु से ही आपको कविता लिखने का शौक हो गया और प्रचलित बुन्देली फाग छन्द में रचनायें प्रारंभ हो गई। सोलह वर्ष की आयु में आप प्राथमिक शाला के शिक्षक पद पर पदस्थ होकर अध्यापन कार्य करने लगे। उन्हीं दिनों निकटस्थ नगर बिजावर के राजकवि आचार्य बिहारी लाल जी से आपका मिलना हुआ तथा आप आचार्य श्री के काव्य शिष्य हो गये। दिनोंदिन कविता लिखने का प्रवाह बढ़ चला। ब्रज भाषा में लिखे आपके अनेक छन्द सराहे जाने लगे। उन दिनों कवि सम्मेलनों में समस्या पूर्ति की प्रथा थी। आपने समस्या पूर्तियाँ कर कई सम्मेलनों में पदक प्राप्त किये।

आपने शिक्षण कार्य के साथ–साथ स्वाध्याय भी निरन्तर रखा



और स्वाध्यायी रूप में मिडिल मैट्रिक से लगाकर एम.ए. तक की परीक्षायें उत्तीर्ण की। एक बार बिजावर नगर के कवि सम्मेलन में समस्या पूर्ति का अवसर भी आप को प्राप्त हुआ।

आपने अपने काव्य गुरु आचार्य बिहारी से योग शिक्षा प्राप्त की। योग क्रियाओं का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करने आप सन् 1961 में बिहार में होने वाले अधिवेशन में सम्मिलित हुए और योगाचार्य मुनीश्वर श्री शिवकुमार जी से सम्पर्क स्थापित किया तब से निरन्तर योग प्रचार व योग शिक्षा का प्रसार करते आ रहे हैं।

आप सन् 1991 में 20 वर्ष माध्यमिक शाला के प्रधान अध्यापक पद के पश्चात् सेवानिवृत्त हो गये। आपके साथ आपकी पत्नी श्रीमती हरबाई एवं दो पुत्र डॉ0 ओम प्रकाश एवं आनंद प्रकाश तथा नातीगण सम्मिलित रूप से गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुये योग एवं काव्य रचना के साथ–साथ रोगियों की चिकित्सा का कार्य भी करते चले आ रहे हैं।

### समस्या 'वरसत है'

*गूँजित रहीं है जहाँ ध्वनि रण भेरिन कीं,*
*तहाँ पै मृदंग ताल राग सरसत है।*
*खनक सुनात रही खड़ग जँजीरन की,*
*झनक मजीरन की दिव्य दरसत है।।*
*'हरिहर' भाषै रही भीर रण वीरन की,*
*तहाँ धर्मवीर देख हिय हर्षत है।*
*जहाँ जुर जँग रहो मार मार रंग,*
*तहाँ आज राम रंग हो अभंग वरसत है।।*

किसी समय जहाँ युद्ध के नगाड़े बजते रहे वहाँ मृदंग की थाप

पर संगीत की ध्वनि चलती है। जहाँ पर कभी तलवारें और जंजीरों की खनक सुनाई देती थी, वहाँ आज मंजीरों आदि की झनकार सुनाई दे रही है। कवि हरिहर कहते हैं कि वीर योद्धाओं की इस धारा पर आज धर्मवीरों को देखकर हृदय प्रसन्न हो जाता है। जिस भूमि पर युद्ध हुआ करते थे और मारने–काटने की धूम रहती थी, वहीं पर आज राम–ध्वनि और भजनों को आनंद की वर्षा हो रही है।

## चेतावनी चौकड़िया

*जो तुम जनम अखारत खोहौ, बीज पापके बो हौ।*
*भजन भूलकें करम टुकनियां धरें मूड़ पै ढोहौ।।*
*सपने की सम्पत पावैं खां पाँव तानके सो हौ।*
*तौ वेतरनी तीर 'हरिहर' ठाड़े ठाड़े रो हौ।।*

यदि तुम व्यर्थ में समय नष्ट करोगे और पाप कर्म करोगे तो तुम्हें प्रभु का भजन भूलकर अपने कर्मों को साथ में लेकर चलना पड़ेगा। अर्थात् तुम्हारे कर्म तुम्हारे लिये भार बन जायेंगे। यदि तुम रात्रि रूपी संसार में निश्चिन्त होकर सोते हुए स्वप्न में सम्पत्ति पाने के प्रयास करोगे तो इस वैतरिणी नदी के किनारे पर खड़े–खड़े रोते रहोगे।

## सिंहावलोकनी चौकड़िया

*मूरख हरि की खबर विसारी, सारी उमर गुजारी।*
*जारी ना ममता की काटी लै के भजन कटारी।।*
*टारी खूब उमर वातन में विगरी नहीं सुधारी।*
*धारी नाहक देह 'हरिहर' भेजे न अवध बिहारी।।*

हे मूर्ख! पूरी उम्र बिना प्रभु का स्मरण किये बिता दी। तुमने भजन रूपी कटारी से ममता की जाली नहीं काटी। व्यर्थ की बातों में आयु के दिन बिता दिये और अपने उद्धार के लिये कुछ नहीं



किया। कवि हरिहर कहते हैं कि तुमने अवध बिहारी श्रीराम का भजन नहीं किया, तो व्यर्थ ही यह शरीर धारण किया।

## फाग चौकड़ी

*धँस के सपर तला में रइ है, एक नागरी नई है।*
*जलसे कढ़त लटैं चुचवातीं, शोभा जात न कइ है।।*
*ज्यों चन्दा कौ इमरत पीवे, नागन लिपट्या गइ हैं।*
*दमकत देह उरइयां लगतन, निचुर चुनरिया रइ है।।*
*चिपक गई चोली छाती है उमगत जोवन सइ है।*
*कमल कलिन खाँ मनो हरिहर, हुमक के चुन्नी दइ है।।*

एक नवल अनंगा नायिका तालाब में नहा रही है वह युवती स्नान करके तालाब के जल से बाहर आती है उस सद्यस्नाता नायिका की छटा का वर्णन है। पानी से निकलती नायिका के केश चोटी–चूँ रही है, उसकी शोभा वरनी नहीं जाती है जैसे चन्द्रमा का अमृत पीने हेतु नागिन चन्द्रमा से लिपट गई हो। प्रातः की कोमल धूप (उरइयां) लगते ही सारी निचुड़ रही है। उसकी छाती से चोली चिपक रही है और उसके नवीन वक्षस्थल के उभर रहे कामांग उठते हुए ऐसे दिख रहे हैं मानो कमल की कलियों की शोभा को हुमक कर चुनौती दे रहे हों।

## चौकड़ी (अमात्रिक)

*डग डग पग धर तन तन फरकत, नगन नगन रस ररकत।।*
*छलकत वदन मदन मद झलकत, लट लटकन रस ढरकत।।*
*दरपन पकर नवल तन लख लख, चपल नयन मन करखत।।*
*तनक न नवत पलक रस वरसत, छनछन मन हर हरखत।।*

यह छन्द मात्रा विहीन है। नव युवती नायिका का प्रत्येक अंग चलते–फिरते समय फरक रहा है, प्रत्येक अंग से रस झरता सा

दिखता है। शरीर पर कामदेव की मस्ती मानों छलकी जा रही हो। केश की लट लटक रही है जिससे दर्शक रस–विभोर हो जाता है। वह दर्पण में अपनी छटा देखती है और नेत्र उसके चपल हो जाते हैं। जो मन को अपनी ओर खींचते हैं। नेत्रों से रस की बरसात होती दिख रही है। वह नायिका अपने नेत्रों को अपलक रूप में रख रही है। उसका मन क्षण–क्षण में आनन्द की लहरें ले रहा है।

*भोरई डगर कुवल की डगरी, दबी कांखरी गगरी।*
*झाँकत झुकत जात झूमत सी, लली रूप की अगरी।।*
*गोरौ मुख कारे घूंघट में, शोभा समिटी सगरी।*
*जैसे पूनों के चन्दा यै – धनी बदरिया वगरी।।*
*चकचौधी रै गई ''हरीहर'', नये छैलन की नगरी।।*

एक नव यौवना प्रातःकाल ही पानी भरने हेतु कुवाँ के मार्ग पर चल रही है। उसकी काँख में गगरी दबी हुई है। वह बार–बार अगल बगल झुकती और इधर–उधर देखती हुई यौवन के मद में झूमती जा रही है। वह नवेली अति रूपा है, उसका मुख गौर वर्ण है। काली चुनरी के घूंघट में मानों सारा सौन्दर्य सँजोकर रखा हो। जैसे पूरनमासी के चन्द्रमा पर काले मेघों की छटा फैल रही है जिसे देखकर नव युवक रसिकों का समूह आश्चर्य में मग्न हो रहा है। नवल अनंगा नायिका के रूप में यह प्रेयसी अपनी यौवन उमंग से रसिक नायिकों का मन मोहित करती जाती है।

*इनपै जोर करें हैं ज्वानी, नित नई दमक दिखानी।*
*लाली छई गोरे गालन पै, चिकनई परत चुचानी।।*
*फरकत नग नग वदन छबीलौ, ररकत हँसतन वानी।*
*फूट परत रसकी धारा सी – जो तन कइ मुस्क्यानी।।*
*ज्यों भादों की नदी 'हरीहर', उमड़ रही उफनानी।।*

नायिका नवल वधू पर यौवन का आगमन हो गया है। उस पर



यौवन का प्रभाव परिलक्षित होने लगा है। नित्य नई–नई कान्ति देह पर दमकती जा रही है। गोरे मुख पर लालिमा की झलक दिखने लगी है तथा अंगों में स्निग्धता मानो चुँई पड़ रही हो। अंग–अंग में यौवन के प्रभाव से लहरें उठ रही हैं जिससे वे फड़क रहे हैं। बोलने में हँसी आ रही है जिससे वाणी अस्पष्ट होती दिख रही है। उसके थोड़े से मुस्काने से मानों रस (आनंद) की बाढ़ आ गई हो। नायिका की देह पर यौवन के चिन्ह उभरते जा रहे हैं जैसे भादों के मास में नदी में जल के आगमन से बाढ़ आ पड़ती है।

*चलतन लेत कमर लचकइयां, झुक रइ हर हर दइयां।*
*उभर उठत गदराने आंचल, उठतन गोरी बइयां।*
*गड़ कुइया परती गालन पै, लली की हँसतन मुइयां।।*
*इठलाती जातीं गुइयन संग, करती छूल छुलइयां।।*
*सबै लगत है इनें 'हरिहर', कबै उठा लै कइयां।।*

नायिका के चलने में पतली कमर बार–बार लचक पड़ती है। गोरे हाथों के ऊपर उठाने से यौवन के गदराये अंग उभरते दिखते हैं। हँसते समय नायिका के गालों में गोल गड्ढे (गड़कुइयां) पड़ते दिखते हैं। साथ की सहेलियों के साथ इतराती हुई लिपट–झपट तथा हँसी से ओत–प्रोत बातें करती चली जा रही है। सभी को इनकी यह झाँकी देखकर ऐसा लगने लगता है कि इन्हें उठाकर अपने गोदी में ले लें।

### हरिया (हरि+आ) सवैया

*इक हाथ लठारा की रोटी लयें, तेहि ऊपर मौन धरें हरिया।*
*सिर पै कुंडरी खाँ सुधार धरें, तेहि ऊपर पानी भरी घरिया।।*
*लगे तेज तुषार कौ झोंका 'हरिहर', लैबै समेट फटी फरिया।*
*वह भोरी लली गली जात चली, अरु कात चली हरिया हरि+आ।।*

एक ग्रामीण गोरी अपने हाथ पर लठारा (एक अनाज) की रूखी रोटी पर नमक की डली रखे हुये है। अपने सिर पर कुंडरी रखकर उस पर जल से भरी घरिया (छोटा घड़ा) रखे है। वह भोली नवेली जुंडी के खेत की रखवाली करने जा रही है। जब तेज शीतल पवन का झोंका लगता है तब फटी हुई ओढ़नी समेटकर ठंड भोगती है, वह भोली सुन्दरी मार्ग में चली जा रही है और चिड़िया भगाने के लिये प्रयुक्त बुन्देली शब्द हरिया हरिया (हरि+आ) पुकारती जाती है।

### अमात्रिक छंद

*चल, चल जगत जनक पद शरणन*
*भज मन भव भय हरणन।*
*कर कर श्रवन अमल यश छन छन*
*सफल करत जग करणन।।*
*तज सब भरम मगन मन बन कर*
*पकर कमल दल चरणन।।*
*नर तन रतन सरस यह 'हर हर'*
*बनत न करतन वरणन।।*

जगत पिता परमात्मा के चरणों की शरण में चलिये। हे मन! संसार में भय दूर करने वाले प्रभु का भजन करिये। प्रभु के पावन यश का गुणगान प्रतिक्षण सुनने पर जगतकर्ता भगवान जीवन सफल कर देते हैं। अपना सभी गर्व छोड़कर आनंदित मन से चरण कमलों की शरण में चला जा। कवि हरिहर कहते हैं कि इस मनुष्य शरीर रूपी रत्न के समान कुछ नहीं हो सकता, इसके महत्व का वर्णन नहीं किया जा सकता।



## डॉ. नारायण दास गुप्त 'कमलेश'

कवि डॉ. नारायण दास गुप्त 'कमलेश' का जन्म भिण्ड जिले के आलमपुर के एक वैश्य परिवार में 11 सितम्बर 1933 को हुआ। आपकी प्राथमिक शिक्षा आलमपुर में ही हुई। इसके अलावा एम.ए. हिन्दी तथा पीएच.डी. की डिग्री हासिल की। आपने आयुर्वेद वाचस्पति, आयुर्वेद रत्न तथा साहित्य रत्न की चिकित्सकीय उपाधियाँ हासिल की। आप सफल चिकित्सक, कवि, लेखक, पत्रकार तथा समाजसेवी हैं। आपकी रचनायें विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित व पुरस्कृत हुई हैं। आकाशवाणी केन्द्र इन्दौर, भोपाल, ग्वालियर तथा छतरपुर से रचनाओं का समय–समय पर प्रसारण होता रहता है। गहोई बंधु (मासिक) तथा भारती (साप्ताहिक) का संपादन किया। विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं में आपकी सम्बद्धता है। इनको जबलपुर, चित्रकूट, भोपाल, इन्दौर, सतना, समथर, सेंवढ़ा, भिण्ड, रौन तथा ग्वालियर की विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं ने सम्मानित भी किया है। आपकी दो कृतियाँ क्रमशः 'कवितायन' तथा 'गुलगुच' प्रकाशित हैं। 'मुक्तावली', 'आ गया गाँव' तथा 'हम भारत के बाल' अप्रकाशित

रचनायें हैं। आप वर्तमान में भी सामुद्रिक शास्त्र व फोटोग्राफी के शौक के साथ साहित्य सृजन में संलग्न हैं।

## विनायक वंदन

*अधम महान मैं हों, अधम उघारन आप,*
*गुरु–पितु–मातु–तात आप, मैं तो चेरौ हों।*
*आरत–अनाथ, रत स्वारथ में आठों याम,*
*बुद्धि को मलीन–हीन, दीनता सें घेरौ हों।।*
*जीव को जहाज मझधार में फँसौ है आज*
*काहू कौ सहारौ नाँहि तेरी और हेरौ हौं।*
*गह कें गरीब हाथ मोय निरवारो नाथ,*
*दासन कौ दास एक तुच्छ दास तेरौ हों।।*

मैं सबसे बड़ा पापी हूँ और आप पापियों को तारने वाले हो। आप गुरु, पिता, माता एवं बंधु हो, मैं तो आपका सेवक हूँ। मैं परेशान, बेसहारा तथा दिनरात स्वार्थ में संलग्न रहने वाला हूँ। मैं बुद्धिहीन हूँ जिससे गरीबी से ग्रस्त हूँ। मुझ जीव का जीवन रूपी जहाज आज संसार रूपी सागर की मंझधार में फँसा है और आपके सिवाय किसी का सहारा नहीं है इसीलिए सहायता कीजिए। मैं दासों का दास एक बहुत हीन तुम्हारा सेवक हूँ।

## जी भर आज बसंत मनेंहों

*विरहिन के मन सीरी समीरन नें,*
*सजनी सुन ताप बढ़ायौ।*
*ढायवे कों गढ़ मानिनी मान कौ,*
*तान कें काम कमान चढ़ायौ।।*
*हूक उठै दिन आवें वे याद,*



*जबै पिय के संग लाड़ लड़ायौ।*
*होबै बसंत सुहावन काहुकों*
*मो कों तो दुक्ख बढ़ावन आयो।।*

शीतल हवाओं के प्रवाह ने विरहिन नायिका के विरह का ताप बढ़ा दिया है। रूठी हुई नायिका का मान रूपी किला ध्वस्त करने हेतु कामदेव ने धनुष चढ़ाकर प्रहार किया है। इससे उस विरहिन नायिका के हृदय में हूक उन दिनों को याद करते उठ रही है, जो प्रिय के नेह में बिताये थे। यह बसन्त किसी के लिए सुहावना व मनभावन होगा, मेरे लिए तो यह दुखों को बढ़ाने हेतु आया है।

*अंत सें कंत हमारे पधारे,*
*उन्हें सखि आज बसंत बनें हों।*
*पीरौ उन्हें पहराय कें जामा मैं,*
*पीरे ही रंग पजामा रंगेंहों।।*
*प्रीतम–प्रीति के रंग में डूब कें,*
*मंत्र मनोज कौ आज जगेंहों।*
*गोरे पिया कों बनाय के पीरे में,*
*जी भर आज बसंत मनेंहों।।*

मेरे प्रिय आज बाहर से आए हैं। री सखी! मैं उन्हें आज बसंत बनाऊँगी। उन्हें पीला जामा पहनाकर पीले ही रंग का पजामा पहनाकर उसे रंगूँगी। प्रिय के प्रेम में आकंठ डूबकर कामदेव के मंत्र को सिद्ध करूँगी। गौरवर्ण के प्रिय को पीले रंग में रंगकर आज जी भरकर बसन्त मनाऊँगी।

## नई नायिकायें

(वियोगिनी वायरलेस ऑपरेटरनी)

*वायरलेस के तैस में आयकें, रोजईं धौंस जमावत हैं।*
*सखि काँसें फँसी इनके संग में, मोय मूर्ख–गँवार बतावत हैं।।*

*कॉन्टेक्ट करें सिगरे जग सें, हमसें कॉन्टेक्ट न वारत हैं।*
*वे तार के तार पै यार फिदा, घर कौ न सितार बजावत हैं।।*

वितन्तु (वायरलेस) के आवेश में आकर के उसकी धौंस (रौब) प्रतिदिन दिखाते हैं। सखी! मैं इनके साथ कहाँ से फँस गई हूँ, मुझे ये मूर्ख–गँवार कहते हैं। ये सारे संसार से सम्पर्क करते हैं किन्तु मुझसे संपर्क नहीं करते हैं। वे तार के काम करने पर आसक्त हैं किन्तु घर में मुझ सितार के तारों को झंकृत नहीं करते हैं।

(ओवरसियारनी)

*साइड पै नित जात सवेरे सें, साँझ कें हू घर आवत नाहीं।*
*आग लगै ऐसी ओवरसियरी में, टेम सें खाना हू खाबत नाहीं।*
*बेलन रोज घुमावत रोडपै, प्रेम कौ पंथ बुहारत नाहीं।*
*फटी–टूटी इमारतें भावें इन्हें, घर की नई गैलरी भावत नहीं।।*

प्रतिदिन प्रातः से कार्यस्थल पर जाकर संध्या तक घर नहीं लौटते। ऐसी उपयंत्री की नौकरी में आग लग जाये, ये समय से खाना भी नहीं ग्रहण कर पाते। रोड रोलर को सड़क पर प्रतिदिन चलाकर बनवाते हैं किन्तु प्रेम का रास्ता नहीं चलते। इनको जीर्ण–शीर्ण इमारतें अच्छी लगती हैं किन्तु घर में नई वीथिका नहीं सुहाती है।

## थानेदारनी

*रयँ गस्त में मस्त हमारे पिया, नहिं रातउ कें घर आवत हैं।*
*तफतीस औ कोर्ट की पेशिन में, रति रंग कौ वक्त गँवावत हैं।।*
*क्या जिन्दगी है थानेदारनी की, हम सेज परे पछताबत हैं।*
*जे जाय इलाके में मौज करें, हम रो–रो कें रेंन बितावत हैं।*

मेरे थानेदार पति गश्त देने में व्यस्त रहते हैं जिससे रात्रि में भी घर नहीं लौटते हैं। प्रकरणों की अन्वीक्षा तथा न्यायालयों की



उपस्थिति में पूरा समय व्यर्थ खोते हैं, यह समय रति प्रसंग का है। हम सेज पर बैठकर सोचते हैं कि थानेदार की पत्नी की जिन्दगी व्यर्थ है। वे तो अपने अधीनस्थ क्षेत्र में जाकर रंगरैलियाँ मनाते हैं और मैं रात्रि रो–रोकर गुजारती हूँ।

## डॉक्टरनी

*डॉक्टरी पढ़बे कों विदेश में, जायकें आधी जुआनी गँवाई।*
*लौट के आय बने बड़े सर्जन, सूदे लगें पर पूरे कसाई।।*
*मोय भुलाई वा सौत के फेर में, नाइट ड्यूटी में रात बिताई।*
*औरँन की तो दवाई करें, पर मेरी दवाई कों लेंय जम्हाई।।*

चिकित्सकीय ज्ञान अर्जित करने के लिए इन्होंने आधी युवावस्था व्यतीत कर दी, जब लौटकर आये तो बड़े शल्यज्ञ बन गये। लोगों को यह सीधे दिखते हैं किन्तु मुझे तो निष्ठुर लगते हैं। मुझे भुलाकर उस सौत के साथ रात्रिकालीन ड्यूटी में मौज मस्ती करते हैं किन्तु मेरी औषधि करने की स्थिति में जम्हाइयाँ लेते हैं।

## दर्दीले दोहे

*नेता चौकस बाज से, जनता चिरई अचेत।*
*जबहिं लगत मौका तबहिं, मार झपट्टा देत।।*

आज के नेता सजग शिकारी बाज तथा जनता लापरवाह चिड़िया के समान है। जैसे ही बाज को अवसर मिलता है वह झपटकर चिड़िया का शिकार कर लेता है।

*बहुत जमानों देख लऔ, ऐसो कबहुँ न आव।*
*पानी बिकत बजार में, रस–गोरस के भाव।।*

मैंने बहुत युग देखा किन्तु ऐसा समय कभी नहीं आया कि पानी दूध के भाव बिक रहा है।

*दो टकिया की नौकरी, महंगाई की मार।*
*भामिनी रोबै भिण्ड में, बस्तर में भरतार।।*

इस छोटी सी दो टका की नौकरी में और महँगाई के प्रभाव से पत्नी भिण्ड में रहकर रुदन करती है और पति बस्तर में पदस्थ हो रुंदन करते हैं।

*जिय जारत आतप कढ़ौ, अँखियन सें बरसात।*
*सीसी करतन बीत गयौ, शीत कपाकें गात।।*

विरहिन नायिका कहती है कि इस शीत ऋतु में भी मेरे हृदय का ताप बढ़ने से आँखों से अश्रुधार प्रवाहित हो रही है। सीसी करके ही शीतऋतु बिना प्रिय के बीत गई है।

*भारतवासी काय पै, इतनो गरत गरूर।*
*भेंट आग की हो रई, बहुयें बिना कसूर।।*

भारतवासियो आप किन कृत्यों पर इतना गर्व कर रहे हो? आज बेकसूर बहुएँ दहेज की बलिवेदी पर आग की भेंट चढ़ रही हैं, कुछ तो शर्म करो।



# हरि विष्णु अवस्थी

श्री हरिविष्णु अवस्थी का जन्म तत्कालीन ओरछा राज्य के टीकमगढ़ में फाल्गुन कृष्ण पंचमी संवत् 1989 अर्थात् 15 फरवरी 1933 को हुआ, आपके पिताजी का नाम पं. रामकिशोर अवस्थी तथा माताजी का नाम श्रीमती काशीबाई था। आपकी प्रारंभिक शिक्षा टीकमगढ़ में ही हुई। आपने 1948 में आठवीं कक्षा उत्तीर्ण की, इसके बाद 1949 से शिक्षा विभाग के विभिन्न पदों (सहायक शिक्षक, प्रधानाध्यापक तथा सहायक जिला विद्यालय निरीक्षक) पर काम किया। 31 मई 1994 को सेवानिवृत्त हो, आप साहित्य व समाजसेवा में संलग्न हैं। आपने स्वाध्यायी छात्र के रूप में विश्वविद्यालयीन उपाधियाँ अर्जित कीं। आप विद्यार्थी जीवन से ही कवितायें लिखते रहे हैं। 1951 से रचनायें लिखीं जो देश की अनेक पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। आपकी तीन कृतियाँ 'बुन्देली वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई', 'संत कबीर' तथा 'कहत कबरी सुनो भई साधो' प्रकाशित हैं। 'भूली बिसरी भूलें', 'कलम और करवाल के धनी छत्रसाल', 'छत्रसाल की जन्म भूमि महेवा', 'टीकमगढ़ नगर उद्भव एवं विकास', 'बुन्देलखण्ड में हनुमंत उपासना एवं विग्रह' तथा 'बुन्देलखण्ड में शौर्य उपासना

एवं सूर्य मंदिर' अप्रकाशित कृतियाँ हैं। आपको साहित्य वाचस्पति, विद्या वाचस्पति की उपाधियों से विभूषित किया गया है। आकाशवाणी छतरपुर से समय–समय पर आपकी रचनाओं का प्रसारण होता रहता है। आप विभिन्न साहित्यिक तथा समाजसेवा में संलग्न संस्थाओं के सक्रिय पदाधिकारी हैं।

*टेर–टेर कैं हारे कनइया आय न मोरे द्वारे।*
*कभउ कहत गउअन में जाने, जसुदा नंद दुलारे।।*
*कुंजन बाल सखन संग डोलत, मोहन मुरली बारे।*
*खेलत गैंद गिरी जमना में, नाग नाथ लय कारे।*
*सखियन के संग रास रचाउत, किशन कनइया प्यारे।*
*गैल चलत सखियन खों छेड़त, तुम छलिया मतवारे।।*
*जब–जब कई घरै आवे की, बना बहाने टारे।*
*सौलों गिनती काँनों करिये, हा–हा कर–कर हारे।।*
*तनक पसीजौ अब तो मोहन, कारी कमरी बारे।*
*पलक पाँवड़े बिछा खड़े हैं जिन तरसाओ प्यारे।।*

हे कृष्ण! मैं तुम्हें बार–बार पुकार कर थक गया हूँ किन्तु आप मेरे दरवाजे नहीं पधारे हैं। जशोदा व नंद के प्रिय कभी कहते हो कि मुझे गायों के साथ जाना है। कभी मुरली लेकर कुंजों में बाल सखाओं के साथ घूमते हो। आपके खेलते समय गेंद यमुना में गिर गई तो आपने कालिया को नाथ लिया। आप कभी कृष्ण कन्हैया बनकर गोपिकाओं के साथ रहस लीला करते हो। आप कभी राह चलती सखियों को मतवाला छलिया बनकर छेड़ते हो। जब–जब मैंने आपसे घर आने की कही तभी आपने कोई न कोई बहाना बनाकर टाल दिया। मैं सौ की गिनती कहाँ तक गिनाऊँ? मैं विनय करते हुए थक गया हूँ। हे कृष्ण! अब थोड़ी सी दया दिखाकर पध ाार जाओ। मैं पलकों रूपी पाँवड़े बिछाये खड़ा हूँ। अब मत तरसाओ।



*हरि सें करकें प्रीति पसतानी।*
*हटकी हती सास नंदन ने, बात एक न मानी।*
*सपनन सुना परत है गुइयाँ, मुरली टेर सुहानी।।*
*वे निर्मोही संग छोड़ दें, ऐसी कभउँ न जानी।*
*कछु न सुहावै उन बिन मोखों, रुचे न रोटी पानी।।*
*श्याम बिना मोय कल न परत है फिरत रहत बोरानी।*
*मुरली छुड़ा कमरिया झटकी कभउँ रार न ठानी।।*
*अब कै रूठे बे सखि ऐसें, विनती एक न मानी।*
*हे हरि दया करौ अब मो पै तुमरे हात बिकानी।।*

मैं कृष्ण से प्रेम करके पछता रही हूँ। मुझे सास व ननद ने मना किया था किन्तु मैंने उनकी एक भी बात नहीं मानी। सखी, मुझे अब स्वप्न में ही बाँसुरी की मधुर टेर सुनाई देती हैं। वे निर्मोही होकर इस तरह से साथ छोड़ देंगे ऐसा मैंने कभी सोचा नहीं था। मुझे उनके बिना कुछ भी अच्छा नहीं लगता, न ही खाना–पीना रुचिकर लगता है। मुझे कृष्ण के बिना चैन नहीं मिलता है, मैं पागलों की तरह घूमती रहती हूँ। मैं कभी भी न मुरली छुड़ाई न कमरिया छुड़ाई और न ही कभी झगड़ा किया। हे सखी! वे अब की बार इतने रूठ गए हैं कि मेरी एक भी प्रार्थना नहीं सुन रहे हैं। हे दयानिधि! आप मुझ पर दया कीजिए, मैं तुम्हारे हाथ बिक चुकी हूँ।

*लगा आइ मैं तो हरि प्यारे सें नेहा।*
*एक दिना जमना तट गइती छी लई मोरी देहा।*
*बो दिन बिसरत नइयाँ मोखौं तबइ सैं बड़ो सनेहा।*
*बरसन मो संग रास रचाई, बड़ा बड़ा कैं नेहा।*
*अब तो उनने ठान ठान लइ, आय न मोरे गेहा।।*
*जो दुख किये सुनाबें गुइयाँ, अखियन बरसत मेहा।*
*ऐसौ तंत–टोटका कर दो, बे आवें मोरे गेहा।।*

मैं एक दिन कृष्ण से प्रेम का रिश्ता जोड़ आई हूँ। मैं एक दिन यमुना के किनारे गई थी तो वहाँ उन्होंने मेरी देह का स्पर्श कर लिया। वह दिन मुझे विस्मृत नहीं होता, तभी से प्रेम का रिश्ता और बढ़ गया है। उन्होंने मुझसे प्रेम बढ़ाकर बरसों तक रास रचाई और अब प्रतिज्ञा कर ली है कि वे मेरे घर तो नहीं आयेंगे। उन्होंने जो दुख दिए हैं उनको सुनाने में मेरी आँखों में आँसू आ जाते हैं। तुम कोई ऐसा जादू–टोना कर दो जिससे वे (कृष्ण) मेरे घर पधार जायें।

*दरश बिन तलफत राधा प्यारी।*
*रात–दिना आँखन में झूलत बिसरी खबर हमारी।*
*नई पटरानी मिल गई कौनउँ, मोरी खबर बिसारी।*
*सपनन रोज दिखात रातभर, का गत करी मुरारी।*
*दूर रनै तो मो सैं तुम खौं, काय मोहनी डारी।।*
*करकैं प्रीत हमें जिन छोड़ौ हुहये हँसी तुमारी।*
*कौन सहारौ दै है मोखों फिरहों मारी–मारी।।*
*कैसे आहो मोय बता दो, पूँछ–पूँछ कैं हारी।*
*हे हरि तुमरे पाँव परत हों अब सुद लेव हमारी।।*

दर्शनों के बिना राधा प्यारी तड़फ रही हैं। उन्होंने मुझे भुला दिया है किन्तु वे मेरी आँखों में रातदिन झूलते हैं। लगता है कि उन्हें कोई पटरानी मिल गई है जिससे उन्होंने मुझे भुला दिया है। वे मुझे रोज रात्रि भर स्वप्न में दिखते हैं। उन्होंने मेरी हालत खराब कर दी है। यदि तुम्हें इसी तरह दूर रहना था तो तुमने क्यों मोहनी रूप से मेरा मन मोहा। यदि आपने प्रेम करके मुझे छोड़ दिया तो संसार में आपकी ही हँसी होगी। मुझे कौन आश्रय देगा? मैं यहाँ–वहाँ मारी–मारी भटक रही हूँ। आप कैसे पधारेंगे? यह मुझे बता दीजिए। मैं पूछ–पूछ कर हार गई हूँ। हे कृष्ण! मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ अब आप मेरी सुधि ले लीजिए।



*भजन में लगत न एक छिदाम सुमर लो सीतापति श्री राम।*
*अपने संग कछू नइँ जाने धरो रहे धन धाम।*
*जो तन है माटी की मूरत, बिकै न कोनउँ दाम।।*
*जाने कबै किते हो जाने, ई को काम तमाम।*
*पशू चाम की बनत पनइयाँ, वृथा मनुस को चाम।।*
*तिरिया बैना कुटुम कवीला, कोऊ न आबे काम।*
*बिरधापन रोगन नें घेरौं, कड़ौ न मुख सें राम।।*
*आज मरे कल दिना दूसरौ लेय न कोऊ नाम।*
*एक राम को नाम सार है, भज लो आठों याम।।*

भजन करने में एक छदाम (मुद्रा की लघुतम इकाई) व्यय नहीं होता है इसलिए सीता पति श्रीराम का स्मरण कर लीजिए। अपने साथ कुछ नहीं जाएगा सभी धन व वैभव यहाँ रखे रह जाएंगे। यह तन मिट्टी की मूर्ति के समान है, मृत्यु होने पर मूल्यहीन हो जाएगा। कब और कहाँ इसका अन्त हो जाएगा, अज्ञात है। पशु चर्म के तो जूता भी बन जाते हैं किन्तु मनुष्य चर्म इस मामले में भी व्यर्थ है। पत्नी, बहिन, परिवार व समाज कोई काम नहीं आता है। वृद्धावस्था में रोग ग्रस्त होने से मुख से राम शब्द नहीं निकलता है। मरने के दूसरे ही दिन से कोई नाम लेने वाला नहीं रहता है। एक मात्र राम नाम का स्मरण ही संसार का सारांश है इसी को दिन रात भजना चाहिए।

*कछू तो कऔं, काय कनइया कारौ।*
*तनको कारौ मन को कारौ, कारी अलकन वारौ।।*
*माता जसोदा गोरीं नारीं, नंद लय रंग बारौ।*
*दिआ जरैं उजयारै होवे, परबै काजर कारौ।।*
*बसो रात राधे की आँखन, निश दिन प्रान प्यारौ।*
*कजरारीं अखियाँ राधा कीं, ऐइ सैं पर गओ कारौ।*

*जो कोउ संग करै करिया कौ, पर जैहै बो कारौ।*
*राधा बचीं रहो करियन सें ऐइ में भलौं तुमारौ।*

कुछ तो कहिए कि कृष्ण काले क्यों हैं? ये शरीर व मन के काले हैं इनकी केश राशि भी काली है। माता यशोदा तो गौर वर्ण हैं, नन्द का रंग कृष्ण लिये हैं। दीपक जलने से प्रकाश फैलता है और उसकी लौ की कालिमा से काला काजल बनता है। प्रतिदिन प्राणों से प्रिय कृष्ण राधा की आँखों में बसे रहते हैं। राधा की आँखें कजरारी (काजलयुक्त) हैं इसीलिए कृष्ण काले पड़ गए हैं। यदि कोई इस काले रंग वाले की संगत करेगा, तो वह भी काला पड़ जाएगा। राधिका तुम इस काले रंग वाले से सावधान रहना, इसी में तुम्हारी भलाई है।

*भोरइ सैं बादर सी गरजैं, फिर वे मूड़ फिकारे जू।*
*सास जिठानी का देवरानी, सबकी कॉय उतारे जू।।*
*देउर–जेठ की का बिसाँत है ससुरा खों ललकारे जू।*
*घण्टन दौरें ठांड़ी रैबें छैलन कोद निहारे जू।।*
*ऐसी बऊ जा आ गई घर में सबके कंडा काड़े जू।*
*सबरे मूड़ पकर कैं रो रए तर–तर असुआ ढारें जू।।*

प्रातः से ही बादलों जैसी गर्जना करती है और सिर खोले (सिर पर बिना पल्लू डाले) घूमती हैं। सास, जेठानी और देवरानी की कॉगें उतारती हैं। देवर, जेठ की हैसियत ही क्या? वह ससुर को भी ललकारती है। घण्टों तक दरवाजे पर खड़ी होकर अपने छैलों (नायकों) को निहारती रहती हैं। ऐसी बहू घर में आ गई है जो सबको गालियाँ देती हैं। परिवार के सभी सदस्य अपना सिर पकड़कर रो रहे हैं।



## शंकर लाल वर्मा 'ललितेश'

कविवर शंकर लाल वर्मा का जन्म सन् 1933 ई. में छतरपुर में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री बेनीकवि था। पिताजी एक अच्छे कवि थे और बेनी कवि के नाम से जाने जाते थे। आर्थिक स्थिति ठीक न होने से शिक्षा–दीक्षा की कोई ठीक व्यवस्था शंकर लाल वर्मा की न हो सकी, फिर भी प्रारंभिक शिक्षा छतरपुर की पाठशाला में पूरी की।

जीवन–यापन के लिये इधर–उधर सेवाकार्य की तलाश करने लगे। फौज में अस्थाई फुटकर कार्य मिला, जिसमें झाँसी, नासिक आदि स्थानों पर रहना पड़ा, किन्तु पिताजी के देहावसान के बाद वापिस घर आ गये और बाल काटने वाला पुश्तैनी कार्य प्रारंभ कर दिया। यही कार्य अंतिम समय तक करते रहे। बाल काटते हुए भी कविता की पंक्ति गुनगुनाते रहना उनका स्वभाव बन गया था।

साहित्य में रुचि पिताजी के कवि होने के कारण भी थी और छतरपुर के साहित्यिक अखाड़ों को भी इसका श्रेय जाता है। पं. गंगाधर व्यास की पार्टी के सदस्य निकट ही थे, कुछ प्रभाव पड़ना

स्वाभाविक था। इसी समय बिहारी मंडल में जवाबी कीर्तन लिखे और धीरे–धीरे साहित्य लेखन प्रारंभ हुआ। कई विधाओं में लिखा। मूल रूप से आप श्री कृष्ण के उपासक थे।

म.प्र. शासन के सहयोग से दक्षिण भारत–भ्रमण किया। बांदा के डी.ए.वी. इण्टर कालेज में आयोजित (86–87 में) समस्या पूर्ति में प्रथम स्थान प्राप्त किया। एक जनवरी 1988 को संतोष सिंह बुन्देला साहित्य परिषद छतरपुर ने सम्मानित किया। मेला जल विहार के आयोजित अखिल भारतीय कवि सम्मेलन में भी सन् 1989–90 में सम्मानित किया गया।

आपकी रचनाओं में केवल 'मीरा रस माधुरी' प्रकाशित हुई है। शेष सभी रचनायें गायकों के बस्तों में है। कुछ उनके पुत्र के पास देखने को मिली।

दिनांक 19–9–1995 में कवि 'ललितेश' ने अपना शरीर छोड़ दिया।

## ख्याल (रंगत)

*करतूत कहा इनकी कइये या दइये दोस समैया को।*
*कजरारी अंखियन हेर हेर कारो कर कियो कन्हैया को।।*
*केसर कस्तूरी लेपन कर उपटन कर कर कें हारी मैं*
*फिर राई नौन लैकर कर में लालन की नजर उतारी मैं,*
*गुनिया ब्रज के सब बुला बुला गुन के गुनवान विचारी मैं,*
*उपचार अनेकन करे श्याम को झरा झरा विथ धारी मैं*
*उन चन्द्रमुखीनन चितवन में चित हर लओ मुकुट धरैया को।*
*कजरारी अंखियन हेर हेर..... ।। 1।।*



*घर सें लै जातीं टेर टेर अपने घर नैन इसारन में*
*गैया दुहवे के हेत सखीं लै जातीं पकर उसारन में*
*तकती तन उनको बेर बेर हंस हेर हेर हिसकारन में*
*ब्रजवारन जे हाल लखे डूबी मैं विमल विचारन में*
*गोरी गोरी ग्वालन छोरी निरखे जिम सरद जुन्हैया को।*
*कजरारी अंखियन हेर हेर..... ।। 2।।*
*आतीं नित लाख बहाने कर सब भामिन बन बनकें भोरी,*
*आपन सज्जन अरु साव बनीं लालन को लगातीं हैं चोरी,*
*कोउ कहैं हमारे चीर हरे कोउ कहै गगर फोरी मोरी,*
*कोउ कहै लाज टोरी मोरी कोउ कहती कीनी बरजोरी।*
*कोउ कहती उचका दइ गइया छोरो घनश्याम लवैया को।*
*कजरारी अंखियन हेर हेर..... ।। 3।।*
*ग्वालन की कहिये चाल ढाल चंचल चितवनियां है बांकी*
*इतने श्रृंगार सजे तन पै हो इन्द्र अप्सरा की झांकी*
*झांकी को झांक झीक झिझकी, यैसी न झांकी उपमा की*
*झांकी श्री कृष्ण राधिका की, मनहरन मनोहर सुखमां की*
*ललितेश हिये बिच वास करें, वे पार करें मोरि नैइया की।*
*कजरारी अंखियन हेर हेर..... ।। 4।।*

यशोदा जी कहती हैं कि इनकी (ब्रजांगनाओं की) करनी को क्या कहें अथवा आज के समय को क्या दोष दिया जाय ? इन्होंने अपनी काली–काली (कज्जलित) आँखों से बार–बार देखकर मेरे श्री कृष्ण को काला कर दिया है।

केशर और कस्तूरी का अंगराग बनाकर मैं इसके शरीर पर लेपन कर–कर के थक गई, फिर राई और नमक हाथ में लेकर अपने पुत्र की नजर भी उतारी, इसके बाद ब्रज में जो मंत्र विधा में निपुण हैं ऐसे जानने वालों को और सोच समझकर अन्य जानकारों को बुलाया, उनसे विविध प्रकार की चिकित्सा कराई और झाड़–फूँक

भी कराई। उन चन्द्रमा से सुन्दर मुखवाली ब्रजांगनाओं ने कटाक्ष कर इस मोर मुकुट धारण करने वाले मेरे लाल के मन का हरण कर लिया है।

आँखों के संकेत से बुला–बुला कर यहाँ से (घर से) अपने घर ले जाती हैं। गाय लगाने के बहाने से पकड़कर गाय बांधने वाले घर में (एकान्त हेतु) ले जाती है। वहाँ पर ले जाकर उनके सुन्दर शरीर को बारबार निहारती हैं और प्रतिस्पर्धा में देख–देखकर हँसती है। ब्रजवनिताओं का यह हाल देखकर मैं पावन विचारों में डूब जाती हूँ। ग्वालों की सुन्दर नव युवतियाँ भी इस तरह देखती हैं जैसे शरद की पूर्णिमा के चन्द्रमा को देख रही हों।

प्रतिदिन लाखों बहाने बनाते हुए सरल बनकर ये भामिनी (स्त्रियाँ) यहाँ आती हैं। स्वयं तो बहुत सभ्य और साहूकार बनती हैं और मेरे पुत्र को चोरी लगाती हैं। कोई कहती है हमारे वस्त्र को उठा ले गया, कोई कहती है कि हमारा घट तोड़ दिया, कोई कहती है कि मेरी लाज (लज्जा शर्म) तोड़ दी, कोई कहती है कि मेरे साथ जबरदस्ती की है, कोई कहती है मेरी गाय उचका दी, कोई कहती है कि कृष्ण ने बछड़े को छोड़ दिया।

ब्रजांगनाओं की चाल–चलन को क्या कहा जाय ? इनका चंचल नेत्रों से तिरछा देखना बड़ा लुभावना है, शरीर पर इतने श्रृँगार करती हैं, जैसे देवराज इन्द्र की देवांगना हो, इनकी झाँकी को बार–बार देखने पर भी कोई उपमा समझ में नहीं आती – कवि ललितेश कहते हैं कि इससे भी सुन्दर सुखदायी और मन को मोहित करने वाली श्री कृष्ण राधिका की जोड़ी है। वे दोनों मेरे हृदय में निवास करें और मेरी नाव भवसागर से पार करें।



## ख्याल (रसिया)

*अंग उमंग उठी होरी की गोपी ग्वालन में।*
*मलत गुलाल गुपाल पकर कर गोरे गालन में।।*
*नयन मिलाय हाय चितवन में जादू सौ डारै।*
*मधुर मधुर मुरली में मोहनी मंत्रन उच्चारै।।*
*भर भर के केशर रंग गंग सी श्याम शीश ढारै।*
*झोरी भरें गुलाल लाल मूठन पै मुठ मारै।।*
*सनमुख सेंट पिचक की बचौ न घालन में।*
*मलत गुलाल गुपाल पकर कर गोरे गालन में।। 1।।*
*विन्द्रावन की कुंज कुंज में नटवर नंद किशोर।*
*संग सखा लीनें मग डोलत श्यामलिया चितचोर।।*
*छैल छबीलौ छलिया सजनी तकै सांझ ना भोर।*
*पकर पकर अपने रंग जबरइ कर देवै सरबोर।।*
*भूल भटक ना जैइयो नइ पर जैहौ जालन में।*
*मलत गुलाल गुपाल..... ।। 2।।*
*मनमोहन मुस्क्यान मधुर मन मोहै नागरिया।*
*छाजत छटा छबीली छब की छलकत गागरिया।।*
*मोर मुकुट पीताम्बर कछनी कांधे कामरिया।*
*छवि की छटा निरख नैनन सों मैं भई बाबरिया।।*
*चाली चोर चबाइन के मैं पर गई चालन में।*
*मलत गुलाल गुपाल..... ।। 3।।*
*माखन चोर कनैया चूनर चोर बोर कीनी।*
*जबरइ पकर गुलाल लाल ने गालन मल दीनी।।*
*बारबार विनती उनसें कर जोर जोर कीनी।*
*बनसी के सम श्याम पकर हिय सों लिपटा लीनी।।*
*व्यास कृपा ललितेश ख्याल कयें नइ नइ चालन में।*
*मलत गुलाल गुपाल..... ।। 4।।*

होली खेलने की चाह और क्रीड़ा की आकांक्षा सहित गोप और ब्रज वनिताओं के मन में उत्साह भर आया। श्री कृष्ण उधर गोरे–गोरे गालों में पकड़–पकड़ कर गुलाल मल रहे हैं।

आँखों में आँखें डालकर जब देखते हैं तो जादू सा प्रभाव होता है। बाँसुरी की मधुर–मधुर ध्वनि ऐसी प्रभावी है जैसे मंत्र का उच्चारण हो रहा हो, केशरिया रंग भर–भर कर श्यामसुन्दर सबके सिर से गंगा सी बहा रहे हैं और झोरी (थैले) में गुलाल भरे हुए हैं जिसे वे मुट्ठी में भरकर बार–बार मुँह पर मार रहे हैं। सीधे सामने पिचकारी की धारा ऐसी चलाते हैं कि कोई नहीं बच पाता।

हे सजनी! वृन्दावन की प्रत्येक कुंज में चतुर चित्तहरण नंदलाल कृष्ण अपने साथियों को साथ लिये घूम रहा है। वह सुन्दर छैला छल करने में निपुण हैं वह शाम–सबेरा नहीं देखता, जब भी मिल जाय पकड़कर तुरन्त अपने रंग में पूरी तरह रंग लेता है। भूलकर भी उसकी तरफ न चली जाना अन्यथा उसके जाल में फँस जाओगी।

हे सजनी! मनमोहन श्री कृष्ण की मधुर मुस्कान मन मोहित कर लेती है उसकी सुन्दरता ऐसी शोभा पा रही है जैसे सौन्दर्य की भरी गागर बार–बार छलक जाती हो। सिर पर मोर पंख का मुकुट धारण किये हैं, पीली धोती पहने हुए हैं और कंधे पर कमरी डाले हैं। इन आँखों से इस शोभा की आभा देखकर मैं पागल हो गई और उस पर चितचोर की झूठीं बातों में फँस गई।

माखन चुराने वाले कृष्ण ने मेरी चुनरी को पूरी तरह भिगो दिया और जबरदस्ती पकड़ कर मेरे गोरे गालों पर गुलाल मल दी। मैंने हाथ जोड़कर बार–बार उनसे अनुनय विनय की फिर भी उन्होंने बाँसुरी की तरह मुझे भी हृदय से चिपका लिया। व्यास की कृपा से ललितेश ने नई–नई तरह के ख्याल लिखे हैं।



## कवित्त (घनाक्षरी)

*पूजन गईती दोज रोजऊँ की भांत आज,*
*साज के समाज ब्रजराज खड़े खोरी में।*
*जानकें अकेली गल मेली नंदलाल बांह,*
*कीन्हीं बरजोरी लाख लाख बरजोरी मैं।।*
*बांह झकझोरी मोरी कंचुकी मरोरी*
*अंग अंग सरवोरी घनश्याम रंग रोरी में।*
*भांत भांत कर जोरी ललितेश कै निहोरी और,*
*बोरी सब लाज ब्रजराज आज होरी में।।*

(मूल पाण्डुलिपि से)

नित्य की भाँति आज जब मैं दोज का पूजन करने गई थी तो गली में कृष्ण अपने सखाओं के साथ खड़े थे। मुझे अकेला समझकर मेरे गले में अपनी बाँह डाल दी और मैंने अनेक विधि से प्रतिकार किया किन्तु उन्होंने मेरे साथ जबरदस्ती (बरजोरी) की। मेरी बाँह झटककर मेरी चोरी मरोरी और मेरे पूरे शरीर को रंग–रोरी से सराबोर कर दिया। कवि ललितेश का कथन है कि नायिका कहती है कि मैंने अनेक प्रकार से बार–बार हाथ जोड़कर विनती की किन्तु ब्रजराज कृष्ण ने आज होरी में सब मान–मर्यादा को डुबो दिया।

## फाग

*बदरा घुमड़ रहे बदरारे जैसें गज मतवारे।*
*जे बदराय करत हैं मो संग धरत रूप विकरारे।*
*गरज रहे चारउ ओरन सें दे रये धोंस धुकारे।*
*फिर फिर घिर घिर आयें धरन पै बरसत झिरी लगारे।*
*कह ललितेश पिया पावस में जा परदेश पधारे।।*

मदमत्त हाथी की तरह ये निकृष्ट बादल मंडरा रहे हैं। ये

विकराल रूप धारण कर मेरे साथ बुरा व्यवहार करते हैं। चारों ओर से घेरकर गर्जना करते हुए मुझे गड़गड़ाहट के साथ घुड़की दे रहे हैं। बार–बार पृथ्वी के चारों ओर घिर–घिर कर तेजी से लगातार बरसते हैं। कवि ललितेश का कथन है कि नायिका कहती है कि ऐसी वर्षा ऋतु में प्रियतम विदेश चले गये हैं।

*बदरा पावस के उमड़ाने घूम रहे मस्ताने।*
*लियें फौज मेघन की संग में जंग करन के लानें।*
*बदली ढाल बिजुरिया तेगा इन्द्र धनुष कर तानें।*
*सरसर वर्षा रये जल सर से गरज गरज मनमाने।।*
*मड़रा रये स्वतंत्र गगन में लगे आतंक मचानें।*
*कह ललतेश एक विरहिन पै इतने बांधे तानें।।*

(उपर्युक्त सभी छंद सौजन्य से : श्री नारायण वर्मा)

वर्षाकाल के बादल छा गये हैं और मदमत्त होकर घूम रहे हैं। बादलों की घटायें एक साथ दौड़ती–सी लगती हैं कि युद्ध के लिये सेना आ गई हो। छोटी बादल की टुकड़ी मानो उसकी ढाल हैं, चपला उसका तेगा है और इन्द्रधनुष को चढ़ाये हुए भीषण ध्वनि के साथ लगातार जल रूपी वाणों की वर्षा कर रहा है। वे स्वतंत्र मन से आकाश में चारों ओर घूमते हुए आतंक मचाये हैं। ललितेश कवि कहते हैं कि अकेली विरहिणी पर इतने सूत्रों से बंधन बाँध दिया है।



## हरगोविन्द त्रिपाठी 'पुष्प'

श्री हरगोविन्द त्रिपाठी 'पुष्प' का जन्म दिनांक 11 सितम्बर सन् 1934 ई. को पृथ्वीपुर जिला टीकमगढ़ में हुआ। आपके पिता का नाम पं. श्री राजाराम त्रिपाठी था।

'पुष्प' जी अपनी तरुणाई में ही कविता के क्षेत्र में स्थापित हो चुके थे। बहुमुखी प्रतिभा के धनी होने के कारण शिक्षक पद पर कार्यरत रहते हुए भी वे 'दैनिक जागरण' झाँसी के साथ ही साथ अन्य पत्रों में भी अपनी रचनाओं के साथ स्थानीय समाचार भी प्रकाशनार्थ भेजते रहते थे। लम्बे समय तक विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं से जुड़े रहने के फलस्वरूप 'पुष्प' पूरी तरह 'पत्रकार' भी हो गए विभिन्न समाचार पत्रों एवं संवाद एजेंसियों से सम्बद्ध होने के कारण उनकी गणना बुन्देलखण्ड के निष्ठावान एवं साहसी पत्रकारों में होने लगी।

पुष्प जी की प्रकाशित कृतियाँ – 1. तुलसीदल, 2. विरहणी (खण्ड काव्य) हैं।

बुन्देलखण्ड साहित्य परिषद टीकमगढ़ के संस्थापक सदस्य

हैं तथा वर्तमान समय में वे उसके सचिव हैं। गत कुछ माहों से अस्वस्थ होने के कारण वे अपने गृह नगर पृथ्वीपुर में रहकर स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

*अपनी सबइ बहोरी, उनने एक न मानी मोरी।*
*पइंयाँ पर हा–हा कर हारी, तोऊ करी बरजोरी।।*
*हाँत गरे में डार पकर लऔ लिपड़–झपड़ झनकोरी।*
*हटकत–हटकत दिउरा बुजा दऔ, मन की करकै छोरी।।*

इन्होंने सभी बातें थोपीं, मेरी एक भी बात नहीं मानी। मैं उनके पैर पड़–पड़कर हार गई किन्तु उन्होंने एक न सुन जबरदस्ती की। पहले हाथ गले में डाला फिर पकड़ लिया उन्होंने लिपट झपटकर झकझोर दिया। मना करने के बाद भी उन्होंने दीपक बुझाकर अपनी मनमानी करके ही छोड़ा।

*रुच रुच रूप सवारौं, बिधना अपने हाँत सिंगारौ।*
*दोउ अँखियाँ हिन्ना कीं दै दईं सुअना नाक बिठारौ।।*
*ओंठन पै गुलाब की पाँखें, ठोड़ी पै तिल न्यारौ।*
*ऐसो लगत पुरैन फूल पै, बैठो मोंरा कारौ।।*
*जुवना दोउ मडियन के कलशा, देश हिये में सालौ।*
*करया पतरो नाहर जैसौं, पनछीलौ तन सारौ।।*
*इनपै तनक निगा के परतइँ, बिलुर जात गैलारौ।*
*बूड़ों जिउ जुआन फिर हौ गऔ, बिसरत नाइँ बिसारौ।।*

विधाता ने अपने हाथों से तुम्हारा श्रृँगार रुच–रुचकर किया है। दोनों नेत्र हिरणों की भाँति व नासिका तोता की तरह दी है। ओठों पर गुलाब की पंखुड़ियाँ, ठुड्ढी पर अनोखा तिल दे दिया जिसे



देखकर लगता है कि कमल पत्र के ऊपर काले रंग का भ्रमर बैठा हो। दोनों स्तन मंदिर के कलशों की भांति हैं जो सीधे हृदय में सालते हैं। कमर सिंह जैसी पतली तथा समस्त शरीर सुडौल है। इनके इस सौन्दर्य पर दृष्टि पड़ते ही राहगीर अपना रास्ता भूल जाता है। इन्हें देखकर वृद्ध भी अपने को युवा महसूस करते हैं तथा इन्हें इनका सौन्दर्य विस्मृत नहीं होता है।

## गोविन्द सिंह यदुवंशी

बुन्देली के सिद्धहस्त कविवर श्री गोविन्द सिंह यदुवंशी का जन्म पन्ना में देव प्रबोधनी एकादशी सम्वत् 1935 को हुआ। इनके पिता जी का नाम श्री खलक सिंह तथा माता जी का नाम श्रीमती यशोदा देवी था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा पन्ना में ही हुई, बाद में आपने डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर से बी.ए. किया। शिक्षा पूरी करने पर शिक्षक के रूप में नौकरी की। आपमें कविता लिखने की प्रवृत्ति बचपन से ही रही। इनका खजुराहो पर आधारित बुन्देली खण्डकाव्य 'घुँघरू बिन ककरन के बोलें' अप्रकाशित हैं। ये अच्छे गीतकार हैं। इनकी रचनाओं का प्रसारण आकाशवाणी से भी होता रहता है। अब आप सेवानिवृत्ति के बाद पन्ना में ही रहते हैं।

*कीने जे चँदा सूरज से, मंदिर इतय उतारे।*
*कामधुरी पै दुनिया नच रइ, खजुराओ के द्वारे।*
*काम रूप राजा चंदेला, रति रूपा महरानी।*
*ग्यान धियान विग्यान कला में रानी चतुर सयानी।*



*चंदेलों के राज कैया को, ढुलन न पाओ पानी।।*
*नचना चौमुखनाथ अजयगढ़ कालींजर वरदानी।*
*पबई कलेहन माइ कालिका मइहर मातु भुमानी।*
*उत्तर से दक्खन लौ चंदेलन ने विजय ध्वजा फहराई।*
*घोड़े रये रौदते उनके दुस्मन थी जिनकी तरुणाई।।*
*उनके बान आग उगलत रय, बरसाउत रये अंगारे।*
*काल नचाउत रये ढाल पै, बाजत रये नगारे।*

*00 00 00*

*काये बने इतय मंदिर बाहर नग्न रूप मनियारे।*
*ऐसे मंदिर कउँ न देखे जे दिखे जगत से न्यारे।*
*कैसी नोनी बनी पुतरिया, तनक सरम तौ नइयां।*
*देखत बने न ईकी धारा, लुगवा लैय कन्इया।*
*ऐसे बोल न बोलो प्यारी, जग भर सें जा न्यारी।*
*काया रास रंग में डूबी माया रइत उघारी।*
*जिनके मन में पाप बसत है बेई उन्ना पहरत।*
*जिनके तनखों छूत लगत है बेई दिन भर सपरत।*
*ऐसौ कौन जनम नारी कौ जो न तनक लजाबे।*
*ऐसौ को जोगी ई जग में भोगिह जोग बतावे।।*

*00 00 00*

*पैले कंदरिया के दरसन, शिव शंकर में ध्यान धरें।*
*तब कउँ खजुराओ के सागर डूबें उखरें और तिरें।।*
*काम देव के मन मंदिर की सबइ बनी पटरानी।*
*कोनउ ऐसें हेरें जैसे हिरनी फिरे हिरानी।।*
*खंजन बजे पथराई पुतरिया लिख रइ काम रिचाये।*
*शारदूल द्वारे पै बैठे रति के चरण दबाये।।*
*कीने दै दये तुमें जे प्यारी नैना छैल छबीले।*

*जैसे भटकत फिरत दृगन में बदरा रंग रगीले।।*
*बिन्ना ऐसौ कजरा आँजे बदरा देख लजायें।*
*बाहे गले डाल चन्दन की पंछिया सो जायें।।*
*जा कबूतरी सी ऐड़ा रइ अपनी देह मरोरे।*
*पोरन पोरन उठें हिलोरें, काम देब कर जोरे।।*
*जैसे भर भादौ बदरा में बिजुरी ले अगड़ाई।*
*तैसइ ईके अंग अंग में खेल रइ तरुनाई।।*
*ईको बदन फूल सौ प्यारौ लगत बगीचा नीको।*
*श्रीफल धरे खुली छाती पै झरत अमी रस हीको।।*
*ऐई जगत के पालन हारे, ऐई मारन हारे।*
*जीके जैसे संस्कार रये देखत न्यारे न्यारे।।*
*गोरी धना घाट पे ठाड़ी, गीले केश निचोरे।*
*जल के बूँदा चू रये हंसां मोती समझ चचोरे।।*
*फिरै हंस ग्यान के कइये, धोन रूप कौ पी रये।*
*नीर छीर के ग्यानी हंसा, ओस चाटकें जी रये।*
*ईके बिच्छू चढ़ी जांघ पे, छू ईखा न लइयो।*
*जातौ लगत नाग की बिटिया, दुरइ ईसें रइओ।।*
*जोतो काम देव को जीरा दौरत फिरत बदन में।*
*कबउं छतियन ऊपर रेमत, कबउं तिरत नैनन में।।*
*कानइं बनी बिगर गइ ई सें, जासें सुरत बिसारी।*
*पथरा गई अहिल्या रानी ऋणी श्राप की मारी।।*
*पथरा उन दुस्टन सें नोने, तनक पसीजत नइयां।*
*ढाँके रात पाप रेशम में, साँची बोलत नइयां।।*
*कौन सुघर ने तोय सँबारो, मोय बतादे गोरी।*
*कीने पैरा दये जे कँगना, रच दई पायन रोरी।।*
*कीने बाँघ दये जे घुंघरू, बिन ककरन के बोलें।*
*इनकी नियत न कोउ जाने, सबकी नियत टटोलें।।*
*इनसे विलग जगत कउं नइयां बसो इनन के मइयां।*



*इनके बिना जगत की रचना कैसउँ होतइ नइयां।।*
*इनें देखकें जिनके तनसो उतर न जाये पानी।*
*जानौ बिन भीगे नदिया पैर गओ है ग्यानी।।*
*भोज पत्र पै कऊं लिख जाते बँधे जिल्द में राते।*
*पढ़े लिखे पंडित पढ़ लेते, अनपढ़ समझ न पाते।।*
*लौट पटा दुनिया कौ हो गओ राज रये ना माते।*
*राजा चंदेला जग जाहर खजुराहो के नाते।।*
*खजुराओ चंदेली बीजक पढ़त बनै तो पढ़ लौ।।*
*भोग योग की गढ़ी नसैनी, चढ़त बनै तो चढ़ लो।।*
*ईपै चढ़ें अमर फल पावें, सद्गति होवे तीकी।*
*खजुराहो सरग नसैनी, चन्देलन के जीकी।।*
*अचरज भरे रओ न हेरत बढ़त बनै तो बढ़ लो।*
*मादन गंध गुफा सै बाहर कढ़त बने तो कढ़ लो।।*

कवि कहता है कि चन्द्रमा और सूर्य के समान इन मंदिरों को किसने यहाँ अवतरित करा दिया कि आज खजुराहो से काम केन्द्रित हो चक्कर लगा रहा है। चंदेल राजा काम के रूप में और महारानी रति के रूप में प्रतिष्ठित है। ज्ञान, ध्यान और विज्ञान की कला में महारानी बहुत निपुण हैं। चंदेलों की प्रजा के पेट का कभी पानी नहीं डुला अर्थात् कभी कोई तकलीफ नहीं हुई। सिद्ध स्थान कालिंजर, अजयगढ़ और नचना से लेकर पवई, कलेहन, मैहर की शारदा देवी के मंदिर की सीमा रेखा मानते हुए उत्तर से दक्षिण दिशा चन्देलों के गीत का झंडा फहराता रहा। उनके घोड़े शत्रु की युवा शक्ति को सदैव परास्त करते रहे। उनके बाणों में चमत्कारिक शक्ति थी और ढाल पर काल को रोकने की कला थी। उनके विजय के बाजे बजते रहते थे।

00 00 00

दर्शक नायिका कहती है कि ये मंदिर के बाहरी भाग में क्यों स्थित है और इनमें मूर्तियों के नग्न चित्रण क्यों किये गये हैं ? देखो, यह कितनी सुन्दर मूर्ति है किन्तु इसको तनिक भी लज्जा का भाव नहीं है, इसकी दशा कहते नहीं बनती, इसको पुरुष गोदी में लिये है। नायक कहता है– हे प्यारी! ऐसे शब्दों का प्रयोग मत करिये। ये मंदिर संसार भर से अलग हैं और अनूठे हैं। शरीर सांसारिक क्रिया (रास के आनंद) में लिप्त रहता है किन्तु माया आवरण रहित होती है। जिसके मन में पाप होता है वही कपड़े पहिनता है। जिनके शरीर को अस्पृश्यता लगती हो वही पूरे दिन स्नान करता है।

नायिका कहती है कि ऐसी नारी का जन्म व्यर्थ है जिसमें तनिक भी लज्जा न हो और ऐसा कौन योगी है ? जो भोग को ही योग की संज्ञा देता है।

00 00 00

खजुराहो में पहिले कंदरिया के शिव मंदिर के दर्शन मिलते हैं। प्रारंभ में शिवजी का ध्यान करना चाहिये तत्पश्चात् खजुराहो की शिल्पकला के आनंद सागर में डुबकी लेने और तैरने का आनंद मिलता है।

कामदेव के मन–मन्दिर की सभी पटरानी बनी है। किसी–किसी मूर्ति की नजरें ऐसी लगती हैं जैसे कोई हिरनी भटक गई हो।

किसी मूर्ति को देखने से लगता है कि जैसे खंजन पक्षी की आँखों वाली नायिका काम ऋचायें लिखते हुए पत्थर बन गई हो। द्वार पर प्रतिष्ठित शारदूल मानो रति की सेवा कर रहे हैं। नायिका की मूर्ति में नयनों की शोभा देखते हुए कवि कहता है कि हे सुन्दरी! चंचल शोभायुक्त ये नयना तुम्हें किसने दिये, लगता है कि रसवान बादल आँखों में भटकते घूम रहे हैं।



कोई नायिका ऐसा काजल लगाये हुए है कि बादलों को भी लज्जा आ जाती है। उसकी बाँहें (हाथ) चन्दन की शाखा की तरह सुन्दर हैं। यह नायिका अपने शरीर को ऐंठते हुए कबूतरी की तरह अंगड़ाई ले रही है। शरीर के प्रत्येक अंग उमंग से गतिमान है और कामदेव भी हाथ जोड़े हुए हैं।

भाद्रपद माह में बादलों के बीच बिजली अंगड़ाई के साथ चमकती है उसी प्रकार इस नायिका के प्रत्येक अंग में यौवन कौंध रहा है। इसका पूरा शरीर फूल की तरह सुन्दर है जिससे शरीर रूपी बाग उत्तम लग रहा है। श्रीफल के समान पुष्ट स्तन खुली छाती पर ऐसे रसवान लग रहे हैं मानो हृदय का अमृत रस इससे झर रहा हो।

यही संसार का पालन करते हैं और संसार का संहार करने वाले हैं। जिसका जैसा संस्कार होता है उसे वैसा ही दिखाई देता है। गौर वर्ण नायिका जलाशय के किनारे खड़ी अपने गीले केशों का पानी निकाल रही है जिसमें जल बूँदों में टपकता है, हंस इन्हें मोती समझकर मुँह में ले लेते हैं।

हंस को ज्ञानी के रूप में कैसे कहा जाय। यहाँ ये रूप के ध ोवन (स्नान करने पर गिरा जल) का पान कर रहे हैं। दूध और पानी का सम्पर्क ज्ञान रखने वाले हंस यहाँ ओस चाटकर जीवन यापन करते दिख रहे हैं। इसकी जांघ पर बिच्छू चढ़ा हुआ है इसे स्पर्श मत कर लेना। यह तो नाग की बेटी–सी लगती है, इससे दूर ही रहना।

यह तो कामदेव का हृदय लगता है जो कभी छातियों के ऊपर धीरे–धीरे रेंगता (सरकता) है और कभी आँखों में तैरता दिखता है। मुझसे क्या कुछ भूल हो गई जिससे मेरी याद भुला दी। प्रतीत होता है ऋषि के श्राप के कारण अहिल्या पत्थर बन गई है।

पत्थर उन दुराचारी अथवा दुर्जन लोगों से अच्छे हैं जिनके

हृदय में थोड़ी भी दया नहीं रहती। वे अपने दुष्कर्मों को रेशम अर्थात् बाह्य सुन्दर आडम्बरों से आवृत किये रहते हैं और कभी सत्य नहीं बोलते। किस चतुर कलाकार ने तुझे इतनी सुन्दर कलात्मकता से सजाया है सुन्दरी मुझे इसकी जानकारी दे दे। किसने हाथों में कंगन पहिनाये हैं और किसने पावों में रोरी रचाई है।

किसने ऐसे अनोखे घुँघरू बाँध दिये हैं जो बिना कंकड़ भी अपनी बात कहते हैं। इनका मंतव्य तो कोई नहीं जान पाता किन्तु ये सबका मंतव्य ढूढ़ती हैं। इनसे अलग संसार कुछ नहीं है, सभी कुछ इन्हीं के मध्य स्थित है। इनके बिना संसार की रचना किसी प्रकार भी संभव नहीं है।

इन प्रतिमाओं को देखकर जिस मनुष्य का आत्माभिमान नहीं मिटता अथवा जो संयमित रह पाता वह ज्ञानी निश्चित उस योगी के समान है जो नदी के ऊपर चलकर बिना पानी में भीगे हुए पार करने की सामर्थ्य रखता है। भोज पत्र में यदि इन्हें लिखा जाता तो जिल्द में बाँधकर पुस्तक (ग्रन्थ) बन जाती तो केवल विद्वान व्यक्ति ही इसे पढ़ सकता किन्तु बिना पढ़ा–लिखा सामान्य व्यक्ति इसको नहीं समझ सकता था किन्तु मूर्तियों में अंकित भावों को सभी समझ सकते हैं।

संसार में अनेक बदलाव आ चुके हैं अब राजतंत्र भी नहीं रह गया किन्तु चंदेल राजा खजुराहो के कारण संसार भर में जाने जाते हैं। खजुराहो चन्देलों के रहस्य को गोपनीय ढंग से संजोये हुए हैं जिसको वह भाषा पढ़ते बने तो वह पढ़ ले और वे रहस्य जान ले। भोग से योग का रहस्य संजोकर गढ़ा गया है, भोग से योग की ओर जाने का यह सोपान है अब व्यक्ति से बन सके तो उसे प्राप्त कर ले।

इन सोपानों से जाने पर अमरत्व की प्राप्ति होती है और अच्छी



गति (सद् मोक्ष) को व्यक्ति पा सकता है। चंदेलों द्वारा बनाया गया खजुराहो स्वर्ग जाने की सीढ़ी है, जो इस पर चढ़ सके तो चढ़कर वांछित परमानंद पा सकता है। आश्चर्य से इसे देखते न रहो, यदि बन सकता है तो आगे बढ़ने का प्रयास करिये। काम भावना के दूषित मनोभावों की गुफा से बाहर निकल सकने की सामर्थ्य रखते हो तो बाहर आकर कल्याणकारी भावनाओं की सत्यता को समझो और परमानंद की स्थिति पा लो।

# पं. गुणसागर शर्मा 'सत्यार्थी'

पं. गुणसागर शर्मा 'सत्यार्थी' का जन्म संत कवि पंडित गुलाब राय के यहाँ चिरगाँव जिला झाँसी में 17 अगस्त 1937 को मणिकंचन शर्मा की कोख से हुआ। इनके पितामह कवि प्रेमबिहारी मुंशी 'अजमेरी' के नाम से प्रख्यात रहे। इनकी शिक्षा स्नातकोत्तर स्तर तक हुयी। आपने बचपन से ही रचनात्मक गतिविधियों में भागीदारी करना प्रारंभ कर दिया था। ये कविता लेखन के साथ चित्रकारी में भी सिद्धहस्त हैं। ये लोकभाषा शिल्पी, संगीतकार, नाट्यकार तथा पत्रकार भी हैं। शिक्षक के रूप में कार्य करते हुए व्याख्याता पद से सेवानिवृत्त हो कुण्डेश्वर (टीकमगढ़) में निवास करते हैं।

आपको बुन्देली वार्ता गुरसराय द्वारा 1970 में 'बुन्देली पुरस्कार', जालौन साहित्यकार परिषद द्वारा 1975 में 'बुन्देल बन्धु', बुन्देली साहित्य परिषद समथर ने 1984 में 'बुन्देली वागीश', ओरछा महोत्सव समिति ने 1987 में 'केशव पुरस्कार', बुन्देलखण्ड लोककला विकास समिति मऊरानीपुर ने 1977 में 'बुन्देल रत्न', हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने 1997 में साहित्य वारिधि तथा नवोदित साहित्यकार परिषद, ललितपुर ने 1998 में 'साहित्य मार्तण्ड' सम्मान प्रदत्त किये।



आपको 2004 में बुन्देली विकास संस्थान बसारी ने 'राव बहादुर सिंह बुन्देला सम्मान' म0प्र0 के राज्यपाल द्वारा दिया गया। आप अपनी सक्रियता से विभिन्न सांस्कृतिक–साहित्यिक गतिविधियों को गतिमान बनाये हैं। अनेक विभिन्न ग्रंथों के सम्पादन के साथ आपने निम्न ग्रंथों का प्रणयन किया है–

प्रकाशित –
1. महाकवि कालिदास कृत 'मेघदूत का बुन्देली पद्यानुवाद'
2. चौखूँटी दुनिया – बाल फेंटेसी
3. तीन खूँट का गरम समोसा – बाल साहित्य
4. वनवास : रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कृति का अनुवाद

अप्रकाशित–
1. आओ दिन सोने को – बुन्देली गीत नाट्य
2. रंग फुआरौ – बुन्देली चौकड़ियाँ
3. कुकरा की बांग – बुन्देली नवगीत
4. उफनत दूध – बुन्देली प्रयोगवादी रचनाएँ
5. बौराया फागुन – गीत संकलन
6. गुन गुन – स्फुट रचनाएँ
7. कवितॉंजलि – पिता की काव्यमयी जीवनी
8. दोहावलि – गहरे पानी पैठ (शोधपरक निबंध संग्रह)
9. पुण्य स्मरण – प्रेरक व्यक्तियों के रेखाचित्र
10. बुन्देलखण्ड की विस्मृत लोक परम्परा : पण्डवा

### बरबै छंद (प्रोषित पतिका नायिका)

*कमल सरीखे लीले चंचल नैन।*
*असुवा बै रये जिनसैं, दिन अरु रैन।।*

*बिंब फलन से उनके अधरन लाल।*
*उन असुवन सैं, गीले हो रये गाल।*
*ई मौका जिनके पिया न पास।*
*कीसैं कबैं विचारी, रतीं निराश।।*
*कर कर खबर पियन की रोजऊ रोय।*
*कीके संगै सुख की, निदियन सोय।।*

नील कमल के समान जिनके चंचल नेत्र हैं। उन नेत्रों से रात–दिन अश्रु बह रहे हैं। उनके अधर कुंदरु (रक्तफल) के समान लाल रंग के हैं। उनके अश्रु–जन से दोनों गाल गीले हो रहे हैं। इस अवसर पर उनके प्रियतम पास में नहीं है। वह अपने मन की बात कहे, अतः उदास रहती है। पति के बिना आनंद की नींद कैसे संभव है अतः पति की याद में नित्य रोती रहती है।

## चौपई छंद

*'कमलन कैसे कोरे हात, चम्पा कैसो पीरौ गात।*
*उनकी उम्दा मुइयाँ होत, चंदा की फीकी भई जोत*
*जितै जितै हुन कड़ती जाय, फूल सरीसो तन माँकाय*
*धरें पिया हातन पै हात, कैसी घुर घुर कर रई बात।*
*तिरियँन के मन चुलबुल होंय, कब प्रीतम के संगै सोय।*
*मनई मनई मन हँसत दिखाय, भौगी चाली भीतर जाय।।*

उसके कमल के समान स्वच्छ हाथ और चम्पा के समान पीले रंग में सभी अंग हैं। मुँह का सौन्दर्य इतना अच्छा है कि चन्द्रमा की आभा भी फीकी लगती है। जिसके पास से निकल जाती है सुगंधित पुष्पों की सुगंध फैल जाती है। प्रियतम के हाथ पर हाथ रखकर मध ुर भाव में बातें कर रही है। सखियों के मन में एक चुलबुलाहट है कि कब वह अपने प्रियतम के साथ शयन करे ? मन के भीतर की



प्रसन्नता दिखाई दे रही है। चाह और चंचलतावश कभी–कभी भीतर जाती है।

एक आगत पति का नायिका के सौन्दर्य और प्रेमालाप करती हुई सुन्दरी की आतुरता का चित्र प्रस्तुत है।

## अमात्रिक छंद

*दमकत कमल बदन पर श्रमकन, घट भर सर पर धरतन।*
*झमक–झमक जब चलत डगर पर, पगन बजत तब छन–छन।*
*हटकत पवन बसन जब सरकत, लगत सरम तन लखतन।*
*लचकत नरम डगन भग चलतन, हरषत हम लख मन–मन।*
*लखतन लखत करत मन नरतन, दसनन अधर करतन।।*

(कवि ने महानायिका श्री राधेरानी का सुकुमार व श्रृँगारिक चित्रण किया है) महानायिका जमुना (पनघट) से जल लेकर आ रही हैं, सिर पर भरे घट के कारण सुकुमार देह प्रभावित है। मुख मण्डल पर श्रमकण बिन्दु दीप्तिमान है। वह झूमती इठलाती–गुठलाती जब चलती है तो पैरों के आभूषणों की झनकार वातावरण में रस घोल रही होती है। वायु के एक झोंके ने मानों उसे मार्ग में रोकने का प्रयास किया, तो अंचल पट उड़ने से अंगों की तनिक झलक महानायक को दीख जाती है। वह लचकते हुए यह भाव देखकर मन ही मन हर्षित तो था ही अंचल पट उड़ने से महानायिका का अमुक अंग उघड़ा देखकर मुग्ध होता है। महानायक का यह देखना देखकर महानायिका लजा जाती हैं और अपने दाँतों से अपने अधर को दबाकर रह जाती हैं।

## सार छंद

*हमखों हेर–हेर हरसाई, हेरन है हरजाई।*
*पाती पैलऊँ पैल पठैकें, प्यारी पीर पियाई।*

*रंग रतनारौ, रस की रसना, रग–रग रंगी रंगाई।*
*छैल छबीली छलनी छतियां, छैलन छैंक छकाई।*
*गेरँऊँ गेर गए गुनसागर, गलिन–गलिन गसयाई।।*

कवि नायक के मनोभावों को व्यक्त करते हुए उसकी नायिका से कहता है कि मुझे देख–देख कर तुम तो प्रसन्न हो रही हो परन्तु तुम्हारी यह दीठ (हेरन) बड़ी अनुचित प्रेम स्थापित करने वाली है। तुमने सबसे पहिले प्रेम–पत्र भेजकर मुझे प्रेम की पीड़ा का रस पिला दिया है। तुम्हारा सम्पूर्ण रतनारा वर्ण रसभरी रसना और तुम्हारी नस–नस में प्रेम का एक ही रंग दीख पड़ता है। छबीले छलने वाले तुम्हारे उन्नत उरोज न जाने कितने रसिकों को नहीं छका चुके हैं। ऐसा लगता है कि चारों ओर से तुम्हें मदन–रस ने घेर लिया है और प्रेम की हर डगर में नायक के द्वारा आलिंगनबद्ध होना ही तुम्हारी इति है।

## निरोष्ठ छन्द (सिंहावलोकन)

*साँसऊँ हँस–हँस डोरा डारे, लगा नेंन कजरारे।*
*कजरारे नेंनन की गाड़ी, चका चलत हैं कारे।*
*कारे केस घुंघरियाँ डारें, घटा घोर अँधयारे।*
*अंधयारे हारे गाने सें, चिलक करे उजयारे।*
*उजयारे हो गए गुनसागर, घुंघटा आन उगारे।।*

नायिका से कहता है कि सचमुच तुमने हँस–हँस कर शनैः–शनैः प्रेम–रस के डोरे डाल दिए हैं। कजरारे नयनों के कटाक्ष से नयन से नयन मिलाकर तुम्हारे कजरारे नयन भी प्रेम की ऐसी दौड़ती हुई गाड़ी के समान है जिसमें काले रंग की पुतलियाँ, गाड़ी के पहियों की भाँति नाच रही हैं, मानों प्रेम की गाड़ी प्रेम की डगर पर दौड़ रही है। तुम्हारे काले–काले घुँघराले केश मानो घनघोर अंधकार को फैलाना चाहते हैं, मगर आभूषणों की चमक–दमक ने उन मनमोहक अंधयारों को विफल



करके ऐसा प्रकाश फैला दिया है कि घूँघट खुलते ही नायक उस अलौकिक प्रकाश का दर्शन पाकर धन्य हो गया है।

## फाग

*हम–तुम मइंनां के पखवारे, तुम गोरीं हम कारे।*
*मोरे रातन हिलबिलान भइं, हंसी करत रये तारे।*
*जब हम गए आन इठलानीं, चौदस सी चन्दा रे।*
*ऐसौई होत जुगान जुग कड़ गए, भए न पलका चारे*
*गुनसागर जौ आँख मिचोंनी, खेल–खेल कें हारे।।*

हम और तुम एक माह के दो अलग–अलग पक्ष हैं – शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष। कृष्ण पक्ष आने पर प्रकाश की रात्रि चली जाती है और तारों की चमक अधिक हो जाती है। वे व्यंग करते हैं। काली रात्रि (कृष्ण पक्ष के जाने पर प्रकाश से भरी रात्रि आ जाती है।) में चन्द्रमा की प्रसन्नता देखने को मिलती है। इसी प्रकार होते हुए युग बीत गया कभी मिलन नहीं हुआ। गुणसागर कहते हैं कि यह आँख, मिचौनी का खेल है, जिसे खेल–खेलकर हम थक चुके हैं।

*जब तुम लहर न पै लहरानी, छिन–छिन नईं दिखानी।*
*नील बरन जे निरमल लहरें, देख तुमें इठलानी।*
*ऐंनाँ–सी इन लहरन पै तुम, दिखकें तुरत बिलानी।*
*तुम हौ इनमें कै जे तुममें, जौई भई हैरानी।*
*पै तुम माया गुनसागर की, साँसंऊँ बड़ी सयानी।।*

नायिका सरोवर में स्नान कर रही है वह सरोवर के तट पर बैठी स्नानरत है और उसका प्रतिबिम्ब सरोवर की लहरों पर लहराता हुआ देखकर नायक कहता है कि लहरों पर लहराती–इठलाती तुम प्रत्येक क्षण नई और भी नई दीख पड़ती हो। यह नीली–नीली निर्मल जल की लहरें अपनी गोदी में तुम्हारे सौन्दर्य को पाकर इठला

रही हैं, गर्वित है। दर्पण के समान इन लहरों पर तुम दिखती भी हो और विलीन भी हो जाती हो। यह निश्चय नहीं हो पा रहा है कि तुम लहरों में लहरा रही हो या कि लहरें ही तुम में ऊर्मित हैं? बेशक यह स्थिति नायक के रसिक मन को परेशान करती है। लेकिन तुम गुणसागर नट नागर की वही चिर परिचित माया हो, जो बेशक बहुत ज्यादा सयानी हो, तुम्हें मार पाना आसान नहीं है।

*अब तौ हो गये उनके नेंनाँ, दूजौ रंग चड़ैना।*
*जब सें बे नेंनंन में आये, परत न अँखियंन चैनां।*
*हेरत रइये उनखों नेंनन, लगी लगन दिन रेंना।*
*नेंनन में अब उनकी मूरत, देखत लैकें ऐंना।*
*घायल करत नेंन गुनसागर, जिनसें कोऊ बचैना।।*

अब तो यह नयन उन्हीं के (प्रियतम के) हो गये हैं इन पर दूसरा रंग असम्भव है। जब से वे इन नयनों में आकर बसे हैं इन आँखों को पल भर का भी चैन नहीं। बस निसि–वासर उनको ही देखते रहने की एक मात्र लगन लगी हुई है। इसलिए प्रियतम की मूर्ति अपनी ही आँखों में दर्पण लेकर देखती हूँ। सच में वे नयन ही ऐसे हैं जो घायल करने वाले हैं उनसे कोई बचकर नहीं निकल सकता।

*जो कऊँ बे काजर हो जाते, नेंनन उनें लगाते।*
*तिल–तिल बार प्रीत की बाती, हिय–पारें पा जाते।*
*तन–मन की डबिया में नोंने, भरकें उनें दुकाते।*
*पलकन की कोरन पै निसदिन, आँज–आँज सुख पाते।*
*गुनसागर बे स्याम सलोने, हेरन में घुर जाते।।*

नायिका की बेबसी (विवशता) है कि वह अपने प्रियतम से मिलने को आतुर तो है परन्तु मिलन न होने पर वह भी कल्पना करती है कि यदि मेरा प्रियतम काजल हो जाता तो आँखों में ही



रहता। (काजल बनाने की प्रक्रिया का बखान) तिल–तिल प्रीति की बाती जलाकर हृदय रूपी पारे में वह काजल प्राप्त कर लेती और तन एवं मन रूपी डिबिया में भरकर उसे छिपाकर रख लेती। एकान्त में बैठकर पलकों की कोर पर आँज–आँज कर अपूर्व सुख का अनुभव करती। फिर तो वे गुणसागर श्याम सलोने प्रियतम मेरी दृष्टि में घुलकर एक हो गए होते।

*तुमने कोंन रागनी गाई? हियरै पीर जगाई।*
*उठत भुन्सरें चकिया ओरत, रस में ढार सुनाई।*
*गाबे में तुम सब कै देतीं, गा कैं प्रीत जगाई।*
*मचल उठौ मन गाबौ सुनतन, मारू चीज उठाई।*
*कोयल–सी कुहकत भुन्सारें, गुनसागर खों भाई।।*

(बुन्देलखण्ड के ग्राम्यांचल में प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में स्त्रियाँ उठकर हाथ चक्की से आटा पीसती थीं और मधुर लोकगीत गाती थीं। यह परम्परा अब कहीं देखने को शायद ही मिले) चक्की के साथ लोक स्वर सुनकर नायक कहता है – तुमने यह कौन सी रागिनी गाई है? हृदय में पीड़ा जाग गई है। उठकर प्रातःकाल चक्की चलाते हुए रस में ढाल–ढाल कर अन्योक्ति में सुनाए चली जाती हो। गाने में तुमने सब कुछ कह डाला यानि गा करके प्रीति को जगाया है। इस मधुर भोर में गायन सुनकर मन मचल उठा है क्योंकि प्रभावी भाव प्रस्तुत किया है। कोयल सी मीठी स्वरांजलि सबेरे–सबेरे मन को अच्छी लगती है।

*ओजू ! हमें लगत है प्यारौ, कंचन–आंग तुमारौ।*
*बिन सिंगारें दमकत ऐसें, चिलकत जैसें पारौ।*
*गोरी मुँइँयाँ लगै जुन्हैया, घर भीतर उजयारौ।*
*सपरत में पानूँ नइं ठैरत, कमल बदन पै न्यारौ।*
*गुनसागर जा कोंरी काया, जैसे नेंनूं प्यारौ।।*

(बुन्देली संस्कृति में प्रियतम द्वारा प्रियतमा का और प्रियतमा द्वारा प्रियतम का नाम नहीं लिया जाता इसलिए) ए जी! तुम्हारी स्वर्णिम देह मुझे बहुत प्रिय लग रही है। बिना किसी श्रृंगार के भी ऐसे दीप्तिमान है मानो पारे की चमक हो। गौर वर्ण मुखड़ा तो शरद जुन्हाई है। जो मेरे हृदय रूपी गृह को आलोकित करने वाला है। स्नान करते समय इस देह पर कमल पत्र की भांति पानी की एक बूँद भी नहीं ठहरती है। तुम्हारी यह कोमल देह तो उत्तम नवनीत की तरह है।

*तुम तौ नाहक आँग सुकारइं, हिय की बात दुका रइं।।*
*महुआ–सी हौ ऐन गुरीरीं, रस–बूंदा टपका रइं।*
*रंग भरे नेंनां भये प्याले, इतै–उतै लुड़का रइं।*
*जोबन के घामे में तपकें, दारू–सी छलका रइं।*
*झोंकन नसा चड़ो 'गुनसागर' मन मोरौ भटका रइं।।*

कवि नायिका को सम्बोधित करते हुए कहता है कि प्रिये! तुम व्यर्थ में ही (जो किसी के भी हित में नहीं–नाहक) अपनी देह सुखा रही हो और अपने हृदय की असली बात को बलात् छिपाने का प्रयास कर रही हो। महुए के समान अत्यन्त मधुर मद भरी हो और रस की बूँदे भी टपका (एक–एक बूँद गिराना) रही हो। तुम्हारे रतनारे नयन मानो मद भरे प्याले हैं जिन्हें तुम इधर–उधर लुढ़का रही हो। यौवन की तेज धूप में तप कर मानो मदिरा की भाँति छलक रही हो। तुम्हें स्पर्श करके आने वाले हवा के झोंकों ने ही मेरे मन को मदहोश कर दिया है, इस प्रकार मेरे हृदय को तुमने ही वह बहक (भटकाव) प्रदान की है, अर्थात् अस्थिरता प्रदान की है।

*मोरौ – हँराँ–हराँ मन लै गइं, सेंनन सें सब कै गइं।*
*मन मुसक्यात कनखियंन हेरीं, चोट करेजें दें गईं।*
*मोरी कहीं अनुसुनी करकें,हंस कें बात पचै गइं।*



*अपनों दाव लगाकें नोंनें – मोरौ दाव चुकै गइं।*
*गुनसागर की हिय बगिया में, रस के बीजा बै गइं।*

कवि नायिका को सम्बोधित करते हुए कहता है कि धीरे–धीरे मेरा हृदय ही तुम ले गई (हृदय चुरा लिया) इशारों में तुमने सब कुछ तो कह डाला, अब बाकी कहने–सुनने को कुछ भी शेष नहीं है। मन ही मन मुस्काते हुए तुमने कटाक्ष से मेरी ओर देखा तो सच मानो मेरे कलेजे पर गहरी चोट पड़ गई है। प्रिये! तुम मेरे सम्पूर्ण कथन को अनसुना करके हँसते हुए मेरे प्रणय निवेदन को हजम कर गईं? केवल स्वयं अपना ही दाँव लगाकर मेरा दाँव तुमने चुका दिया? जो कुछ भी हो, कुल मिलाकर तुम्हारे हाव–भावों ने कवि रूपी नायक के हृदय रूपी उद्यान में रस का बीज बो दिया है।

*तुम काँ चले गए मन लैकें, बीज प्रेम के बैकें।*
*हियरा में रस–प्रीत जगाई, लिंगां चार दिन रैकें।*
*जबलों रये मोय भरमाई, मीठीं बतियाँ कै कें।*
*तड़प रई प्यासी हिन्नी–सी, पीर करेजे सै कें।*
*लूट गए हमखों गुनसागर, दिन छित डॉकौ दैकें।।*

(एक वियोगिन नायिका के मनोभाव इस वियोग श्रृँगार में कवि के द्वारा कुछ नये अन्दाज में व्यक्त हुए हैं) हे प्राण प्रिये! मेरे हृदय में प्रेम के बीज बोने के उपरान्त मेरा मन लेकर कहाँ चले गये? चार दिन (कुछ ही समय) का सामीप्य मेरे हृदय में रस भरी प्रीति को जगा गया है। जब तक तुम मेरे समीप रहे तो मीठी–मीठी बातों के शब्दजाल में मानो मुझे भ्रमित ही करते रहे हो? (आकर एक बार तुम देख तो लो) मैं तुम्हारे वियोग में प्यासी हिरनी के समान तड़प रही हूँ और जो पीड़ा तुम देकर गए हो उसे अपने कलेजे पर सह रही हूँ, हाँ! (सच में तुम बड़े निष्ठुर हो) तुमने दिन रहते हुए मेरे हृदय पर डकैती डालकर मुझे लूट लिया और मैं अब विपन्न हूँ।

*लगतन उनसें नेह नजरिया, बिसरी निजी खबरिया।*
*कंचन बरन देह दमकत है, मानों लरम भुंजरिया।*
*लता सरीसी भांस सुहावै, गाउत रोज ददरिया।*
*नैंनां उनके रस के सागर, मन की भरत गगरिया।*
*दोरें ठाँड़े नित गुनसागर, कऊँ खुल जाय किबरिया।।*

उनसे प्रेम होते ही (नेह नयन लड़ते ही) अपनी सुध भूल गई। सोने के समान चमकती देह (शरीर) में भुजरियों (नव अंकुरित गेहूँ के पौध) के समान लचक है। लता–(मंगेशकर) के समान उनका कंठ है जिससे वे नित्य दादरे गाती हैं। उनके नयन रस भरे सागर जो मन की गागर को भर देते हैं। गुणसागर कहते हैं कि हम उनके दर्शन की आशा लिये द्वार पर खड़े हैं कि संभवतः कभी किवाड़ खुल जाय।



# डॉ. दुर्गेश दीक्षित

कविवर दुर्गेश दीक्षित का जन्म भाद्रपद शुक्ल पक्ष चतुर्थी सोमवार, संवत् 1995 को ग्राम कुण्डेश्वर जिला टीकमगढ़ (म. प्र.) में श्रीमती रामकुँवर देवी की कुक्षि से हुआ। इनके पिता श्री महादेव प्रसाद दीक्षित साधारण कृषक थे। प्रारंभिक अध्ययन पं. प्रेमनारायण जी मिश्र के सान्निध्य में रहकर किया। बुद्धि की प्रखरता और लगनशीलता के कारण वे गुरुजनों के कृपापात्र बने रहे। पड़ोसी होने के कारण बचपन से ही पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के परिवार के बीच रहने का अवसर मिला जिससे साहित्यिक अभिरुचि में विशेष वृद्धि हुई।

हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त शिक्षक प्रशिक्षण लिया और शिक्षक पद पर नियुक्ति पा ली। इनका विवाह श्रीमती गिरजा देवी के साथ हुआ। सौभाग्यवश पत्नी की सद्प्रेरणा ने उन्हें आगे बढ़ने में विशेष सहयोग किया। उन्होंने एम.ए. हिन्दी और एम.ए. संस्कृत की परीक्षा भी उत्तीर्ण की। पीएच.डी. की उपाधि ा लेने के बाद डी.लिट. के लिये प्रयासरत हैं और साहित्य की सेवा में निरन्तर संलग्न हैं। मंचीय कवि के रूप में भी इन्होंने बहुत ख्याति

पाई। दस वर्ष तक हायर सेकेण्डरी स्कूल के प्राचार्य के पद पर रहे। शासकीय सेवा करने के उपरान्त सेवानिवृत्त हुए।

प्रकाशित ग्रंथ :
1. बलिदान (खण्ड काव्य)
2. अवंती बाई की सचित्र शौर्य गाथा
3. सगुन की हरैया (बुन्देली)
4. बुन्देलखण्ड के अमर सपूत (बुन्देली)
5. ऋतु संहारन् (बुन्देली में पद्यानुवाद)

अप्रकाशित :
1. प्रेम के धागे (कहानी संग्रह)
2. चोखी चोखी बातें (कुण्डलियाँ)
3. स्फुट रचनायें

## सवैया

*घूंघट ओट छिपे कित हैं, दृग चंचल सैन करें कजरारे।*
*घायल हाय हजार करें, जिमि वान सरासन सैं धर मारे।।।*
*खोल न घूँघट देव अबैं, नहिं बेयर में मर जेंय विचारे।*
*छूटत वान हुए बहुते 'दुर्गेश', हिया बिच घाव करारे।।*

इस मत्तगयंद सवैये में चंचल नेत्रों वाली रमणी के नेत्रों का वर्णन किया गया है। घूँघट की आड़ लेकर रमणी के कजरारे चंचल नेत्र इशारे कर रहे हैं। जिस प्रकार किसी धनुर्धर के तीक्ष्ण बाणों से योद्धा गण घायल हो जाते हैं। उसी प्रकार उस सुन्दरी के चंचल कजरारे नेत्रों के इशारों से लोग घायल हो जाते हैं। अभी उसे घूँघट न खोलने दो अन्यथा उसके झोंके से लोग मर जायेंगे। इन बाणों के छूटने से अनेकों के हृदय में गहरे घाव हो गये हैं।

*हेर हमार हिया हरती, करती मन कौ धन धान धनारी।*
*आनन पै मुस्कान धरी, लख पागल हो गये प्रेम पुजारी।।*



*चोट करें तनपै मनपै, अरु भीतर मार कटार दुधारी।*
*भूल गई सुधि आज मनो, उर आन बसी अति प्रानन प्यारी।।*

सुन्दरी अपने मद भरे नेत्रों से देखकर हमारे मन को धन्य करती है। उसकी चेहरे की मधुर–मधुर मुस्कान से प्रेमियों का मन पागल हो जाता है। वह तन और मन पर प्रहार करती है और भीतर कटारी सी चुभ जाती है। वह प्रान प्रिया उनके हृदय में हमेशा के लिए बस जाती है।

## कुण्डलियाँ

*मोरे तौ मन में बसे, जे रतनारे नैंन।*
*गिरत गाजसी हिये पै, कर देती जब सैंन।।*
*कर देती जब सैन, चैन निठुँअई नई परबै।*
*जगत रात दिन रैन, जिया नई धीरज धरबैं।।*
*ऐसैं लग रओ आज, मुँदे है दुख के दोरे।*
*सोसत हैं 'दुर्गेश', भाग खुल गये हैं मोरे।।*

इस कुण्डलियाँ में सुन्दरी के रतनारे नेत्रों के प्रभाव का वर्णन किया गया है। मेरे मन में लालिमायुक्त नेत्रों ने निवास कर लिया है। उस युवती के दृष्टि निक्षेपण मात्र से हृदय पर गाज सी गिर जाती है। जब वह नेत्रों से संकेत करती है तो तनिक भी शांति नहीं रहती। उस प्रेम की पीर के कारण रात दिन नींद नहीं आती और हृदय में धैर्य नहीं बंधता। ऐसा लगता है मानो दुर्दिन निकल गये हैं और भाग्योदय हो गया है।

*कीसैं कयें अब को सुनत, मोरे मन की बात।*
*हेर हेर हँस काँ गई, बैठे मल रये हात।।*
*बैठे मल रये हात, हिरा गई कितै मुनइयाँ।*
*प्रेम बिरछ की आज, मिलै अब कैसें छइयाँ।।*

*सुन सुन कैं इठलाँय, कबै हम मनकी जीसैं।*
*सोसत रये ''दुर्गेश'' कबै हम मन की कीसैं।।*

अपने मन की व्यथा कथा किससे कहें, कौन सुनेगा ? किसी दूसरे को सुनाने में लाभ नहीं है। वह मुस्कान भरी चितवन के साथ कहां चली गई। हम पछताते रह गये। मन को मोहित करने वाली प्रियतमा आँखों से ओझल हो गई है। अब हमें प्रेम वृक्ष की छाया का सुख कैसे मिलेगा ? यदि हम किसी से अपना दर्द सुनाने जाते हैं तो लोग उपहास करेंगे। दुर्गेश कवि सोचते हैं कि हम किससे अपने मन की बात कहें। (चुपके–चुपके दर्द सहना ही अच्छा है।)

## दोहे

*मुरक मुरक हेरत हँसत, लसत नबेली बाल।*
*मंद मंद पग धरत मग, हथिनी कैसी चाल।।*

(इस दोहे में नवेली नारी की विविध क्रियाओं का चित्रण है।) मुड़–मुड़कर देखती और मुस्कराती हुई नव यौवना सुशोभित हो रही है। वह धीरे–धीरे मार्ग में पग रखते हुए हाथी की गति के समान चलती है।

*कजर भरे अरु मद भरे, नये नैनन की चोट।*
*बूढ़न तक के मनन में, आ आ जा रई खोट।।*

नवेली के कजरारे मद से भरे हुए नेत्रों के कारण वृद्धों तक के मन में कामोत्तेजन होने लगता है।

*गोल गोल गुलगुले फल, लगे विटप तिय डाल।*
*कतरें को सुअना सजन, बैठ विटप पर हाल।*

युवती रूपी वृक्ष की डाल पर गोल–गोल कोमल फल सुशोभित हो रहे हैं। उन सुस्वादु फलों का रसास्वादन प्रियतम ही प्रेमपूर्वक



करता है। जिस प्रकार वृक्ष पर बैठकर तोते फलों को प्रेम से कुतरते रहते हैं।

*कछू और टकराय सैं, दर्द होत अधिकात।*
*नैनन के टकराय सैं, मिसरी सी घुर जात।।*

अर्थ – किसी अन्य अंग के टकराने से दर्द का अनुभव होने लगता है किन्तु नेत्रों की टकराहट से आनंद की अनुभूति होती है।

*कीसैं कयें मन में गुनें, प्रेम प्रभाव विचित्र।*
*झूलत रत सोते परे, आँखन सामैं चित्र।।*

प्रेम का प्रभाव बड़ा ही विचित्र है। किसी दूसरे से कहने की अपेक्षा मन ही मन उसका अनुभव करना अधिक सुखकर है। आँखों के सामने वह प्यारी मूर्ति रात दिन झूलती रहती है।

## चौकड़ियाँ

*मनहर मुँह मुस्कावन गोला, बरसैं बीती सोला।*
*अरुन अधर हैं ईगुर कैसे, मंजुल लोल कपोला।।*
*दाँतन की का सोबा बरनें, ज्यों मुतियाँ अनमोला।*
*धन्न धन्न जिन सुगर करन सै, रचो विधाता चोला।*
*भली बसत 'दुर्गेश' दई जा, जय शिव शंकर भोला।*

(उपर्युक्त चौकड़िया में षोडस वर्षीया के अंग प्रत्यंगों के आकर्षण का वर्णन किया गया है।) सोलह वर्ष पूरे करने वाली इस नव यौवना के गोल मुँह की मुस्कान मन को हरने वाली है। लाल–लाल ईंगुर के समान अधर, मनोहर गोल कपोल अमूल्य मोती जैसी दंत पंक्ति। विधाता ने इस सुन्दर स्वरूप की संरचना जिन सुन्दर करों से की है वह धन्य है। कवि दुर्गेश कहते हैं कि हे भोले

शंकर जी! विधाता द्वारा निर्मित इसका निवास उत्तम है।

*पंछी पिया पिया कत रइयौ, कछू दिनन गम खइयौ।*
*नरवा नदियाँ भौत भरे हैं, भूल न उनपै जइयौ।।*
*अपनें ऊ बेचैन हिया में, धीरज तौ धर लइयौ।*
*उतई आँय 'दुर्गेश' बदरवा, मन की प्यास बुझइयौ।*

इस चौकड़िया में विरह व्यथा का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि प्यासा हूँ। चिल्लाने वाले हे पपीहे! कुछ दिनों तक धैर्य रखना। नदी–नालों में बहुत पानी है किन्तु भूलकर भी उन पर मत जाना। अपने अशान्त हृदय में धैर्य धारण करो, बादल वही आयेंगे तब तुम अपनी–अपनी प्यास बुझा लेना।

*नाहक नाँय माँय तुम हेरत, साजौ बुरओ नबेरत।*
*सब कँऊ समजौ बसत एकसी, का है ढको उगेरत।*
*कड़ने करिया सेत तिली में, तेल एक सौ पेरत।*
*ठिया जमा 'दुर्गेश' लेव नई, दिन कड़ जाने गेरत।।*

इधर–उधर दृष्टि दौड़ाने में कोई लाभ नहीं है। व्यर्थ में अच्छा–बुरा छांटते हो। सभी को एक समान समझना चाहिए क्यों आवरण को हटाते हो ? काली और श्वेत तिली में एक ही प्रकार का तेल निकलता है। एक में आस्था रखकर स्थिर हो लो अन्यथा इसी प्रकार चक्कर लगाते समय समाप्त हो जायेगा।

*उनकी हेरन हँसन सुहानी, मन के बीच समानी।*
*भीतर भीतर उखरा बूँड़ी, हो रई ऐंचा तानीं।।*
*कान ललच रये उनकी प्यारी, सुनबे खौं वा बानीं।*
*ऐसैं लग रओ ई आशा पै, फिर नई जाबै पानी।*
*धोके में 'दुर्गेश' धमाकौ, हो रई खतम कहानी।।*

नव युवती का मधुर–मधुर मुस्कराते हुए देखना मन के भीतर



घर कर गया। भीतर–भीतर उथल–पुथल होने लगी। उनकी मधुर रस भरी वाणी को सुनने के लिए ये कान लालायित हैं। कहीं ऐसा न हो कि निराश होना पड़े। दुर्गेश कवि कहते हैं कि अचानक यह कहानी यहीं समाप्त न हो जाए अर्थात् अन्त में वे मुख मोड़कर चली न जाँय।

*जीखौं हमनें अपनौ मानौं, वो भओ आज बिरानौ।*
*काम सटैं दुख बिसरै साँसौं, हो गओ आज अहानौ।।*
*तनक तनक कामन के काजैं, हो रओ भौत बहानौ।*
*ऊसई फूले फिरत भरम में, धोखौ होत दिखानौ।*
*देख चुके 'दुर्गेश' नयन सैं, जौ मतलबी जमानौ।*

जिसे अपना मानकर हमने प्रेम किया वह पराया सिद्ध हुआ। अपना स्वार्थ–सिद्ध होने के पश्चात् लोग दुख भूल जाते हैं। वह उक्ति आज सच हो गई। थोड़े–थोड़े से काम के लिए आज बहाने किये जाते हैं। व्यर्थ संबंधों के भ्रम में भूल कर रहे हो, हमें तो धोखा होता दिखाई दे रहा है। कवि दुर्गेश कहते हैं कि हमने परख लिया है यह सारा संसार तो घोर स्वार्थी है।

*ऊसई नियत डुला रये भैया, जा विष की बौलैया।*
*छिन भर की सुख सुविधा काजै, उड़त फिरत कनकैया।।*
*समर समर कैं पग रखियौ तुम, जा काँटन की सैया।*
*चार दिना की रात चाँदनी, फिर लगनें लौलैया।*
*कजन तुमई 'दुर्गेश' चूक गये, को है गैल बतैया।।*

बिना सोचे समझे काम–वासना के चक्र में फँसना उचित नहीं है। यह तो विष की बेलि है। क्षणिक सुख प्राप्ति के लिए पतंग की भाँति फड़फड़ाना ठीक नहीं है। इस जीवन में संभलकर कदम रखना, ये कांटों की सेज है। ये सारे के सारे सुख कुछ ही दिन के लिए है। फिर जीवन की शाम होने वाली है। कवि दुर्गेश कहते हैं कि

यदि तुम ही चूक गये तो फिर कोई रास्ता बताने वाला नहीं है।

*उनखौं हम सैं मतलब नैया, उनके औरये सैयाँ।*
*ऊसई उनकी बाट निहारैं, गिन रये सरग तरैयाँ।*

*बिना बरेदी की जे बगरऊ, बिड़रत फिर रई गैयाँ।*
*इतै अकेले कौवा रै गये, उड़ गई सगुन चिरैयाँ।*
*पकरैं नई 'दुर्गेश' भूलकैं, ई बिरछा की छैयाँ।।*

(अपनी प्रेमिका के बदले हुए दृष्टिकोण से प्रेमी मन पछता रहा है) वह सोचता है कि उन्हें (प्रेमिका को) हमसे कोई लगाव नहीं है उनका प्रेम दूसरे व्यक्ति से हैं। हम व्यर्थ ही इनके पीछे पागल बने फिरते हैं। जिस प्रकार बिना गाय चराने वाले के अपने मन से उजार करने वाली गैया घूमती रहती हैं उसी प्रकार इनके क्रियाकलाप हैं। यहाँ केवल कौवा बचे हैं सगुन की चिड़ियाँ पयान कर गई हैं। कवि दुर्गेश कहते हैं कि भूलकर भी इस वृक्ष की छाया नहीं पकड़ेंगे।

*ऊसई उनपै गरब करत रये, पर की पीर हरत रये।*
*हमका जानें धोकौ हुइयै, अपनौ जान मरत रये।।*
*पूरी हुइयै आश अधूरी, भारी धीर धरत रये।*
*खा खा मन की मुलक मिठाई, रीतौ पेट भरत रये।*
*कीसैं कये 'दुर्गेश' विरह की, आगी बीच बरत रये।*

(एक विरह का मारा प्रेमी विश्वासघात के कारण पीड़ित है। उसे अपनी प्रेम–पिपासा की पुष्टि की पूर्ण संभावना थी। मन ही मन मोदक खाते रहे फिरभी रहे भूखे के भूखे। न जाने कब से इस विरहाग्नि में जल रहे हैं। अब यह अन्तर्व्यथा किसके समक्ष प्रकट करें) व्यर्थ ही उनके ऊपर गर्व करते रहे और दूसरों के दुख मिटाते रहे। हम क्या जानते थे कि हमारे साथ धोखा होगा ? अपना समझकर प्रान देने को तत्पर रहे। मन में यह धैर्य रखे रहे कि कभी



मन की आशा पूरी होगी। मन के लड्डू खाकर खाली पेट भरने का झूठा संतोष करते रहे। कवि दुर्गेश कहते हैं कि आप बीती किसे सुनाये, विरह की अग्नि में अभी तक जलते रहे।

*कड़ गई पूरी जबर जबानी, अबका खैंचातानीं।*
*जेठमास में सूकौ सबरौ, नेह नदी कौ पानीं।।*
*ठाँढे रै गये टूँट पुरानें, दिन कड़ गये तूफानी।*
*अब का नदिया पार करें हम, लैकें नांव पुरानीं।*
*कैबे खौं ''दुर्गेश'' हमेशा, रै गई एक कहानी।।*

यौवन के मद से अंधे होने का समय निकल गया है, अब कुछ आकर्षण की क्या आवश्यकता ? युवाकाल समाप्त होने के पश्चात् कामोद्दीपन होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। विषय–वासना का आवेग और काम का ज्वर तो युवावस्था में ही कष्ट देता है। जिस प्रकार ज्येष्ठ के महीने में नदी का पानी सूख जाता है उसी प्रकार आयु ढलते ही शारीरिक शैथिल्य के साथ ही वासना का आवेग भी शांत हो जाता है। अब पुरानी नाव को लेकर हम नदी पार करने का प्रयास क्यों व्यर्थ में करें ? कवि दुर्गेश कहते हैं कि केवल कहने को कहानी शेष रह गई है। (केवल यौवन की स्मृति मात्र ही शेष रह जाती है।)

*मनकी विषय वासना त्यागौ, मोंह नींद सैं जागौ।*
*विष सै बुझी वासना रससैं, मन अपनौ नईं पागौ।*
*इन इन्दिन खौं वश में करकें, संयम गोला दागौ।*
*तुमें शरम नईं दुर्भावन कौ, पैरें फिर रये बागौ।*
*नेह नदी ''दुर्गेश'' सूक गई, तीर छोड़ कै भागौ।।*

वृद्धावस्था के आते ही विषय वासना से मन को दूर रखना उचित है। इसलिये आशक्ति को त्यागकर मोह रूप नींद से जग जाओ। काम–वासना तो विष के समान है। अब तो संयम–नियम का

विधिवत् पालन करते हुए इन्द्रियों को नियंत्रित रखना आवश्यक है। यदि हम इस अवस्था में भी इनसे दूर नहीं हट सके, तो इससे बड़ी लज्जाजनक बात और क्या हो सकती है। कवि दुर्गेश कहते हैं कि नेह रूपी नदी सूख चुकी है अब इसका किनारा छोड़ ईश्वर की आराधना की ओर चले जाओ।

*बूँदा माथैं लगें सुहानौ, बरनन करबैं कानौं।*
*जैसें चौरे नभमण्डल में, सूरज उगत दिखानौ*
*कै अदराते दमकत नौनौं, पूरौ चंदा मानौ।*
*जियै देख 'दुर्गेश' बिचारौ, झुक झुक जात जमानौ।*

एक युवती के माथे पर लगी हुई गोल बिन्दी सुशोभित हो रही है। उसका कहाँ तक वर्णन किया जाय। वह आकाश मण्डल में उगते हुए प्रातःकालीन सूर्य के समान अथवा पूर्णमासी के आधी रात के चन्दा के समान प्रतीत हो रहा है। जिसके कारण सारा संसार उसकी ओर आकर्षित हो रहा है। कवि दुर्गेश उसे देखते हुए जीवित हैं।

*जिनपै नशा काम कौ छा रओ, हँसी बसंत उड़ा रओ।*
*छरी छबीली छनकीली सी, तिरियँन खौ चमका रओ।।*
*कुहू कुहू कह कोयलियँन सैं, का का बोल सुना रओ।*
*कुंद कलिन सी नई बधुवँन सै हँस हँस दाँत दिखारओ।*
*लाल पात नये नये मूँगा से, ओंठन सैं इतरा रओ।।*

बसंत ऋतु उन लोगों की दशा पर हँसी कर रहा जिन पर काम का नशा चढ़ा हुआ है। नवेली सुन्दर और चंचल नारियों की यौवन आभा को बढ़ा रहा है। कोयल की कुहुक और प्रकृति का मनमोहक सौन्दर्य काम–पिपासा की वृद्धि करने में समर्थ होता है। कुंद पुष्प की कलियाँ नववधू की तरह मानो हँसकर अपनी दंत पंक्ति दिखा रही हो। मूंगा की तरह लाल पत्तों को देखकर लगता है जैसे बसंत अपनी ठसक दिखा रहा हो।



## नारायण दास सोनी 'विवेक'

बुन्देली के कवि श्री नारायण दास सोनी 'विवेक' का जन्म 11 सितम्बर सन् 1938 को टीकमगढ़ में हुआ। इनके पिता जी का नाम श्री मद्दू लाल सोनी तथा माता जी का नाम श्रीमती गनेशीबाई था। इन्होंने प्राथमिक से लेकर स्नातक तक शिक्षा टीकमगढ़ में ही प्राप्त की। बाद में 1962 में सागर विश्वविद्यालय से भूगोल में स्नातकोत्तर उपाधि हासिल की। 1962 में ही इन्हें शिक्षक के पद पर नियुक्त कर दिया गया। सितम्बर 2000 में आप वरिष्ठ व्याख्याता के पद से सेवानिवृत्त हुए। इनका विवाह 1958 में सिंधवाहा (महरौनी) निवासी भगवती सोनी के साथ हुआ। आपने प्रारंभ में फुटकर रचनाएँ लिखीं। बाद में 1972 से व्यवस्थित रूप से लिखना प्रारंभ किया। आप श्रृंगार, व्यंग्य में सिद्धहस्त हैं। इनकी स्फुट रचनाएँ ही प्रकाशित हैं। काव्य संग्रह अप्रकाशित हैं।

### चौकड़ियाँ

*तुमने चुरियाँ जब खनकाईं, मन भओ पत्ता नाईं।*
*तुमने लटें समारी अपनी, बास भरीं मन भाईं।*

*उमग उठो मन दरस परस खों, तनकऊ चैना नाईं।*
*कैसी चुम्मक रूप तुमारौ, खिंचत जात ओइ ताईं।*

नायक नायिका से कहता है कि जब तुमने चूड़ियों को खनकाया तो मेरा मन पत्ते की तरह विचलित हो गया। जब तुमने अपनी केश सज्जा की, तो उनकी सुगन्ध मेरे मन में समा गई। मेरा मन तुम्हारे दर्शन व स्पर्श को व्याकुल हो उठा है। तुम्हारा रूप चुम्बक की तरह है, मेरा मन उसी ओर लगता खिंचता जा रहा है।

*नैना तीर सें गजब तुम्हारे, चलत गैलारे मारे।*
*तीर करत घायल जब लागत, नैन चलत ही मारे।*
*तीर के घायल मरत एक दिन, नैन के रोज विचारे।*
*घालत तीर जान के दुश्मन, नैना प्राण प्यारे।।*

तुम्हारे नेत्र रूपी बाण अद्‌भुत मारक हैं, इन्होंने अनेक राहगीरों को घायल किया है। तीर तो लगने पर घाव करता है किन्तु तुम्हारे नेत्र तो चलते–चलते बिना लगे घायल कर रहे हैं। तीर से घायल व्यक्ति एक दिन ही मरता है जबकि तेरे नेत्रों से घायल प्रतिदिन मरता है। तुम्हारे प्राणों से प्रिय ये नेत्र मेरे जान के दुश्मन हो गये हैं, जो प्रतिदिन घायल करते हैं।

*तुम्हरी बिंदिया ईंगुर बारी, लागत बड़ी प्यारी।*
*माथे बीच दमक रई जैसें, सूरज ऊँगन न्यारी।*
*सुन्दरता बड़ जात चौगनी, मुइयाँ लागत प्यारी।*
*बिंदिया बिना लागै मों सूनौ, बिन गुलाब की क्यारी।*

तेरी अबीर से लगी ये बिंदी अत्यधिक प्रिय लगती है। माथे के बीच में ऐसे दमक रही है जैसे सूरज उग रहा हो। इस बिंदी से तुम्हारे मुख का सौन्दर्य चार गुना बढ़ जाता है। बिना बिंदी के ये तुम्हारा मुख उसी तरह सूना लगता है जिस तरह बिना गुलाब के क्यारी होती है।



*मन में फूलीं नईं समावें, काऊ सें का कावें।*
*जा दिन सें गौने की सुन लई, मन–मन मिसरी खावें।*
*रात दिना ऊ दिन की लग रई, जा दिन उन संग जाबें।*
*वो दिन आओ हिलकियाँ बंध गईं, नैहर छूटे जाबें।।*

जिस दिन से नायिका ने द्विरागमन (गौने) की बात सुनी है उसी दिन से वह अत्यधिक प्रसन्न है। मन ही मन प्रफुल्लित है, वह किस से क्या कहे? मन में ही मिसरी का स्वाद ग्रहण कर रही है। रात–दिन उसी घड़ी के बारे में सोचती रहती है जिस घड़ी उसे अपने प्रिय के साथ जाना है। वह शुभ दिन भी आ गया किन्तु उस दिन तो उसे रोना इसलिए आ रहा है क्योंकि उसका मायका छूटा जा रहा है।

*ऐसौ मो लओ तुमने सैनन, कोऊ का मोहै बैनन।*
*सबसें बाँके नैन तुमारे, ऊ सें बाँकी चितवन।।*
*छब तुमरे नैनन की जैसी, है नइयाँ कऊँ त्रिभुवन।*
*रुच–रुच कें ब्रह्मा ने गढ़ दये, रूप दओ मन मोहन।।*

तुमने इशारों के द्वारा मुझे इतना मोहित कर लिया कि कोई वचनों के द्वारा भी नहीं कर सकता था। तुम्हारे नेत्र सबसे सुन्दर हैं और उनसे सुन्दर तुम्हारी चितवन (नेत्रों से देखना) है। तुम्हारे नेत्रों जैसा सौन्दर्य तीनों लोकों में किसी का नहीं है। इनको विधाता ने बड़े ही सुरुचिपूर्ण ढंग से बनाया है जिन्हें कृष्ण ने अपना मोहिनी रूप दिया है।

*कोऊ कछु कात रयै तुमसें, मों न मोड़ियो हमसें।*
*करियौ ऐन भरोसे मो पै, दगा न हुइये हमसें।।*
*कइयक कैबे बारे मिलहैं, झूँटी साँची, तुमसें।*
*हमतौ भूल गये ई जग खों, प्रीत करी ती जब सें।।*

तुमसे कोई कुछ भी कहता रहे किन्तु मुझसे मुँह मत मोड़ना। मुझ पर विश्वास रखना, तुम्हारे साथ मेरे द्वारा धोखा नहीं किया जाएगा। कई लोग सत्य व असत्य बातें कहने वाले मिलेंगे। मैंने जब से तुमसे प्रेम किया है तब से सारे संसार को भूल गया हूँ।

*भोंयें हो रईं काम कमानें, जानें की के लानें।*
*पलकन रेख डोर में बाँदीं, जानें रसिक सयाने।*
*चितवन बान चड़े तिन ऊपर, पुतरन तके निसानें।*
*देखत बान होत जे घायल, लगत होश उड़ जानें।।*

कवि नायिका के नेत्रों का वर्णन करते हुए कहता है कि तुम्हारी भौंहें धनुष के समान हो रही है जिससे जाने कौन घायल होगा? पलकों की रेख धनुष की डोरी के समान बंधी है, यह प्रेमी ही जानते हैं। तुम्हारा देखना बाण चढ़ाने के समान है और नेत्र पुतलियाँ निशाना साधती हैं। तुम्हारे इस तरह देखने से ये सब घायल होकर बेहोश हो जाएँगे।

*रोउत–रोउत नैना हारे, आये न प्रान प्यारे।*
*रीत गये घट इन नैनन के, सूक गये अंसुआ रे।।*
*नैनन कोये सांवरे पर गये, जिय की जरन धुंआरे।*
*झुलस गई जा चंदन देहा, नेहा बिना तुमारे।।*

रुदन करते–करते मेरे नेत्र थक गए हैं लेकिन मेरे प्राणों के प्रिय प्रियतम नहीं आये हैं। इन नेत्रों के घट खाली हो गए तथा अश्रु सूख गए हैं। नेत्रों की कोरें हृदय की धुंआयुक्त जलन से श्यामल हो गई हैं। तुम्हारे प्रेम के बिना मेरी यह चन्दन सी देह झुलस कर काली हो गई है।

*जो कऊँ तुम सुरमा हो जातीं, अखियाँ ठंडक पातीं।*
*भनक न परती काऊ जग में, तुम अखियन में रातीं।*



*जब हम सोते पलक मूँद कें, अखियन में सो जातीं।*
*अखियाँ नोनी लगतीं तुमसे, तुम बिन सूनी रातीं।।*

नायक नायिका से कहता है कि यदि तुम काजल हो जाती तो मेरे नेत्रों में उससे शीतलता रहती। संसार में किसी को ज्ञात भी न होता और तुम नेत्रों में रहतीं। जब हम पलकों को बन्दकर सोते तो तुम भी आँखों में ही सो जाती। तुम्हारे बिना जो मेरी आँखें सूनी रहती है वे तुम्हारे रहने से अच्छी लगती हैं।

*फेरत पीठ माव कौ मइना, मनुआं करत कही ना।*
*लगत बसंत, बैर बैरन भई, मन में नइयाँ चैना।*
*मन के रंग भरे फूलन में, भौंरा बन गये नैना।*
*मन उमंग से उपजीं तितलीं, कोयल मन के बैना।।*

माघ के महीने ने जैसे ही पीठ फेरी अर्थात् वह जैसे ही बीता, मन वश में नहीं रहता है। बसन्त के आगमन से हवा शत्रु हो गई है, जिससे मन में शांति नहीं है। फूलों में विभिन्न प्रकार के रंग हैं और मेरे नेत्र भ्रमर बनकर उनके पास मंडरा रहे हैं। मन में प्रसन्नता से तितलियाँ प्रकट हो गई हैं तथा वचन कोयल के समान मीठे हो गये हैं।

*बिरमा माया जाल बनाओ, प्रानी खों उरझाओ।*
*ज्ञानी कात छोड़ माया खों, ईसुर निस दिन ध्याओ।*
*निन्यान्वे माया के फन्दें, एक ने ईसुर पाओ।*
*होती नईं जरूरी माया, विधि नें काय बनाओ।*

विधाता ने प्राणियों को उलझाने हेतु मायारूपी जाल का निर्माण किया है। ज्ञानी कहते हैं कि माया का परित्याग कर प्रतिदिन ईश्वर का ध्यान करो। निन्यानवे से सौ करने के चक्कर में एक ने भी ईश्वर को प्राप्त नहीं किया। कवि प्रश्न करता है कि यदि माया

आवश्यक नहीं थी तो विधाता ने उसे क्यों रचा?

*सब कोउ कात बुरई है माया, उर पापी है काया।*
*काया उर माया की जोड़ी, मन बिरथा भरमाया।*
*कम हैं पुन्न पाप हैं जाँदा, पाप का राज कहाया।*
*जी कौ राज ओई सी कानें, रनें ओइ की छाया।।*

सभी लोग माया की बुराई करते हुए कहते हैं कि यह पाप की काया है। शरीर तथा माया की जोड़ी ने व्यर्थ में भ्रम उत्पन्न कर दिया है। जब पुण्य कम और पाप अधिक हैं, तो पाप का राज्य कहलाया। कवि कहता है कि जिसका राज्य है, उसी की प्रशंसा करके, उसकी ही छत्रछाया में रहना है।



## नवल किशोर सोनी 'मायूस'

कवि श्री नवल किशोर सोनी 'मायूस' का जन्म छतरपुर में श्री ठाकुर दास सोनी 'करइया' के यहाँ उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मुन्नी देवी की कोख से 5 जुलाई सन् 1941 को हुआ। इनकी प्राथमिक, माध्यमिक तथा हाई स्कूल तक की शिक्षा छतरपुर के स्कूलों में ही हुई। हाई स्कूल उत्तीर्ण करने के बाद इनका विवाह चिरगाँव निवासी जानकीदेवी के साथ 1958 में हुआ। इन्हें पंचायत विभाग में सचिव पंचायत के रूप में 1959 में शासकीय सेवा करने का आदेश मिला और उन्होंने अनेक पंचायतों में इस पद पर कार्य किया। 31 जुलाई 2001 को उप अंकेक्षक के पद से सेवा निवृत्त हुए।

इनको कविता लिखने का शौक बचपन से ही रहा किन्तु विधिवत लेखन 1975 से प्रारंभ किया। इन्होंने बुन्देली, हिन्दी तथा उर्दू तीनों भाषाओं में रचनायें लिखीं हैं। विभिन्न शहरों के मंचों पर काव्य पाठ के साथ आकाशवाणी से निरन्तर इनकी कविताएँ प्रसारित होती रहती हैं। अनेक समाचार पत्र व पत्रिकायें में रचनायें प्रकाशित हुई हैं। इन्हें कालपी, पन्ना, बिजावर तथा छतरपुर की साहित्यिक संस्थाओं ने रचनाधर्मिता हेतु सम्मानित किया है। आपकी चार पुस्तकें प्रकाशित

हैं – 1. रैबे इतै देवता तरसें, 2. एहसास की गहराइयाँ, 3. चौकड़िया शतक, 4. बहत्तर के सामने। इनकी अनेक रचनाओं को लोक तक पहुँचाने में बुन्देली गायक श्री देशराज पटैरिया ने भी योगदान दिया है।

## चौकड़ियाँ

*सब एक रहें सब नेक रहें, सबरे दुर्भाव मिटें जरसें।*
*निज भारत देश अखण्ड रहै, निज प्रेम के रंग इतै बरसें।*
*करनैं है विकास अबै इतनो, बन जाँय बड़े दुनिया भरसें।*
*अज्ञान मिटै कछु लोगन को, कर जोर करें बिनती हरसें।*

हम सब एकता के सूत्र में नेक विचारों से परिपूरित हो समस्त दुर्भावनाओं को जड़ से समाप्त करते हुए बँधे रहें। हमारा भारत देश की अखण्डता बनी रहे। प्रेम का वातावरण बनाने हेतु प्रेम वर्षा यहाँ हो। अब हमें इतना विकास करना है कि विश्व में सर्वश्रेष्ठ बन जायें। मैं प्रसन्नतापूर्वक हाथ जोड़कर विनय करता हूँ कि जो कुछ लोग यहाँ अज्ञानी हैं, उनका अज्ञान समाप्त हो जाये।

*जब चौंच मिली चुन सोउ मिलै, इतने न अबै उकताब पिया।*
*सबरी विपदा कट जैय इतै, कइ मान लो अन्त न जाव पिया।*
*तुम काम करौ तौ कछू मन सें, सबरे सुख एइ सें पाव पिया।*
*सबके हित के भए काज शुरू, परमेसुर के गुन गाव पिया।।*

विपत्ति से परेशान अपने पति को समझाती हुए उसकी प्रिया कहती है कि प्रिय, जब ईश्वर ने मुँह दिया है तो भोजन भी देगा, अभी इतने अधिक व्यग्र मत हो। सारी विपत्तियाँ यहीं समाप्त हो जायेंगी, मेरा कहना मानो, दूसरे स्थान पर मत जाइये। तुम जो भी



काम करो, मन लगाकर करो तो सभी सुख प्राप्त होंगे। सभी लोगों के कल्याणार्थ यहाँ काम प्रारंभ हो गए हैं, अब ईश्वर के गुणों का गायन करो।

*सब कोउ जो चाहत है जग में, अपने घर आय सजै पलना।*
*मचलै ठिनकै अँगना में लली, पलना में परो किलकै ललना।*
*सबरे सुख चैन मिलें इनखाँ, इनके सँग कोउ करै छलना।*
*जब दोइ हुयैं तौ मजे में पलैं, कउँ भौत भए तौ मिलैं कल ना।*

संसार में सभी लोग चाहते हैं कि उनके घर में पलना सजे अर्थात् नवजात शिशु जन्मे। आँगन में बहू मचले तथा ठनगन करे तथा पालना में लेटा बच्चा किलकारी मारे। सारे सुख व शांति इसी में मिलेगी, इनके साथ कोई छल कपट न करे। जब दो ही बच्चे हों तो उनका लालन–पालन मजे से होता है और यदि अधिक हुए तो फिर चैन नहीं मिलता।

*छिन में जरकैं सब राख हुयै, इतनो न गुमान करौ तन को।*
*इयै जातन में नँइ झेल लगै, विरथा अभिमान करौ धन को।*
*कछू नेकी बदी को न ध्यान करौ, अबलौ सब काम करो मन को।*
*अपनी अब चाव भलाइ कछू, तौ जिया न जराव गरीबन को।।*

इस शरीर का इतना घमण्ड मत करो, यह कुछ ही क्षणों में जलकर राख हो जाएगा। इस धन का व्यर्थ अभिमान करते हो इसको समाप्त होने में देरी नहीं लगती। हमनें अच्छे–बुरे का ध्यान दिए बिना अभी तक मनमाने काम किए हैं। अब यदि तुम अपनी भलाई चाहते हो तो गरीबों के हृदयों को मत जलाइये।

*पइसा बिन काम चलै न कछू, जब आन परै घर में अटका।*
*कउँ आज करो खरचा सबरो, हम काल बिदैंय फिरैं पटका।।*

*जिनकैं जुर जैय पुँजी अपनी, उनखाँ नइँ रैय कछू खटका।*
*मिल एकइ एक हजार हुयैं, और बूँदइ बूँद–भरै मटका।।*

पैसों के बिना कोई काम नहीं चलता, जब भी घर में कोई काम रुकता है, तो पैसे से ही चलता है। यदि हमने अपव्यय करके सभी पैसा आज ही खर्च कर दिया तो कल फटेहाल जीवन जीना पड़ेगा। जिनके पास कुछ पूँजी जमा हो जाएगी, तो उन्हें कोई चिन्ता न रहेगी। एक–एक मिलकर एक हजार वैसे ही होते हैं जिस प्रकार बूँद–बूँद पानी से मटका भर जाता है।

## घनाक्षरी (आतंकवाद)

*फिरकें पधारौ माइ धरती पै एक बेर,*
*विनय करत हम आज हाँत जोरकें।*
*अब उग्रवादी हमें सुख सें न रान देत,*
*माइ धर देव तुम घिचिया मरोर कें*
*अपुन सबारी जौन सिंह पै करें हौ माइ,*
*ओइ छोड़ देव इनैं खाबै टोर टोर कें।*
*नदियाँ रकत को बहाबैं इतै जौन जौन,*
*लै तौ जाइ माइ उनैं इतै सें बटोर कें।।*

माँ फिर से एक बार आप धरती पर पधारिये, आज हम करबद्ध यह प्रार्थना करते हैं, अब आतंकवादी हमें सुख–शांति से नहीं रहने देते, आप इनकी गर्दन मरोड़कर रख दीजिए। माँ, आप जिस सिंह पर सवार हो उसी को छोड़ दीजिए जिससे वह उन्हें खा जाये। जो भी यहाँ रक्त की नदियाँ बहा रहे हैं, उन्हें आप समेट कर ले जाइये।

*अब दिन रात ऐंन दौंदरा लगे हैं दैन,*
*इन उग्रवादियन खौं तौ ललकार दो।*



*पेरत हैं भौत हमें आनकें जे आँतें रोज,*
*परया बुखार मोरे देश कौ उतार दो।।*
*बड़े बड़े पापी माइ तुमनें सँगोए इतै,*
*जैसे सुदरें जे आकें इनखाँ सुदार दो।*
*बिनती करें 'नबल' माइ तुम हौ सबल,*
*इनपै अपुन ऐइ शेरै उसकार दो।।*

अब ये उग्रवादी दिन रात उपद्रव कर रहे हैं, इन्हें आप ललकार दीजिए। ये मेरे देश भारत को एक दिन छोड़कर प्रतिदिन आने वाले परया बुखार की तरह परेशान कर रहे हैं अतः आप मेरे देश के इस परया बुखार को उतार दीजिए। आपने बड़े–बड़े पापियों का संहार करके उनकी गति को सुधार दिया उसी तरह इन आतंकवादियों को भी सुधार दीजिए। कवि नवल कहते हैं कि हे माँ! तुम शक्ति स्वरूपा हो, इन (आतंकवादियों) पर अपने शेर से हमला करवा दीजिए।

*अब लौ न बोले हम तुमसें निचाट कात,*
*बात जा हमाइ सुन लेव कान खोलकें।*
*करनी पै अपनी पछाऊँ पसतैव तुम,*
*कब लौ बचत रैव झूँटी बोल बोल कें।।*
*भारी है हजारन पै भारत कौ एक वीर*
*अबकीं सें धर दैहैं बकला सो छोलकें।*
*बिसरौ न देव ध्यान सीमा पै अबै हैं ज्वान,*
*कर दैहैं छजना सी छाती कोल कोल कें।।*

अब तुम (आतंकवादी) कान खोलकर सुन लीजिए, हम सही कहते हैं कि अभी तक हम (भारतवासी) बोले नहीं, सब कुछ सहते रहे। तुम अपने कर्मों पर बाद में प्रायश्चित करोगे, तुम कब तक झूठ बोलकर बचते रहोगे? भारत का एक वीर, हजारों पर भारी पड़ता है

यदि अबकी बार हमला किया तो पेड़ की छाल छोलने की तरह निर्दयतापूर्वक तुम्हारी खाल छील देंगे। यह मत भूल जाओ कि सीमा पर सेना के जवान तैनात हैं जो तुम्हारी छाती में गोली मारकर उसे छलनी कर देंगे।

## चौकड़ियाँ (सावन)

*आ गओ है सावन को मइना, भइया नें सुध लइ ना।*
*कौन दिनाँ आहैं ल्वावे खौं, चिठिया लौ तौ दइ ना।।*
*पौंचीं सब वैनें भइयन कें, मैंइ अवै कौ गइ ना।।*
*उड़ जाती जब चाय इतै सें, हाय चिरइया भइ ना।।*
*अब जैसौ 'मायूस' लगत है, मौं सें जाबै कइ ना।।*

श्रावण मास आ गया है और भाई ने अभी तक सुध नहीं ली है। किस दिन मुझे लेने आ रहे हैं, इसकी सूचना पत्र द्वारा भी नहीं दी है। सभी बहनें अपने भाइयों के पास पहुँच गई हैं, मैं ही मात्र अभी तक नहीं गई हूँ। यदि मैं चिड़िया होती तो उड़कर कहीं भी चली जाती। मायूस कहते हैं कि अब उससे अपनी पीड़ा कही नहीं जाती।

*देखौ लाला की बरजोरी, गालन मल दइ रोरी।*
*उननैं सब गुइँयन के सामूँ, बइयाँ पकरी मोरी।।*
*जबरइँ गैल रोककैं उननैं, नरम कलाइ मरोरी।*
*मोरे तन सें तान चुनरिया, जबरइँ रँग में बोरी।।*
*मोखौं अपने अंग लगाकैं, ऐनइँ खेली होरी।*
*कात कछू 'मायूस' बनै ना, जैसी गत भइ मोरी।।*

मेरे देवर ने जबरदस्ती मेरे गालों में अबीर मल दी है। उन्होंने सभी सखियों के सामने मेरी बाँह पकड़ी, जबरन मेरा रास्ता रोककर मेरी कोमल कलाई को मरोड़ दिया है। मेरी चुनरिया को खींचकर उसे जबरन रंग में डुबो दिया है। उन्होंने मुझे अपने अंगों से लगाकर



खूब होली खेली। मायूस कवि कहते हैं कि वह (भाभी) कहती है कि मेरी होली खेलने में जो दुर्गति हुई उसको बताया नहीं जा सकता है।

## फाग– चेतावनी

*जो तन माटी में मिल जैहै, कुल्ल दिनन नँइ रैहै।*
*तेल फुलेल मलैं का हौनें, जो पानी में बैहै।।*
*जीनें दओ है जो तन हमखौ, ओइ इयै लै लैहै।।*
*प्रान निकर हैं जब ई में सें, फूँकौ सब घर कैहै।।*
*सबरन की आँखन के साँमू, धरती इयै पचैहै।।*
*रोके सें 'मायूस' न रुकहै, ईको जैबो तैहै।।*

यह शरीर नश्वर है, जिसे मिट्टी में मिल जाना है, और लम्बे समय तक नहीं रहना है। इत्र, तेल आदि के मलने से कुछ नहीं होगा, सब पानी में ही बह जाएगा। जिसने यह शरीर दिया है वही उसे ले लेगा। जब इसमें से प्राण निकल जाएँगे तो घर के सभी लोग इसे जलाने हेतु कहेंगे। सभी लोगों के देखते–देखते ही धरती माँ इस शरीर को गला देंगी। कवि मायूस कहते हैं कि इसका जाना (मृत्यु होना) सुनिश्चित है, जो किसी के रोके से नहीं रुकेगा।

*जीवन चार दिनाँ के लानैं, सबसें मिलकें रानैं।*
*दो बातन की सुनलो ओजू, गम्म अपुन खौं खानैं।।*
*घट नँइ मानैं हम औरन खौं, मोल सबइ कों जानैं।।*
*सुख मिलहै नैंकैं रैवे में, बात हमैं जा कानैं।।*
*राम रहीम ईशु गुरु नानक, इनखौं एकइ मानैं।*
*और कछू 'मायूस' न माँगैं, प्रेम तनक सो चानैं।।*

यह जीवन चार दिन का अर्थात् क्षण भंगुर है जिससे हमें मिल जुलकर रहना है। हमसे कोई दो बात गलत भी कहता है तो हमें

उसे सुनकर धैर्य रखना है। हमें सभी का मूल्य समझना चाहिए, किसी को कम नहीं आँकना चाहिए। हमें यह बात कहना है कि झुककर रहने में सुख मिलता है। राम, रहीम, यीशु तथा गुरु नानक सभी को एक मानना चाहिए। कवि मायूस कहते हैं कि उन्हें और कुछ नहीं चाहिए सिर्फ थोड़ा सा प्रेम चाहिए है।



## लल्लूमल चौरसिया

छतरपुर जिले की तहसील बिजावर में स्थित ग्राम पिपट में श्री लल्लूमल चौरसिया का जन्म 30 दिसम्बर 1943 को श्री चंदूलाल जी चौरसिया के घर हुआ। इनकी माताश्री का नाम स्व. श्रीमती मूलाबाई था। इनकी शिक्षा पिपट, बिजावर तथा छतरपुर में सम्पन्न हुई। ये चौकड़िया बहुत दिनों से लिख रहे हैं। इनकी कुछ समाचार पत्र–पत्रिकाओं में फुटकर चौकड़िया प्रकाशित हैं। संकलन के रूप में इनकी फागें अभी प्रकाशित नहीं हुई हैं। इनकी रचनाओं में बुन्देली संस्कृति के प्रति गहन लगाव देखने को मिलता है।

*जिनकी कारी है घरबारी, बड़े भाग हैं भारीं।*
*निर्भय हाट बजारन जावै, न तनकउ लाचारी।।*
*हंसी मजाक करै न कोउ, न सीटी न तारी।*
*घर के काम एक से चलबैं का गोरी का कारी।।*

इस छंद में कवि ने काले रंग की स्त्री की विशेषताएँ बताई हैं,

उन व्यक्तियों के भाग्य बहुत उच्च हैं जिनकी पत्नी काले रंग की हैं, वे बिना किसी भय के बाजार जाती हैं, उनके अंदर किसी प्रकार की लाचारी नहीं रहती, उनसे कोई भद्दे मजाक नहीं कर सकता, न सींटी और न ही ताली बजाता है। आगे कवि चौरसिया जी कहते हैं कि गृहस्थी का कार्य एक से चलता है और वह चाहे गोरी हो या फिर काली, रंग महत्वपूर्ण नहीं है, कार्य महत्वपूर्ण है।

*पर गओ जरुअन के संग रैबो, कां लौ सीखें सैबो।*
*कानी अपनौ टैंट न देखें, पर पर फुली बतैवौ।*
*बड़ौ सहज धजरी कौ लाला, करिया सांप बनैवौ।*
*कैसे सधें दोउद इक संगे, हंसबौ गाल फुलैबौ।।*

कवि चौरसिया कहते हैं कि जो हमें ईर्ष्यालु लोगों के साथ रहना पड़ गया। अब कहाँ तक सहन किया जाये ? काना व्यक्ति अपनी आँख का टेंट नहीं देखता बल्कि दूसरों की फुली निहारते हैं अर्थात् अपनी बड़ी गलती को न देख दूसरों की छोटी–छोटी गलतियों को खोलते हैं। आजकल व्यक्तियों ने तो झूठ बोलने में हद कर दी है वे अपने तर्कों (कुतर्कों) के माध्यम से धज्जी को भी विषधारी साँप साबित कर देते हैं। एक साथ दो असंभव काम नहीं हो सकते हैं चाहे हँस लो या फिर गाल फुला दो, एक कर सकते हैं।

*गुइयां ससरे नौने रइयो, कुल की राखें रइयों।*
*सास ननद जो कांय कछू तो, दो बातें सुन लइयो।।*
*तऊ पैं करै अनर्गल तौ फिर, स्वामी सैं कै दइयो।*
*ई पै भी न माने तौ फिर, दो को चार सुनइया।।*

जब बेटी मायके से ससुराल जाती है तो उसको मायके में अपनों द्वारा किस तरह की सीख दी जाती है उसके बारे में कवि बताते हैं कि बेटी! ससुराल में अच्छी तरह से रहना। अपना और अपने इस कुल की मान–मर्यादा का ख्याल रखे रहना, कोई कुछ



कहने न पाये। सास व ननद तुमसे अगर कुछ कहे भी तो उनकी कुछ बातें सुन लेना, इसके बाद अगर वे अनाप–सनाप कहे तो फिर पति से कहना अगर इसके बाद भी न माने तो यदि वे दो बातें कहें तो तुम उन्हें चार बातें सुना देना।

*इक दिन खाली पिंजरा रैहैं, चलौ सुआ उड़ जैहै।*
*रंग रोगन सब जन कौ धन हैं, कछू काम न दैहै।।*
*कैसउ बन्द किबरियाँ करियो, छिन भर न रुक पैहै।*
*अपनी मन मरजी कौ मालिक, मरजी सें चल दैहौ।।*

इस छंद में कवि चौरसिया जी शरीर की नश्वरता एवं आत्मा को भव–बंधन से मुक्त मानते हुए कहते हैं कि एक दिन खाली पिंजरा रह जायेगा और सुआ रूपी जीव उड़ जायेगा। अर्थात् यह नश्वर शरीर भर बचेगा और प्राण निकल जायेंगे। सभी लोग धन दौलत को भी सब कुछ मानते हैं जबकि यह कुछ काम नहीं देगा उस समय कितने ही यत्न से शरीर की सभी खिड़कियाँ बंद कर ले लेकिन प्राण तो क्षणभर नहीं रुकेंगे, वह अमर है, अविनाशी है और अपनी मर्जी का मालिक है। उसकी जब भी इच्छा होगी, चला जायेगा।

*अंखियाँ दरसन खां छुछुआतीं, बात करैं चुचुआतीं।*
*जां ताँ भेद हिया के बरवस, बिन बोलें खुलबातीं।*
*मंत्र बिना करिया काटे के, कठिन मैर फुरबातीं।*
*महा मेघ सौं बरसें तऊं पै, कंडा सौं धुंधुआतीं।।*

कभी–कभी इन नेत्रों की विचित्र स्थिति हो जाती है, नायिका अपनी सखी से कहती है कि उनके (पति) दर्शन के लिए मेरी आँखें बहुत खोजते हुए तड़पती हैं और बातें करते हुए अश्रु बहाती है। कैसा भी भेद क्यों न हो ? हृदय कितना भी मना करे लेकिन आँखें न बोलकर भी सब कुछ कह जाती हैं। बिना काले साँप के उसे ही

और बिना झाड़फूँक के ये मैर (राज) खोलती हैं। जिस प्रकार कंडे में आग लगी हो और बहुत तेज बारिश हो तो ऐसे में धुँआ तो निकलता ही रहता है, उसी प्रकार ये आँखें उनके (पति) बिना विरह में दिनरात जलती रहती है।

*अंखियां जब काहू सें लगतीं, पके खता सीं दगतीं।*
*स्थिर रांय केन्द्र बिन्दु पे, नांय मांय न भगतीं।*
*मनभावन की झांई देखबे, रात दिना जे जगतीं।*
*ऐसी बिह्बल होयं लगी में, बेर बेर खुद ठगतीं।।*

आँखों की हालत बताते हुए कवि कहते हैं कि जब किसी से नजर लड़ती है तो पके हुए फोड़े जैसी दर्द देती है। बिलकुल एकटक होकर उन्हें निहारती रहती है, इधर–उधर नहीं जाती। मन को अच्छे लगने वाली की सूरत देखने के लिए वे रात दिन बराबर जगती रहती है। इस तरह नजर लड़ने से वे विह्वल हो जाती है और बार–बार खुद ठगती रहती है।



## डॉ. अवध किशोर जड़िया

बुन्देली के कवि डॉ. अवध किशोर जड़िया का जन्म हरपालपुर में 17 अगस्त 1948 को आलीपुरा स्टेट के राजवैद्य श्री ब्रजलाल जी के घर हुआ। इनके पिताजी स्वयं अच्छे ज्योतिष के ज्ञाता, वैद्य तथा साहित्य मर्मज्ञ रहे। उन्हीं से साहित्यिक संस्कार डॉ. जड़िया को प्राप्त हुए। इनकी प्रारंभिक शिक्षा हरपालपुर में ही हुई तथा चिकित्सीय स्नातक डिग्री बी.ए.एम.एस. ग्वालियर विश्वविद्यालय से स्वर्णपदक के साथ 1970 ई. में प्राप्त थी। इसके बाद आप शासकीय सेवा में आयुर्वेद चिकित्सा अधिकारी के रूप में आ गए। सन् 1977 में एक कृति 'वंदनीय बुन्देलखण्ड' प्रकाशित है। 'ऊधव शतक', 'कारे कन्हाई के कान लगी है' तथा 'विराग माला' काव्य संग्रह अप्रकाशित है। इनको कला संस्कृति साहित्य विद्यापीठ, 'मथुरा ने साहित्यालंकार', श्रीराम रामायण संस्कृति ट्रस्ट, ग्वालियर ने 'उदीयमान मानस मणि', अखिल भारतीय ब्रज साहित्य संकाय आगरा ने 'बुन्देली गौरव', अखिल भारतीय ब्रज साहित्य संगम मथुरा ने, कवि शिरोमणि तथा साहित्यानंद परिषद्, गोला गोकर्णनाथ ने 'काव्य रत्न' की उपाधियाँ मिली हैं। इनको संतोष सिंह बुन्देला पुरस्कार, डॉ. उल्फत सिंह

निर्भय पुरस्कार तथा सर्वधर्म समभाव सम्मान प्राप्त हुआ है। इनकी बुन्देली कविताओं में अनुप्रास, यमक, श्लेष के साथ विभिन्न रसों की छटा अपनी आभा बिखेरती है। इनकी कविताएँ लोक कंठों की हार बन चुकी है।

## श्री कृष्ण

*अम्बर में कलित कलान कौ करैया होय,*
*चाँदी कैसो पैया होय अमृत झरैया होय।*
*रसिक रिसैया होय, ललित मनैया होय,*
*मानिवे में चाहे कितनी हू हा हा दैया होय।।*
*आस पास खाश मकरंद कौ दिबैया होय,*
*सुघर लिवैया कै पराग कौ पिवैया होय।*
*नेह बरसैया होय और वर शैय्या होय,*
*झुकी सी डरैया होय चूमत कन्हैया होय।।*

आकाश में सोलहों कलाओं में विचरण करने वाला कलाधर चाँदी के पहिया के समान (पूर्ण रूप में) हो तथा जिससे अमृत झरता हो अर्थात् पूर्णिमा की रात्रि में पूर्ण चन्द्र आकाश में हँस रहा हो। रसिया (प्रेमी) रूठने वाला हो और मनाने वाला मनोहर (मनचाहा) हो फिर मनाने और मानने की मनोभिराम प्रक्रिया में कितने ही प्रकार से नायिका की विलास चेष्टायें आदि चोचले हों। चारों ओर रस से परिपूर्ण पुष्प हों जिन्हें रस–पान कराने की चाह हो और उस पराग को पीने की चाह से युक्त भ्रमर की भ्रमण कर रहा हो। उत्तम शैय्या पर स्नेह की निरन्तर वर्षा करने वाला प्रियतम हो और झुकी हुई डाल को कन्हैया चूम रहा हो अर्थात् प्रेम की आतुरता से श्रीकृष्ण ही में लीन प्रेयसी के नेह–रस का पान कन्हैया (श्रीकृष्ण) कर रहे हों।



*कैसो लगै मोरन को मुकुट तिहारे शीष,*
*तिलक तिहारे भाल कैसो सुसुहात हैं।*
*कलित कपोल कैसे नासिका निहारी नहीं,*
*कुण्डल बिहारी के कैसें दरसात हैं।।*
*कुंद सम दशन मुकुंद के सुने हैं किन्तु,*
*अधर अरुणारे जाने कैसे लखात हैं।*
*तेरी मुसकान जाल डाल जात गोपिन पै,*
*तनक दिखा तो भला कैसे मुसकात है।।*

हे कन्हैया! हम देखना चाहते हैं कि तुम्हारे सिर पर मोर पंखों का मुकुट और माथे पर तिलक कैसा लगता है? हमने नहीं देखा कि तुम्हारे गालों का लालित्य कैसा है और तुम्हारी नासिका कितनी सुन्दर है। कानों में कुण्डल पहिनने पर कैसी शोभा बढ़ जाती है? हमने नहीं देखा सुना तो अवश्य है कि तुम्हारे दाँत कुंद के समान श्वेत आभा युक्त है लेकिन अरुणिम अधरों की छटा कैसी दिखती है? यह नहीं मालूम। तुम्हारी मुस्कान गोपियों पर जाल डाल देती है ऐसी अनोखी मुस्कान की उस छटा की एक झलक के दर्शन हमें भी कर दीजिये।

## दिवारी

*दीपदान दैबे कारी कारी सारी धारी सोई,*
*मावस की प्यारी अँधियारी आज हो गई।*
*मौनियाँ सौ मौन साधें, हास फुलझड़िया सौ,*
*रूप के पटाखा सी नियारी आज हो गई।।*
*साक्षात लक्ष्मी सी गुण गरवीली लगै,*
*देखि देखि मति ये पुजारी आज हो गई।*
*देह दुतिमान अंग अंग दीप प्रतिमान,*
*ज्योतिमान् नायिका दिवारी आज हो गई।।*

नायिका को दीपावली के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए कवि कहता है कि नायिका ने दीपदान करने की चाह हृदय में रखकर काले रंग की साड़ी पहिन ली है मानों अमावस्या की प्यारी कालिमा छा गई हो। दिवारी में मौनियों की साधना की तरह वह मौन धारण किये हुए हैं और कभी हँसकर फुलझड़ियों का दृश्य दरशा देती है तो कभी उसके रूप की आभा से पटाखों का दीप्तिमय प्रदर्शन हो जाता है। सद्वृत्ति की उत्कर्षता और गुण की गहनता से वह प्रत्यक्ष लक्ष्मी जी का रूप लगती है। जिन्हें देखकर मेरी बुद्धि भी उनकी पुजारी बन गई। द्युतिमान (दीप्तियुक्त दिखना) शरीर का प्रत्येक अंग दीपक का प्रतिरूप दिखाई देने से वह प्रकाशमान नायिका दीवाली बन गई है।

*बिंदिया है लाल, औ कपोल ज्यों गुलाल,*
*रेख काजर की कारी हुरयारी जैसी हो गई।*
*होंठ लाल लाल लागै पान कौ कमाल आज*
*मानिए दशहरा की त्यारी जैसी हो गई।।*
*वैसे तो समस्त त्योहारों का प्रतीक मंजु,*
*रूप देख मति मतवारी जैसी हो गई।*
*अंग अंग रत्नज्योति छोड़वें अनूठी, जिससे*
*ये दिव्य देह ही दिवारी जैसी हो गई।।*

नायिका के माथे पर लाल रंग की बिन्दी है, गालों की लालिमा से लगता है जैसे गुलाल लगी हो और आँखों में काजल की काली रेखा से उसका समन्वित रूप एक होली खेलती नायिका सा लग रहा है। होठों की लालिमा से लगता है जैसे पान खाने के कारण लाली आई हो और दशहरा मनाने जैसा लग रहा है। उसके शरीर के अंगों और इसकी सजावट के सुन्दर प्रतीकों से सभी त्यौहारों को उसमें देखा जा सकता है। फिर भी, उसके प्रत्येक अंग पर सुशोभित



रत्नों का विलक्षण प्रकाश उसकी अलौकिक देह पर दिवाली के समान हो गया है।

## अनावृष्टि पर बादलों से दो शब्द

*आये न पयोद तुम मोद में न मोर हुई,*
*कृषक कसक से कराह भरने लगे।*
*तुमने न एक बिन्दु दान में दिया है,*
*उस पै दिनेश कर का उगाह करने लगे।।*
*अब तो अभाव को हुआ है अहसास,*
*अब प्राणियों के प्राण परवाह करने लगे।*
*लक्ष–पतियों को तो मिलेंगे नये नये लक्ष्य,*
*किन्तु दीन हीन त्राहि त्राहि करने लगे।।*

हे मेघ! तुम्हारा आगमन नहीं हुआ जिससे मोरों के मन में प्रसन्नता नहीं आई और किसान लोग हृदय की पीड़ा से हाय–हाय करने लगे। तुमने एक बूँद पानी की दान नहीं की जबकि सूर्यदेव अपनी तपन से कर के रूप में जल वाष्पित कर उगाही कर रहे हैं। अब पानी के अभाव का सभी को पता लगने लगा है और प्राणियों के प्राण संकट में पड़ गये हैं। लखपति लोगों को तो नवीन मार्ग लाभ के लिये मिल जावेंगे किन्तु दीन दुखी जन रक्षा के लिये चिल्लाने लगे हैं।

## होरी

*होरी के ठाठ कौ लाग्यो ठटा सो नहीं ठिठकें ठस ठेलती हैं।*
*कछु दूरहिं सों ललकें ललना, कछु गाल गुलाल सों मेलती हैं।*
*झकझोरीं गई कछु सो झिझकें झुकि लाज समाज की झेलती हैं।*
*बन कें बिगरीं बनिता बृज कीं तनकें तन श्याम के खेलती हैं।*

होली की धूमधाम और उत्साह से मनाने के लिये झुंड के झुंड

लोग एकत्रित हो गये हैं। कुछ के मन में कोई संकोच या डर नहीं है वे सबके बीच में घुसकर एक दूसरे को ढकेलती हैं। कुछ सुन्दरियाँ दूर से ही अपनी लालसा को भावों में व्यक्त कर रही हैं (दूर से ललचा रहीं हैं) और कुछ गालों में गुलाल को लगा रहीं हैं। कुछ ललनायें भय के कारण होली खेलने में संकोच कर रहीं हैं क्योंकि वे पहिले से ही लोगों से बुरा भला सुन चुकी हैं और यही कारण है कि नम्र होकर समाज की मर्यादा में विवश होकर रह रहीं हैं। ब्रज की वनितायें जान–मानकर बिगड़ गई हैं और गर्व से श्रीकृष्ण के शरीर के साथ खेल रही हैं।

## ग्रामीण नायिका

*चार बजे सें चलै चकिया स्वर चारु चुरीन में गाउतीं नौनीं।*
*प्रात सों सूर्य की स्वर्णछटा बिच, घूँघट घाल कें डारें ठगौनीं।*
*दौनी चलीं करिवे कर दौनी ले औ कटि बीच कसें करदौनीं।*
*पैज न काहु सों पाँवन पैजना गाँवन बीच चली है सलौनीं।*

प्रातः चार बजे से आटा पीसने की चक्की चलने की आनंददायक ध्वनि आने लगी और चक्की के मुँह दाना डालते हुए सुन्दरी मोहक स्वर में गा रही है। प्रातःकाल सूर्योदय की स्वर्णिम किरणों के फैलने तक के मध्य काल में घूँघट डाले–डाले ठगौनी उरैन डालती हैं। इसके बाद गाय का दूध दुहने के लिये हाथ में दौनी (गाय का पैर बांधने की रस्सी) लेकर और कमर में करधौनी पहिने हुए जाती हैं। गाँव के बीच में जाती हुई कमनीय सुन्दरी के पैरों में पड़े पैजनों (पैरों का आभूषण) की किसी से बराबरी नहीं हो सकती।

*चीकने हाँतन–चीकनो गोबर लीपत है अँगना अँगना।*
*लीपत है करकें करकें, थपथोरत में खनके कँगना।*
*चारु से चौक में चौक सुचारु लगी ढिक पोतनी कौ पुतना।*
*भोरी सी गोरी यही जनवै सजना के लिये ही सदा सजना।*



ग्रामीण नायिका अपने चिकने हाथों से प्रांगण में चिकने गोबर का लेपन कर रही है। लेपन की क्रिया वह युक्ति से हाथ कड़ा करके करती है। इसमें थपथपाने (गोबर हाथ से निकालने हेतु धरती पर पटकना पड़ता है) से हाथ में पहिने हुए कंगन आपस में टकराकर मधुर ध्वनि करते हैं। सुन्दर प्रांगण में रुचि–रुचि कर उत्तम चौक बनाने के लिये वह सुन्दरी सफेद माटी से किनारें बना रही है। वह भोली–भाली यौवना यह जानती है कि सभी श्रृँगार एवं साज–सज्जा अपने प्रियतम के लिये ही किये जाते हैं।

*हाथन बीच लसै कलशा, सिर पै गगरी पै धरी गगरी।*
*मंद सी चाल अमंद चले दृग हेरत है अपनो मग री।*
*डगरी भर देखत है धनिया धनिया बस देखत है डग री।*
*द्वारे पै घूंघट खोलै तौ लागत शोभा समूल परै बगरी।*

ग्रामीण नायिका पानी भरकर लाती है। उसके हाथों के बीच एक कलशा सुशोभित है और सिर के ऊपर एक घट के ऊपर दूसरा घट रखे हुए है। वह धीरे–धीरे चल रही है किन्तु उनके नयन तीव्रता से चल रहे हैं, वह अपना सीधा मार्ग देख रही है। मार्ग में सभी लोग उस सुन्दरी को देख रहे हैं किन्तु वह केवल अपना रास्ता देखती है। घर के द्वार पर जब उसने अपना घूँघट खोला तो ऐसा प्रतीत होता था मानो सम्पूर्ण रूप से सुन्दरता यहाँ बिखर गई हो।

*मंडित मोद मठा मद मोरिवे को महि पै रखि कै मटकी।*
*भावनों लागै सुभावनों तापै कड़ैनियाँ की छवि हू छटकी।*
*हाथ चलैं तौ बजैं चुरियाँ सँग डोलै किनारी हू घूँघट की।*
*डोलन देख कें डोलै जिया मटकी हित नारी फिरै मटकी।*

आनंद विभोर हुई नायिका दही मथने के लिये जमीन पर मटकी (बड़ा घट) रखती है। मथने की क्रिया करते समय वह बहुत

अच्छी लग रही है और मथानी में लिपटी रस्सी का छिटक कर घूमना अनोखी शोभा दे रहा है। जब मथते समय हाथ चलते हैं तो उसकी चूड़ियाँ मधुर ध्वनि में बजती हैं और घूँघट की किनार भी साथ में घूँमती हुई मनोहर लगती है। सुन्दरी मथानी को सम्हाल कर चलाती है ताकि मटकी में मथानी टकरा न जाय इसके लिये उसे स्वयं घूमना पड़ता है इस डोलने की शोभा को देखकर हृदय में भी कम्पन होने लगता है।

*रोटी पै साजी सी भाजी धरी पुनि भाजी पिया हित घाल कछौटा।*
*जूनरी रोटी पै चूनरी ढाँकि कैं हाथ लियें जलपान कौ लोटा।*
*भाल दिठौनों औ काजर आँख में काँख में दावै सलोनो सौ ढोटा।*
*मेंड़न पै फुँदकात चली अली नाहीं किशोर सनेह कौ टोटा।*

ग्रामीण नायिका रुचिकर बनी भाजी को रोटी (चपाती) पर रखकर अपने प्रियतम को देने भागती है। ज्वार की रोटी पर अपनी चुनरी ढाँके हुए है और हाथ में पानी भरा लोटा लिये है। अपनी बाँह के बीच में अपने छोटे से सुन्दर पुत्र को लिये है जिसके माथे पर काजल का काला दिठौना और आँखों में काजल लगा हुआ है। वह खेत में ऊँचे किनारों पर कूदती–इठलाती चली जा रही है उसकी तरुणाई और स्नेह में किसी प्रकार की कमी नहीं है।

*देख्यो धना के धनी नें धना कों सुआवै चली पग देत उतालें।*
*मैन जगायिवे पैजना बोलत नेह जगायवे घूघटा घालें।*
*प्रेम बढ़ायिवे कों जलपान औ नेह कौ गेह सुछौना सम्हालें।*
*आवत है हिय में हुलसी जिय में जुग जानो परेवा से पालें।*

प्रियतम ने अपनी प्रियतमा को देख लिया है, जो शीघ्रता से पग रखते हुए आ रही है। कामदेव को जागृत करने के लिये उसके पैजना (पैरों के आभूषण) मधुर ध्वनि कर रहे हैं और हृदय में स्नेह



की तरंगें उत्पन्न करने के लिये घूँघट डाले हुए हैं। प्रेम को अधिकाधिक अभिव्यक्त करने के लिये हाथ में जलपान की सामग्री है और साथ में सम्हाल कर बेटे को लिये हुए हैं जो दोनों के लिये स्नेह का घर (केन्द्र बिन्दु) है। वह हृदय में उल्लास लिये हुए और छाती में दो परेवा से पाले हुए आ रही है।

## ग्राम्य गरिमा

*जागन लागीं हैं गाँव की गोरीं दुलैयां औ भागन लागी तरइंयाँ।*
*बोलन लागे हैं लाल शिखा के औ खोलन चोंच कों लागी चिरइयाँ।*
*आयो उजास अकाश पै थान पै देखो रँभान लगीं सगीं गइयाँ।*
*जैसहि आये दिनेश तौ गाँव के पेड़न की परीं पीरीं डरइयाँ।*

आकाश में तारे डूबने लगे (प्रातःकाल की बेला का आगमन) और गाँव की सुन्दर नव वधुएँ जागकर उठने लगीं। मुर्गा बोलने लगा और चिड़िया मुँह खोलने लगीं। आकाश में प्रकाश दिखने लगा और थान (बंधने के स्थान) से गायें लगने के लिये रंभाने (चिल्लाने) लगीं। सूर्य भगवान का जैसे ही आकाश में आगमन हुआ गाँव के पेड़ों की डालों पर पीले रंग की आभा दिखाई देने लगीं।

*कौनउँ गेह में बैलन के गले में घनी घंटियाँ बोलती हैं।*
*कौनउँ गेह में चार बजे चकियाँ अपने मुख खोलती हैं।*
*दोहनी के समै दूध के पात्र में दूध की धाराएं बोलती हैं।*
*और कहूँ कहूँ मंजु मथानी मठा मथिवे कों कलोलती हैं।*

किसी घर में बैलों के गले बंधी हुई घंटियों की ध्वनि सुनाई देती है और किसी घर में प्रातः चार बजे से आटा–चक्की चलने लगतीं हैं। गायों–भैसों का दूध निकालने का समय होने पर दूध के पात्र में धार के गिरने से होने वाली मधुर ध्वनि सुनाई देती है और कहीं कहीं पर (कुछ

घरों में) दही बिलोकर मट्ठा (छाछ) बनाने की क्रिया में पात्र के भीतर चलती मथानी से कल्लोने की मनोहर ध्वनि सुनाई देती है।

*ढीलन ढोर किशोर चले कोउ सार उसार कौ फेंकत कूरा।*
*कोउ जयराम प्रणाम् करै अरु देखो बटोरत पुण्य कौ पूरा।*
*गइयन कों कोउ जात चरावन, शीष पै पाग कलाई में चूरा।*
*और बृज की रज सी मुख पै, यह धेनु के पाँव की पावन धूरा।*

किशोर अवस्था के बालक जानवरों को छोड़ने के लिये चल दिये, कोई पशुशाला की सफाई करके कूड़ा–कचड़ा बाहर फेंकते हैं। कुछ लोग मंदिर जाकर भगवान को प्रणाम करते हुए पुण्य लाभ ले रहे हैं। कुछ लोग सिर पर पगड़ी और हाथ कलाई में सुन्दर कड़े (हाथ के आभूषण) पहिन कर गायों चराने के चल देते हैं और बृज–राज के समान पावन बुन्देलखण्ड की पावन धूल जो गायों के चरणों को छूकर निकल रही है वह इन गाय चराने वालों के मुख पर लग रही है।

*छोटी सी है बखरी बखरी कों भरोसो है बख्खर के बल कौ।*
*हल कौ रहै साथ तौ भार विशाल किसान कों लागत है हलकौ।*
*कल कौ रखवारौ है रामधनी इतै कौनउँ काम नहीं छल कौ।*
*इनकों है सहारौ धरा कौ, समीर कौ, साँई कौ जाह्नवी के जल कौ।।*

गाँव का एक छोटा सा परिवार है। उस परिवार के लोगों को अपने बख्खर की शक्ति से ही आशा बंधी है। यदि हल (भूमि जोतने का एक प्रसिद्ध उपकरण) का साथ ठीक से रहे तो किसान को जीवन का भार भी बहुत कम लगने लगता है। भविष्य की रक्षा के लिये ईश्वर साथ में है, ये लोग निश्छल मन के हैं और इनकी ईश्वर में पूरी आस्था है। इनका आश्रय यह धरती, यह हवा, गंगा जी का



जल और परमात्मा है।

*बोझ कों बाँधि धर्‌यो सिर पै, अरु काँख में दाबि चली चट छौनों।*
*छैल सों कै गई आतुर आवे की, नैंन सों मारि गई कछु टोनों।*
*चाल चलै कछु बोझ हलै चमकै हँसिया दुति देवै सलोनों।*
*मानहुँ बद्दल के दल बीच सों झाँकत दोज मयंक कौ कोंनों।*

गाँव की गोरी ने गट्ठा बाँधकर वह बोझ (वजन) सिर पर रख लिया फिर तुरंत ही बगल में हाथ से अपने बच्चे को ले लिया। अपने प्रियतम से शीघ्र आने के लिए कहते हुए नयनों की बांकी दृष्टि से कुछ जादू सा कर दिया। उसके चलने पर सिर का भार हिलता है और उसमें लगा हुआ हंसिया सुन्दर दीप्ति दे देता है। घूँघट के बीच से दिखता उसका सुन्दर माथा ऐसा लगता है मानो बादलों के बीच से द्वितीया का चन्द्रमा झांक रहा हो।

*थान पै डारि कें चारौ सुजान औ जानि कें साँझ सो आई घरै।*
*दीप उजारत डारि सनेह सनेह सों गेह में दीप्ति भरै।*
*दीपक एक प्रजारि प्रमोद पगी तुलसी घरूआ पै धरै।*
*अंचल ले कर सम्पुट में पिय के हित हेतु प्रणाम करै।*

ग्रामीण सुन्दरी जानवरों को चारा डालकर एवं सायंकाल का समय देखकर वह तुरंत घर आ गई। तेल डालकर उसने दीपक जलाया और घर के भीतर प्रेम से उजेला कर दिया। एक दीपक जलाकर आनंद और श्रद्धा के साथ तुलसी जी के सामने रखती है और फिर अपनी साड़ी के आंचल को हाथ में मोड़कर अपने प्रियतम के हित के लिये तुलसी जी को प्रणाम किया।

*खेत सों आयो किसान सो शान सें सान कें सद्य बना दइ सानी।*
*बैलन के हित पानी धर्‌यो पुनि आयो इतै जितै बैठी सयानी।*
*ज्यों पदचाप सुनी प्रिय की त्यों मयंकमुखी मुरि कैं मुस्क्यानी।*
*ब्यारी की त्यारी करी तबही अखियाँ जब भूखीं भुखानीं दिखानीं।*

किसान अपने खेत से गर्व के साथ लौटा और तुरन्त ही उसने अच्छे से मिलाकर सानी (जानवर का भोजन) बना दी। उसके बाद अपने बैलों के लिये पानी रख दिया फिर उस तरफ आया जहाँ उसकी चतुर प्रेयसी बैठी हुई थी। जैसे ही प्रियतम के पैरों के चलने की आहट प्रिया ने सुनी तो उस चन्द्रमुखी ने पीछे मुड़कर देखा और मुस्कराई। फिर उसने आँखों में देखा कि प्रियतम की आँखें भूख की आकुलता प्रकट कर रही है तब उसने रात्रि के भोजन की तैयारी करना प्रारंभ किया।

*पूस की रात में फूस के धाम में कामिनी हो गई तूल रजैया।*
*बंक निशंक ह्वै कंत के अंक में सोहत मानहु दोज जुनैया।*
*काम करै दिन रात जो खेत में रात में वाम सुकाम करैया।*
*भोर भयो पर्यंक सों हो गइ लाड़िली मानहु भोर तरैया।*

शीत ऋतु में पौष माह की रात्रि है और फूस (चारे–कांस आदि) की मड़ैया (झोपड़ी) बनी है। इसमें प्रियतम के साथ नव यौवना आनंद विहार करते हुए रजाई का भी सुख दे रही है। प्रियतम की गोद में निडर मन से बैठी ऐसी शोभा पा रही है जैसे द्वितीया तिथि का चन्द्रमा हो। जो खेत में रात–दिन परिश्रम करता है उसे विश्राम के क्षण पत्नी के साथ रात्रि में ही मिल सकते हैं। प्रातः होते ही पलंग से हटकर वह प्रियतमा भोर के तारे की तरह हो गई।

*गोरी ने पारो चँगेर में चेनुआ बैठ गई उत आम की छैंया।*
*छैल ने रोक दये हलबैल औ गैल पसेउ गिरै भुइँ–मैंया।*
*बालम कों लखि कें मुस्क्यात उतै झट दौरत आवत सैंया।*
*सो श्रम वक्ष पै आतुर ह्वै झट प्रीति नें डार दई गलबैंया।*

सुन्दरी ने अपने छोटे बच्चे को चंगेर (बाँस का बना हुआ एक बर्तन) में लिटा दिया और स्वयं आम के वृक्ष के नीचे जाकर बैठ गई।



प्रियतम ने अपने हल–बैल छोड़कर रख दिये उसके शरीर का पसीना बहकर जमीन पर गिर रहा है। प्रियतम को उसने देखा कि वह हँसते हुए तुरन्त ही उसी की तरफ दौड़ता आ रहा है। आतुरता में आते हुए उसकी छाती पर श्रम बिन्दु झलक रहा था, तभी तुरन्त प्रिया ने प्रेम से गले में बाहें डाल दीं।

*पौंछत स्वेद पियारी तथा श्रमहारी पियारी बयारी करै।*
*रोटी धरी पट सों पट पै चट सों चटनी की तैयारी करै।*
*भोजन बीच हँसै तरुणी अरु प्रीति की रीति नियारी करै।*
*छैल हँसै लखि दोउन कों उत छौना परो किलकारी करै।*

प्रियतमा अपने प्रियवर का पसीना पोंछती है, थकान मिटाती है और रात्रि के भोजन की तैयारी भी करती जा रही है। उसने जल्दी से पट के ऊपर रोटी रखी फिर चटनी तैयार की। जब भोजन प्रियतम ने प्रारंभ कर दिये तो नवयौवना बीच–बीच में हँसती जाती है और प्रेम की कुछ क्रियायें भी साथ में होती जाती हैं, प्रियतम को भी हँसी आ रही है। इन दोनों की प्रसन्न मुद्रा को देखकर लेटा हुआ छोटा बालक भी किलक कर हँस रहा है।

*देश की शान किसान ने भोजन पाय के जायके खेत निहारो।*
*और किसान की मानिनी नें हँस के हँसिया कर बीच सम्हारो।*
*मंत्र बिचारो है गो–तृण को सो लगी झट मेंड पै काटवे चारौ।*
*चूरा चुरीनन में अटकै खटकै स्वर मैन मरोरन बारौ।*

देश का गौरव किसान भोजन करने के बाद तुरन्त अपने खेत को देखता है और उसकी प्रियतमा ने हँसकर अपने हाथ में हँसिया लिया फिर घास काटने का निश्चय करके तुरन्त खेत की मेंड़ पर पहुँची, चारा काटने लगी। घास काटते समय चूड़ियों के बीच पहिना हुआ चूरा चूड़ियों से टकराता है और उससे कामदेव की पीड़ा उत्पन्न करने वाली मोहक ध्वनि निकलती है।

*एक मुठी में पुरी पुरी चारे की एक में नृत्य करै हँसिया।*
*गोरी के एक इशारे पै चारे बिचारे के प्रान हरै हँसिया।*
*कोमल हाथ के साथ में आयि कें पाप करै न डरै हँसिया।*
*गोरी हँसै हँसिया सठ पै लखि गोरी कों हास भरै हँसिया।*

गाँव की उस सुन्दरी के एक हाथ में घास का गट्ठा बंधता जाता है और दूसरे हाथ में हंसिया नृत्य कर रहा है। सुन्दरी के संकेत मात्र से हंसिया चारे (घास) के प्राण ले लेता है। इन कोमल हाथों के सम्पर्क में आने पर हंसिये का डर समाप्त हो गया है, वह लगातार चारे के प्राण लेने का पाप करता जा रहा है। सुन्दरी दुष्ट हंसिया के कृत्य पर हँसती है और हंसिया सुन्दरी की हँसी को देखकर उसके मन की पूर्ति कर रहा है।

## रतिप्रीतिका नायिका

*वाल कर दीपक बाल बैठी रतिभौन, मौन,*
*सौन से शरीर सों प्रभा हू सरती रही।*
*हिय हुलसंत कंत आये पा इकंत तिन्हें,*
*उनके हिय में अनंत प्यार भरती रही।।*
*चढ़ि पर्यंक प्रिय अंक बीच जायि बैठी,*
*दीपक बुझाय तम स्वयं हरती रही।*
*लंकन सों ठेलि प्रतिघातन कों झेलि झेलि,*
*अंगन सकेलि रस–केलि करती रही।।*

नवयौवना रति भवन में दीपक जलाकर चुपचाप बैठी है उसके स्वर्णिम शरीर से मनोहर आभा बिखर रही हैं। एकान्त पाकर प्रियतम हृदय में उत्साह लिये हुए आ गये। प्रियतमा ने उसके हृदय में नेह की धारा आराम से प्रवाहित कर दी। फिर पलंग पर चढ़कर प्रियतम की गोद में जाकर बैठ गई। उसने दीपक शान्त कर दिया और प्रेम के प्रकाश से प्रियतम के हृदय को प्रकाशित करती रही। रति क्रिया



के घात–प्रतिघातों को आनंदित मन से सहते हुए कमर की ठेलम–ठेल की क्रीड़ा चलती रही। वह अपने सभी अंगों को सिकोड़कर काम क्रीड़ा का रस लेती रही।

*प्रेम की पियासी थी प्रिया की पिया बाँह गही,*
*मुँइयाँ छुई तौ छुइमुइ सी कुम्हला गई।*
*होठन की चोटन ने ऐसे कपोल करे,*
*देख जिन्हें कंजन की लालिमा लला गई।।*
*चंचल दृग निमिष में ही लगे निमीलित कंज,*
*कुच पै करन की कला सी सी कहला गई।*
*वसन वधैया उन डोरन की छोरन तौ,*
*तन के सब छोरन कों छन में छला गई।।*

प्रियतमा के हृदय में प्रेम की प्यास जागी और उसने अपने प्रियतम का हाथ अपने हाथ में लेकर इस चाह की अभिव्यक्ति की। प्रियतम ने उसके मनोहर चेहरे को छुआ ही था कि छुई मुई की तरह वह संकोच में कुम्हलाने लगी। फिर प्रियतम ने अपने होठों से क्रीड़ा के बीच ही नायिका के गालों पर चुम्बन आदि की चोटों से इतना लाल कर दिया कि कमल की लालिमा भी फीकी लगने लगी। क्षण भर में ही चंचल नेत्र बंद होते कमल की तरह निमीलित होने लगे और स्तनों पर प्रियतम के हाथों की क्रियाओं ने प्रियतमा के मुँह से सी–सी की मोहक ध्वनि निकल गई। वस्त्रों को बाँधने वाली डोरी खोले जाने पर शरीर के सभी बंधन खुल गये और क्षण मात्र में प्रियतमा का तन प्रियतम का हो गया।

# जगदीश सिंह परमार

कवि जगदीश सिंह परमार का जन्म टीकमगढ़ में 9 जुलाई सन् 1948 को श्री गजराज सिंह के घर हुआ। इनकी माता का नाम श्रीमती कंचन कुँवर था। ये तीन भाइयों में सबसे छोटे हैं। श्री दिलीप सिंह व श्री हरवंश सिंह इनके अग्रज हैं। ये बचपन से ही हनुमान भक्ति में लीन रहने वाले हैं। इनकी प्रारंभिक शिक्षा टीकमगढ़ में पूरी हुई। इन्होंने हायर सेकेण्डरी की परीक्षा द्वितीय श्रेणी में 1966 में उत्तीर्ण की, तत्पश्चात् कुछ दिन बेकार रहने के उपरान्त शिक्षक के पद पर चयनित हुए। 1973–74 में ओरछा से बी.टी.आई. करने के बाद शिक्षकीय दायित्व निर्वहन कर रहे हैं। ओरछा में जाकर इनकी भक्ति भावना और पुष्ट हुई तथा इन्होंने अविवाहित रहने का फैसला किया। 1975 से यह काव्य रचना में संलग्न है। इनकी एक कृति 'श्री सुदामा चरित' स्थानीय स्तर पर प्रकाशित है तथा 'हरिश्चन्द्र', 'हरिनाम सार' तथा 'राजा रानियों के लोकगीत' अप्रकाशित कृतियाँ हैं।

## कवित्त – सुदामा दरिद्रता

*फूटौ घर माटी कौ बनी खपरैल एक,*
*छाव घास पात दुःख चुआना कौ न्यारौ है।*



*आँगन न पौर परे बैठें कहुँ ठौर नहीं,*
*टूटे बड़ैरे कहुँ थुम्मा सहारौ है।।*
*छानी सें पानी चुँअत चौमासैं भींत,*
*टूटे किवार एक फूटौ द्वारौ है।*
*राधे श्याम अंकित द्वारैं दीवाल पर,*
*हृदय सुदामा के बसो कृष्ण प्यारौ है।।*

मिट्टी का फूटा घर जिसमें खपरैल है उसे घास व पत्रों से छाया गया है, जो वर्षा में चुचवाता है। न आँगन में और न ही पौर (आगे का कक्ष) में कहीं भी बैठने का स्थान सुरक्षित नहीं है। इस मकान का बड़ैरा (खपरैल की मुख्य लकड़ी) टूटी है जिसे खंभा का सहारा दिया गया है। छप्पर से पानी टपक रहा है तथा वर्षा में दीवालें गीली हो गई हैं। ऐसे मकान में एक फूटा दरवाजा है जिसपर टूटा किवाड़ लगा है। दरवाजे की दीवाल पर राधेश्याम लिखा गया है। इस तरह देखते हैं कि सुदामा के हृदय में प्यारा कृष्ण बसा हुआ है।

*राली ज्वार समा कुटकी कोदों फिकार,*
*दाल चावल गेहूँ मिलत भैंट गृह ल्याऊत हैं।*
*चकिया सैं पीस चून कूँड़े में दुमड़ लेत,*
*फूटे घड़े सैं काम अपनौ चलाऊत हैं।।*
*बौंगी सी हँडिया एक टूटौ बीच देऊवा है,*
*टौंके तवा सैं चूल्हैं भोजन पकाऊत हैं।*
*पत्तल परोस भोजन लोटा पुरानौ एक,*
*तापर सुदामा भोग कृष्ण खौं लगाऊत हैं।*

राली, ज्वार, समा, कुटकी, कोंदों, फिकार (मोटे व जंगली अन्नों के नाम) दाल–चावल तथा गेहूँ जो भी भिक्षा में मिलता है, सुदामा उसे घर लाते हैं। भिक्षा में मिले अनाज को उनकी पत्नी

चक्की में पीस कर उसका आटा बना, उस आटा को कूंडे (पत्थर का बर्तन) में सानती हैं। फूटे घड़े में पानी भरकर अपना काम निकालती हैं। जिस हँडिया के ओंठ टूटे हैं उनमें एक डेउवा (लकड़ी का चमड़ा) पड़ा है। छिद्र युक्त तवा पर चूल्हे से भोजन पकाती हैं। इस भोजन को पत्तलों पर परोसकर एक पुराने लोटा में पानी रखते हैं। इस प्रकार सुदामा खाना खाने के पूर्व श्रीकृष्ण को भोग लगाकर भोजन करते हैं।

## सवैया

*सोवत सुदामा तमाल तरैं दाबैं तन्दुल कांख पुटईया।*
*घास औ पात की सेज बनी बिछीं है न तापै फटी इक चिथईया।।*
*ओढ़ैं अगोछा पाँव सिकोड़ पहिनै लँगोटी फटी सी कथईया।*
*भक्षक कौ डर काउन कहुँ, जाके रक्षक श्री कृष्ण कन्हैया।।*

सुदामा तमाल वृक्ष के नीचे काँख में चावल की पोटली दबाये हुए सो रहे हैं। घास व पत्रों को एकत्र कर उसे बिछाया और उसके ऊपर एक फटे चिथड़े कपड़े को बिछाया गया है। अंगोछा को ओढ़कर, पाँवों को सिकोड़े हुए फटी हुई लंगोटी पहने हुए सुदामा सो रहे हैं। जिसके रखवाले श्री कृष्ण हों उसको किसी भक्षक (जंगली पशुओं) का भय नहीं हो सकता है।

## कवित्त (राम भरोसे काम)

*काहू कहुँ भरोसौ निज धन बाहुबल कौ है,*
*काहू कहुँ शासक अरु जग का समाजा है।*
*काहूँ कहुँ मित्रों और परिवार कौ है,*
*बुद्धि ज्ञान वैभव मन्त्री और राजा है।।*
*साँचौ भरोसो करहु पूर्ण काम राम कौ,*
*राम गुन गावे कहुँ करियौ ना लाजा है।*



*'जगदीश' कौ भरोसौ जो राजौं के राजा हैं,*
*महाराजौं के महाराज श्री रामचन्द्र राजा हैं।*

किसी को अपने धन तथा बाहुबल पर तथा किसी को राजा व समाज पर भरोसा होता है। किसी को मित्रों व परिवार पर भरोसा होता है। बुद्धि–ज्ञान मंत्री तथा वैभव राजा होता है। सच्चा भरोसा तो राम का करना चाहिए और राम के गुण गाने में कोई लज्जा नहीं होती है। कवि जगदीश कहते हैं कि मेरा भरोसा तो राजाओं के राजा एवं महाराजाओं के महाराज श्रीरामचन्द्र पर ही है।

## गोपी प्रेम

*छींकौ टोर दधि चोर चित्त चोर चीर चोर,*
*माखन चोर मोहन की मधुर मुस्कान है।*
*रास बिहारी श्याम रसिक बिहारी हैं,*
*राधा मन चन्द चकोर कृष्ण भगवान हैं।।*
*चिकतियाँ चतुर चित्त छलिया छबीले छैल,*
*सुनाउत वे मीठी मुरली की तान हैं।*
*कहहिं भक्त गोपियाँ बताब 'जगदीश' हम,*
*कृष्ण बिनु तनु में अब राखहिं कैसें प्रान हैं।।*

सींका (दूध दही रखने का ऊँचाई पर रस्सी का बनाया गया) तोड़कर दही चुराने वाले, गोपियों के हृदय व चीर चुराने वाले तथा माखन चुराने वाले मोहन की मुस्कान मीठी है। कृष्ण रहस रचाने वाले तथा रसिकों के बीच रहने वाले हैं। राधा का मन चन्द्रमा और भगवान कृष्ण चकोर है। चतुराई से चितवन करके देखने वाले छल से सौन्दर्य के धनी छैला कृष्ण बाँसुरी की मधुर तान सुना रहे हैं। जगदीश कवि कहते हैं कि भक्त गोपियाँ कहती हैं कि तुम्हीं बताओ कि कृष्ण के बिना हम इस शरीर में प्राणों को कैसे रखें?

### बंशी प्रभाव

*कालिन्दी कूल कृष्ण वंशी बजाई जब,*
*तनु मनु सुध भूलि गोपि धाई धाम छोड़ि कैं।*
*घूँघट पट खोलैं लाज भूख प्यास भूलि गई,*
*ओढ़िनी पहिन धाई लंहगा कहुँ ओढ़ि कैं।।*
*पहाड़ पेड़ प्रेम मगन पंछी चनेवर बनै,*
*बछरन पय पान धेनु धाई नेह तोड़ कैं।*
*साधु हरि नाम जप रुके चन्द्र जमुन जल,*
*जगदीश कछु रस लिखत बंशी कौ निचौंड़ कैं।।*

यमुना के तट पर कृष्ण ने जब बाँसुरी पर तान छेड़ी तो गोपियाँ अपने–अपने घरों को छोड़कर तन–मन की सुधि भूलकर दौड़ी। इन गोपियों में कुछ घूँघट का पट खोले हुए, भूख प्यास भूलकर, कुछ ओढ़नी पहनकर तथा लँहगा ओढ़े चली आई। पहाड़, प्रेम, पक्षी व नवजात पक्षी सभी प्रेम मगन हो गये हैं। बछड़ों को दूध ा पिला रही गायें भी नेह की डोर तोड़कर यमुना तट की ओर भागीं। साधुओं के हरि भजन रुक गए, चन्द्रमा भी यमुना जल में स्थिर हो गया। कवि जगदीश कहते हैं कि वे बाँसुरी के स्वरों का निचोड़ इस पंक्तियों में लिख रहे हैं।



## जगदीश प्रसाद रावत 'जगदीश्वर'

टीकमगढ़ जिले के ग्राम मालपीथा में श्री आशाराम रावत के घर श्रीमती राजकुमारी रावत की कोख से 10 जुलाई 1957 को जगदीश प्रसाद रावत 'जगदीश्वर' का जन्म हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा टीकमगढ़ जिले के ग्राम गोर में ही हुई। इनके पिताजी उज्जैन में नौकरी करते थे जिससे साथ में यह भी चले गए और हायर सेकेन्ड्री परीक्षा उज्जैन से पास की। बी.एस.सी. (कृषि) की परीक्षा इन्दौर से तथा एम.एससी. की परीक्षा सीहोर से उत्तीर्ण की। बाद में मध्यप्रदेश शासन के वन विभाग में रेंजर के रूप में नौकरी की। हिन्दी में रुचि होने के कारण सेवा में रहते स्वाध्यायी रूप से एम.ए. हिन्दी रीवा विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण की।

कक्षा पाँचवीं से ही कवितायें लिखना प्रारंभ किया। आठवीं में पढ़ते समय पहली कविता प्रकाशित हुई। 1982 में 'गर्दिश के पैबंद' नाम से काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ। अभी तक आधे दर्जन से अधिक काव्य कृतियाँ प्रकाशित हैं। अप्रकाशित रचना संग्रहों में 'उरवतियाँ', 'बाँके बोल बुन्देली के' तथा 'बिछुआ ने डंक मारो' है। इनकी रुचि

काव्य रचना के अलावा फोटोग्राफी, पर्यावरण लेखन, फिल्म निर्माण तथा पत्रकारिता में भी है।

## चौकड़ियाँ

*बिन्नू तरसाबे खों आबें, अंग–आँचर फरकाबें।*
*हमें देख मूड़ कौ छोरा, ठेंके उठा–गिराबें।।*
*फेरें कोंचा, केसन ऊपर, आंख कभँउ झरकाबें।*
*'जगदीश्वर' जो मिलै पुराने यार, हमें टरकावें।।*

प्रेयसी अपने प्राण प्रिय प्रेमी को अपने सुन्दर एवं कोमल अंगों तथा आंचल के पल्लू को गिराकर उड़ाती हुई रिझाती है। वस्तुतः वह इस प्रकार के उपक्रम करके उसे तड़फाती और तरसाती है। इतना ही नहीं वह सिर की ओढ़नी प्रियतम को देखकर जबर्दस्ती गिराती है। वह विचित्र क्रिया–कलाप करती है जैसे कभी अपनी हथेली से सिर को बालों पर स्पर्श कर उन पर हाथ की उँगलियाँ घुमाती हैं। कभी–कभी आँखों को झपकाकर उन्हें घुमाती है। जगदीश्वर कहते हैं कि प्रियतम को रिझाने वाली इन्हीं आकर्षक क्रियाओं के बीच यदि भूले–भटके कोई पुराना प्रेमी मिल जाता है तो वह हमें अपने आस–पास से दूर भगा देती है।

*करत–धरत जे कच्छू नैंया, सोन चाउत सुख की छैंया।*
*शेर चाउत कै कौरा आबै, बैठे–ठाले मो के मैंया।।*
*भुजबल पै विश्वास करें न, पकरैं फिरें गैर की बैंया।*
*'जगदीश्वर' नौनी है जोरू, पींदा बलम बिचारे सैंया।।*

एक ग्राम्य–बाला का पति किसी प्रकार का कोई काम नहीं करता, जिससे उसके परिवार का उदर–पोषण हो सके, बावजूद



इसके वह सुख की छाया में सोने की कामना करता है। जैसे जंगल का राजा शेर भी यदि चाहे कि बिना शिकार किए खाने का निवाला अपने आप उसके मुँह में प्रविष्ट हो जाये तो क्या यह संभव है? उसके पति अपने बाहुबल पर विश्वास नहीं करते कि उनमें भी ताकत है और पराश्रित होकर किसी दूसरे की बाँह पकड़ते फिरते हैं जिससे कोई उसे जिजीविषा का अबलम्बन दें। जगदीश्वर कहते हैं कि ग्रामीण पति की पत्नि बहुत समझदार और अच्छी है लेकिन क्या करे? इस बेचारी के पति निकम्मे हैं।

*पांखें पकर पेंड़ दो भीतर, करिया कठिन कबूतर।*
*सोन–चिरैया, हंस, आत्मा तन है अपनौ तीतर।।*
*लगत देखबे में एकइ से दोऊ चीता चीतर।*
*रंग–रूप खों छोड़ भजौ तुम मनमोहन 'जगदीश्वर'।।*

यह जो मनचला मन रूपी काले–स्याह रंग का कबूतर है वह स्वेच्छाचारी है। अतः उसके दोनों पंख पकड़कर इसे सदाचारी और आध्यात्म रूपी पिंजड़े में कैद कर दो, क्योंकि यह बहुत कठिन कबूतर है। मनुष्य की देह में सोन–चिरैया और हंस के समान आत्मा और तन रूपी तीतर–बटेर है। जैसे कि जंगल के प्राणी चीता और चीतल (हिरण) एक समान दिखते हैं। जगदीश्वर कवि कहते हैं कि हे मानव! तू रंग–रूप के धोखे में मत पड़ जाना। रूपायन के आकर्षण को त्यागकर तू मन को मोहित करने वाले प्रभु श्रीकृष्ण का भजन कर।

*भरकें निगा हेर लो गुइयां, हिरा न जांय गुसइयां।*
*पैलां हतें चिनक बेर से, बड़ के बने बटँइयां।।*
*बटरा सें बन गए खता जब कमी दरद की नैंया।*
*पीर होत 'जगदीश्वर' छोड़ों, परूँ तुम्हारे पैंयां।।*

एक सखी दूसरे से कहती है कि तुम अपने उरोज निगाह भर

के देख लो कहीं वह विलुप्त न हो जावें। हालांकि वह पहले बेर के फल के आकार के बिल्कुल छोटे से थे फिर वे गोल पत्थर की मानिंद बढ़कर हो गए। वे दाल के आकर से बढ़कर गोल आकार के मांसल उरोज हो गये। वह अक्षत यौवन के भ्रमर के कारण दर्द देने लगे हैं। जगदीश्वर कहते हैं ऐसे में अगर कोई प्रियतम इन्हें स्पर्श करता है तो पहली अनुभूति के कारण पीड़ा होती है। नायिका कहती है कि मुझे तुम छोड़ दो, ऐसा न करो मैं तुम्हारे पांव पड़ती हूँ।

*जीवन बिरथा बरस बितै गइ, मन की मन में रै गई।*
*बखत मुठी में कभउ रुको नइ, रेता–महल मिटै गई।।*
*उमर छिनार रावैल, रात–भर, सखियन संग कितै गइ।*
*'जगदीश्वर' जीवन की गागर, हल्के–हात रितै गइ।।*

जीवन के सार्थक और अनमोल वर्ष व्यर्थ में ही बीत गये, इस बात का बड़ा अफसोस है। जो परमार्थिक कार्य करना थे वह बात मन की मन में ही दबकर रह गई। जिस प्रकार से रेत के महल हवा के हल्के झोकों से समूल नष्ट हो जाते हैं उसी प्रकार से समय किसी के बँधे मुट्ठी में नहीं बंधता है। वह अपनी मर्जी से गतिमान है। यह वेश्या और कुल्टा (छिनाल) रूपी उम्र न जाने सारी रात अपनी सखियों के संग कहाँ रंगरेलियाँ मनाती रही। कवि जगदीश्वर कहते हैं कि मौत हल्के हाथों से जीवन रूपी गागर रिक्त (खाली) करके छलकर के चली गई है।



## डॉ. कुन्जीलाल पटेल 'मनोहर'

जिला मुख्यालय छतरपुर से सत्रह किलोमीटर पूर्व में पन्ना रोड पर स्थित ग्राम बसारी में 8 जून 1960 को श्री कुंजीलाल पटेल 'मनोहर' का जन्म हुआ। इनके पिताजी का नाम श्री गिल्ले पटेल तथा माताजी का नाम श्रीमती मुल्लीबाई है। इनका परिवार किसानी करता है। कृषक परिवार में जन्में श्री मनोहर का बचपन अपने गाँव बसारी में बीता। प्रारंभिक शिक्षा इनकी बसारी तथा कर्री में हुई। इसके बाद इन्होंने छतरपुर से उच्च शिक्षा ग्रहण की। एम.ए. करने के बाद आप स्कूल शिक्षा विभाग में अध्यापक के रूप में काम करते रहे। अपनी प्रतिभा के बल पर आपने 'बुन्देली फाग साहित्य' पर शोध उपाधि प्राप्त की। इसके बाद मध्यप्रदेश की महाविद्यालयीन शिक्षा में आपने नौकरी की। आप सहायक प्राध्यापक के पद पर कार्यरत हैं।

*घूमत फिरत नंद कौ छौवा, संग लये सखा गुलौवा।*
*फिरत व्यर्थ मड़रात सखिन पै, जैसे भूखे कौवा।*
*ओड़ें फिरे कमरिया कारी, माथें मोर पखौवा।*

*गली रखाये भुनसारे सें, जैसें रतवाँ मौवा।*
*आज धुनक लो इन्हें 'मनोहर' लये सब सखी गुटौवा।।*

जब श्रीकृष्ण की हरकतों से गोपियाँ परेशान हो जाती हैं तब वे (गोपियाँ) अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए कहती हैं कि ब्रज में अपने साथ पूरी मित्र मण्डली लिए नन्द का पुत्र इधर–उधर घूमता फिरता है, वे सखियों पर व्यर्थ में ऐसे मँडराते हैं जैसे कहीं पर दाना–पानी देखकर भूखे कौवे मँडराते हैं। उसी तरह कृष्ण कमरिया ओढ़े और मयूर का पंख लगाए घूमते हैं। जिस प्रकार रतवा (रात में टपकने वाला) महुआ के पेड़ को रखाने वाला नजर गड़ाये बैठा रहता है उसी प्रकार वह (श्रीकृष्ण) तड़के से गलियों में घूमता है। कवि आगे कहते हैं कि एक गोपी अपनी सहेलियों से कहती है कि सभी सखियाँ इकट्ठा होकर आज इनको जी भरकर तंग कर लिया जाये।

*बैठ श्याम कदम की डारन, तन पीतम्बर धारन।*
*आई उमझ फेटा से मुरली, लागे तुरत निकारन।*
*धर अधरन पर फूंक दई तब निकरीं तान हजारन।*
*मुरली मेहो नाव सखिन के लै–लै लगे पुकारन।*
*सुनके तान 'मनोहर' सखियाँ सजी मिलन के कारन।*

कवि मनोहर कहते हैं कि कृष्ण पीले वस्त्र धारण करके कदम पेड़ की डाल पर बैठे हुए हैं, अचानक वंशी की याद आने पर उसको कमर से तुरन्त निकाला और जैसे ही उसको अपने होठों पर रखकर बजाया तो उससे अनेक प्रकार की धुनें निकल पड़ी, कृष्ण मुरली के द्वारा गोपियों के नाम पुकारने लगे और जैसे ही मुरली की धुनों को गोपियों ने सुना तो सभी कामकाज छोड़कर मिलने के लिए तैयार होने लगी।

*सुनकें मुरली मुरलीधर की, राधा रुक्मन छरकी।*
*तन मन की सुध भूली ऐसी लगन लगी गिरधर की।*



*चलीं ठगीं सीं सजनी मजनी करकें उल्टी सरकी।*
*टोली जुरी सभी सखियन की बांकी एक ना बरकी।*
*चलीं 'मनोहर' मुरली सुनवे नटखट नट नागर की।।*

राधा, रुक्मिणी ने जैसे ही कृष्ण की मुरली की आवाज सुनी तो वे थिरकने लगी, उन्हें अपने तन–मन का होश नहीं रहा, सिर्फ उन्हें नंदनन्दन की ही अजीब लगन लगी हुई थी, वे सभी काम–काज जल्दी से करके, ठगी हुई उल्टे पैरों घर से धीरे से भागी। घर के बाहर आकर अपनी सभी सहेलियों को एकत्रित किया। जिससे घरों के अंदर कोई भी सहेली नहीं बची और उन्होंने टोली बनायी। कवि मनोहर कहते हैं कि सभी गोपियाँ इकट्ठा होकर शरारती गिरधारी की मुरली सुनने के लिए चली आईं।

*सज गई बृज की बनिता प्यारी, प्यारी पहरें सारी।*
*सारी सजनी करी सम्हर कें तनकी खबर बिसारी।*
*सारी उल्टी सीधी डट कें झट कर दई तैयारी।*
*तैयारी कर चली श्याम सें मिलवे ब्रज की बारी।*
*वारी वारी सजीं 'मनोहर' रूप रासि अनियारी।।*

इस छंद में कवि मनोहर कहते हैं कि ब्रज की सभी सुन्दर नारियाँ अच्छी साड़ी पहनकर तैयार हो गई। गोपियों ने साड़ी को तो संभालकर पहना है लेकिन उन्हें अपने शरीर की सुध नहीं रही। सभी गोपियाँ जैसे भी हो तैयार हो गई, चाहे साड़ी को उल्टी ही क्यों न पहन रखा हो ? ब्रज की सभी स्त्रियाँ कृष्ण से मिलने के लिए तैयार होकर चली गई। आगे कवि कहते हैं कि वे सभी गोपियाँ जिनकी रूप–सौन्दर्य की कोई सीमा नहीं है, सज–धजकर तैयार हो गई।

*रिमझिम–रिमझिम झरै फुहारी, गरजें नभ घनकारी।*
*वसुन्धरा की गोद मुदित मन, मोहित हरियल सारी।*

*सारी अबनी सजी बजी अति, हरी छटा अनियारी।*
*सुन घनघोर मोरगन प्रमुदित, थिरकत पंख पसारी।*
*पिउ–पिउ बोलें बोल 'मनोहर', पपिहा की किलकारी।।*

वर्षा ऋतु के समय प्रकृति का रूप किस तरह का होता है, कवि ने इस छंद के माध्यम से इसका एक स्पष्ट चित्र खींचा है, पानी रिमझिम–रिमझिम होकर बरस रहा है और आकाश भी जोर से गरज रहा है। धरती माता ने अपनी गोद में सुन्दर हरियाली बिछा रखी है, यह देखकर मन प्रफुल्लित हो जाता है। सारी पृथ्वी सजकर तैयार हो गई है अपने ऊपर सुन्दर हरी छटा बिखेर रखी है, बादलों की प्रसन्नता सुनकर मयूर भी प्रसन्न होकर अपने पंखों को फैलाकर नृत्य करने लगे हैं। कवि कहते हैं कि पपीहे की जो किलकारी है उससे पिउ–पिउ आवाजें निकल रही हैं।

*खेती खेतन खेतन नौनी, नौनी घरी सुहौनी।*
*हीनी हती दया की दृष्टि, करी समय पै बौनी।*
*बौनी भई वरषा की नौनी, सबको सुख उपजौनी।*
*उपजौनी सब फसलें आहैं, घर–घर औनी पौनी।*
*पौनी पाला खूब 'मनोहर' हुइयें रकम चुकौनी।।*

वर्षा के बाद जब खेती करने का समय आता है, उसका वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि खेतों में जब तक फसलें हों तभी तक वे अच्छे लगते हैं और अच्छी घड़ी (समय) भी मन को भाती है। दया की दृष्टि कमजोर थी जो उपयुक्त समय पर बुवाई कर दी लेकिन पानी अच्छी तरह से हो जाने से बुवाई हो गई जिससे सभी किसानों को हृदय में शांति मिली, अन्य सभी फसलें अच्छी तरह से उपजें भी और जैसे भी होगा सभी के घरों में आएँगी। यदि फसलें अच्छी रहीं तो कर्ज भी चुक जायेगा।



*लैले खबर सजनवाँ मेरी, बाट कबन से हेरी।*
*अब लौ आये ना खबर पठाये, कौन मुसीबत घेरी।*
*मैं देरी लौ ठांड़ी–ठांड़ी, देखत हौं हर देरी।*
*देरी करत काय खाँ कैसी, तड़फत सजनी तेरी।*
*तेरी मेरी मिलन 'मनोहर' कौन घड़ी होने री।।*

नायक के विरह वियोग से तड़प रही नायिका अपने मनोभावों को व्यक्त करती हुए कहती है कि प्रिय! मैं तुम्हारी राह जाने कब से देख रही हूँ ? इसलिए अब तो आकर मेरी खबर ले लो, हाल–चाल पूछ लो। ऐसी कौन–सी मुसीबत में आप फँसे हुए हैं जिस कारण अभी तक न तो स्वयं ही आए और न अपनी कोई खबर ही भेजी। मैं द्वार पर खड़ी होकर हर घड़ी तुम्हारा ही इंतजार कर रही हूँ। अब किसलिए देर कर रहे हो ? यहाँ आकर एक बार देख लो कि तुम्हारी सजनी किस तरह बिना तुम्हारे तड़प रही है। आगे कवि मनोहर कहते हैं कि नायिका कहती है वह कौन सा शुभ क्षण होगा, जिस समय तुम्हारा मेरा मिलन होगा।

*कैसे बेदरदी भये सैयाँ, आये अबैलौ नैयाँ।*
*नैंया कोऊ जगत में उनसें, मिलवा दे झट दैयाँ।*
*दैयाँ दौर चले आते ज्यों, सन्ध्याकाल चिरैयाँ।*
*काल चिरैयाँ कब धर दाबै, पैर चलेना बैयाँ।*
*बैयाँ पकर 'मनोहर' लाये, धाये कहाँ गुसैयाँ।*

इस छंद में नायिका अपने विरह का वर्णन करती हुई कहती है कि पतिदेव तुम कैसे निष्ठुर हो गये हो ? जो अभी तक नहीं आये। इस संसार में ऐसा कोई नहीं है जो उनसे शीघ्र ही संयोग करा दे। जिस प्रकार शाम होते ही सभी प्राणी अपने–अपने घर लौटने लगते हैं। तुम्हारे बिना पता नहीं मृत्यु कब अपने आगोश में ले ले, उस समय न पैर चलेंगे और न हाथ। कवि कहते हैं कि नायिका कहती

है मेरी बांह पकड़कर लेकर आये हैं अर्थात् विवाह करके लाए हैं और खुद कहीं भाग गए हैं, मुझे तड़पाने के लिए।

*बोल कूर कोकिला कारी, कारी जा हत्यारी।*
*हत्यारी जा लैबो चाहत, आसुन जान हमारी।*
*मारी मारी फिरों बिरह में, जानत दुनियां सारी।*
*सारी देह धधक रई मोरी हो गई सूख छुहारी।*
*हारी खाई 'मनोहर' मोखां भूल गये बनवारी।।*

कवि मनोहर इस छंद में नायिका के विरह के बारे में बताते हैं, नायिका कहती है कि काली कोयल की मधुर आवाज अब हृदय को कष्ट देती है। यह काली अब हत्यारी बन गई है। यह हत्यारी मेरे प्राण लेने पर तुली हुयी है। तुम्हारे वियोग में मैं इधर–उधर भटक रही हूँ। इस बात को सभी कोई जानते हैं। नायिका आगे कहती है कि मेरा सारा शरीर जलकर सूखे छुहारे की भाँति हो गया है। मैं तो तुमसे पस्त हो गई हूँ क्योंकि मुझको गिरधारी तुमने भुला दिया है।

*फागुन वन वीथिन में छाये, फगुआ जोर जनाये।*
*वन–बागन में ऋतुराजा ने अपन जाल बिछाये।*
*मनभावन बिन पावन फागुन पल पल नित तरसाये।*
*कोयल कूक बिरह व्यथितों को, औरहु और जलाये।*
*जीवनमूल 'मनोहर' के बिन, कैसे फाग मनायें।*

फागुन के महीने में धरती माँ का रूप किस तरह का होता है इसका वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि फागुन में सभी जगह फूल, हरियाली फैली हुई है और फाग गाने वाले भी अपनी धुन में मस्त है, ऋतुराज अर्थात् बसन्त ने बागों में, वनों में अपना जाल बिछाया हुआ है। साजन के बिना यह पवित्र फागुन का महीना मुझे हर क्षण तड़पा रहा है। एक तो वे घर में नहीं हैं। इसलिए पहले से ही विरह सता



रहा है और ऊपर से कोयल की आवाज विरहणियों को और अधिक व्याकुल कर रही है। नायिका कहती है कि जिसके साथ अपना जीवन जोड़ा हुआ है उसके बिना हम यह त्यौहार कैसे मनाएं?

*जिदना आहै राम टिरउवा, चलहैं ना टिरकउवा।*
*खबर के सुनतन जाने परहे, ऐसौ ऊकौ पउवा।*
*अच्छन अच्छन के ऊ पल में, देवै टोर डड़उवा।*
*सबई बराबर परमेश्वर खां, बगला कोयल कौवा।*
*हुकम 'मनोहर' पालैं उनकौ, दाने देवता हउवा।*

इस छंद में कवि ने ईश्वर को सर्वशक्तिशाली बताया है। कहते हैं कि जिस दिन राम का बुलावा आयेगा उस दिन कोई बहाना नहीं चलेगा। उसकी खबर मिलते ही जाना पड़ेगा क्योंकि उसका दबदबा अत्यधिक है, उसकी शक्ति के समक्ष सभी लघु हैं। राम ने उनको जो अपने आपको कुछ समझते हैं, एक पल में ही ठिकाने लगा दिया है, उसको अहं पसन्द नहीं है। उनकी दृष्टि में सभी समान हैं चाहे वह बगुला हो, कोयल हो या फिर कौवा। आगे कवि मनोहर वर्णन करते हुए कहते हैं कि उनकी आज्ञा को सभी सिरौधार्य करते हैं चाहे वह दानव हो, देवता हो या फिर कोई बड़ा जानवर ही हो।

*नेता अपनी नीति भुलाने, कुर्सी के दीवाने।*
*खादी पहिन राजनीति में, टांड़ी से उमड़ाने।*
*ऊचौ पद पाबे खाँ, उल्टी सीधी लगी चलाने।*
*भोली भाली पब्लिक ऊपर अत्त करें मनमाने।*
*नीति नियम सब भुला 'मनोहर' जनतै लगे सताने।।*

कवि आजकल के नेताओं की नीतियों के बारे में बताते हुए कहते हैं कि नेताओं ने अपनी सभी सही नीतियाँ भुला दी हैं और सिर्फ कुर्सी के लिए पागल हैं जैसे भी हो कुर्सी मिले। राजनीति में

आकर और खादी वस्त्र पहनकर बने ये नेता टिड्डी की भाँति एक दूसरे को ऊपर नीचे करते हैं। कुर्सी के लिए वे सभी प्रकार की अनीतियों का उपयोग करते हैं। जनता द्वारा चुने जाने के बाद उन्हीं के ऊपर मनमाने अत्याचार करते हैं। वास्तविक राजनीति के जो नियम, नीतियाँ रही हैं उन्हें भूल गए हैं और आम आदमी को कष्ट देने में लगे हैं।